दोहा-कोश

[हिन्दी-छायानुवाद-सहित]

महापंडित राहुल सांकृत्यायन

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना

दोहा-कोश

[हिन्दी-छायानुवाद-सहित]

ग्रन्थकार
सिद्ध सरहपाद

सम्पादक, पुनरनुवादक
महापंडित राहुल सांकृत्यायन

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना

वक्तव्य

इस ग्रन्थ के सम्पादक महापण्डित श्रीराहुल सांकृत्यायन के महत्त्वशाली शोधकार्यों से हिन्दी-साहित्य के इतिहास में जो क्रान्तिकारी परिवर्त्तन हुए हैं उनसे हिन्दी-जगत् भलीभाँति परिचित है। साहित्यिक गवेषणा के क्षेत्र में उनके अनुसन्धानों ने जो प्रकाश फैलाया है उससे युगों का घनीभूत अन्धकार तिरोहित हुआ है। यह ग्रन्थ इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

हिन्दी-संसार में साहित्यिक शोध के छोटे-मोटे काम बहुत दिनों से होते आ रहे हैं। परन्तु, जब से काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा ने प्राचीन हस्तलिखित पोथियों की खोज करके उसका विवरण प्रकाशित किया और 'सभा' के ही उद्योग से भारतीय विश्वविद्यालयों में हिन्दी-साहित्य का अध्ययन-अध्यापन तथा अनुसन्धान-अनुशीलन होने लगा, तब से शोध के काम में विद्वानों की दिलचस्पी बढ़ने लग गई। किन्तु, शोध-सामग्री की अपर्याप्तता के कारण इस दिशा में विशेष प्रगति नहीं हुई। सच तो यह कि बहुत-सी शोध-सामग्री पाश्चात्य जगत् के संग्रहालयों में सुरक्षित है, जिसका उपयोग करने के लिए योरप-यात्रा करना अनिवार्य है। विदेश-यात्रा करना सब शोधकों के लिए संभव नहीं। फिर भी, हमारे कुछ शोधकों ने विदेश जाकर वहाँ की संचित सामग्री से लाभ उठाया, पर उससे प्राचीनतम हिन्दी-सम्बन्धी खोज में कोई उल्लेखनीय सहायता नहीं मिली। जब राहुल जी ने अत्यन्त प्राचीन हिन्दी की प्रचुर शोध-सामग्री का उद्धार ऐसे दुर्गम स्थान से किया, जहाँ आधुनिक युग के शोधकों की पहुँच नहीं हो सकती थी, तब हिन्दी-भाषा के साहित्य की शोध-दिशा बदल गई। अतः इस ग्रन्थ के प्रकाशन से शोधकर्त्ता सज्जनों को नई प्रेरणा मिलने की संभावना है।

श्रीराहुलजी की तरह 'मिशनरी स्पिरिट' से काम करनेवाले यदि और भी दो-चार व्यक्ति हिन्दी में होते, तो साहित्यिक शोध के क्षेत्र में आज अनेक विस्मयजनक कार्य हुए रहते। यद्यपि हिन्दी के साहित्यसेवियों में अब शोध करने की प्रवृत्ति धीरे-धीरे जाग रही है, तथापि राहुलजी को सच्चे अनुयायी के रूप में अभी तक निष्ठावान् सहायक नहीं मिले हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी आज

उस स्थिति में पहुँच गई है जब उसको अनेक श्रद्धालु साधकों की आवश्यकता है। हमारी धारणा है कि सच्ची लगन और पक्की धुन के अमायिक व्यक्ति ही खोज के काम के लिए फकीर हो सकते हैं। प्रपञ्च-मुक्त हुए बिना शोध-कार्य को निर्विघ्नता के साथ सम्पन्न करना कठिन है। शोध की दिशा में राहुलजी के भगीरथ-प्रयत्नों को देखकर ऐसा अनुभव होता है कि जग-जंजाल से छुटकारा पाकर शोध-तत्पर होने से ही भाषा और साहित्य का वास्तविक उपकार हो सकता है।

इस ग्रन्थ में सिद्ध सरहपाद की कविता भोट-भाषा में रूपान्तरित है, जिसकी अविकल छाया प्राचीन हिन्दी में स्वयं राहुलजी ने प्रस्तुत की है। मूल और छाया के साथ कहीं-कहीं जो पाद-टिप्पणियाँ हैं और ग्रन्थ के अन्त में जो परिशिष्ट हैं, उनसे राहुलजी के कठोर परिश्रम तथा अथक अध्यवसाय का अनुमान किया जा सकता है। उनकी विस्तृत भूमिका के अध्ययन से भी, प्राचीन हिन्दी के सम्बन्ध में अनुसन्धान करनेवालों को, काफी प्रकाश मिलेगा। आशा है, शोध-संलग्न सज्जनों को ऐसा प्रतीत होगा कि यह ग्रन्थ वस्तुतः हिन्दी को राहुलजी की एक अपूर्व देन है।

वैशाखी पूर्णिमा, बुद्ध-जयन्ती
शकाब्द १८७९, विक्रमाब्द २०१४

शिवपूजन सहाय
(संचालक)

विषय-सूची

१ (क) दोहाकोश-गीति

[हिन्दी-छायानुवाद-सहित]

पृष्ठ

परिशिष्ट

चित्र-परिचय

मेरी पत्नी कमला सांकृत्यायन

को

उनकी सहायताओं के लिए

भूमिका

§१. सरह की दुनिया

सरहपाद का काल (ईसवी आठवीं सदी), भारतवर्ष के इतिहास में कई दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस महान् विचारक कवि और सन्त-सिद्ध के प्रादुर्भाव से एक नये युग की सूचना मिलती है।

(१) राजनीतिक स्थिति

पुष्पभूति या वर्धन-वंश के राजा हर्षवर्धन प्राचीन भारत के अन्तिम दिग्विजयी सम्राट् थे। ४२ वर्ष (६०६–६४८ ई०) के सुदीर्घ, शान्त और समृद्ध शासन के बाद जब ६४८ ई० में उनका निधन हुआ, तो उनका साम्राज्य जल्दी ही छिन्न-भिन्न होकर इतना कमजोर हो गया, कि अपने अपमान का बदला लेने के लिए चीनी राजदूत ने थोड़ी-सी तिब्बती और नेपाली सेना की मदद से हर्ष की राजधानी पर अधिकार जमानेवाले अर्जुन को न केवल हराया ही, बल्कि उसे बन्दी बनाकर चीन ले गया। आगे सौ साल का समय टुकड़े-टुकड़े में बँटे कान्यकुब्ज-साम्राज्य के पारस्परिक कलह और पतन का इतिहास हमारे लिए अत्यन्त अपरिचित-सा है। एक शताब्दी बीतने पर हम भारत में तीन महाशक्तियों का उदय होते देखते हैं: (१) पूर्व में यशस्वी पाल-वंश हर्ष के साम्राज्य के पूर्ववाले भू-भाग पर अपना दृढ़ शासन स्थापित करता है, और वहाँ मत्स्य-न्याय का अन्त कर हिन्दूकाल के अन्त तक रहनेवाले एक राजवंश की नींव डालता है। (२) दक्षिणापथ—जिसे जीतने का असफल प्रयत्न हर्ष ने किया था—में और भी प्रचंड राष्ट्रकूटों का शासन देखने में आता है और (३) राजपूताने के भिन्नमाल या श्रीमाल के गुर्जर-प्रतिहार अपनी शक्ति बढ़ाते यमुना और गंगा के किनारे तक पहुँचने की कोशिश करते हैं।

कान्यकुब्ज के भाग्य का फैसला अभी नहीं हो पाया था, जब कि सरहपाद ने

कार्यक्षेत्र में पैर रखा। इन्हीं तीनों शक्तियों के हाथ में भारत का भाग्य था। इनके मैदान में आने से पहिले ही भारत से बाहर अपने प्रभाव को फैलाती एक विश्व-शक्ति पश्चिम की ओर से भारत की ओर बढ़ती चली आ रही थी। यह थी अरब या इस्लाम की शक्ति। अभी प्रतापी हर्ष कान्यकुब्ज में विराजमान ही थे, जब कि ६३९ ई० में अरब-सेना ने महाबन्द के युद्ध-क्षेत्र में ईरान के प्रतापी सामानी राजवंश का उच्छेद किया। अगले तेरह वर्षों में विजयिनी अरब-सेना ख्वारेज्म और तुखारिस्तान [मध्य आमू (वक्षु) उपत्यका] तक पहुँच गई। अरब केवल अपने शासन की ही स्थापना के लिए दिग्विजय नहीं कर रहे थे, बल्कि साथ ही वह विजित देशों की संस्कृति और प्राचीन विश्वासों को ध्वस्त कर एक नया रूप देने का प्रयत्न कर रहे थे। इसीलिए, उनके प्रतिद्वन्द्वी भी आसानी से हथियार डालने के लिए तैयार नहीं थे। तुखारिस्तान मध्य-एसिया में बौद्धधर्म का गढ़ था, जहाँ दत्तामित्रि—आधुनिक तेर्मिज—और बलख (वाह्लीक) अपने महान् बौद्ध-विहारों तथा विद्वानों के लिए मशहूर थे। मिहिरगुल के ध्वंसक कार्यों के बाद पेशावर से हटाकर तथागत के भिक्षापात्र को बलख में ले जाकर रक्खा गया था, इसी से बौद्धधर्म के लिए इस स्थान का महत्त्व मालूम हो सकता है। तुखारिस्तान की भूमिका में इस्लाम और बौद्धधर्म के लिए जो खूनी संघर्ष हो रहे थे, उससे भारतीय शासक चाहे अप्रभावित रहे, पर बौद्ध-जगत् के महान् शिक्षा-केन्द्र नालन्दा और दूसरे विहारों में तो सैकड़ों भुक्तभोगी मध्य एसियाई भिक्षु अध्ययन करते थे, इसलिए वह सारी घटनाओं से पूरी तौर से अवगत थे। यद्यपि वहाँ भारत से कोई सहायता नहीं पहुँच सकती थी, पर भारतीय बौद्धों की सहानुभूति तुखारिस्तानियों के साथ थी।

आठवीं सदी के साथ इस्लाम की विजयिनी ध्वजा सिर और सिन्धु महानदियों के किनारे फहराने लगी। आज से १२४५ वर्ष पहिले ७११ ई० में उमैया खलीफ़ा वलीद अब्दुल्मलिक-पुत्र के सेनापति मुहम्मद बिन-कासिम ने आपसी फूट से लाभ उठाकर सिन्ध को अरब-साम्राज्य में मिला लिया और सिन्ध हमेशा के लिए इस्लाम का विजित देश हो गया। उधर वलीद के दूसरे महान् सेनापति कुतैब बिन-मुस्लिम ने वक्षु और सिर के बीच के भूभाग में इस्लाम और इस्लामी शासन स्थापित करने में

सफलता पाई । ७०६ ई० में बुखारा—बौद्ध विहार के कारण पड़े इस नामवाले महानगर—को अन्तिम संघर्ष के बाद आत्मसमर्पण करना पड़ा और वह आगे चलकर बौद्ध की जगह इस्लाम की काशी बना । ७१४ ई० में पूर्वी तुर्किस्तान में भी इस्लाम की विजय-वैजयन्ती पहुँच गई, जब कि काशगर और खुतन ने घुटने टेक दिये और सैकड़ों वर्षों से बौद्धधर्म-प्रधान इस देश के हजारों संघारामों को लूटकर नष्ट कर दिया गया, भारी संख्या में भिक्षु तलवार के घाट उतारे गये । यह सारी घटनाएँ भारत के बौद्ध आचार्यों के लिए अपने सामने घटित-सी मालूम होती थीं ।

भारत में पाल, राष्ट्रकूट और प्रतिहार अपनी स्थिति को दृढ़ और परिसीमित करने में आठवीं सदी के अन्त में सफल हुए, जब कि सरहपाद शायद इस दुनिया में नहीं रह गये थे । पर इनके समय में ही मगध ने उत्तरी भारत में प्रमुख स्थान ग्रहण कर लिया था । गोपाल ने सरहपाद के सामने ही ७६५ ई० के करीब पाल-वंश की स्थापना की । वह बिल्कुल साधारण कुल का आदमी था, जो अपनी योग्यता और सर्वप्रियता के कारण पूर्व-भारत का अधीश्वर बनाया गया । उसके पुत्र धर्मपाल ने तो, एक बार मालूम हुआ, हर्षवर्धन के प्रताप को दुहराके रहेगा । पर, राष्ट्रकूट और प्रतिहार उसके रास्ते में बाधक हुए । अरबों को आगे बढ़ने से रोकने में, पाल-वंश का उतना हाथ नहीं था, जितना कि, उसके दोनों प्रतिद्वन्द्वियों का । गोपाल धर्मपाल का राज्य अरब-साम्राज्य की सीमा से बहुत दूर पड़ता था, इसलिए वह बहुत पीछे ही इस्लाम के आक्रमणों की आखेट-भूमि बना । तो भी मगध-भूमि बौद्धधर्म का केन्द्र थी, वहीं बड़े-बड़े बौद्ध-विद्या-केन्द्र थे, जहाँ दूर-दूर के विद्यार्थी ही पढ़ने नहीं आते थे, बल्कि जहाँ के विद्वान् धर्म-प्रचार के लिए नाना देशों में जाया करते थे । सरहपाद के दर्शन के परम गुरु महान् विद्वान् शान्तिरक्षित स्वयं इसी उद्देश्य से तिब्बत गये और वहीं अपने बनवाये तिब्बत के सर्वप्रथम संघाराम—सम्.ये—में अपना शरीर तिब्बती सम्राट् (श्री स्रोङ दे-चन् (७५५—७८० ई०) के राज्यकाल में छोड़ा । इस प्रकार मगध का बौद्ध जगत् से घनिष्ठ संबंध होने के कारण वह सभी बातों से अवगत था । यहाँ यह बात भी स्मरण रखने की है, कि पाल-राजा अन्त तक अपने को परम सौगत घोषित करते रहे ।

२. धार्मिक स्थिति

सरहपाद का प्रादुर्भाव जिस आठवीं सदी के पूर्वार्ध में हुआ, वह धर्म की दृष्टि से भी एक नये युग का सन्धिकाल था। इससे एक ही शताब्दी पहले वसुबन्धु, दिङ्नाग और धर्मकीर्त्ति के महायान-धर्म और दर्शन का चरम उत्कर्ष हुआ था। बौद्धधर्म अपने हीनयान और महायान के विकास को चरम सीमा तक पहुँचा कर अब एक नई दिशा लेने की तैयारी कर रहा था, जब उसे मंत्रयान, वज्रयान या सहजयान की संज्ञा मिलनेवाली थी, और जिसके प्रथम प्रणेता स्वयं सरहपाद थे। हीनयान (स्थविरवाद) ने शील-सदाचार तथा वैयक्तिक निर्वाण पर अधिक जोर दिया था। उसने बुद्ध के दर्शन और शिक्षा को यथाशक्ति मूलरूप में रखने की कोशिश की थी। महायान ने भी थेरवाद के शील-सदाचार, भिक्षुचर्या को बहुत-कुछ स्वीकार किया था। वस्तुत: महायानी भिक्षु उन्हीं विनय-नियमों को मानते थे, जो कि सर्वास्तिवादी हीनयान के विनय-पिटक में हैं। हाँ, महायानी आदर्श और उद्देश्य में वह हीनयान के के वैयक्तिक निर्वाण को हीन, स्वार्थपूर्ण मानते थे, और वैयक्तिक मुक्ति की जगह प्राणिमात्र को दु:ख से मुक्त करने के लिए अपने अनंत जन्मों का उत्सर्ग करना एक मात्र परमलक्ष्य मानते थे। बौद्ध क्षणिक और अनात्मवादी दर्शन को और आगे बढ़ाते हुए उन्होंने नागार्जुन के माध्यमिक या शून्यवाद दर्शन एवं असंग के योगाचार या विज्ञानवादी दर्शन तक पहुँचाया। अब वह समय आ गया था, जब कि शील, समाधि और प्रज्ञा-संबंधी पुरानी परंपराओं और धारणाओं का पुन: मूल्यांकन किया जाय, और उनमें से कितनों को साफ व्यर्थ की रूढ़ि घोषित किया जाय। यह काम हम स्वयं सरह को करते देखते हैं। वह सहज जीवन के पक्षपाती हैं, और भक्ष्य-अभक्ष्य, गम्य-अगम्य की पुरानी धारणाओं पर सीधी चोट करते हैं। हरेक क्रान्तिकारी या उग्र सुधारक को अपने काम में जनता से ही सहायता लेनी पड़ती है। बुद्ध और महावीर को भी यही करना पड़ा था। जनता को उसकी भाषा द्वारा ही अपनी ओर खींचा जा सकता है, यह उन्हें मालूम था। यही कारण था, जो बुद्ध और महावीर ने जनभाषा का सहारा लिया। पर, उनके समय की भाषा अब स्वयं मृत भाषा

थी, जिसे साहित्य के रूप में ही पढ़ा-समझा जा सकता था। सरहपाद ने संस्कृत के पंडित होते भी तत्कालीन 'भाषा' को अपना माध्यम बनाया।

बौद्ध ही नहीं, ब्राह्मण-धर्म में भी अब नये धार्मिक और दार्शनिक संप्रदाय उपस्थित होनेवाले थे। पाशुपत-धर्म अब भी उत्तर और दक्षिण में प्रभावशाली था। गुप्तकालीन वैष्णव-धर्म ह्रासोन्मुख था। अब दक्षिण के शंकर का मायावादी अद्वैत विज्ञानवाद दर्शन प्रकट हो रहा था। शंकराचार्य सरहपाद के समकालीन थे। वह असंग के योगाचार दर्शन को नई बोतल में पुरानी शराब डालने की उक्ति के अनुसार एक नया रूप दे रहे थे। यह बात लोगों से छिपी नहीं थी। उनके प्रतिद्वंद्वी शंकराचार्य को 'प्रच्छन्न बौद्ध' कहा करते थे। शंकर ने यद्यपि इस बात को छिपाना चाहा, कि उनका दर्शन योगाचार की देन है, पर उनके मान्य आचार्य और परंपरा के अनुसार परमगुरु गौडपाद बुद्ध को नमस्कार करते अपनी कारिकाओं में उनके ऋण को स्वीकार करते हैं। शंकर मुँह से न कहते भी आचरण से बौद्ध और ब्राह्मण-दर्शनों के संबंध में समन्वयवादी हैं। धार्मिक मान्यताओं में भी वह समन्वयवादी थे। शिव, विष्णु या शक्ति—सभी को वह परमदैवत और आराध्य मानते थे। यद्यपि यही बात वैष्णव आलवारों के संबंध में नहीं कही जा सकती, पर उनके द्वारा वैष्णव-धर्म भी उस रूप को ले रहा था, जो आज उत्तर और दक्षिण में देखा जाता है, और जिसका सबसे अधिक जोर भक्ति पर है। बौद्धधर्म की तरह ब्राह्मण धर्म के लिए भी यह काल एक नये संदेश का वाहक है। जैन-धर्म के बारे में यह बात उतने जोर से नहीं कही जा सकती, पर वहाँ भी योगीन्दु, रामसिंह—जैसे सन्तों को हम नया राग अलापते देखते हैं, जिसमें समन्वय की भावना ज्यादा मिलती है।

सरह के साथ एक नये धार्मिक प्रवाह को हम जारी होते देखते हैं, जो आज भी सन्त-परम्परा के रूप में हमारे सामने मौजूद है। इसके बारे में हम आगे कहनेवाले हैं। सन्तों के साथ जिस योग और भावनाओं का संबंध है, वह भी इसी समय अपने नये रूप में प्रकट होते हैं। उनकी भावना या योग वही नहीं है, जिसे पंतजलि के योगदर्शन या पुराने बौद्ध-सूत्रों में देखते हैं। इस ध्यान और भावना के लिए यम-नियमों की उतनी आवश्यकता नहीं मानी जाती थी और न उसके ढंग उतने रूढ़ थे।

इसमें गुरु का वचन सर्वोपरि माना जाता था, जिस पर सरहपाद ने अपने दोहाकोश में जगह-जगह जोर दिया है । यह स्मरण रखना चाहिए, कि तिब्बती शब्द ला.मा गुरु का ही पर्याय है । वहाँ 'बुद्धं शरणं गच्छामि' से भी पहले 'गुरुं शरणं गच्छामि' कहते त्रिशरण की जगह चतुःशरण लिया जाता है । इसके प्रवर्त्तक सरहपाद हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं । तिब्बत का आज का प्रचलित धर्म बुद्ध से अधिक सरहपाद की शिक्षा को मानता है ।

(३) भाषा का संक्रांतिकाल

भाषा की दृष्टि से देखने पर भी यह एक नये युग का संधिकाल है। छान्दस (वैदिक भाषा) के बाद ईसा-पूर्व पाँचवीं-छठी सदी में भाषा ने नया रूप लिया, जिसके नमूने बुद्ध-वाणी और अशोक की धर्मलिपियों की भाषा में मिलते हैं, और जिसे आसानी के लिए हम जनपदीय पालियाँ कह सकते हैं । यह सारी एक ही तरह की नहीं थी । पालियों के अवसान के बाद ईसवी-सन् के आरंभ के आस-पास प्राकृत अस्तित्व में आई, जो ईसा की पाँचवी सदी के अन्त तक प्रचलित रही । छान्दस्, पाली और प्राकृत भाषाओं में आपस में काफी भेद थे, पर अब भी उनकी एक विशेषता कायम थी, अर्थात् यह तीनों भाषा-कुल उस रूप को अपनाये हुए थे, जिसे भाषाविद् 'श्लिष्ट' (synthetic) रूप कहते हैं। द्विवचन को हटा देने तथा कुछ विभक्तियों को कम कर देने पर भी अभी सुबन्त और तिङन्त के सैकड़ों और हजारों रूप प्रचलित थे—दसो (विधि और आशीः मिलाकर ग्यारह) लकारों, आत्मनेपद-परस्मैपद रूपों, णिजन्त, सन्नन्त, यङन्त, यङलुगन्त आदि स्वरूपों को उन्होंने मान्य रक्खा । अब प्राकृत का स्थान उसकी जिस पुत्री ने लिया, जो विश्लिष्ट नहीं अश्लिष्ट भाषा थी। धातु-रूपों और शब्दरूपों की पुरानी परिपाटी अब बहुत-कुछ खत्म-सी कर दी गई । लकारों की प्रचुरता समाप्त करके भूत-काल के लिए निष्ठा-प्रत्यय का प्रयोग होने लगा । श्लिष्ट से अश्लिष्ट रूप में भाषा का परिवर्त्तन एक बड़ी क्रान्ति थी, जो कि प्राकृत की उत्तराधिकारिणी भाषा में देखा गया । इस भाषा का स्मरण सबसे पहिले हर्ष के समकालीन (६०६–६४८ ई०) महाकवि वाण के 'हर्षचरित' में मिलता है ।

वहाँ इसका आज का रूढ़ नाम 'अपभ्रंश नहीं मिला है, बल्कि केवल 'भाषा' कहकर पुकारा गया है । 'भाषा' से हमेशा वर्त्तमान भाषा का ही अर्थ लिया जाता रहा है । पाणिनि वैदिक (छान्दस) भाषा से भिन्न भाषा को 'भाषा' कहते हैं; यद्यपि पाणिनि के समय—ईसा-पूर्व चौथी सदी में—प्रचलित भाषा वह अवैदिक संस्कृत भाषा नहीं थी, जिसे पाणिनि 'भाषा' कहते हैं । गोस्वामी तुलसीदास जिसे 'भाषा भणिति' कहते हैं, वह निश्चय ही उनके समय की प्रचलित भाषा थी । आज भी उत्तरी भारत में 'भाखा' से अभिप्रेत है, वर्त्तमान भाषा । वाण ने जिस मित्रमंडली के साथ घुमक्कड़ी की थी, उसमें 'भाषाकविः ईशानः परं मित्रं:' भी था। भाषा से वाण का अभिप्राय प्राकृत भाषा नहीं था; क्योंकि 'हर्षचरित में वहीं अपने साथी—'प्राकृतकृत् कुलपुत्रो वायुविकारः' का नाम लिया है । प्राकृत के कवि वायु-विकार से भाषा-कवि ईशान का नाम अलग देना ही बतलाता है, कि वाण के समय प्रचलित भाषा प्राकृत नहीं थी । नई भाषा का नाम अभी अपभ्रंश रूढ़ नहीं हो पाया था, पर वाण का भाषा से मतलब अपभ्रंश से ही है ।

अपभ्रंश नाम पतंजलि (ईसा पूर्व १५५) के महाभाष्य में भी आता है, पर वहाँ वह वैदिक और लौकिक संस्कृत से भिन्न तत्कालीन भाषा है, जो कि पालि-समूह की थी । सरहपाद के ग्रंथों में भी अपभ्रंश नाम नहीं मिलता।

अपभ्रंश संस्कृत-पालि-प्राकृत के श्लिष्ट-भाषा-कुल से उत्पन्न, पर अश्लिष्ट होने से एक नये प्रकार की भाषा है। वह उक्त तीनों भाषाओं से दूर तथा हमारी हिन्दी आदि आधुनिक भाषाओं की माता-मातामही ही नहीं, बल्कि उसी प्रकृति की भाषा है ।

'हर्षचरित' के कथन से सिद्ध है, कि सातवीं सदी के पूर्वार्द्ध में अपभ्रंश का ईशान कवि हुआ था, जिसकी योग्यता इसीसे सिद्ध है, कि वाण उसे केवल मित्र नहीं, बल्कि 'परं मित्रं कहता है । दसवीं सदी के अन्त के अपभ्रंश के महाकवि पुष्पदन्त ने अपने काव्य 'महापुराण' में "चौमुह सयम्भू सिरिहरिसु, दोणु । णालोइउ कई ईसाणु वाणु" कहते जिस ईशान कवि का स्मरण किया है, वह वाण का परम मित्र ईशान था, यह डॉक्टर वासुदेवशरण अग्रवाल का मत ठीक जान पड़ता है । वाण के

परम मित्र ईशान अकेले ही अपभ्रंश के कवि नहीं रहे होंगे, और भी कितने ही भाषा-कवि तब तक हो चुके होंगे, इस प्रकार सरहपाद को हम अपभ्रंश का प्रथम कवि नहीं कह सकते। पर सरह से पहिले के किसी कवि की कोई कृति या पद्य हमारे पास तक नहीं पहुँचा, इस प्रकार अपभ्रंश की सर्वप्रथम कृति सरह के दोहों के रूपों में ही आज मौजूद है, इसलिए अपभ्रंश के आदि कवि के तौर पर सरहपाद का ही नाम लिया जा सकता है।

जिस प्रकार अपभ्रंश के रूप में एक नये प्रकार की अश्लिष्ट भाषा इस समय हमारे सम्मुख उपस्थित होती है, उसी प्रकार दोहा, चौपाई, पद्धरी के नये छन्द इसी समय हमारे साहित्य में देखे जाते हैं। ये छन्द प्राकृत या दूसरी पूर्ववर्त्ती भाषाओं में नहीं मिलते। इन नये छन्दों को पहिले-पहिल हम सरह की कृतियों में ही देखते हैं। जिस तरह आर्या-गाथा प्राकृत-साहित्य की अपनी विशेषता है, उसी तरह दोहा-चौपाई-पद्धरी अपभ्रंश की अपनी विशेषता है, जो उसके वंश की हिन्दी आदि भाषाओं में अब भी मौजूद है और अपभ्रंश की तरह हिन्दी को भी आज दोहा-चौपाईवाली भाषा कह सकते हैं। अपभ्रंश वैसे केवल हिन्दी की अपनी चीज नहीं है, उसपर उत्तर भारतीय या भारत की हिन्दू-आर्य सभी भाषाओं का एक समान अधिकार है। वह मराठी, गुजराती, पंजाबी, हिन्दी क्षेत्र की भाषाओं---राजस्थानी, मालवी, बुन्देली, हरियानी, कौरवी (मूल हिन्दी), पहाड़ी, व्रज, अवधी, भोजपुरी, मैथिली, मगही, असमिया, बंगला, उड़िया---की अपनी निधि है। इन सभी भाषाओं के क्षेत्र में अपभ्रंश-साहित्य की रचना हुई, उसको अपना समझा गया, और वह सभी को अपने साहित्यिक दाय-भाग के रूप में मिली। आज दोहा-चौपाई का कुछ भाषाओं से उठ जाना एक खटकनेवाली बात है।

इन सारी बातों को देखने से मालूम होगा, कि सरह जिस भाषा के आदि कवि हैं, वह कई दृष्टियों से एक नये युग की भाषा है। कोई भी नया युग--जो इतने महान् परिवर्त्तनों का वाहक हो --एकाएक एक निश्चित मास या वर्ष में तो क्या, निश्चित शताब्दी में भी आन उपस्थित नहीं होता। प्राकृत ने किस शताब्दी में अपभ्रंश के लिए अपना स्थान छोड़ा, यह बतलाना बहुत मुश्किल है। वर्त्तमान शताब्दी के आरंभ तक

तो हमारे बहुत कम ही विद्वान् उसके अस्तित्व को जानते थे। बहुतेरे तो हमारी आधुनिक आर्यभाषाओं को सीधे संस्कृत से जोड़ते थे। उनको यह पता नहीं था, कि संस्कृत को हमारी आधुनिक भाषाओं से मिलानेवाली कड़ी पालियाँ, प्राकृत और अपभ्रंश है। आज इसे माना जाने लगा है, पर अब भी बहुत लोग यह निश्चय नहीं कर पा रहे हैं, कि अपभ्रंश का स्थान आधुनिक भाषाओं के बीच में है या पालि-प्राकृतों में ?

अस्तु, अपभ्रंश के जन्म-दिन का पता लगाना संभव नहीं है। संभवतः यह परिवर्त्तन कुछ समय तक बहुत धीरे-धीरे होता रहा, फिर एकाएक गुणात्मक परिवर्त्तन होकर श्लिष्ट की जगह अश्लिष्ट भाषा आन उपस्थित हुई—वह वही (प्राकृत) न होने पर भी कितनी ही बातों में वही (प्राकृत) थी। अपभ्रंश का सारा शब्द-कोश और उच्चारण-क्रम प्राकृत का था, पर व्याकरण की अन्य विशेषताएँ आधुनिक अवधी-व्रज-भोजपुरी-जैसी। यह घटना छठी शताब्दी के अन्त में किसी समय घटी। इस सारी शताब्दी को हम प्राकृत और अपभ्रंश की सीमा-रेखा मान सकते हैं, उसी तरह, जिस तरह ईसा-पूर्व प्रथम शताब्दी को पालियों और प्राकृतों की सीमा-रेखा, तथा ईसा पूर्व सातवीं सदी को छान्दस और पालियों की सीमा रेखा।

इस प्रकार सरहपाद नई भाषा और नये छन्दों के युग के आदि-कवि हैं। इतना ही नहीं, सन्त-सिद्ध परम्परा के आदि-सिद्ध होकर वह आध्यात्मिक तौर से भी नई दिशा दिखलानेवाले हैं। शायद उन्हें द्वितीय बुद्ध कहकर लोग अतिशयोक्ति से काम नहीं लेते। प्रमाण-शास्त्र में उनके परम गुरु शान्तरक्षित को, द्वितीय धर्मकीर्त्ति कहा जाता था। सरह की परम्परा में ही सिद्ध शान्तिपा (रत्नाकरशान्ति) हुए, जिन्हें 'कलिकाल-सर्वज्ञ' कहा गया, जो जैन 'कलिकाल-सर्वज्ञ' हेमचन्द्र से एक शताब्दी पहले हुए थे।

§२. सरह का व्यक्तित्व

१. जीवनी

सरहपाद की जीवनी के संबंध में बहुत-थोड़ी-सी सूचना तिब्बती अनुवादित ग्रंथों से मिलती है और वह सबसे प्रामाणिक है, इसमें सन्देह नहीं।

'चतुरशीतिसिद्धप्रवृत्ति' (स्तन्. ग्युर, ग्युद्, ८६ । १) में एक तरह सिद्धों की सूची-भर दी गई है । यद्यपि भारतीय भाषा में अनुवादित यह एक ही पुस्तक है, पर सिद्ध-युग में (आठवीं से ग्यारहवीं सदी तक) तिब्बत और भारत का घनिष्ठ संबंध रहा, वहाँ से अनेक जिज्ञासु भारत में आकर दीक्षा लेते थे । तिब्बत के सबसे बड़े सिद्ध (द्वितीय सरहपा) जे. चुन्. मि. ला. रेस्. पाके गुरु मर्.बा. लो .त्स. वा. ने विक्रमशिला में तत्कालीन महासिद्ध नारोपा से दीक्षा ली थी । तिब्बती सन्तों और महात्माओं के ग्रंथों में मौखिक गुरु-परम्पराएँ भारतीय सिद्धों के बारे में उद्धृत हैं, जिनसे भी कुछ प्रकाश पड़ सकता है, पर अभी तक उन परम्पराओं को जमा करने की कोशिश नहीं की गई है ।

सरहपाद पूर्व दिशा के राज्ञी नामक कस्बे में पैदा हुए थ । पूर्व दिशा से कौन-से प्रदेश का अभिप्रेत है ? आमतौर से मगध से पूर्व वाले प्रदेश पूर्व दिशा कहे जाते थे, जिसमें बंगाल—विशेषतः वारेन्द्र—आ सकता है । पर, वारेन्द्र का उल्लेख करते पूर्व-दिशा वारेन्द्र देश एक ही साथ कहा जाता था । इसलिए हम वहाँ वारेन्द्र को नहीं ले सकते । इसके बाद भंगल (भागलपुर) और पुंड्रवर्धन (उत्तरी बंगाल) ही रह जाते हैं, जहाँ सरहपाद की जन्मनगरी राज्ञी रही होगी। कामरूप (असम) का उल्लेख करते पूर्व-दिशा के साथ कामरूप भी जरूर आता है ।

राज्ञी बहुत बड़ा नगर नहीं रहा होगा। उसी के एक ब्राह्मण-परिवार में सरह का जन्म हुआ। उनसे एक शताब्दी पूर्व पैदा हुए वाण के राजसी वैभव को हम जानते हैं, जिसके घुमक्कड़ी जीवन में भी कवि, पंडित, कलाकार, संगीत-नृत्यकार, भिक्षु, परिव्राजक, वैद्य, तान्त्रिक, धूर्त, परिचारक आदि ४४ आदमियों की पलटन साथ रहती थी । सरहपाद का कुल वाण की तरह वैभवशाली था, इसे जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं है, पर इतना हमें मालूम है, कि सातवीं-आठवीं सदी में अभी सामान्य तौर से ब्राह्मण अच्छी स्थिति में थे । उनमें विद्या का प्रचार था । बौद्ध और जैनधर्म ने ऊँच-नीच जाति (वर्ण)—व्यवस्था पर प्रहार किया था, जिससे नीच कुल में जन्मे होनहार पुरुषों के आगे बढ़ने का रास्ता निकल आया था, पर ब्राह्मणों को समुदाय के तौर पर आर्थिक हानि उठानी पड़ी हो, इसका हमें पता नहीं । पाल-वंश सदा बौद्ध रहा, पर उसके

प्रधान-मंत्री प्राय: ब्राह्म ही होते थे और साथ ही ब्राह्मण-धर्म के अनुयायी भी, जैसा कि एक पाल-महामंत्री के नारायण-मंदिर के निर्माण से मालूम होता था। उस समय, विशेषकर पूर्व (मगध आदि) में आस्तिक ब्राह्मणों के हृदय में भी बुद्ध और उनके शिष्यों, बोधिसत्त्वों के प्रति श्रद्धा थी, यह वाण के वर्णनों से मालूम होता है। यह भी नहीं कहा जा सकता, कि कि सरह का कुल बौद्ध था या ब्राह्मण-धर्मी। सरहको जहाँ सिद्ध और योगीश्वर कहा जाता है, वहाँ वही एक सन्त हैं, जिन्हें 'महान् ब्राह्मण' (तिब्बती—ब्रम्. से. छेन्. पो) की उपाधि से विभूषित किया गया है। यह जातिवाद के खयाल से नहीं, बल्कि 'धर्मपद' में वर्णित ब्राह्म-गुणों के धनी होने के कारण। अपने प्रसिद्ध 'दोहाकोश' के पहिले ही दोहा में उन्होंने ब्राह्मणवाद पर प्रहार किया है, इसलिए वह उसके पक्षपाती नहीं थे, इसमें सन्देह नहीं।

उनके बाल्य और नवतारुण्य का भी हमें पता नहीं मिलता। 'होन-हार बिरवान के होत चीकने पात' की उक्ति बालक सरह पर ठीक घटित होती रही होगी। वह असाधारण मेधावी थे, इसमें क्या शक हो सकता है? मेधावी होने के साथ-साथ वह मस्तिष्क से प्रकृतिस्थ नहीं थे, जिसका अर्थ यह नहीं कि वह पागल थे। वह बचपन से ही ऐसे थे, इसे नहीं कहा जा सकता। बाज वक्त प्रतिभाओं में इस तरह के लक्षण पीछे प्रकट होते हैं, जब कि दुनिया को देख लेने पर उसका रोब उनके हृदय से दूर हो जाता है, और वह सभी प्रकार की रूढ़ियों को निस्सार समझ खुल्लमखुल्ला बगावत करने लगते हैं। आगे के जीवन को देखने से भी सरह को आरंभ में प्रकृतिस्थ प्रतिभावान् ही मानना पड़ेगा। संभव है, बाल्य काल में उनकी शिक्षा-दीक्षा अपने नगर में ही हुई। यदि उनका कुल बौद्ध नहीं था, तो उनका अध्ययन ब्राह्मणों की तरह घर पर या किसी ब्राह्मण गुरु के पास हुआ। उन्होंने अपने वेद के साथ व्याकरण, कोश, काव्य का अध्ययन किया होगा। फिर उनकी न तृप्त होनेवाली जिज्ञासा उन्हें किसी बौद्ध विद्वान् के पास ले गई होगी। यदि उनका कुल जन्मना बौद्ध रहा, जो उस समय असंभव नहीं था, तो उनके सीधे बौद्ध-संघ में सम्मिलित होने में कोई दिक्कत नहीं थी। श्रद्धालु माता-पिता अपने पुत्र—कभी-कभी एकलौते पुत्र—को भी प्रव्रजित करके संघ का दायाद

बनाना चाहते थे, जैसा कि राजा अशोक ने किया था। जैसे भी हो, नालन्दा में अध्ययन के लिए सरह पीछे पहुँचे होंगे। अत्यन्त कम अपवादों के साथ नालन्दा में उन्हीं छात्रों को प्रवेश मिलता था, जो कि वहाँ की द्वार-परीक्षा में उत्तीर्ण होते थे। यह परीक्षा काफी कठिन होती थी। परीक्षा में उत्तीर्ण होने-भर की योग्यता प्राप्त करके सरह ने नालन्दा की ओर प्रस्थान किया होगा।

बाल्य-नाम क्या था, यह हमें नहीं मालूम, पर सरह या सरहपा के नाम से प्रख्यात होने से पहिले उनका नाम राहुलभद्र और सरोज (सरोरुह) वज्र भी था। भिक्षु-नाम संभवतः राहुलभद्र ही था, सरोजवज्र वज्रयान से संबंध प्रकट करने के लिए हुआ गया। राहुलभद्र के कौन प्रथम उपाध्याय और आचार्य थे, इसका पता कैसे लग सकता है, जब कि उन्होंने अपने सत्-गुरु को भी नाम लेकर कहीं याद नहीं किया, यद्यपि उनके प्रति सम्मान प्रकट करने में पीछे नहीं हैं। नालन्दा में रहते उनके एक अध्यापक हरिभद्र थे। हरिभद्र धर्मकीर्त्ति (वाण के वृद्धसमकालीन) के समान शान्त-रक्षित के शिष्य थे। वह दर्शन और प्रमाणशास्त्र के अपने समय के महा-पंडित थे। शान्तरक्षित भोट. सम्राट् खिस्रोङ दे. चन् (७५५–८० ई०) के के बुलाने पर तिब्बत गये और उन्होंने वहाँ के प्रथम संघाराम सम्.ये को ७७६-८० ई० (दूसरी परम्परा के अनुसार ८२३–८३५ ई०) में बनवाया। ७९३ ई० के करीब तिब्बत में ही इस अद्भुत विद्वान् तथा अपने परोप-कारमय जीवन के कारण आज भी भी तिब्बत में बोधिसत्त्व के नाम से प्रसिद्ध पुरुष की मृत्यु सौ वर्ष की आयु में हुई। इस प्रकार शान्तरक्षित का जन्म ६९३ में हुआ था। संभवतः उनके जीवन-काल में ही राहुल-भद्र सरहपा बन चुके थे।

सरहपाद के काल के बारे में यहाँ कुछ कहना जरूरी है। वह शान्त-रक्षित-शिष्य हरिभद्र के विद्यार्थी रह चुके थे और हरिभद्र राजा धर्मपाल (७७०–८१५ ई०) के समय मौजूद थे। सरहपा भी धर्मपाल के समकालीन थे, पर साथ ही यह भी मालूम है, कि सरह के शिष्य शबरपा के शिष्य लूइपा राजा धर्मपाल के कायस्थ (सचिव या लेखक) थे। अपने राजा के साथ वह वारेन्द्र (पूर्वी बंगाल) में थे, जब लुई सिद्ध शबरपा के घनिष्ठ संपर्क में आ राजा से आज्ञा ले गृहत्यागी बने। इससे मालम होता है,

उस समय सरहपा का देहान्त हो चुका था, जिसके कारण उनके शिष्य शबर को सर्वोपरि सिद्ध माना जाने लगा था। लुईपा—भूतपूर्व राज-कायस्थ—असाधारण पुरुष थे, यह इसीसे मालूम होगा, कि गणना में तृतीय (सरह 7 शबर 7 लुई) होने पर भी सिद्धों की सूची में वह सिद्ध नम्बर एक हैं। यदि लुईपा धर्मपाल के अन्तिम समय ८०० ई० के करीब मौजूद थे, तो सरहपा की मृत्यु ७८० के करीब शायद हो चुकी थी।

राहुलभद्र कितने ही सालों तक नालन्दा में पहले विद्यार्थी पीछे अध्यापक के तौर पर रहे। वह बौद्ध-शास्त्रों को पढ़ाते रहे होंगे। कविता की ओर उनकी स्वाभाविक रुचि जरूर रही होगी, पर बौद्धधर्म ने अश्वघोष (ईसा की प्रथम शताब्दी) और उनके समकालीन मातृचेट, तथा कुछ पीछे के आर्यशूर को पैदा करने के बाद कविता के क्षेत्र को छोड़कर प्रमाणपटुता को अपना लक्ष्य बना उसमें ही परम सफलता प्राप्त की। तो भी जो थोड़े-से संस्कृत श्लोक सरहपाद के मिलते हैं, उनमें कवित्व का अभाव नहीं है। उदाहरणार्थ—

> "या सा संसारचक्रं विरचयति मनःसन्नियोगात्महेतोः
> सा धीर्यस्य प्रसादाद् दिशति निजभुवं स्वामिनो निष्प्रपञ्चः।
> तच्च प्रत्यात्मवेद्यं समुदयति सुखं कल्पनाजालमुक्तं,
> कुर्यात् तस्यांघ्रियुमं शिरसि सविनयं सदगुरोः सर्वकालम्॥"

—बौद्ध गान ओ दोहा, पृष्ठ ३

और भी मधुर यह पद्य—

> "तनुतरचित्ताङ्कुरको विषयरसैर्यदि न सिच्यते शुद्धैः।
> गगनव्यापी फलदः कल्पतरुत्वं कथं लभते॥" —वही, पृष्ठ ४

इसमें सरहपाद ने शुद्ध विषय-रस के सेवन पर जोर दिया है। इसी भाव को और स्पष्ट करते वह कहते हैं—

> "येनैव विषखण्डेन म्रियन्ते सर्वजन्तवः।
> तेनैव विषतत्त्वज्ञो विषेण स्फुटयेद् विषं॥"

—वही, पृष्ठ, ७५

सिद्धचर्या की ओर पैर बढ़ाने से पहले राहुलभद्र ने शास्त्रों के अध्ययन के साथ काव्यों का अवगाहन किया होगा। यद्यपि कवि पैदा करने की प्रवृत्ति बौद्ध-विद्यापीठों में नहीं देखी जाती थी, बल्कि उनकी उसकी

ग्रोर कुछ उपेक्षा ही थी, यह इससे स्पष्ट है, कि चन्द्रगोमी ग्रपने चान्द्र व्याकरण के लिए जितने प्रसिद्ध हैं, उतने ग्रपने काव्य-ग्रंथों के लिए नहीं। उनका 'लोकानन्द' नाटक तिब्बती में ग्रनुवादित होने के कारण बच रहा है, नहीं तो वह उनकी ग्रौर काव्य-कृतियों के साथ लुप्त हो गया होता। यह नहीं माना जा सकता, कि 'लोकानन्द' ही चन्द्रगोमी की ग्रादिम ग्रौर ग्रन्तिम कृति रही होगी। सामान्य शास्त्रों के ग्रध्ययन में बौद्ध सांप्रदायिक नहीं थे। पाणिनि का वह बहुत सम्मान करते थे, ग्रौर एक समय बौद्ध ही पाणिनि-व्याकरण के महान् ग्राचार्य माने जाते थे। 'काशिका' (पाणिनि-वृत्ति) को बौद्ध-कृति माना जाता है। पतंजलि के 'महाभाष्य' के बाद पाणिनि-वैयाकरण का सबसे प्रौढ़ प्राचीन ग्रंथ 'न्यास' तो महान् नैयायिक ग्रौर, महावैयाकरण जिनेन्द्रबुद्धि ग्राचार्य की कृति है, जो बौद्ध थे। जिनेन्द्रबुद्धि ने न्यास की तरह ही दिङ्नाग के महान् ग्रंथ 'प्रमाणसमुच्चय' पर एक सुन्दर टीका लिखी है, जो ग्रब तिब्बती-अनुवाद में ही प्राप्य है।

सरहपाद के सामने ग्रश्वघोष के काव्य 'बुद्धचरित' ग्रौर 'सौन्दरनन्द', नाटक 'सारिपुत्रप्रकरण' ग्रौर 'राष्ट्रपाल' मौजूद थे। गुणाढ्य की 'बृहत्कथा', भास के नाटक, कालिदास की ग्रमर कृतियाँ, प्रवरसेन के नाम से प्रसिद्ध पर कालिदास की प्राकृत-कृति 'सेतुबन्ध', दंडी भवभूति के सुभाषितों का ग्रवगाहन करना राहुलभद्र के लिए सुलभ ग्रौर ग्रावश्यक भी था, क्योंकि उनके विना शिक्षा पूरी नहीं समझी जा सकती थी।

राहुलभद्र को ही सरहपाद के नाम से वज्रयान के प्रथम सिद्ध होने का गौरव प्राप्त है, पर उसका यह ग्रर्थ नहीं कि मंत्रयान या वज्रयान का ग्रारंभ उन्हीं से हुग्रा था। सिद्ध चौरासी सिद्धों से पहिले भी होते रहे। 'मृच्छकटिक' में (पाँचवीं सदी) मंत्रसिद्धि की बात ही नहीं, ग्राश्चर्यवार्त्तासहस्रवाले श्रीपर्वत का भी उल्लेख है। सरहपाद से सौ साल पहिले हुए वाण हर्ष को सकल प्रणयिमनोरथसिद्धिः श्रीपर्वत कहते हैं। श्रीपर्वत नागार्जुन का निवास-स्थान रह चुका था। नागार्जुनीकोण्डा (जिला गुण्टूर, ग्रान्ध्र) में प्राप्य विशाल ध्वंसावशेष बतलाते हैं, कि श्रीपर्वत किसी समय एक महान् बौद्ध-केन्द्र था। वहाँ से मिले ग्रभिलेखों से निश्चित ही है, कि वर्त्तमान नागार्जुनी कोण्डा का ही पुराना नाम श्रीपर्वत था। सरह के समय से

पहिले ही श्रीपर्वत प्रसिद्धि पा चुका था। सरहपाद को भी उसने अपनी ओर आकृष्ट किया, और वह अक्सर वहाँ आकर रहा करते थे। उनको सद्गुरु वहाँ मिले या और कहीं, इसका पता नहीं। वस्तुतः सिद्धचर्या का बौद्ध-इतिहास सरह तक जाकर अतीत के अन्धकार में विलुप्त हो जाता है।

जैसे भी हो, एक दिन राहुलभद्र नालन्दा छोड़ बैठते हैं, और उसके साथ और बहुत-सी बातों को भी तिलांजलि दे देते हैं, जिसके लिए नालन्दा अस्तित्व रखता था। महायानी होते हुए भी नालन्दा में अशोक के समय से चली आती विनय-परंपरा मानी जाती थी। भिक्षु स्त्री-विरत रहते थे, वह मद्यपान नहीं कर सकते थे। उनके शरीर पर भिक्षुओं के चीवर अनिवार्यतया सदा बने रहते थे। राहुलभद्र को यह सारा बेकार का ढोंग मालूम हुआ। ढोंग समझ लेने पर वह अपने सम्मान-सत्कार की भी परवाह करने के लिए तैयार नहीं थे। कितने लोगों ने इसे सनक समझा होगा, पर सरह को उसकी भी परवाह थी नहीं। जैसा मैंने पहिले कहा, वह असाधारण मस्तिष्क के पुरुष थे। जिस समय उन्होंने यह महान् निर्णय किया, उस समय वह दूसरी भूमिका में पहुँच गये थे। उनकी जाग्रत और स्वप्न की अवस्थाओं की सीमा-विभाजक रेखा मिट गई। असाधारण प्रतिभा के साथ-साथ यह मानसिक स्थिति सरह ने पाई थी।

अपनी खुली बगावत को और स्पष्ट करने के लिए उन्होंने शर-कार (वाण बनानेवाले) की एक लड़की अपने साथ रख ली और स्वयं भी सरकंडों का शर बनाने लगे, जिससे उनका नाम सरहा पड़ा। फिर भक्त लोगों ने अपनी श्रद्धा के प्रतीक शब्द 'पाद' को जोड़कर उन्हें सरहपाद कहना शुरू किया। आरंभ क्या, बाद में भी सनातनी बौद्ध और सुधारक बौद्ध उनका विरोध करते रहे, पर विरोधियों से उनके भगतों की संख्या और अधिक हो गई। उनके जैसे अन्तर और बाह्य से बिल्कुल खुले और निष्कपट पुरुष की नीयत पर तो कोई आक्षेप नहीं कर सकता था। छल और प्रपंच के लिए जिन उपायों का इस्तेमाल किया जाता है, वह उन्हें इस्तेमाल करने में असमर्थ थे। वह जमात से करामात नहीं करते थे, बल्कि अपनी महामुद्रा—शरकार-कन्या—के साथ अकेले विचरा करते थे। विचरण-भूमि में नालन्दा से श्रीपर्वत तक की भूमि तो अवश्य थी, हो सकता है, वह उत्तरी भारत के सारे भूभाग में विचरते हों।

वह अपने विचारों का प्रचार करना चाहते थे । ध्यान के साथ करुणा पर भी उनका बहुत जोर है और करुणा विना ध्यान या शून्यता-योग को वह व्यर्थ समझते हैं। इस करुणा से ही प्रेरित होकर लोगों को अन्धेरे से बाहर निकालना चाहते थे । अपने दोहों के रचने में उनका केवल यही उद्देश्य रहा होगा, यह नहीं कहा जा सकता । उनके कितने ही पद्य मौज में निकले सहज उद्‌गार-से मालूम होते हैं। संस्कृत को नहीं, बल्कि साहित्यिक भाषा के तौर पर अभी अस्वीकृत अपभ्रंश को अपने भावों का माध्यम बनाना बतलाता है, कि अपने दूर के अनुयायी कबीर की तरह वह पंडितों से नहीं, बल्कि जन-साधारण से संबंध रखना चाहते थे ।

§३. सरह की कृतियाँ

सरहपा केवल अपभ्रंश-पद्यों के ही रचयिता नहीं हैं, बल्कि कई संस्कृत-ग्रंथ—विशेषकर तंत्रों की टीकाएँ—उनके नाम की तिब्बती स्तन्-ग्युर में हैं । इन्हें उन्होंने अपनी किस स्थिति में लिखा था, यह कहना मुश्किल है, संभवतः वह आरंभिक अवस्था की कृतियाँ हों । ऐसी कृतियों की संख्या सात है—

नाम	स्तन्.ग्युर् के तंत्रों में स्थानपृष्ठ-पंक्ति	अनुवादक
१. बुद्धकपालतंत्रपंजिका 'ज्ञानवती'	र १०४ख१–१५०क२	गयाधर/ग्यि.जो.स.ल बऽि
२. बुद्धकपालसाधन	र २२५ख३–२२६ख३	,, ,,
३. बुद्धकपालमण्डलविधि	र २३०ख२–२४३ख५	,, ,,
४. त्रैलोक्यवशंकरलोकेश्वरसाधन	फु १८२ख२–१८३क६	अभयाकर/छल्.ख्रिम्. ग्यल्. म्छन्
५. ,, ,,	फु १८४क६–१८४क६	रत्नाकर/ ,,
६. त्रैलोक्यवशंकरावलोकितेश्वर-साधन	मु ४६ख२–४७क७	अमोघवज्र/ब.रि.लो.च.ब
७. त्रैलोक्यवशंकरलोकेश्वरसाधन	मु ८८क१–८८ख३	ग्रग्स.प.ग्यल्.म्छन्.

इनके अतिरिक्त यहाँ अनुवादित १६ अपभ्रंश की कविताएँ स्तन्.ग्युर् संग्रह के तंत्र (र्ग्यद्) विभाग में संगृहीत हैं, जिनके सरह की कृति होने की बहुत संभावना है, विशेषकर वे, जिनमें सरह के स्वतन्त्र और फक्कड विचारों की छाप दीख पड़ती है। यह कृतियाँ निम्नलिखित हैं :

		पद्य-संख्या		
१.	दोहाकोश गीति	१३५—२०	वि. ७०ख५—७७क३	०
२.	दोहाकोश नाम चर्यागीति	३८-२	शि. २६ख६—२८ख६	०
३.	दोहाकोशोपदेश गीति	८०-१	शि. २८ख६—३३ख४	वज्रपाणि
४.	क.ख.दोहा नाम	३३-०	शि. ५५ख३—५७ख२	श्री वैरोचनरक्षित
५.	क.ख.दोहाटिप्पण	०	शि. ५७ख२—६५ख७	श्री वैरोवचनवज्र
६.	कायकोशामृतवज्रगीति	१२४—०	शि. १०६क२—११५ख४	०
७.	वाक्कोशरुचिरस्वरवज्रगीति	४७-२	शि. ११३क२—११५ख४	कृष्ण (नग्.पो.प)
८.	चित्तकोशाजवज्रगीति	२५-२	शि. ११५ख४—११७क२	,,
९.	कायवाक्चित्तामनसिकार	६०-०	शि. ११७क३—१२२क३	,,
१०.	दोहाकोश महामुद्रोपदेश	४३-२	शि. १२क३—१२४क३	वैरोचनरक्षित
११.	द्वादशोपदेशगाथा	१६-३	शि. १२४क७—१२५क३	०
१२.	स्वाधिष्ठानक्रम	१६-०	शि. १२५क३—१२६क६	शान्तभद्र/ मे.वन्.छोस्.वर्
१३.	तत्वोपदेशशिखरदोहागीतिका	२५-१	शि.१२६ख—१२७ख१	कृष्णपंडित
१४.	भावनादृष्टिचर्याफलदोहागीति		सि. ३क५—४क२	०
१५.	वसन्ततिलकदोहाकोश-गीतिका	६—३०	सि. ५ख२—६ख६	०
१६.	महामुद्रोपदेशवज्रगुह्यगीति	१३४-१	सि. ५५ख७—६२क६	कमलशील/स्तोन्.प. सेङ्.गे.ग्‌यल्.पो

सरह की अपभ्रंश की कृतियाँ दोहाकोश वा दोहा-गीति के नाम से प्रसिद्ध हैं। पर हम देखते हैं, कि उनकी सबसे अधिक प्रसिद्ध कृति "दोहा-कोश नाम चर्यागीति" में दोहों की अपेक्षा चौपाइयाँ अधिक हैं। इससे यही मालूम होता है, कि दोहा शब्द अभी अपने आज के अर्थ में रूढ़ नहीं हुआ था और उसका अर्थ दोहरी पंक्ति वाले छन्द से था। इसी तरह अभी अमरकोशके रहते भी 'कोश' शब्द केवल शब्दकोश के लिये इस्तेमाल नहीं होता था, इसीलिए यहाँ 'दोहाकोश' का अर्थ दोहासंग्रह मात्र था। प्राकृत की महान् कृति 'गाथासप्तशती' को पहिले 'गाथा-कोश' ही के नाम से पुकारा जाता था। इसमें शक नहीं कि दोहाकोश नाम का प्रचार सरह की इसी कृति द्वारा हुआ। उनकी चार कृतियाँ भिन्न-भिन्न नाम के दोहा-कोश हैं। तिब्बत में अब भी प्रचलित परंपरा के अनुसार सात दोहाकोश (दोहा. म्ज़ोद्. ब्दुन्) सिद्धचर्या और वज्रयानी योग के प्रेमियों के वेद माने जाते हैं। इनमें सरहपा, लुईपा, विरूपा, कण्हपा, तिलोपा आदि के कोश सम्मिलित हैं। तिब्बती भाषा में सप्तकोश पर बहुत बड़ा साहित्य है जिसके अध्ययन से सिद्धों के विचारों पर काफी प्रकाश पड़ सकता है।

§४. सरह की परम्परा

जैसा कि ऊपर बतलाया गया, शबरपा सरह के प्रधान शिष्य थे, जिन्हें आदर से शबरेश्वर भी कहते हैं। शबर कहने से उन्हें आदिवासियों की सन्तान नहीं समझना चाहिए। सरहपा के दूसरे शिष्यों में जोगी, नागार्जुन और सर्वभक्ष भी थे। यह नागार्जुन यदि कोई ऐतिहासिक व्यक्ति थे, तो द्वितीय शताब्दी के माध्यमिक आचार्य नागार्जुन नहीं हो सकते, यद्यपि ऐसा करने के लिए उन्हें कई सदियों की आयु देने की कोशिश की गई है और इसीलिए उनकी ऐतिहासिकता—जहाँ तक सरहपाद के शिष्यत्व का सम्बन्ध है—संदिग्ध हो गई है। तिब्बती परंपरा ने आदि-सिद्ध सरहपाद को छठा सिद्ध नहीं बनाया, बल्कि जान पड़ता है, किसी पक्षपात के कारण प्रथम सिद्ध बनने का सौभाग्य सरह के प्रशिष्य भूतपूर्व राज-कायस्थ लूईपा को प्राप्त हुआ। बिहार-बंगाल के नालन्दा, विक्रमशिला और जगत्तला के महान् विहारों के तुर्कों द्वारा ध्वस्त कर दिये जाने पर

भारतीय संघराज शाक्यश्रीभद्र के साथ शरणार्थियों की जो मंडली तिब्बत पहुँची थी, उसमें शाक्यश्रीभद्र के शिष्य तथा अपनी भाषा (पूर्वी मैथिली) के कवि विनयश्री भी थे। विनयश्री तिब्बत के स.स्क्य बिहार में बहुत समय तक रहे। शायद वह फिर लौटकर भारत नहीं आये। वहाँ एक बंडल से जो मूल्यवान् हस्तलेख मिले थे, उनमें विनयश्री के कितने ही स्वरचित गीतों के साथ सिद्धों का नामानुस्मरण भी था, जिसका शायद आज ही तरह गुरुपरम्परा के तौर पर पाठ किया जाता था। पाठ कुछ अधिक भ्रष्ट मालूम होता है, जिससे विनयश्री के हाथ का लिखा होने में सन्देह होता है। इस परम्परा में भी पहिला नाम लूईपा का मिलता है, जैसे :—

"लुइ (१) लीला (२) बिरुआ (३) कमल (३०) कलक्कल (६८) चलणा।
कांकण (२९) कन्हदेव (१८) तं डोम्बि (४) वीणा (११) नाग (७६) हरणा। (१)
सिद्ध (च) लणो भावि रपभास र बान्दइ। ध्रु।
भाट (२४) भादे (३५) भुसुकु (४१) कोकिल (८०) जोगी (५३) बाज-पाचे। (२)
नीलप (४०) माथ विसुधो डेङ्किपा (३१) असिष[2] धरि।
मेखला (६६) सरह (६) सबर (५) तैलोग्रे (२२) कुक्कुरिपा (३४) अप सिद्धा। (३)
चन्दकिति भुअ-भुअ कि अन्ता पुण सरहें निबधा।
चन्दण[3] किण्णपा (१७) आ माहिल (३७) वीर सम्वरा। (४)
सुगतभूषण धोकडि (४९) तान्ति (३३) थामधुम (३६) अवतारा।
सहजो स कपिल थाकलि (१९) सब्बभक्ष (७५) विसेसें[4]। (५)
सान्ति (१२) चाटपा (५९) लक्ष्मि (८२) अनतिन (५८) सनल विसेसें।
महिधर (५०) सुखमदेव कन्हपा (१७) जउडि (६४) विरुअ (३) तीनी। (६)
चन्द्रभूति दुदुआ चन्द[5] राउल कोङ्कलें (६८) आहि ना।

विर अचिन्त (३८) अधार्धी बज्ज-आङ्कर करालो। (७)

दारिक (७७) गुडरि (५५) गगना (१९) डाक पभाकर काम्बलि (३०)

उडिआणावर घंटा (५२) कमलसिल निरासु। (८)

श्री जलन्धर (४६) नाग (?७६) बुद्ध भल दिलाहुं सुप्रसिद्ध।

उडबिसि दास पभासर धारना सिद्ध। (९)

आर्यदेव (१८) नागार्जुन (२६) राउलें (४७) सिद्ध मेखला (६६) निवधा ॥

इस सूची में कुछ नाम ऐसे भी हैं, जो ८४ सिद्धों की प्रामाणिक सूची में नहीं मिलते। पर वह किसी की गुरु-परम्परा में हो सकते हैं, जैसे चन्द्रराहुल की पूरी सूची हम अन्यत्र (पुरातत्त्वनिबंधावली) में दे चुके हैं। यहाँ हम सिद्ध सरहपाद के शिष्य वंशवृक्ष को देते हैं, जिससे पता लगेगा कि आठवीं से ग्यारहवीं सदी ईसवी तक कौन-कौन-सी आध्यात्मिक विभूतियाँ पैदा हुई थीं—

सरह-वंश-वृक्ष

(राजा गोपाल ७६५–६६)
सरह ६
मुसुक ४१
जोगी ५३
शबर ५
नागार्जुन १६
सर्वभक्ष ७५
मेखला २६
लुई ५
आर्यदे ८१
नागबोधि ७३
पंकज ५१
किल ७३
डेंगी ३१
दारिक ७७
विरुपा ३
राहुल ४७
लीला ३
भद्र २४
(देवपाल ८१५—५४ ई०)
सर्वभक्ष ७५
चिता घंटापा ५
डोंबि ४
गुडरि ५५
जलंधर ४५
मत्स्येंद्र
मेखला ६६
अनंग ८१
कमरि ३०
तंति १३
चर्पटी ५६
धर्म ६३
कण्हपा
१७
कमरि ३०
कुकुरि ११
हालि ५०
गौरक्ष
चौरंगी
लक्ष्मो
इंद्रभूत
गुह्य
घेतन ८
मेखला ६६
कनखला ६७
महिपा ३७
भद्र २३
कंथलि ६१
भादे ३२
(नारायण ८५७–६११ ई०)
विजय
लक्ष्मी ८२
वीणा ११
जवरी ६४
तेलो २२
लीला २
(महिपाल ६६२–१०४० ई०)
शबरद्वि० नारोपा २०
थगन १६
अवधूति
मर.बा
शांतिपा १२
कमर ४५
चेलुक ५४
दीपंकरश्रीज्ञान
मि.ला
कुठालि ४४

इस वंश-वृक्ष के देखने से मालूम होगा कि गोरखनाथ––जिनका पंथ अब भी सारे भारत में फैला हुआ है––सरह>शबर>लुई>दारिक>घंटा जलंधर>मत्स्येन्द्र की शिष्य-परम्परा में थे। महाराष्ट्र के ज्ञानेश्वर भी सरह की परम्परा के ही थे, जैसे :

आदिनाथ (जलंधर)> मत्स्येंद्र> गोरख>गहनी> निवृत्ति नाथ> ज्ञानेश्वर। ज्ञानेश्वर और गोरखनाथ के बीच की कुछ पीढ़ियां छूटी मालूम होती हैं; क्योंकि गोरखनाथ राजा देवपाल (८१५–५४ ई०) के समकालीन थे और ज्ञानेश्वर १४ वीं सदी के।

§५. कवित्व

सरह के समय में पहुँचते-पहुँचते संस्कृत और प्राकृत दोनों साहित्यों का मध्याह्न बीत चुका था। अश्वघोष, भास, कालिदास के काव्य नाटक अब तक प्रसिद्ध हो साहित्यानुरागियों के प्रेम-भाजन बन चुके थे। सुबन्धु, दंडी और वाण–जैसे महान् गद्यकार कवि भी हो चुके थे। भामह और दंडी-जैसे उद्‌भट साहित्य-मीमांसक भी उस समय तक प्रसिद्धि पा चुके थे। प्रवरसेन की "कीर्त्ति" भी सागरस्य परं पार चली गई थी। सरहपाद पहिले संस्कृत के महापंडित के तौर पर नालन्दा में प्रसिद्ध हुए थे। उन्होंने इन काव्यनिधियों का अच्छी तरह अवगाहन किया था। वह चाहते तो अपने समय की शिष्ट सरणी का अनुसरण करते, उच्च समाज में एक सफल कवि के तौर पर ख्याति प्राप्त कर सकते थे। पर उन्होंने शिष्ट साहित्य की जगह लोक-साहित्य का अनुसरण करना पसन्द किया, और अपने मन से यह भाव निकाल दिया, कि कभी मैंने उन ग्रंथों का अध्ययन किया था। उनकी कविता में शास्त्र-सम्मत गुणों का अभाव नहीं है। उपमा का वह अक्सर सुन्दर प्रयोग करते हैं। उनके दोहाकोश 'चर्या-गीति' (२) के तो एक-एक पद में उपमाएँ भरी-पड़ी हैं। अफसोस है, सरह की इस अनमोल कृति को अभी मूल-भाषा में नहीं पाया गया, और उसके तिब्बती अनुवाद से ही हमें सन्तोष करना पड़ेगा। इसमें उन्होंने जो उपमाएँ दी हैं, उनमें से कुछ हैं:

(१) जैसे जलधर सागर से जल लेकर पृथिवी पर फैलाता है। (५)

(२) जैसे सागर का खारा जल जलधर के मुख में पड़ मीठा हो जाता है (११)
(३) बिजली के घोष को छोड़ पानी बरसता जाता है। (१२)
(४) जैसे फूल के भीतर की मधु को मधुमक्खी ही जानती है। (१४)
(५) जैसे दर्पण के रूप को अन्धा नहीं समझता। (१५)
(६) फूल की गंध का रूप नहीं होता, तोभी वह प्रत्यक्ष सर्वत्र व्याप्त है। (१६)
(७) कीचड़ में पड़ा उत्तम रत्न अपनी चमक को प्रकाशित नहीं करता। (२८)
(८) जैसे बीज से अंकुर होता है, अंकुर के कारण टहनियाँ होती हैं।
(१०) जैसे ब्राह्मण घृत और तंडुल से प्रज्वलित अग्नि में होम करता है। (२३)

यद्यपि इच्छा होने पर उन्होंने उपमाओं का इतना सुन्दर प्रयोग किया है, पर वह बहुत कम और एकाध ही कृतियों में। सरह ने अपनी कविता में कुछ नई मान्यताएँ स्थापित कीं, जिनका पता उनसे पहिले नहीं मिलता, यद्यपि उनका अस्तित्व लोक-काव्य में रहा होगा। यही मान्यताएँ गोरख, कबीर, नान्हक, दादू आदि सभी सन्तों में पाई जाती है। यही आगे चलकर सन्त-काव्य की कसौटी बन गई। इनमें व्यंग्योक्तियाँ, उलटवासियाँ भी शामिल हैं। सरह कविता करना अपना ध्येय नहीं समझते थे। वह नया संदेश देना चाहते थे, जिसका जिक्र हम आगे करेंगे। स्मरण करने की सुविधा के लिए जिस तरह उस समय नाना शास्त्रों पर ग्रंथ श्लोक या कारिका में लिखे जाते थे, उसी तरह उन्होंने भी अपने विचारों को लौकिक छन्दों में गूँथा। बल्कि सरह के बारे में यह भी कहना ठीक नहीं प्रतीत होता। सरह आज की भाषा में अब्नार्मल प्रतिभा के धनी थे। मूड आने पर वह कुछ गुनगुनाने लगते। शायद उन्होंने स्वयं इन पदों को लेखबद्ध नहीं किया। यह काम साथ रहनेवाले सरह के भक्तों ने किया। यही कारण है, जो दोहाकोश के छन्दों के क्रम और संख्या में इतना अन्तर मिलता है। सरह जैसे पुरुष से यह आशा नहीं रखनी चाहिए, कि वह अपनी धर्म की दूकान चलायेगा, पर, आगे वह चली, और खूब चली, इसे कहने की आवश्यकता नहीं। ८०० से कुछ ऊपर के 'दोहों' के मूल-रूप

में आये विना हम उनकी कविता का पूरा मूल्यांकन नहीं कर सकते । वह मूल में अब न मिल सकेंगे, ऐसा मैं नहीं समझता, अब भी उनमें से कितने ही तिब्बत में मिलेंगे, यह मेरी धारणा है ।

दोहा कोश-गीति में भी उपमाओं का प्रयोग सरह ने किया है, यद्यपि चर्यागीति जितना नहीं:—

(११) अप्पा परहि ण मेलविउ, गमणागमण ण भोग्ग ।
तुस कुट्टन्ते काल गउ, चाउल हत्थ ण लाग्ग । (५४)

(१२) अण्ण तरंग कि अण्ण जलु, भव-सम ख-सम सरूअ ।। (७६)

(१३) जत्तइ पइसइ जलहिं जलु, तत्तइ समरसु होइ ।। (७८)

(१४) सुअणे जिम वरकामिणि माणिउ । रइ-सुह तहिं पच्चक्खहिं समाणिउ ।
(१०७)

(१५) जिम-जल-मज्झें चन्दडा, णउ सो साच्च ण मिच्छ ।
तिम सो मण्डल-चक्कडा, णउ हेडइ णउ खित्त ।। (११८)

(१६) जिम जलेहिं ससि दीसइ च्छाआ । तिम भवे पडिहासइ सअलवि माआ
(१३०)

कबीर की उलटवासियाँ मशहूर हैं, पर इसका भी आरंभ हम सरह में पाते हैं । 'दोहाकोशगीति' के कुछ उदाहरण देखिये—

(१) बद्धो धावइ दस दिसाहि, मुक्को णिच्चल ट्ठाअ ।
एमइ करहा पेक्ख सहि, विवरिअ महु पडिहाअ ।। (२६)

(२) आगगे आच्छअ बाहिरे आच्छअ । पइ देक्खअ पडवेसी पुच्छअ (६६)

रहस्योक्तियाँ तो सरह की होनी ही चाहिए; क्योंकि वह मूलतः रहस्यवादी विचारक हैं । इनके श्लेष परमपद-परक होने पर भी साधारण कामुकता को भी प्रकट करते हैं, जिसके कारण पीछे वह घोर वामाचार के सहायक बन गये । उनका निम्न गीत बहुत सुन्दर है, भाव में और काव्य-गुण में भी—

ऊँचा-ऊँचा पाबत तहिं वसइ सबरी बाली ।
मोरङ्गी पिच्छि प(हि)रहि सबरी गीवत गुजरी माला ।
ऊमत सबरो पागल सबरो, मा कर गुली-गुहाडा ।
तोहारि णिअ घरिणी सहज सुन्दरी ।ध्रु.।

णाणा तरुवर मौलिल रे, गअ्रणत लागेलि डाली ।
एकली सबरी ए वन हिण्डइ, कर्णकुंडल वज्रधारी ।
तिअ्र धाउ खाट पडिला सबरो, मह सुह सेज्जि छाइली ।
सबरो भुजंग णइरामणि दारी, पेक्ख (त) राति पोहाइली ।
हिए ताबोला महासुहे कापुर खाई ।
सून निरामणि कण्ठे लइअ्रा महासुहे राति पोहाई ।
गुरु वाक पुंछअ्रा बिन्ध णिअ्र मणे वाणें ।
एके शर-सन्धानें बिन्धह, बिन्धह परम णिवाणें ।
उमत सबरो गरुअ्रा रोषे,
गिरिवर सिहर सन्धि पइसन्ते, सबरो लोडिब कइस ।

ऊँचे-ऊँचे पर्वत पर शबर-बालिका बैठी है, जिसके सिर पर मोर-पाँख और ग्रीवा में गुंजा की माला है । उसका प्रिय शबर प्रेम में उन्मत्त पागल है । "ओ शबर, तू हल्ला-गुल्ला मत कर । तेरी अपनी (निज) गृहिणी सहज सुन्दरी है । उस पर्वत पर नाना प्रकार के तरुवर फूले हुए हैं, जिनकी डालियाँ गगन से लगी हुई हैं । कान में कुंडल-वज्र धारे शबरी अकेली इस वन में घूम रही है । दौड़कर खाट पर महासुख-सेज पर शबर पड़ गया। शबर भुजंग (विट) और नैरात्म्य (शून्यता) वैश्या (दारी) को देखते रात बीत गई । हृदय तांबूल को महासुख-रूपी कपूर (के साथ) खा, शून्य नैरात्मा को कंठे लगा महासुख में रात बीत गई । गुरु-वचन पूछकर निज मन-रूपी बाण से बेध—एक ही शर-सन्धान से बेध-बेध परम निर्वाण को ।

इसके अधिक भाग में शबरी बालिका उसके तरुण प्रेमी शबर तथा उनके मनोहर पर्वत-वन-निवास का सुन्दर और स्वाभाविक वर्णन है । यदि कुछ विशेष सांकेतिक शब्दों पर ध्यान न दिया जाय, तो यह एक शृंगारी कविता है। हरेक पाठक उन सांकेतिक शब्दों की ओर ध्यान देने के लिए मजबूर भी नहीं है। यहाँ शबरी से सन्तों और सरह के यहाँ भी सुरति (तल्लीनता) अभिप्रेत है । उसका प्रेमी शबर साधक है। बुद्ध के मुख्य सिद्धान्त—जो है, वह सब क्षणिक है—के अनुसार जगत् और उसके किसी पदार्थ के अन्तस्तल में भी कोई नित्य पदार्थ—आत्मा या ब्रह्म—निहित नहीं है। सभी आत्म-रहित निरात्मा या नैरात्म्य, नइ-रामणि है । उसी नैरात्म्य तत्त्व-शून्यता को साक्षात् करना है। उसी

'णइरामणि दारी' का भुजंग हरेक साधक विलासी को बनना है। उसका साक्षात्कार महासुख की अनुभूति है, जिसे योगी ध्यानमग्न हो प्राप्त करता है।

§३. सरह के विचार

१. धर्म

सरह विद्रोही थे। राजनीतिक विद्रोही नहीं, विचारों की दुनिया के विद्रोही और कितने ही अंशों में सामाजिक विद्रोही भी। उन्होंने अपने 'दोहाकोश-चर्यागीति' के पहिले १२ दोहों में अपने समय के धार्मिक संप्रदायों और उनके विचारों का खंडन किया है। "यदि नग्न रहने से मुक्ति हो, तो कुत्ते और सियार भी मुक्त हो जायँगे। मोर-पंख ग्रहण करने से यदि मोक्ष हो, तो मोर और चमर भी मुक्त हो जायँगे। शिला चुगकर खाने से यदि ज्ञान हो जाये, तो करि और तुरंग भी ज्ञानी हो जायेंगे। इन्हीं भावों को और करीब-करीब सरह के शब्दों में ही, छ शताब्दियों बाद कबीर ने कहा—

का नांगे का बाधे चांम। जौ नहिं चीन्हसि आतम राम।
नागें फिरे जोग जे होई। वनका मृग मुकति गया कोई।
मुंड-मूंडाये जौ सिधि होई। स्वर्गहि भीड़ न पहुँची कोई।
(कबीर-ग्रंथावली, पृष्ठ १३०)

अपने समय के कितने ही मूढ़ विश्वासों का—जिनमें से बहुतेरे बारह सदियों बाद आज भी उसी तरह प्रबल हैं—खंडन सरह ने जैसे किया है, उसके नमूने लीजिए—

मंत्र-तंत्र खंडन—
किन्तहि दीपे किं णेवेज्जे। किन्तइ किज्जइ मन्तह भावें। (१२)
मन्त ण तन्त ण धेअ ण धारण। सब्बवि रे बढ़, विब्भमकारण। (३४)

शास्त्र को सरह ने मरुस्थल कहा है, जिसकी भूल-भूलैया में पड़कर आदमी निकल नहीं सकता—

गुरु-वअण-अमिअ-रस, धवडि ण पिबिअउ जेहिं।
बहुसात्तात्थ-मरूत्थलेहिं, तिसिअ मरिब्बो तेहिं॥ (४४)

और पंडितों की खबर लेते कहते हैं—

पंडिअ सअल सत्थ वक्खाणअ। देहहि बुद्ध वसन्त ण जाणअ। (७४)
छूत-छात और भक्षाभक्षय के कठोर नियमों की निस्सारता बतलाते कहते हैं।

जइ चण्डाल-घरें भुंजइ, तअवि ण लग्गई लेउ। (११२)

(१) साधु होना बेकार

घरहि म थक्कु म जाहि वणे, जहि तहि मण परिआण।
सअलु णिरन्तर बोहि–ठिअ, कहिं भव कहिं णिब्बाण।
णउ घरे णउ वर्णे बोहि ठिउ, एहु परिआणहु भेउ।
णिम्मल चित्त-सहावता, करहु अविकल सेउ। (बाग० १०३, १०४)

घर में न रहो न वन में, सब जगह तो निरन्तर बोधि (परम ज्ञान) स्थित है, फिर कहाँ भव (संसार) और कहाँ निर्वाण ? न घर में बोधि (परमज्ञान) है न वन में। इस भेद को अच्छी तरह समझ लो। चित्त का निर्मल होना असली बात है, उसका बराबर सेवन करो।

इन्द्रिय-संयम के सरह पक्षपाती हैं, पर उसके चरम रूप को नहीं पसन्द करते। उन्होंने कहा है—

विसआसत्ति म बन्ध करु, अरे बढ़ सरहें वुत्त।
मीण-पअङ्गम करि भमर, पेक्खह हरिणह जुत्त। (बाग० ७१)

रस-रूप-स्पर्श-गंध-शब्द के लोभ में पड़कर मीन, पतंग, भ्रमर, हाथी, और हरिन नष्ट होते हैं, इस प्रसिद्ध उपमा को देकर वह संयम का पाठ पढ़ाते हैं।

(२) सहज जीवन

सरह की सबसे बड़ी देन जो है, वह है, सहज या नैसर्गिक जीवन पर जोर देना। सहजवाद के वह प्रथम आचार्य हैं, इसलिए उनके पन्थ को सहजयान भी कहते हैं। यह उल्लेखनीय बात है, कि अन्य कितनी बातों की तरह यह वाद कबीर के पास भी पहुँचा, यद्यपि तब कबीर के जन्म-देश में एक भी बौद्ध या सहजयानी नहीं रह गया था। कबीर कहते हैं—

अब मैं पाइबो रे पाइबो ब्रह्मगियान।
सहज समाधें सुख में रहिबो, कोटि कलप विश्राम।

—कबीर-ग्रंथावली, पृष्ठ ८९

कबीर साहेब चौरासी सिद्ध शब्द से अपरिचित नहीं थे। उन्होंने कहा है—

धरती अरु असमान विचि, दोइ तूबडा अबध।
षट दरसन संसै पड्या, अरु चौरासी सिद्ध ।। ५३६

वही, पृष्ठ ५४

पर उन्हें नहीं मालूम था, कि चौरासी सिद्धों में प्रथम सरहपा थे, जिनके बीसियों भावों को कबीर ने ले लिया है। सरह कहते हैं—

झाण-हीण पब्बज्जें रहिअउ। गही वसन्तें भाज्जें सहिअउ ।। (१८)

ऐसे ध्यान और साधुवेष से रहित भार्या-सहित घर में रहते ज्ञानी कबीर स्वयं थे।

सरह फिर कहते हैं—

खाअन्तें पीवन्तें सुरअ रमन्तें। आलिउल बहलहो चक्क फरन्तें ।।
एवंहि सिद्धि जाइ परलोकह। माथे पाअ देइ भुअलोक (४८)

सहज-जीवनका निर्देश करते वह कहते हैं—

देक्खउ सुणउ पईसउ साद्दउ। जिग्घउ भमउ बईसउ उट्ठउ ।।
आलमाल बवहारें बोल्लउ। मण च्छुडु एकाआरे म्म चलउ ।।
चिन्ताचित्तवि परिहरहु, तिम अच्छहु जिम बाल ।। (६३,६४)

स्पष्ट है, कि सरह जीवन के भोगों को त्याज्य नहीं मानते। हाँ उनमें आसक्ति त्याज्य है। उपनिषद् के सन्तों ने उनसे डेढ़ हजार वर्ष पहिले ज्ञानी को 'बाल्येन तिष्ठासेद्' का उपदेश दिया था। सरह भी कहते हैं, 'वैसे रहो जैसे बालक रहता है'। आसक्ति और छल-पाखंड के जीवन के वह विरोधी थे। इसे उन्होंने आजकल के कितने ही महात्माओं की तरह दूकान चलाने के लिए नहीं इस्तेमाल किया, बल्कि वह स्वयं वैसा जीवन बिताते थे। उनके साथ शर बनानेवाले की कन्या रहती थी, यह पहिले बतला आये हैं। भिक्षुओं के चीवर के साथ उनके नियमों का उन्होंने प्रत्याख्यान कर दिया था। उनका कहना था—

विसअ रमन्त ण विसअहिं लिप्पइ। उअअ हरन्त ण पाणी च्छुप्पइ। (७१)

विषयों में रमण करते विषयों में लिप्त न हो। पानी निकालते हुए पानी को न छूये।

जइ जग पूरिअ सहजाणन्दे। णाच्चहु गाअहु विलसहु चंगे ।। (१३६)

जगत् सहज आनन्द से भरा हुआ है। नाचो, गाओ, अच्छी तरह विलास करो।

आज के लिए भी सरह के ये विचार विद्रोही मालम होंगे, फिर आज से बारह सौ वर्ष पहिले के आचार और निवृत्ति-प्रधान भारतीय भद्र समाज के लिए यह कितनी कडवी घूँट साबित हुई होगी, इसे अच्छी तरह समझा जा सकता है।

२. योग (समाधि)

आज भी योग-ध्यान के पीछे लोग पागल दीखते हैं। सरह के समय भी—

'झाणें मोहिअ सअलवि लोअ।' (ध्यान पर सभी लोग मोहित) थे। सरह स्वयं योगी नहीं योगीश्वर थे। उन्होंने ध्यान-समाधि का बहुत अभ्यास किया था, और उसके संबंध में फैले हुए भ्रमों को जानते थे। उन्होंने मूढ़ योगियों के योग को काष्ठयोग कहते सावधान किया है—

"पवण धरिअ अप्पाण म भिन्दह। कट्ठ जोइ णासग्ग म बंदह।।" (९३) श्वास रोककर या नासाग्र में चित्त को लगाकर योगी चमत्कार दिखलाता है। पर, चित्त की एकाग्रता से आदमी ऐसी चीजों को भी देखने लगता है, जो उसके चित्त की सृष्टि है ? इस प्रकार वह आत्म और पर-वंचना करता है। चित्त, मन और विज्ञान बौद्ध परिभाषा में एक ही चीज के नाम हैं। चित्त की अपार शक्ति को सरह मानते थे और उसके स्वरूप को समझ लेना परम पुरुषार्थ मानते थे। चित्त के संबंध में उन्होंने कहा है—

चित्तेक सअल बीअ भव-णिब्बाणा जम्म विफुरन्ति।
तं चिन्तामणिरुअं, पणमह इच्छाफलं देइ। (२३)

संसार और उसका निरोध निर्वाण दोनों चित्त से ही स्फुरित होते हैं। चित्त सबका बीज है। वह चिन्तामणि-रूप है। उसकी सेवा करो, वह इच्छा फल प्रदान करेगा।

मन या चित्त को मुक्त करना ही परम कर्तव्य है—

बज्झइ कम्मेण जणो, कम्म-विमुक्केण होइ मण मुक्को।
मण-मोक्खेण अणुअरं, पाविज्जइ परमणिब्बाणं।। (२४)

आदमी कर्म से बंधन में पड़ता है। कर्म से मुक्त होने पर मन मुक्त

हो जाता है, और फिर तुरन्त ही परमनिर्वाण पा जाता है। फिर कहते हैं—

चित्ते बद्धे बज्झइ मुक्के मुक्कइ णत्थि सन्देहो। (६१)

जबर्दस्ती चित्त को काबू में नहीं रखा जा सकता।

एहु णिअ मण तुरंग सुचंचल। मेलहिं सहाव ट्ठाअ दो-णिम्मल।। (६४)

इस चंचल तुरंग-मन को उसके स्वभाव पर छोड़ देने से वह निर्मल हो स्थिर हो जाता है।

चित्तहिं चित्त जइ लक्खण जाइ। चंचल मण पवण थिर होइ (जाइ)।।
(१२०)

सरह ने अपने योग और आचार का अत्यन्त संक्षेप करते करुणा और शून्यता (नैरात्म्य, नैरामणि) पर जोर दिया है। यह दोनों वस्तुएँ अलग-अलग नहीं अभ्यास में लाई जा सकतीं। दोनों एक-दूसरे से घनिष्ठतया संबद्ध (युगनद्ध) होनी चाहिए, तभी वह कार्यकर होती हैं।

करुणारहिअ जो सुण्णहिं लग्गा। णउ सो प वई उत्तिम मग्गा।।(१६)
अहवा केवल करुणा साहअ। (जम्मसहस्सहिं मोक्ख ण पावअ)।
जइ पुणु वेण्णवि जोडण सक्कअ। णउ भव णउ णिब्बाणें थाक्कअ।। (१६,१७)
सुण्ण तरुवर फुल्लिअउ, करुणा विविह विचित्त।।
अण्णा भोअ परत्त फलु, एहु सोक्ख परु चित्त।। (बाग० १०८)

सरहपाद अद्वय तत्त्वशून्यता के अभ्यासी थे, साथ ही सबके ऊपर अपार करुणा रखनेवाले थे। हिन्दी के आधुनिक सरह निराला सहज योगी हैं, शून्यता और नैरात्मा के वाद से उन्हें कोई मतलब नहीं, पर उनमें भी अपार करुणा है। किसी को दुःखी देखना उनकी सहन-शक्ति से बाहर की बात है। जाड़ों में अपने चाहे ठिठुरते रह जायें, पर दूसरे को देख वह अपनी रजाई उसे उढ़ा आयेंगे। ऐसे बेबसी के जीवन को सरह पसन्द नहीं करते, जिसमें किसी दुखिया की सहायता न की जा सके। वह कहते हैं—

जो अत्थीअण ठीअउ, सो जइ जाइ णिरास।
खण्डसरावें भिक्ख वरु, च्छ(ा)डहु ऐ गिहवास।।
परउआर ण कीअउ, अत्थि ण दीअउ दाण।
एहु संसारे कवण फलु, वरु छड्डहु अप्पाण। (बाग० १११, ११२)

यदि अर्थी जन निराश चला गया, तो ऐसे गृहवास से टूटा मृत्पात्र ले भीख माँगना अच्छा। दान और पर-उपकार के विना इस संसार में रहने का क्या फल ? इससे तो जीवन छोड़ देना बेहतर है।

(१) अपने पराये का भेद छोड़ना

जाव ण अप्पउं पर परिआणसि। ताव कि देहाणुत्तुर पावसि। (६७) आत्म और पर का भेद मिटाना साधक का परम कर्त्तव्य है।

(२) सहज योग

ऋद्धि, सिद्धि का लोभ छोड़ सहज भावना कल्याणकारिणी है।

सहजें सहज वि बुज्झइ जब्बें। अन्तराल गइ तुट्टइ तब्बें।
रिद्धि-सिद्धि हलें वेण्णि न काज्ज। पाप-पुण्य तहिं पाड़हु वाज्ज।। (८२, ८३)

जगतको 'जगु सहावें सुद्ध' (१०१) मानते, कहते थे—

जग उपपाअणे दुक्ख बहु, उप्पण्णउ तहिं सुह-सार। (१०३)

जग में उत्पन्न होने से यदि दुःख बहुत है, तो सुख का सार भी वहीं है। जग को सहजानन्द से पूरित बतला उन्होंने कहा—नाचो, गाओ, विलसो (१३६) और यह भी कि—

मुक्कउ चितगेएन्द करु, एत्थ विअप्प ण पुच्छ।
गअण गिरि णइ-जल पिअउ, तहिं तड वसउ सइच्छ। (बाग. १००)

चित्त-रूपी गजेन्द्र को मुक्त कर दो। इसमें पूछ-पाछ न करो। गगन (शून्य)-रूपी गिरि नदी के जल को पीके उसके तट पर उसे स्वच्छन्द बैठने दो।

ऋजुमार्ग यही सहज मार्ग है, जिसमें जीवन को अपने नैसर्गिक रूप में बिताना पड़ता है।

उजु रे उजु छाड्डि मा लेहु रे बंक। णिअहि बोहि मा जाहु रे लाङक।।
वाम दाहिण जो खाल-बिखाला। सरह भणइ बपा उजु बाट भाइला।।
—'बौद्ध गान ओ दोहा' (पृष्ठ ४८)

सरह अपने मार्ग को दोनों चरम-पंथ से भिन्न मध्य का बतलाते हैं। सहज शब्द उन्होंने बुद्ध की मध्यमा प्रतिपद् के लिए ही इस्तेमाल किया है, हाँ, उससे कुछ अन्तर रखते।

(३) चन्द्र-सूर्य-साधना

सन्तों के भावना-मार्ग में चन्द्र-सूर्य या इडा-पिंगला की साधना आती है। सरह से पहिले की योग-क्रियाओं में इसका जिक्र नहीं आता, संभवतः यह सरह की ही सूझ और अभ्यास के परिणाम हैं। वह कहते थे—

चन्द-सुज्ज घसि घालइ घोट्टइ। सो आणुत्तर एत्थु पइट्ठइ॥ (३५)
अध-उद्ध माग्गवरें पइसरेइ। चन्द सुज्ज बेइ पड़िहरेइ॥
वञ्चिज्जइ कालहुतणअ गइ। वे विआर समरस करेइ॥ (५७)

चन्द्र और सूर्य भावना-रंध्रों को वह बाधक समझते हैं। उन दोनों को छोड़-ऊपर अनुत्तर सर्वोत्तम मार्ग पर पहुँचना है। सरह की बताई इस भावना के अभ्यास करनेवाले योगी तिब्बत में आज भी मौजूद हैं। हमारे आज के भारत में सरह का नाम हाल में ही कुछ सुनाई पड़ने लगा है, पर तिब्बत में वह आज भी अतिपरिचित और पूज्य मार्गदर्शक हैं।

३. दर्शन (प्रज्ञा)

सरह का यान सहजयान या वज्रयान महायान का आगे का विकास है—जहाँ तक कि उसके दर्शन का संबंध है। इसलिए, असंग के योगाचार और नागार्जुन के माध्यमिक (शून्यवाद) से उसका संबंध होना स्वाभाविक है। शून्यता—सभी भौतिक अभौतिक पदार्थों का किसी भी नित्य सार से रहित होना—को उन्होंने अपनी योग-भावना का पर्याय माना है। करुणा तथा शून्यता भावना के युगनद्ध रूप में ही परम पुरुषार्थ की प्राप्ति मानी है। योगाचार (क्षणिक विज्ञानवाद)-दर्शन का आलय-विज्ञान मूल तत्त्व है। वैभाषिक, सौत्रान्तिक दोनों हीनयानी बौद्ध-दर्शन द्वैतवादी हैं। वैभाषिक या सर्वास्तिवादी (और स्थविरवादी भी) रूप (भूत) और विज्ञान (चेतना) दोनों तत्त्वों को मानते हैं। सौत्रान्तिक बाह्य पदार्थ (रूप) पर अधिक जोर देते हुए भी विज्ञान का अपलाप नहीं करते, इस लिए दोनों ही द्वैतवादी हैं। माध्यमिक अन्तर और बाह्य सभी पदार्थों को सार (नित्यतत्त्व)-शून्य मानते हैं, और एक कदम और आगे बढ़कर रूप और विज्ञान के अस्तित्व के परस्पर सापेक्ष होने से उनके स्वतन्त्र अस्तित्व को क्षणिक भी मानने के लिए तैयार नहीं हैं, इसलिए उन्हें न द्वैतवादी कहा

जा सकता, न अद्वैती ही। योगाचार एक ही विज्ञान (चेतना) तत्त्व के वास्तविक होने को स्वीकार करते हैं, हाँ, वह नित्य नहीं बल्कि क्षणिक प्रवाह रूपेण सनातन है। इस प्रकार वह अद्वैतवादी हैं। सरह स्वयं अद्वैत तत्व की महिमा गाते हैं, इससे मालूम होता है, कि उनका झुकाव योगाचार-दर्शन की ओर अधिक है। मायावादियों के घटाकाश और महाकाश की तरह योगाचार-दर्शन भी विज्ञान को वैयक्तिक विज्ञान और महाविज्ञान के रूप में विभाजित करता हैं। वैयक्तिक विज्ञान को वह प्रवृत्ति-विज्ञान कहते हैं, तथा महाविज्ञान को आलय-विज्ञान। विश्व के सभी दृश्यादृश्य पदार्थ जिसके परिणाम हैं, वह सर्वत्र-व्यापी अ-भौतिक तत्व आलय-विज्ञान है। वह समुद्र की तरह है, जो अपने क्षणिकता के स्वभाव के कारण हर वक्त तरंगित रहता है। यही तरंगें प्रवृत्ति-विज्ञान हैं, जिन्हें रूप या अरूप स्थिति में हम देखते या प्रत्यक्ष करते हैं। योगाचार-दर्शन के प्रवर्तक असंग के अनुज बसुबन्धु ने "वीची-तरंग-न्यायेन तदुत्पत्तिः" भी आलय-विज्ञान से कही है। सरह कहते हैं—

"आलअ तरु उमलइ, हिण्डइ जग च्छाच्छन्द।" (१३५)

वसुबन्धु ने आलय-विज्ञान को समुद्र बतलाया और सरह ने उसे स्वच्छन्द हिलने-डोलनेवाला तरुवर। स्वच्छन्द विशेषण उन्होंने यों ही नहीं दिया है, उससे उनका अभिप्राय है, आलय या संसार के मूल तत्त्व को चालित करनेवाली कोई दूसरी शक्ति (ईश्वर) नहीं है, बल्कि उसकी गति स्वच्छन्द—औटोमेटिक—है। शुरू से आज तक बौद्ध अनीश्वरवादी और अनात्मवादी हैं, यह सभी जानते हैं।

(१) मूल तत्त्व

मूल तत्त्व आलय-विज्ञान को योगाचार-दर्शन की तरह ही सरह मानते हैं। पर, वह उसे एक रहस्यमय रूप देना चाहते हैं, जिसमें निर्वाण-तत्त्व की पुरानी कल्पना सहायक हुई है। कर्म के बन्धन से छूटा मुक्त मन निर्वाण-प्राप्त माना जाता है। निर्वाण मन की ऐसी स्थिति है, जिसमें वह भव (संसार)-बन्धन—कर्मपाश—से छूट गया रहता है। इसी निर्वाण की स्थिति को वह और रहस्यमय बनाते हैं। तत्त्व या वास्तविकता उनके यहाँ मूल-रहित है—

मूल-रहिअ जो चिन्तइ तात्त। गुरु आएसह एत्त वियात्त॥ (२८)

इसीको दूसरे शब्दों में कहा—

सुण्णवि अप्पा सुण्ण जगु, घरे-घरें एहु अक्खाण ।
तरुवर-मूल ण जाणिआ, सरहेंहि किअ बक्खाण ।। (५९)

शून्य और आलय दोनों के प्रतिपादन करनेवाले सरह योगाचार-माध्यमिक ही हो सकते हैं, जिनमें उनका अधिक जोर शून्य-निरंजन पर है, यह हम आगे देखेंगे ।

(२) माया

परमपद को उन्होंने मायामय बतलाया है, जिससे माया उनके सामने सुतुच्छ नहीं मालूम होती ।

बुद्धि विणासइ मण मरइ, तुट्टइ जहं अहिमाण ।
सो माआमअ परमपउ, तहिं कि बज्जइ झाण ।। (६१)

बुद्धि-मन की पहुँच से बाहर वह परमपद मायामय है ।

(३) भाव या अभाव नहीं

भावाभावें वेण्णि न काज्ज । अन्तराल ट्ठिअ पाडहु बाज्ज ।

तत्त्व को न सद् कह सकते हैं, न सत्तारहित । बीच की स्थिति भी वह छोड़ डालने को कहते हैं। और भी—

भावाभावें जो परिछिण्णउ । त(हिं) जगतिअ सहाव विलीणउ । (६६)

परिच्छिन्न की जगह 'परिहीण' पाठ ठीक जान पड़ता है। भाव और अभाव से जो परिहीन या परिच्छिन्न है, उसी तत्त्व में सारी दुनिया विलीन है ।

भव (संसार) और निर्वाण को एक बतला सरह ने निर्वाण के आकर्षण को कम कर ऐहिक जीवन के मूल्य को बढ़ाया, इसीलिए भोगों को त्याज्य नहीं, ग्राह्य ठहराया तथा जगत् को सहजानन्द-पूरित मानने पर जोर दिया—"भव-णिब्बाणे किम्पि ण दूरा' (१६१) अथवा 'मुक्कावथि ज सअल जगु, णाहि णिबद्धो कोवि' (८०) । बंधन का भय दिखला आतंकित कर निर्वाण के पीछे पागल करने की जो प्रवृत्ति धर्मनायकों में देखी जाती थी, उसकी व्यर्थता को बतलाकर सरह ने लोगों को निडर करना चाहा। न जगत् को, न देह को उन्होंने गन्दा कहा, बल्कि ऐसे विचारों का विरोध करते कहा—"जगु सहावहिं सुद्ध" (१०१) और—

एथु से सरसइ सोबणाह, एथु से गंगासाग्ररु।
वाराणसि पग्राग एथु, सो चान्द-दिवाग्ररु।
खेत्त पिट्ठ उग्रपिट्ठ एथु, मइ भमिग्र समिट्ठउ।
देहा-सरिस तित्थ, मइ सुणउ ण दिट्ठउ ।। (९६ ? ९७)

वह परस्पर-विरोधी बात नहीं कहते—कभी देह को गन्दगी का पनाला और कभी कुछ दूसरा। उनके विचार में देह सबसे बड़ा पवित्र तीर्थ है। इसीके भीतर सरस्वती, सोमनाथ, गंगासागर, बनारस, प्रयाग, क्षेत्र, पीठ, उपपीठ हैं। सरह के समय में भारत के जो पवित्र तीर्थ थे, उनके नाम यहां गिनाये गये हैं। सोमनाथ को अभी महमूद गजनवी ने नष्ट-भ्रष्ट नहीं किया था, और वह एक प्रमुख तीर्थ था। पीछे चार धामों की महिमा बढ़ी, जिन में से सोमनाथ को निकाल दिया गया—महमूद के प्रहार का यहाँ तक प्रभाव पड़ा।

(४) मुक्ति और परमपद

मुक्ति सरह की दृष्टि में स्वतः सिद्ध वस्तु है। शंकराचार्य ने भी परमार्थ में यही माना है; क्योंकि जीव की कल्पना मिथ्या है, परमार्थ में एक-मात्र ब्रह्म ही सत्य है। सरह ने ब्रह्म या किसी सनातन एकरस तत्त्व को नहीं माना, न जगत् के भोगों को झूठा और त्याज्य कहा। जगत् की क्षणिक, किन्तु मूल्यवान् स्थिति को स्वीकार करते उन्होंने जगत् के महत्त्व को कहा और नकद को छोड़ उधार या प्रत्यक्ष को छोड़ परोक्ष के पीछे दौड़ने को मूर्खता बतलाया। उनकी दृष्टि में परमपद मन की एक विशेष अवस्था है—

जहिं मण मरइ, पवणहो तहि लग्र जाइ।
एहु सो परम महासुह, सरह कहिहउ जाइ। (३०)

मन की शंकायुक्त स्थिति हट जाने पर उसकी चंचलताओं के मिट जाने पर परम महासुख की स्थिति आती है। उस स्थिति को और स्पष्ट करते कहते हैं:—

जहिं मण पवण ण संचरइ, रवि-ससि णाहि पवेस।
तहिं बढ़ चित्त विसाम करु, सरहें कहिग्र उएस ।। (४९)
आइ ण अन्त ण मज्झ तहिं, णउ भव णउ णिव्वाण।
एहु सो परम महासुह, णउ पर णउ अप्पाण ।। (५१)

अग्गें पच्छें दस दिसें, जं जं जोअमि सोवि। (५२)

परमपद--परम महासुख आदि-अन्त-मध्य-रहित है। न उसे संसार कहा जा सकता, न निर्वाण। उसमें अपना और पर का भेद नहीं। आगे-पीछे दसो दिशाओं में जहाँ देखें, वहीं-वही है। इस वर्णन में शंकर-वेदान्त में प्रतिपादित मोक्ष का आभास मिलता है। यद्यपि सरह शंकर के सम-सामयिक हैं, पर उनका अद्वैतवाद नागार्जुन (ईसवी दूसरी सदी) और असंग (ई० चौथी सदी) से चला आता था। सरह से दो-तीन सदियों पहिले हुए गौड़पाद बौद्ध विचारों से प्रभावित हैं। गौडपाद शंकर के गुरु गोविन्दपाद के गुरु बतलाये जाते हैं, पर गौडपाद कारिका के सुयोग्य संपादक महामहोपाध्याय श्री विधुशेखर भट्टाचार्य ने इसे अमान्य ठहराते गौडपाद को शंकर से दो शताब्दी पहिले का माना है। एक ही स्रोत से निकले सरह और शंकर के निर्वाण-मोक्ष में इतनी समानता स्वाभाविक है।

(५) शून्य-निरंजन

परमपद को सरह ने पहिले-पहल लोकभाषा में शून्य निरंजन कहा। वह शून्यवाद के माननेवाले थे, इसलिए उनका ऐसा कहना ठीक था आश्चर्य तो यह है, कि पीछे के सन्त शून्यवाद से बिल्कुल अपरिचित थे, तो भी सरह का घुमाया धर्मचक्र इतना प्रबल था, कि सन्त लोग उसके प्रवाह में बहे विना नहीं रहे। सरह ने कहा--

सुण्ण णिरंजण परमपउ, सुइणो (अ) माअ सहाव।
भावहु चित्त-सहावता, णउ णासिज्जइ जाव॥ (१३८)

परमपद शून्य और निरंजन है --उपनिषद् ने भी 'निरंजनं परमसाम्यमुपैति' से ब्रह्म (परमपद) का निरंजन होना स्वीकार किया है। सरह ने उसे स्वप्नोपम स्वभाव का माना है, जब कि ब्रह्मवादी उसे वैसा नहीं मानते। मन की चंचलता जबतक नष्ट न हो जाये, तबतक चित्त के इस स्वभाव की भावना करने को कहा, और बतलाया।

अक्खर-वण्ण-विवज्जिअ, णउ सो विन्दु ण चित्त।
एहु सो परम महासुह, णउ फेडिय णउ खित्त॥ (१४१)

चित्त (नाद) और विन्दु से जो नहीं है, जो अक्षर-वर्ण-विवर्जित है, वह परम महासुख है, जो न त्याज्य है, न ग्राह्य। परमपद के समझाने के

लिए सरह ने बहुत कहा है, पर उसका समझना अपार श्रद्धा रखनेवाले व्यक्ति के लिए ही साध्य है। सौभाग्य से ऐसे श्रद्धालुओं से हमारी भारत-मही विहीन नहीं है।

(६) सरह की अंतिम विचार-परंपरा

सरह के अनुयायी आज भी तिब्बत में भारी संख्या में मौजूद हैं। सन्तों ने बहुत-सी सरह की बातें ले ली हैं, यह भी सत्य है। इसलिए, कहा जा सकता है, कि सरह की परम्परा भारत से अब भी उच्छिन्न नहीं हुई है। पर, जो अपने आद्य-मार्गदर्शक का नाम भी नहीं जानते, उन्हें सरह का अनुयायी कैसे कहा जा सकता है? सरह के वंश में ८४ सिद्ध हुए, यह हम बतला आये हैं। अन्तिम सिद्ध कालपा (२७) और कुठा-लिपा (४४) ग्यारहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में हुए। इसका अर्थ यही हुआ, कि चौरासी की संख्या कालपा पर पूरी हो जाने से आगे सूची बन्द कर दी गई। सिद्ध बाद में भी होते रहे, यह काशि-कन्नौज के स्वामी गहड़वार जयचन्द्र के गुरु जगन्मित्रानन्द के होने से सिद्ध है। भारत से बौद्धधर्म—जो कम-से-कम विचारों में सरहका अनुसरण करता था—जिस समय नष्ट होने जा रहा था, उस समय भी सिद्धों की तरह के लोक-कवि होते थे। विनयश्री का नाम हम पहिले ले चुके हैं। वह विक्रमशिला, जगत्तला के तुर्कों द्वारा नष्ट कर दिये जाने पर अपने गुरु तथा भारत के संघराज शाक्यश्रीभद्र के साथ १२०३ ई० में तिब्बत पहुंचे। यदि शेष जीवन वहीं नहीं रहे, तो कितने ही वर्षों तक वह वहाँ जरूर रहे। उन्होंने कितने ही भारतीय ग्रंथों के तिब्बती भाषा में अनुवाद करने में सहायता की। वह अपने साथियों और गुरुभाइयों—विभूतिचन्द्र, दानशील, सुगतश्री आदि—के साथ कितने ही वर्षों तक स.स्क्य विहार में रहे, जहाँ उनके हाथ के लिखे कितने ही पन्ने लेखक को मिले। सुगतश्री ने अपने आश्रयदाता ग्रग्स्. प.र्ग्यल्. म्छन् (कीर्तिध्वज) की श्लोकों में स्तुति की थी, जिसकी मूल संस्कृत प्रति वहाँ मुझे मिली। विभूतिचन्द्र और दानशील की पोथियों की तरह वहीं विनयश्री के कितने ही गीतों को—जो उनके ही हाथों से लिखे गये मालूम होते हैं—पाया। यह गीत इसीलिए अपना महत्त्व नहीं रखते, कि यह सिद्धों की टक्साल के हैं, बल्कि इनकी भाषा वही मालूम होती है, जो १२ वीं-

१३वीं सदी में विक्रमशिलावाले प्रदेश (भागलपुर जिले) में बोली जाती थी। विनयश्री के एक पद में आया—'गेल्लिअहुं' शब्द आज भी वहाँ इसी अर्थ में प्रयुक्त होता है।

विनयश्री १२०३ ई० में तिब्बत में जब पहुँचे, तो उनकी आयु ३५ साल से कम की नहीं होगी। भारत में रहते ही उन्होंने कविता करने का अच्छा अभ्यास कर लिया था। तिब्बत में पहुँचने पर उनका कोई महत्त्व न था, यह इसीसे मालूम होगा, कि जहाँ सुगतश्री-रचित कीर्त्ति-ध्वज-यशोवर्णन तिब्बती में अनुवादित हो आज भी 'स्तन्.ग्युर्' संग्रह में मौजूद है, वहाँ विनयश्री के गीत यदि तालपत्र पर लिखे मुझे न मिलते, तो शायद ही वह आज प्रकाश में आते—पुजारी ने उन्हें काटकर प्रसाद बाँटने के लिए रख छोड़ा था। गीतों की संख्या १४ से अधिक नहीं है, जिन्हें परिशिष्ट में दिया गया है। यह तो निश्चित ही है, कि विनयश्री जैसे प्रौढ़ कवि ने इतने ही गीत नहीं बनाये होंगे। सरह की रहस्य-वादी भाषा में वह परमतत्त्व का वर्णन करते हैं—

निमूल तरुवर डाल न पाती।
निभर फुल्लिल्ल पेडु विम्राती॥
भणइ विनयश्री नोखौ तरुवर। फुल्लेए करुणा फलइ अणुत्तर।
करुणा मोदें सएलवि तोसए। फल-संपर्(त)तएँ से भव नासए॥
से चिन्तामणि जे जइ सबासए। से फल मेलए नहिए सांसए।
वरगुरु भत्तिएँ चित्त पवोही। तहि फल लेहू अणुत्तर बोही॥३॥
गेल्लिअहुं गिरिसिहर रि जातें। तहिं झंपाविल्लि कलि के अन्ते। ध्रु.।
हल कि करमि सहिएँ एकेल्लि। बिसरे राउ लेल्लइ पेल्ली।
तहिं झंपइ ट्ठेल्लि हेरुअ मेले। विसाअ सिलइल्लि मा छाड़िअ हेले।
भणइ विनयश्री वरागुरु-वएणे। नाह न मेल्लअ रे गमणे॥४॥

सरह ने तत्त्व को मूल-रहित कहा है, उसी को विनयश्री ने निमूल तरुवर कहा है। करुणा का फूल फूलना और अनुत्तर (सर्वोत्तम निर्वाण) का फल लगाना भी सरह की बातों का ही शब्दान्तर है। गिरिशिखर में गया या गई (गेल्लिअहुं) की सरह के गीत 'ऊँचा-ऊँचा पावत' में छाया मिलती है। सरह या सिद्ध-परंपरा के ये पद हैं, इसे कहने की अवश्यकता

नहीं है। विनयश्री की भाषा १२ वीं सदी के उत्तरार्द्ध की भाषा है, जो अपभ्रंश होते भी अब अधिक आधुनिक भाषा की ओर झुकी थी। सरह की तथा दूसरी भी पुरानी अपभ्रंश कृतियों में भूतकाल के लिए इल प्रत्यय का प्रयोग नहीं मिलता। जहाँ उसका प्रयोग देखा जाता है, वह पीछे लिखे हस्तलेखों में लेखकों द्वारा किये गये परिवर्त्तन के कारण ही। पर, यहाँ विनयश्री के अपने हस्तलेख में फुल्लिल्ल, गेल्लिअहुं, झंपाविल्ल-जैसे इल-प्रत्ययान्त शब्द मौजूद हैं, जिनका इस्तेमाल आज भी भोजपुरी, मगही, मैथिली, बँगला में प्रायः वैसा ही होता है। पाली के बाद प्राकृत के काल में व्यंजनों का स्वरों में जो परिवर्त्तन हुआ, वह अपभ्रंश-काल में भी वैसा ही रहा। और तरुवर की जगह तरुअर को ही हम सरह के दोहाकोश की अपनी पुरानी प्रति में पाते हैं। पर यहाँ विनयश्री तरुवर लिखकर प्राकृत-अपभ्रंश की चरम विकारवाली व्यंजन स्थाने स्वर की परम्परा को छोड़ तत्सम रूप की ओर लौटते देखते हैं। शायद यह इस तरह का सबसे पुराना प्रथम उदाहरण है। यही नहीं, अपने नाम में कवि इस बात का और भी अनुसरण करता है। प्राकृत-अपभ्रंश के नियम के अनुसार उसे अपना नाम विनअसिरि लिखना चाहिए था, पर वह उसकी जगह शुद्ध तत्सम-रूप विनयश्री को इस्तेमाल करता है। सभी गीतों में विनयश्री ही लिखा गया है, इसलिए यह जान-बूझकर किया गया है। परन्तु, सभी जगह संस्कृत-तत्सम या पालि-तत्सम (जिसमें भी व्यञ्जन स्थाने स्वर नहीं होता) का प्रयोग नहीं किया गया है, जिससे पता लगता है, अभी बारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में इस प्रवृत्ति का आरंभ ही हुआ था।

§४. सरह की भाषा

शब्द-कोश-व्याकरण

दोहाकोश की भाषा में लिपिकों ने समयानुसार सुधार करने की कोशिश की। इसके कारण भिन्न-भिन्न हस्तलेखों में अन्तर आता गया। यह हमें डाक्टर बागची-संपादित दोहाकोश और हमारे इस स.सक्य के हस्तलेख के मिलाने से मालूम होगा। वैसे जान पड़ता है, तत्कालीन अपभ्रंश में

देश-भेद से शायद ही कहीं अन्तर आता था । दोहाकोश में व्याकरण के सारे प्रयोग नहीं आये हैं।

१. उच्चारण-प्रक्रिया

(१) वर्णमाला

उस समय की भाषा की वर्णमाला में हमारी आज की वर्णमाला के कुछ अक्षर नहीं थे, साथ ही कुछ उच्चारणों के लिए हमारी नागरी में आज अक्षर मौजूद नहीं हैं। स्वरों में ऋ, लृ, ऐ, औ का अभाव था, और व्यंजनों में श, ष का । उस समय और आज की हमारी भाषा—विशेषकर लोक-भाषा —में ह्रस्व ए और ह्रस्व ओ थे, पर उसके लिए कोई अक्षर नहीं थे। द्रविड़ भाषाएँ इस विषय में ज्यादा सौभाग्यशाली हैं। अपभ्रंश में निम्न स्वरों और व्यंजनों का प्रयोग होता था, जिसमें स जान पड़ता है, श का भी काम देता था—

स्वर

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऍ, ए, ओ, ऑ, ओ

व्यञ्जन

क ख ग घ ङ । च छ ज झ ञ । ट ठ ड ढ ण ।
त थ द ध न । प फ ब भ म । य र ल व स ह ।

य का उच्चारण भी ज की तरह किया जाता, और व तथा ब में भेद नहीं रक्खा जाता था, जैसा बँगला में आज भी होता है ।

ह्रस्व स्वर को भी छन्दोभंग न होने के लिए दीर्घ और दीर्घ को ह्रस्व बोला जा सकता था ।

(२) परिवर्त्तन

संस्कृत की तुलना से अपभ्रंश में जिस प्रकार लोप, आगम, विकार होते थे, उन्हें आगे दिया जाता है । लोप-आगम-विकार अपभ्रंश और प्राकृत में प्रायः एक-से ही होते हैं, इसीलिए कितने ही लोग व्याकरण में इसके नवीन-भारतीय आर्य-भाषाओं के वर्ग में होने पर भी इस प्राकृत-

वाले मध्य-भारतीय आर्य-भाषा-वर्ग में गिनते हैं।

संस्कृत की तुलना में हमारे स.स्क्य. हस्तलेख के अपभ्रंश में निम्नलिखित भेद मिलते हैं--

(क) लोप—

अ. अहम्> हउं (७५)

इ. इच्छ> चाह (८७)

: निःसार> निसार (७२)

त. जगत्> जग (२५)

स्. स्नेह> णेह (८६)

(ख) आगम—

क्. लिख> लिक्ख (१५), एक> एक्क

च्. छेद> च्छेअ (७४), च्छुवइ (७१), च्छाडाहु (६७)

ट्. ठाकी जगह ट्ठाइ (३१), ट्ठाअ (७४)

ड. चित्त>चित्तडा (७८)

ण्. विहीन>विहून>विहुण्ण (७४), अन्य न>अण्ण ण>अण्ण-ण्ण- (१४)

ब्. ब्. एव>एब्ब (३५), मोक्ष-वास>मोक्ख-ब्बास (६०)

(ग) विकार—

अ>आ, अन्तर>आन्तर (१३५)

अन>आण, अनुत्तर>आणुत्तर (३५)

अपि>उ, अद्य अपि>अज्ज अउ>अज्जउ (५८), तद् अपि>तउ

अपि>वि, अन्योपि>अण्यवि (५)

आ>अ, आगमन>अमण (३८)

अव>ओ, लवण>लोण (४६)

अय>ऐ, अयं हि>ऐहु (५६)

इय>इज्, ईअ, क्रियते कीअइ

ईय>इज्ज, दीय>दिज्ज (७२)

उ>वु, उक्त>वुत्त (१६), उच्यते वुच्चअ (३८)

ऋ>रि, ऋद्धि>रिद्ध (८३)

एय>इज्ज, विलेय>विलिज्ज (४६)

ओ>उ, नो>णउ (१६)

,,>अव, कोनु>कवणु (१०३)

क>अ, सकल>सअल (२३)

,,>ह खक शुक>सुनह (८५)

का>आ, आकाश>आआस (३३)

का>ऐ, चित्रकर>चित्तएर (८१)

,,>ल, उदक>उअल (७१)

कु>उ, अरिकुल>अरिउल (४५)

कु>अ, कुरु>करु (६४)

क्त>त्त, उक्त>वुत्त (१६), अनुरक्त>अनुरत्त (७३), मुक्त>मुक्क (६१)

क्ष>क्ख, यक्ष>जक्ख (८१), राक्षस>रक्खस (७३), मोक्ष>मोक्ख (८)

क्षे>ख, क्षेपण>खवन, क्षय>खअ (६२)

कद>के, कदली>केलि (१४९)

क्ष>छ, क्षार>छार (३)

क्ति>त्ति, प्रसक्ति>पसत्ति

क्षे>खे, क्षेत्र>खेत्त (६६)

ग>अ, भगवा>भअवा (२) गगने>गअणे (७०)

गृ>घे, गृह्णाति>घेप्पइ (१२३)

गी>ई, योगी>जोइ (७१)

ग्न>ग्ग, नग्न>णग्गल (५), लग्न>लग्ग (१७)

ग्र>ग, ग्रहण>गहण (८)

घृ>घो, घृष्ट>घेट्ट (३५)

घ्र>ग्घ>जिघ्र>जिग्घ (६३)

ख्या>क्खा, व्याख्यान>बक्खाण (११)

ख>ह, सुख>सुह (२०)

च>अ, अनुचर>अणुअर (२४), लोचन>लोअण (३१), वचन>बअण (४४)

क्ष्य>क्ख, उद्वीक्ष्यते>उअेक्खइ (६२)

चि>इ, अचिन्त>अइन्त (१२१)

च्य>च्च, अवाच्य>अवाच्च (४२), उच्यते>वुच्चअ (३८)

ज>अ, बीज>बीअ (२३), भोजन>भोअण (८) निज>णिअ (१६),

जा>आ जाल>आल (८४)

जे> ए, गजेन्द्र> गएन्द (१३२)

जे>उ राजा>राजो>राउ (१२१)

ज्ञ> ण्ण, विज्ञान>विण्णाण (१३१), आज्ञप्त>आणत्त (७९)

ज्ञ>ज, ज्ञान>जाण (८)

ज्ञ>ञ्ञ, प्रज्ञ>पञ्ञ (१०६)

ट>ड, जटा>जड (३)

टि>डि, कोटि>कोडि (१३१)

ट्य>ट्ट, त्रुट्यति>तुट्टइ (६१)

ण>न, कोण>कोन (४)

त>अ, रहित>रहिअ (९), सुरत>सुरअ (४८), रसातल>रसाअल (६०)
उत्पद्य>उअज्ज (६२)

त> ड, पात>पाड (३९),

ति> इ, लाति>लेइ (५३), आनयति>आणेइ (५३), युवती>जुबइ (७)

ति> डि , प्रति>पडि (२६)

तु>उ, चतुर्थ>चउत्थ (१)

तो>उ, ग्राहितो> गाहिउ (४२), कथितो> कहिउ (६७)

तु>उ , सेतु >सेउ (९९)

तृ>ति, तृषित> तिसिअ (४४)

त्त> ण्ण, दत्त> दिण्ण (३७)

त्ति>त्त, उत्तम>उत्तिम (१७)

त्न> अण, रत्न> रअण (८५)

त्प>प्प, उत्पादन>उप्पाअण (१०२)

त्प>अ, उत्पद्य>उअज्ज (६२)

त्प>ब, उत्पद्य>उबज्ज (२०)

त्म> प्प, आत्मा>अप्प (६,२८)

त्य>च्च, प्रत्यक्ष>पच्चक्ख (१०६), मृत्यु.मिच्चु (१५४), सत्य.सच्च (१४)

त्र>त्थु, यत्र>जत्थु (१०४), अत्र>एत्थ (२७,६५), यत्र>जेत्थु (४०),

" यत्र>जत्थु (१०४)

त्र> थ, अत्र> एथु (६५)

त्र>त, स्वतन्त्र>स्वतंत (११), मंत्र> मत्त (१३)

त्र>ह, तत्र>तंह (१३)

त्र>त, त्रय>तइ (१२३)

त्रि>ति, त्रिभुवन>तिहुअण (५०)

त्रु>तु, त्रुट्यति>तुट्टइ (६१)

त्व>त्त, तत्त्व>तत्त (६) तात्त (२८), सत्त्व>सत्त (७३)

"> तु, त्वं हि>तुहु (१४८)

थ>ह, अथवा>अहवा (१७)? (१६०), कथानक>कहाण (१३१), कथ्य,

कहिज्ज> (६२)

">ढ, प्रथम>पढम (३३)

थि>हि, कथि>कहि (६७)

थ्य>च्छ, मिथ्या> मिच्छा (११६)

द>अ, पाद>पाअ (१५), उदक>उअल (७१) खादति >खाअ (६०)

खादत्ति>खाअत्ते (४८)

द>उ, भेद>भेउ (१) परमपद>परमपउ (१३६)

द>व, उद्देश>उवेस (२)

द>ब्ब, तदा>तब्ब (३२) यदा>जब्ब

दय>अ, हृदय>हिअ (३६) छेद> छेअ (७४)

द>दि, दत्त>दिण्ण (३७)

दपि>बिअ, तदपि>तबिअ (११०)

दि>इ, आदि>आइ (१४६),

दृ>ई, कीदृश>कीस (३७,१२२)

दृ>दि, दृष्टि>दिट्ठि (८) दृढ>दिढ (६४)

दृ>दी, दृष्ट>दीस (३७)

दृ>रि, सदृश>सरिस (९६)

दे> ए, पादे>पाए (३७), आदेश>आएस (२८)

द्ध>ज्झ, सिद्ध>सिज्झ (२०), बुद्ध>बुज्झ (२०), शोद्ध>सोज्झ (५६) बाध्य>बाज्झ (७१), सिद्ध> सिज्झ (१२६)

द्य>ज्ज, वाद्य>बाज्ज(२४), उत्पद>उबज्ज(२०), अद्यपि>अज्जउ (५८), अद्य> अज्ज (६२)

द्वा> दु, द्वा>दुई (७४)

द्व> बे, द्वावपि> बेण्णवि (१७), वेवि (१३१),

द्रि> द्द, शूद्र>सुद्द (९४)

द्र> दि, इन्द्रिय> इन्दी (२९)

ध> ह, साध> साह (९), विविध>विविह (३९)

ध्य> झ, ध्यान> झाण (१९) मध्य> मज्झ (५१)

ध्ये> धे, ध्येय> धेअ (४३)

न> ण, नग्गल> णग्गल (५),

ध> द, निबन्धन> णिवन्दण (१४४)

न्य> ण्ण, अन्यो> अण्णु (१०), शून्य>सुण्ण (१७),

न्म> म्म, जन्म> जम्म (१६)

नि> णि, निश्चल>णिच्चल (३१), निर्वाण> णिब्वाण (१२, १७)

ना> णु, विना> विणु (३६)

प> अ, रूप> रूअ (२३,८१)

प> फ, पाश>फान्द (१३४)

प> इ, स्वप> सुइ (१२४)

प>व, दीप> दीवा (४), अपरे>अवरे. (११), प्राप>पाव (१७)

अपर> अवर (४७)

पा> आ, उपाय> उआअ (३२)

पि> इ, कोपि> कोइ (११)

पु> उ, निपुणत्व> णिउत्त (२८)

पृ> पु, पृच्छ> पुच्छ (२६)

„ > प, पृष्ठे> पच्छे (५२)

प्य> प्प, लिप्य> लिप्प (७१)

प्त> त्त, आज्ञप्त> आणत्त (७६)

प्न> अण, स्वप्ने> सुअणे (१०६)

प्त> त्त, समाप्तं> समत्तं (१०६)

फ> ह

फु> खु, फुसफुसाइ> खुसखुसाइ (४)

ब्भ> द्ध, लब्भ> लद्ध (६०)

ब्र> ब, ब्रह्मा> बम्हा (४७)

ब्रा> बा, ब्राह्मण> बाम्हण (६४)

भ> ह, भवन्ति> होन्ति (११२) स्वभाव> सहाव (२६)

भ> हि, अभिमान> अहिमाण (३४), शोभित> सोहिअ (३६)

भु> हु, त्रिभुवन> तिहुअण (५०),

भ्य भिअ, अभ्यन्तरे> अभिअन्तरे (५३)

य> अ, निरय>णिरअ (२२), प्रयाग> पआग (६५) काया>काआ (६)

य> ज, युवति>जुवई (७), महायान>महजाण (१०), यस्य> जसु (१२)

य> इ,

यथा> जिम (११६)

या> आ, माया> माआ (६१)

यो> जोव, (३८)

यं> अं, स्वयं> सअं (४०)

य> जे, यत्र> जेत्थु (४०)

र> ल

र्> ग्, मार्ग> मग्ग (१६)

र्थ> ट्ठ, चतुर्थ> चउट्ठ (११३)

र्ध> द्ध, अर्ध> अद्ध (३१)

र्ध्व> द्ध, उर्ध्व> उद्ध (५७)

र्थ> त्थ, परमार्थ> मरमत्थ (१२), तीर्थ>तित्थ (१४)

र्प> प्प, दर्पण> दाप्पण (८६)

र्य> ज्ज, कार्य> कज्ज (१), सूर्य> सुज्ज (३५)

र्व> ब्ब, निर्वाण> णिब्बाण (१२), १७), सर्व>सब्ब (४३),

र्श> न्स, दर्शन> दन्सण (५८)

ल्प> प्प, संकल्प> संकप्प (१००)

व> अ, तरुवर तरुअर (५६)

वि>अ, प्रविष्ट>पअट्ट (३५)

वि> वइ, विश बइस (६३).

,,> इ, प्रविश> पइस (३६)

व्य> ब, व्यवहारें> बवहारें (६३)

श >स, दश>दस (२६), शक्य>सक्क (३२), विशेष>बिसेस (४५)

शृ >सु, शृणु > सुणउ (६३)

शृ > सि, शृगाल > सिआल (८५)

श्च > च्च, निश्चल > णिच्चल (३०)

श्च > च्छ, निश्चित > णिच्छिअ (१६)

श्र > स्स, विश्राम > विस्साम (३१)

श्री > सिरि (३७),

श्व > स, महेश्वर > महेसर> महेसुर(५५), आश्वास>असास (१२६)

ष > स, विषय>विस (१८), दोष>दोस(३३), विशेष>विशेस(४५)

तुष>तुस (५४)

ष्ट > द्ठ, दृष्टि < दिट्ठि (३३), प्रविष्ट > पअट्ठ (३५)

ष्ठु > ट्ठु, सुष्ठु > सुट्ठु (१२१)

ष्णु > द्ठु, विष्णु > विट्ठु (५५)

स > छ, आसन्त > अच्छन्त (४३)

स्त > त्थ, मस्ते > मत्थे (४२) अस्त > अत्थ (६४)

स्त्र > त्त, शास्त्र > सात्त (४४)

स्थ > त्थ, स्थल > त्थल (४४)

„ ठ, स्थित > टिअ (३६)

स्थि > थि, स्थितैः > थियेरि (१४१)

स्न > ह्न, स्ना > ह्नाइ (१३)

ष्प > ब, निष्पद्य > णिबज्ज (६२)

स्पृ > छु, स्पृशति > छुपइ (७१)

स्म > म्ह, अस्मा > अम्हा (४७)

स्य > सु, यस्य > जसु (१२), तस्य तसु (११)

स्फु > हु, स्फुट > हुड (२७),

स्व > स, स्वरुप > सरुअ (३७)

स्व > सु, स्वप्न > सुअण (१०६), स्वप्न > सुइण (१२४)

स्वप > सिवि, स्वप्न > सिविण (१४४)

हम् > हंउ (७५)

ही > हू, विहीन > विहूण (७४)

हि > हु, त्वं हि > तुहु (१४८)

हृ > हि, हृदय > हिअ (३६)

ह्म > म्ह, ब्रह्मा > बम्हा (४७)

ह्य > हिर, बाह्य > बाहिर (६६)

ह्यं > हुं, मह्यं > महुं (३८)

सुवन्त और तिङन्त प्रत्यय अपभ्रंश को आज की भाषाओं की पाँती में बैठा देते हैं। उच्चारण के परिवर्त्तन यहाँ करीब-करीब वहीं मिलते हैं, जो प्राकृत में और इसी भ्रम के कारण जैन भांडारों में अक्सर अपभ्रंश ग्रंथों को प्राकृत ग्रंथों के वेष्टनों में रख दिया जाता है। सुवन्त विभक्तियों के रूपों को पालियों ने और उससे भी अधिक प्राकृतों ने कम कर दिया था। अपभ्रंश ने इस प्रवृत्ति को और आगे बढ़ाया। इसमें द्वितीया, चतुर्थी और षष्ठी तीनों विभक्तियाँ एक-सी होती हैं। उसी तरह तृतीया, चतुर्थी और कभी-कभी पंचमी को भी एक बना जाता दिया है। प्रथमा के एक वचन में संस्कृत-पाली-प्राकृत में प्रयुक्त अकारान्त शब्दों के ओ को छोटा करके उ कर दिया जाता है, जिसे मागधी क्षेत्र के हस्तलेखों में बहुधा छोड़ दिया जाता है। प्रथमा एकवचन का यह उकार गोस्वामी तुलसी दास के 'रामचरित मानस' की पुरानी प्रतियों में काफी मिलता है, और रुहेलखंड में अब भी बहुत से कवि और वक्ता उसका प्रयोग करते हैं। प्रथमा बहुवचन में कोई विभक्ति-सूचक प्रत्यय नहीं लगाया जाता, और शब्द का अपना रूप ही पर्याप्त समझा जाता है। तृतीया में अपने प्रत्ययों के अतिरिक्त कितनी ही बार प्राकृत-पाली और संस्कृत के प्रत्यय एण को इस्तेमाल किया जाता है, और ऐसी जगहों पर पालि-प्राकृत प्रथमान्त ओकार का प्रयोग बतलाता है, कि शायद ऐसा करने में पुरानी भाषा के अनुकरण की प्रवृत्ति कारण हो, तुलसीदास ने भी ऐसा कभी-कभी किया है। सरहने "कम्मविमुक्केण होइ मण मुक्को" (२४) कहा।

२. संज्ञा, सर्वनाम

(१) लिंगभेद

संस्कृत-पाली-प्राकृत तक चला आता नपुंसक लिंग अब खतम हो गया था तथा पुलिंग और स्त्रीलिंग दो ही लिंग रह गये थे।

पुलिंग—

अकारान्त—कोण (ब.४), खबण (ब.६), चेल्ल>चेला (ब.९), तड>तट (१००)

आकारान्त--घण्टा (व.४)
इकारान्त--अइरि<आर्य (ब.३), अग्गि<आग (व.१), हत्थि<हाथी (व.७१), गिरि (ब. १००) जोइ (स. ४४), मुणि<मुनि (श. ४१), मुण्डी (व. ५), रवि (स. १९),
ईकारान्त--अत्थी<अर्थी (व. १११), जोई<योगी (स. ८८), दण्डी (व. २), पाणी (स. ६९),
उकारान्त--अणु (स.६७), गुरु (स. ३४,६२), पसु<पशु (स. २०)

स्त्रीलिंग--

आकारान्त--इच्छा (स.२३), काआ<काया (व.९), जडा<जटा (व.३), दीवा (व.४), पब्वज्जा<प्रव्रज्या (स.१८), भाज्जा<भार्या (स.१८), मुद्दा--मुद्रा (ब. २२), सुरुंगा<सुरंग (व. ७२)
इकारान्त--अक्खि>आँख (व.२), इन्दि<इन्द्रिय (श.८४,९४), जुवइ<युवती (ब.२७), जोइणि<योगिनी (व.८६), बोहि<बोधि व (१०३), मट्टि (ब.१), मणि (ब.९७) माइ<माई (व.८४), सहि<सखी (श.४५, ९२), सिरि<श्री (ब.६६)
ईकारान्त--कुमारी (स.६५), णई<नदी (फव. १००), वाराणसी (स.९६), रण्डी (ब. ५)

(२) सर्वनाम

अण्ण (स.९६), एहु (स.३०), को (ब. ९३), जो (स.१६), मइ (स. २२) सब्ब (स. १४), सो (स. १६)

(३) संख्या

-एक (व. १३), एक्क (स.५०),
विण्णि (व. ५४), वेण्णि (स. ५०), बेइ (स. ५७, ६२), दुइ (स.१५६)
तिण्ण (स. २७)
चार (व. १), चउ (स. १०९), चउट्ठ (व. ९६),
पंच (स. १४३)
दस (स. ५२)
चउजह<चउदह (श. ९१, व. ८९)

सग्राइ<शतानि (स. २१)

३. सुबन्त

प्रथमा और सप्तमी (अधिकरण) विभक्तियों के अतिरिक्त बाकी विभक्तियों के रूप प्रायः एक से होते हैं। हमारे कोश में आये रूपों के साथ यहाँ कविराज स्वयंभू के "पउमचरिउ" (रामायण), बारहवीं सदी के पूर्वार्ध के गहडवार गोविन्दचन्द्र के दरबारी दामोदर पंडित की पुस्तक "उक्ति-व्यक्तिप्रकरण" तथा बारहवीं सदी के अन्त के कवि विनयश्री की गीतियों के प्रयोगों को हम देते हैं—

एक वचन के रूप—

विभक्ति	सरह	स्वयंभू	दामोदर
प्रथमा	उ (मणु व. ८६)	(कबन्धु, १ पृष्ठ७१)	(पूतु)
	ओ (कहाणो, ठाणोस १२८)		
द्वितीया	चिह्न नहीं	उ (पूतु),	न्ह (पूतन्ह)
तृतीया	ए (बज्झे व. ४२), (कज्जे व. २)		
	ए (च्छारें व. ३, सहावें व.१०६)		
	एहि (खवणेहि व.५)		
	एहिं (अइरियेहिं व.३)		
	एण (कम्मेण स.२४)		
चतुर्थी	०		पूतहि, पूतकिहँ, पूत कर
पंचमी	एँ (दोसें स. ३३, ३४)		
	लइ (तालइ स. २०)		
	ह (आयेसह स.२८)		
	हि (भवणिब्वाणहिं मुक्कअ स.३२)		
			तौ, हुँत, हुत, पास, हंति, आँ (पूत तौ, पूतहितौ, पूतहँत, पूतहति, पूतपास
षष्ठी	केरो (राक्खस केरो स. ७३)		कर, किअ, हिँ, करें, करि, केर, केरि
	केर (जणकेर स.१११, माआकेर स. ११६)		पूतकर, ० किअ···)
	तणअ (कालहु तणअ स. ५७)		

सप्तमी (हत्थे स. ५४)

ए (घरे व. १२७) ए, एँ, हि, मज्झ

एँ (कोलें ब. ८६, बग्रणें श. ६४, परमत्थें स. ४७)

एहि, एहिं (जलेहि स. ८८, पाणिग्रेहिं स. ४६)

हि, हिं (काणहि ब. ४, घरहि ब. ४, देहहिं स. ७४, मरुत्थलहि स. ४४)

सु (सीससु ब. ३)

संबोधन ग्ररे, रे (स. २३) ग्ररे, ग्रहो

ये (माइ ये व. ८४)

हले (त. ६२)

हे (श. ३८)

बहुवचन

इसका बहुत कम प्रयोग दीखता है।

प्रथमा ग्रा (बुधा, स. ६१, जडा स ६१)

एँ (वालें स. १६) (पूते)

द्वितीया न्ह (पूतन्ह), ग्रे (पूते)

तृतीया इँ, एँ, हि, हुपास (पूतिं, पूतें, पूतहि,)

चतुर्थी न्ह (पूतन्ह)

पंचमी ० (ग्रप्पण ब. ६) न्हतौ (पूतन्हतौ)

षष्ठी एग्राण (खबणाण ब. ८) न्हकर (पूतन्हकर)

सप्तमी न्ह मज्झ (पूतन्हमज्झ)

(२) सर्वनामों के सुबन्त रूप

(क) मैं—एकवचन—

प्रथमा मइ (स. २२)

हउ (स. ७५, १४४) हउँ

द्वितीया महु (स. ८ द, महुं. स. ३४) मैं

तृतीया मइ (स. २२)····मइ

चतुर्थी द्वितीयावत्

पंचमी महु, मज्झु

षष्ठी द्वितीयावत् महु, मज्झु मोर

सप्तमी मइ (स. ४३, ४६)

	बहुवचन
प्रथमा	अम्हे, अम्हें
द्वितीया अम्हा (स. ४७)	अम्हेंहिं
तृतीया म (स. २२)	
चतुर्थी	
पंचमी	अम्हहुम् अम्हहँ
षष्ठी	अम्हहुम् अम्हहँ
सप्तमी	

(ख) तू—सरह में नहीं है, स्वयंभू और दामोदर के रूप हैं—

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	तुहं (स्व.), तूँ (दाम)	तुम्हे, तुम्हें (स्व.)
द्वितीया	मैं (स्व.), तोहि (दाम.)	तुम्हे (स्व.)
तृतीया	तै (दाम)	
चतुर्थी	तुहु, तुव, तुज्झु (स्व.), तोर (दाम.)	तुम्ह, तुम्हहँ, तुम्हहुं, तुम्हें (स्व. द)
पंचमी		
षष्ठी		
सप्तमी		

(ग) सो—

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	सा (ब. ४५), से. (स. ९५), ता (स. २०), सो (स. द्य ६) सु, सा (सव)	
द्वितीया	सो (स. १४), तं (स. २३, ७७), तहि (स. ४२)	
तृतीया	तेण (स.) तेण, तिए (स्व)	
षष्ठी	तसु (स. १४) तासु, ताहे (स्व.)	

(घ) अग्ग (अन्य)—

प्रथमा अण्ण (स. ७६)

(ङ) एहु—

प्रथमा एहु (स. ३०), एहु (स्व.)

(च) को—

प्रथमा को (व. ६२), कवण

कवण (स्व.), को (स्व.)

तृतीया केण (स. २२)

षष्ठी कसु (स. ५८), कासु (स. ६५)

(छ) जो—

प्रथमा जो (स. १६), जे (स. ८०)

द्वितीया जे (स. ५२)

तृतीया जेण (स. ६१)

षष्ठी जसु (स. १२)

जसु, जासु (स्व.)

सप्तमी जहि (स. ४६)

४. अव्यय, उपसर्ग

(१) अव्यय—

अग्गे (स. ५२), अग्गे (स. ६६), अध (स. ५७), अरे (व. ४४), इ<हि(श. ३७,७६), इअ<इति(श. ८६), उ>और(श. २०), उणो<पुनः (श.४२), ए<हे(श.६२), एम<एवं (स. ४३), एहिं>यहाँ (ब. ४), कमणे> कौन(स.१०५,)कहिं>कहाँ (स. २७), काइँ>क्यों(श. २४), किं(व. ८), किअ (स.४२), की>क्यों (स. २०), खलु (श. १०४), जइ<यदि (स. ६६) जत<यद्(श.२३), जत्तइ>जेतना (स.७६), जत्थ<यत्र(स.२६), जब्बे>जव (स. ३६), जाउ<यावत् (स. ६७), जाव>यावत् (स. ६६) जिम>जिमि, यथा (ब. ७६,८६), जेत्तइ>जेत्ता (स. ७७), णं<ननु (?), णउ> नहि (स. १७,१६), णाहि>नहीं (स. ४६), णु<नु (व. ११२), तउ>तो (स. ७५), तत्तइ>तेत्ता (स. ७२), तत्थ<तत्र (स. ४०), तब्बे>तब (स. ३६), तहवि<तथापि (स. ७२), तहा<तथा (ब. १०१), ताव<तावत् (स. २५), तावइ (स. ७६), तिम>तिमि (स. ४६, ब. ८६), न (व. १),

पच्छे>पीछे (स. ५२), पुण>पुनि (स. १७), पुणु>पुनि (स. ३९), फुड>फुर (स. २७), वाज्ज<वादि (स. १४०), वाहिर (स. ६९), त्रि>भी (स. ६६) बिणु<बिना (स. ७२), म>न (स. ४३), मा>ना (स. १७), रे (स. ८९), सइ<स्वयं (श. ४६), सुठु>सुठि (स. १२३), हु (श. ६०), हो (स. ३०),

(२) उपसर्ग

अ–निषेधार्थ (श.१००), अ>आ (अमण<आगमन श. ७०), अवच्चेअण–अको<अवचेतन (श.१८), अव्भ<अभि (अव्भन्तर व.८९), अह<अथ (श.२२) अहि<अभि (अहिमाण स. ६०), आ (आअेस<आदेश (स. २८), उअ<उप (उअपिट्ठ<उपपीठ, स.९६), उज<उत् (उज्जोअ व.९७), उड<उन् (उड्डी व. ७०), उव<उद् (उवाहरण<उदाहरण श.९८) कु (व.९९), णि<निस् (णिण्वकरुण व. १०९), णिच्चल (स. ६६), णि<नि (णिवेसी व. ४), णिर<निर् (णिरक्खर स. २५), दु<दुर् (श. ८८), पडि<प्रति (पडिवेसी<प्रतिवेशी स. ६८), वि<वि (विअप्प<विकल्प व. १००), सम (समरसु स. ७७, ९५), सु (सुगति स. ८८)

५. समास

चार समासों के उदाहरण निम्नलिखित हैं––

१. कर्मधारय––घोरान्धार (व. ९७)

२. तत्पुरुष––जोइणिचार (व.८४), जोइणिमाअ>जोगिनी-माया (व.८६)

३. द्वन्द्व––चित्ताचित्त (स. १२३)

४. वहुव्रीहि – अभिण्णमइ<अभिन्नमति (श. ८९)

६. तद्धित

तद्धित का प्रयोग वहुत कम होता था। कुछ उदाहरण हैं––
तणअ<तन (कालहु तणअ स. ५७), केर<कीय, (रात्रखस केरो (स. ७३)।

७. क्रिया

क. तिङन्त

सहायक क्रिया-सहित वर्त्तमान क्रिया का यहाँ कोई प्रयोग नहीं दीख पड़ा। वर्त्तमान, भविष्य, अतीत (भूत) और आज्ञा की क्रियाएँ निम्न प्रकार हैं :

(१) वर्त्तमान--

प्रथम पुरुष एकवचन में ०, अ, इ, प्रत्यय आते हैं, जैसे जाण (व. ९६), जाअ (स. २७), जाणअ (व. ९५),

जाइ (स. १३), जाणइ (व. ९५), ठाइ (स. ४३), णासइ (स. ६०), तुट्टइ (स. ७२), देइ (स. २३), देक्खइ (स. १५), धावइ (स. ४३), पइसइ (स. ३६), पईसइ (स. १५), बज्झइ (स. ९१)। प्रथमपुरुष, बहुवचन का प्रयोग शायद इ को अनुनासिक करके होता था। मध्यमपुरुष के लिए संस्कृत की तरह सि प्रत्यय का इस्तेमाल होता था--जाणसि (स. २२), पावसि (स. ६७), परिआणिसि (स. ६७)।

उत्तमपुरुष में मि एक वचन के लिए आता था--कहमि (श. ९५), जाणमि (व. ९०), जोअमि (स. ५२), पुच्छमि (स. ५२)।

स्वयंभू रामायण में प्रथम पुरुष के लिए इ, मध्यम के लिए हि, हो और उत्तम के लिए एकवचन में मि और हुं आता है।

प्रथमपुरुष बहुवचन में सरह न्ति, न्ते का प्रयोग करते हैं।--बज्झन्ति (स. ९१), होन्ति (स. ११४), रमन्ते (स. ४८)।

(२) भविष्य--

इसका प्रयोग अलग से बहुत कम देखा जाता है।

कुछ प्रत्यय हैं--

इहइ (होइहइ स. ६४) प्रथम पुरुष

इ (बुज्झइ स. ८२)

ईहसि मध्यमपुरुष में--करीहसि, गमीहसि, ठवीहसि (स. १५५)

स्वयंभू एकवचन में सइ और बहुवचन में सन्ति का प्रयोग करते हैं--होसइ, होसन्ति।

(३) अतीत--

अतीत काल के लिए पुराने रास्ते को छोड़ निष्ठा प्रत्यय से काम लिया जाता है, जैसा कि हिन्दी, अवधी, व्रज, भोजपुरी आदि करती हैं। ये प्रत्यय हैं--

अ (चाहिअ श. ४१, हुअ श. १०१, ठबिअ स. १५)

अउ (ठविअउ स. १५, ठिअउ ब. ८६, ठीअउ ब. १११, दीअउ ब. ११२, बसिअउ श. ३८), इअउ (कहिअउ स. ६४, पढिअउ ब. ६०)।

इउ (गहिउ स. ६६, गाहिउ स. १२७, चाहिउ ब. ३६, जाणिउ स. ५१, घाविउ स. १०, बाहिउ स. १२८, साहिउ स. २२)

उ (गउ स. २६, ठिउ स. २६)।

अपभ्रंश का भूतकालिक प्रयोग अवधी के सबसे नजदीक है। इसके लिए इल-अल प्रत्यय का प्रयोग भोजपुरी आदि में पीछे होने लगा। पर विनयश्री—जो विक्रमशिला (भागलपुर) के थे—ने बारहवीं सदी के अन्त में इल, अल का बहुत प्रयोग किया है, जैसे—फुल्लिलल (गीति १), गेल्लिअहँ (वहीं) झंपाविल्ल (वहीं), भइल्ल (गी. २), गइल्ल (वहीं), लाम्बल (गी. ६),

सरह की भाषा और स्वयंभू आदि की अपभ्रंश ने अतीतकाल के संबंध में प्राकृत आदि से अपना संबंध बिल्कुल तोड़ लिया, और उसका अनुसरण आज भी हमारी भाषाएँ कर रही हैं। भेद इतना है, कि जहाँ भोजपुरी, बँगला, मैथिली आदि ने इउ का इल, अल कर दिया, वहाँ अवधी ने पहिले ही की तरह अउ, इउ, एउ को कायम रक्खा। ब्रज ने ओ और यो किया, जिसको कौरवी या हिन्दी तथा उसकी सहोदरा पूर्वी पंजाबी ने आ, ए (बहुवचन) बना के रक्खा। इस प्रकार अपभ्रंश जाणिउ, अवधी में जानेउ, ब्रज जानो, हिन्दी-पंजाबी में जाणा (जान लिया) या जाना बन गया।

(४) आज्ञा—

आज्ञा का प्रयोग मध्यमपुरुष में ही प्राय: देखा जाता है, करेइ (ब. ६६) खरडह (श. २५), पडिहाउ<प्रतिभातु (ब. १०१) जैसे कुछ ही सन्दिग्ध प्रथम पुरुष के प्रयोग देखने में आते हैं। मध्यम पुरुष के एकवचन के प्रत्यय हैं—

इ (पडेइ ब. ०७),

० बस (स. २७)

उ (थक्कु ब. १०३, थाक्कु श. १०५, देक्खउ स. ६२, बसउ ब. १००, भमउ (स. ६३)

हु (पडिपज्जहु स. ४४, पणमहु स. २३, माणहु स. ३८)

हि (जाहि व. १०३),

हु (मण्णहु ब. १०२, लग्गहु त. ५१, अच्छहु स. ६२)

(५) समस्त क्रिया

आजकल हिन्दी में जिस तरह है आदि सहायक क्रिया के साथ मिलाकर एक धातु के स्थान में दो धातु के प्रयोग द्वारा उसी अर्थ को प्रकट किया जाता है, जो संस्कृत, पालि, प्राकृत में एक धातु के रूप से चल जाता था, जैसे—पठति के लिए हिन्दी में पढ़ता है। लेकिन, यह परिपाटी अर्थात् कृदन्त के एक शब्द के साथ सहायक क्रिया द्वारा अर्थ को प्रकट करना हिन्दी की मूल भाषा कौरवी तथा हमारी दूसरी भाषाओं में भी अनिवार्य नहीं है। कौरवी में पढ़ै, जावै-जैसे प्रयोग देखे जाते हैं, और है को अनिवार्य रूप से प्रयुक्त भी नहीं किया जाता। पुरानी उर्दू कविताओं में—पढ़े है, जावे है—जैसे प्रयोग कभी थे, लेकिन उन्हें त्याज्य कर दिया गया। जिसके कारण लाठी के जोरां से पढ़ता है, जाता है का प्रयोग कराया गया। उस लाठी को हिन्दीवालों ने भी मान लिया। उस क्रिया-रूप में एक और भी लाभ था, कि क्रिया में स्त्रीलिंग-पुंलिंग के भेद की अवश्यकता नहीं थी। समस्त क्रियाओं का सरह की भाषा अपभ्रंश में भी प्रयोग अधिक नहीं देखा जाता, और यदि होता भी है, तो वह संस्कृत की तरह शायद ही कहीं। ये सहायक क्रियाएँ निम्नलिखित हैं—

गउ<गतो, (विलीण गउ स. ३९)

जाइ<याति, (खअ जाइ क्षय हो जा, त. ३०, सिद्धि जाइ स. ४८
भणइ ण जाइ स. ६५, कहिहो जाइ स. ३०)

थाक्कइ<स्थगति—(णिच्चल थाक्कइ निश्चल रहे, स. ६६)

सक्कइ<शक्नोति, (कहण ण सक्कह कह न सके, स. १०४)

होइ<भवति, (बंध होइ>वधता है, स. ११३)

होवि<भवति, (होवि न खीण>क्षीण नहीं होता, स. ४१)

(६) नामधातु क्रिया

नाम से क्रिया बनाने का रिवाज संस्कृत और भोजपुरी, अवधी आदि

आधुनिक भाषाओं में भी देखा जाता है । साहित्यिक हिन्दी में इसका अभाव खटकता है । सरह की भाषा में भी इसके प्रयोग मिलते हैं, यद्यपि क्षेत्र सीमित होने के कारण वह कम देखने में आते हैं।

नामधातु में इअ प्रत्यय लगाकर क्रिया वनाई जाती है, जैसे उद्धूलिअ <उद्धूलित, धुलिआया, स. ३ ।

शब्दानुकरण के लिए आइ प्रत्यय का उपयोग देखा जाता है, जैसे खुसखुसाई>फुसफुसाता है, (स. ४)

(७) भाव, कर्म-संबंधी क्रियाएँ

अकर्मक धातुओं से भाव और सकर्मक धातुओं से कर्म में प्रत्यय ला क्रिया के प्रयोग के कुछ उदाहरण हैं—

सक्कअ<शक्यते, स. १७, वुच्चअ<उच्यते स. ३८, रुच्चअ<रुच्यते स. ३८, दमुच्चअ<मुच्यते, स. १८

इअ, विअ डाविअ<दाबते, व. २, पाविअ<प्राप्यते, स. ८५

इअइ, ईअइ, लक्खीअइ<लक्ष्यते, स. २७, पुजिजअइ<पूज्यते, स. १४६, किअइ<क्रियते, स. १६,४२

इज्जइ—दिक्खिज्जइ<दीक्ष्यते, व. ५, गुणिज्जइ<गुण्यते, स. १४, विलिज्जइ <विलीयते स. ४८, णासिज्जइ<नाश्यते स. १३६, भाविज्जइ <भाव्यते स. १४२

एइ, पड़िहरेइ<प्रतिह्रियेत स.५७, करेइ<क्रियेत स.५७, चरेइ<चर्येत स. १२५, हरेइ<ह्रियेत स. १२५

(८) प्रेरणार्थक णिजन्त क्रिया

इसका रूप प्रायः वैसे ही प्रत्ययों को लगा के वनाया जाता, जैसा कि हिन्दी में । कुछ प्रत्यय इसके कौरवी बोली में देखे जाते हैं, जैसे—चली का चाली । पर साहित्यिक हिन्दी ने उसे अपनाया नहीं ।

आ. इ चाली>चलाता है (व. ४)

आव—करावै

वइ—मेलवै>मिलता है (स. ५३)

ख. कृदन्त

कृदन्त रूपों का अधिक प्रयोग अपभ्रंशकाल से ही होने लगा, जिसे आज भी देखा जाता है। खासकर त या निष्ठा प्रत्यय जैसे हिन्दी में भूतकालिक क्रिया की अपनी विशेषता बन गई है, वैसे ही अपभ्रंश में भी देखी जाती है।

१ निष्ठा प्रत्यय क्रिया

अउ—सूणउ>सुना, डिट्ठउ>देखा, स. ९७

आ—लग्गा>लगा स. १६

इअ—कड्ढिअ>काढ़ा, निकाला स. १९, कहिअ>कहा, स. २२, सोहिअ> शोभित हुआ, स. ३६ इअ—किया स. ५९

इअउ—कहि कहिअउ<कथितः कहा स. ६७

इआ—रंजिया<रंजित, रंग्या>रंगा स. ५०, जाणिया>जान्या>जाना स.५९

इउ—धाविउ>दौड़ा स.१०, रहिअउ<रहित स. १८, जाणिउ>जाना स. ४१

इव—गाइव>गाया स. ३६

उ—गउ>गया स. २९, दिन्नु>दिया स. ३७

ओ—णट्ठो>नष्ट हुआ स.२९, बइट्ठो>बैठा स.६७, डिट्ठो>देखा स. १०

हमें भूतकाल के बतलानेवाले आ और ओ या उ तीनों प्रकार के प्रत्यय मिलते हैं, जिनमें आज की भाषाओं में आ खड़ी हिन्दी के लिए रह गया है और उ, ओ अवधी तथा व्रज में प्रयुक्त होता है। लग्गा लगा यह खड़ी हिन्दी के जैसा है। कहिअउ>कहेउ के रूप में अवधी में बोला जाता है। गउ>गया का भी प्रयोग अवधी में देखा जाता है। नट्ठो गओ की तरह व्रज के अनुरूप है।

२. न्त—इसके प्रयोग अपभ्रंश में मिलते हैं, यद्यपि आजकल की भाषाएँ उनको उतना इस्तेमाल नहीं करतीं। इसके रूप में—पढ़न्त ब. १ हुणन्त>होमता ब. १, कुट्टन्त>कूटता स. ५४, रमन्ते>रमता स. ७१, हरन्ते>हरता स. ७१।

३. क्त्वा के लिए आजकल कर अलग से धातु में जोड़ा जाता है, जैसे लेकर, बैठकर। इसके लिए यहाँ दो प्रत्यय प्रयुक्त होते देखे जाते हैं—

इअ—लइ>लेकर स. १२२, बइसी>बैठकर ब. १, च्छाड़ी>छोड़कर स. ११, धरि>धरकर स. ६३।

बी—मुणेवि>मननकर स. ३६

४. धातु-अर्थ—इसके लिए संस्कृत आदि का अन प्रत्यय इसमें भी अण के रूप में आता है, जिसके आकारान्त और उकारान्त दोनों रूप देखे जाते हैं, अर्थात् खड़ी बोली और ब्रज-अवधी दोनों का पूर्व-रूप यहाँ मिलता है, जैसे अत्थमणु<अस्तमनम् स. ६५, कहाणा<कथन>कहना स. १२७।

वी प्रत्यय का इस अर्थ में प्रयोग भोजपुरी, अवधी आदि में देखा जाता है, जो हिन्दी में नहीं मिलता। अपभ्रंश में यह मिलता है—कहवि>कहना स. ११३।

सरह की मूल भाषा में ग्रंथ एकाध ही मिले, इसलिए कृदन्त के सारे प्रयोगों के बारे में नहीं कहा जा सकता। लेकिन, स्वयम्भू, पुष्पदन्त आदि अपभ्रंश के महाकवियों ने महाकाव्य लिखे हैं, जिनमें अनेक रूप देखे जा सकते हैं।

८. विशेष

हम बतला चुके हैं, कि सरह की भाषा अपभ्रंश अपनी शब्दावलि और उच्चारण में यद्यपि पूरी तौर से प्राकृत की अनुयायिनी नहीं है, लेकिन बहुत-सी बातों में वह आधुनिक भाषाओं का पथ-प्रदर्शन करती है। इसमें प्रयुक्त संस्कृत-वंश से भिन्न भाषा के देशी (द्रविड़ आदि) शब्द बहुत-से आज भी प्रयुक्त होते हैं। और कितने ही शब्दों के रूप इसे आधुनिक भाषाओं से एक करते हैं। यहाँ उनके उदाहरण दिये जाते हैं।—

(१) देशी शब्द

करहा (४३, करभ), कबडिआर (बाग. १०१, हाथीवान्), खुसखुसाइ (बाग. ४, फुसफुसाइ), चाउल (५४, चावल), चाँगो (१२०, चंगा), च्छाडहु (१५७), चेल्लु (बाग. ६, चेला), छुड (६३,), जगड (४३, झगडा), धान्ध (८८, पाली धन्धा), फुड (२६, २७, ११६), बप्पडा (१५७), बाजूज (१३८, विना), बुल्ल (१२१), लड (१०६), फेडिअ (१३६), सुहंगा (बाग. ७६), हल्ले (८३)

खीण (४१), चिन्त (२८) च्छुप (६६), च्छड़ (वाग. ८२,–फ–६. १११), छिण्ण (६५), जल (जलन्त, वाग. ८१), जल (२३), जा (१३,४८), जाल (वाग. ४), जिग्घ (६२), जाण (६, ६६, १०३, १२७), जुड (१७), जोग्र (५२), झा (१२, ध्या), ठि (२६, ४३), डह (वाग. दह), डा (वाग. ७० उड़ना), णिहाल (वाग. ६६), देस (वाग. २, दिश्), तप (१३), तिस (८८, वाग. ६१ तृप्),तुट्ट (७२, ६४), तुट्ठ (१२),दा (३५,७१), दिस (१५, वाग. ८१),दिह (६१), दी (२३, वाग. ११२),धाव (१०, ४३, ६१), धर (वाग. ७७), धा (वाग. ८६, ध्या), पलुट (वाग. ७०), पढ़ (वाग १,१४, वाग. ६०), पड (वाग. ७०), पाड़ (३५ वाग. ५), पाव (१६, १७, ६६), पुच्छ (५२, ६८), पुज्ज (७१), पीव (४४, ४८), पुल्ल (वाग. १०) पूर (६४), फुर (२३), वग्र (८६),बइ (३, वाग.६८),बइस (१०, वाग.४०), वज्ज (१८, ५४, बाग ८४), वज्झ (२४, ६४, ६१), वन्ध, (वाग.४) वन्ध (बाग.४, १०५), वह (बाग.३, ८६, १२८), वस (२७), वाज्झ (७१), वास (वाग. १११), बिस (वाग. ४), वुज्झ (३०, ७७), बेग्र (६६, वाग.७५), फर (४८), भण (वाग.८), भम (६३, ७६), भाव (१११, वाग. ८, वाग. १०५), भेज्ज (बाग. ८३), भोग्र (वाग. ८), भान्त (६७), मण (८५), मण्ण (वाग. १०२), मर (३०, ६०), मिल (८८), मुण (३६, वाग. ८१), मुसार (४१), मुह (३४), न्हा (१३), वक्ख (बाग. १० ७४), मुवक (६६), रज (५०), रम (वाग. ७०), रस (५१), रह (६४), रुघ (३४), मुच्च (१३), लग (१६), लक्ख (२७, ३४, ३५), लइ (२०), लज्ज (७५), लभ (१२), लिप (६६), लीण (६५, ६६), लुड (वाग. ८०), लुक (वाग. ८६), सक्क (१७, फाग. ५०), सत्त (वाग. ७१), साध (१७), सा (सार, साल. ७२, वाग. १०१), सर (७१), साह (वाग.६,१७), सिझ् (२०), सुण (६२), सुध (वाग. १०६), सुह (वाग.६५), श्रेसेग्र (वाग.१०५), सोह (३६), हर (वाग. ६४, वाग. ६७), हा, पडि– (वाग.८७), हार, बव–(६३), हुण (वाग.१ हवन), होइ (१२).

(४) छन्द

जिस प्रकार प्राकृत का अपना विशेष छन्द गाथा या आर्या है, जिसका बहुत सुन्दर प्रयोग गाथा-सप्तशती के मुक्तकों में देखा जाता है, उसी

तरह अपभ्रंश के दोहा-चौपाई अपने विशेष छन्द हैं। बल्कि हम कह सकते हैं, कि आर्या या गाथा को केवल प्राकृत का छन्द नहीं कहा जा सकता, पर दोहा-चौपाई का आरम्भ तो अपभ्रंश से ही शुरू होता है। इनके सबसे पुराने नमूने हमें सरह की कविताओं में ही मिलते हैं। जबतक और पुराना उदाहरण नहीं मिलता, तबतक के लिये हम कह सकते हैं, कि सरह ही साहित्य में इसके विधाता हैं। चौपाई और पद्धरिया एक ही प्रकार के छन्द हैं। दोनों में चार पद होते हैं, हरेक पाद में १६ मात्राएँ होती हैं। अन्तर इतना ही है, कि चौपाई के अन्त में गुरु आता है, और पद्धरिया में लघु। यह भी स्मरण रखने की बात है, कि दोहाकोश के नाम से ही सरह की अनेक कविताएँ विख्यात हैं, लेकिन दोहा छन्दों के अधिक होने पर भी उनमें केवल दोहे ही नहीं हैं, बल्कि पद्धरिया आदि दूसरे छन्द भी देखे जाते हैं। शायद उस समय अभी दोहा शब्द अपने आज के अर्थ में रूढ़ नहीं हुआ था। कोश भी यहाँ डिक्शनरी या शब्दकोश के लिए नहीं इस्तेमाल किया गया। कोश का अर्थ है संग्रह या संचय। दोहाकोशसे दोहों का संचय या दोहावली अभिप्रेत है। "गाथासप्तशती" को पहले गाथाकोश या आर्याकोश भी कहा जाता था, जिसका भी अर्थ गाथावलि ही है। सरह के "दोहाकोश गीति" में गाथा या आर्या छन्दों का भी प्रयोग देखा जाता है, जिनकी संख्या छ है। इनकी भाषा सभी जगह प्राकृत है, जिससे मालूम होता है, कि उस समय आर्या छन्द को प्राकृत का छन्द माना जाता था, और उसे देशी भाषा में इस्तेमाल नहीं किया जाता था। हो सकता है, दोहा-चौपाई आदि जिन छन्दों का पहले-पहल प्रयोग हम सरह को करते देखते हैं, वह लोकभाषा के छन्द थे।

दुवहय दोहा के रूप में ही प्रचलित था; क्योंकि इसी तरह सरह के ग्रंथों में उसका प्रयोग देखा जाता है। इस छन्द के बारे में किन्हीं-किन्हीं विद्वानों का मत है, कि यह ग्रीक छन्द से लिया गया है। इसमें शक नहीं, ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी से ईसा की पाँचवीं सदी तक यवन, ग्रीक, हूण (हेफ्ताल) आदि जातियाँ भारी संख्या में भारत में आकर सदा के लिए बस गईं। यद्यपि कुछ ही पीढ़ियों में वह अपनी भाषा खो बैठी, लेकिन उनके गीतों की ध्वनियाँ और छन्द इतनी जल्दी भुलाये नहीं जा सकते थे।

हिन्दी ने मुस्लिम-काल में अरबी और फारसी–विशेषकर अरबी–के कितने ही छन्दों को ले लिया, जिनका प्रयोग आज भी होता है। ऐसे ही यदि उपरोक्त घुमन्तू जातियों के गीतों और छन्दों के बारे में किया गया हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। यदि दोहा को इस तरह अपनाया गया हो, तो अधिक सम्भव है, वह यवनों से नहीं, बल्कि शकों से लिया गया होगा। शक सामन्त हमारे यहाँ के संभ्रान्त राजपूतों, जाटों, अहीरों, गूजरों के रूप में अज भी मौजूद हैं। जिस तरह वह भारतीय जाति के अभिन्न अंग हो गये, वैसे ही उनके कुछ छन्द और लय भी यदि जनप्रिय होकर हमारे हो गये हों, तो कोई आश्चर्य नहीं। यहाँ एक उल्लेखनीय बात यह है, कि इन पंक्तियों के लेखक ने रियाज़िन (रूस) और ताजिक लोकगीतों को उसी लय और छन्द में गाये जाते सुना, जिसमें भोजपुरी बिरहे––जिसे हजारीबाग जिले में चाचर (चच्चरी) कहते हैं–– गाये जाते हैं।

डा० शहीदुल्ला ने "दोहाकोशगीति" में निम्न छन्दों को पाया है––

१. दोहा––हमारी पुस्तक में ६२ के करीब दोहे मिलते हैं, अर्थात् आधे से कुछ ही कम। दोहा इसी रूप में वहाँ बोला जाता था, दुवहय नहीं। जैसा कि इस तालपत्र के १११ वें पद्य के इस वाक्य से मालूम होता है––"तहि भासिअ दोहाकोषं तत्थ चिअकन्धअं समत्तं॥" सरहपाद ने अपनी इस प्राकृत गाथा में भी दुवहयकोस नहीं बल्कि दोहाकोश का प्रयोग किया है, जो १३ और १५ मात्राओंवाली दो पंक्तियों का होता है।

२. सोरठा––सोरठा का प्रयोग सरह ने बहुत कम किया है। वैसे सोरठा दोहे को उलटकर ही बनाया जाता है।

३. पादाकुलक के भी कितने ही उदाहरण मिलते हैं, जो १७ मात्राओं का छन्द है।

४. अडिल्ल वदनक––इस पज्झटिका के काफी प्रयोग यहाँ देखे जाते हैं। इसके चारों पदों में से प्रत्येक में १६–१६ मात्राएँ होती हैं, और जैसा कि ऊपर बतलाया, पज्झटिका<पद्धतिका>पद्धड़िया के अन्त में दो गुरु और एक लघु अवश्य आता है।

५. गाथा (आर्या)––इसका प्रयोग सरह ने केवल प्राकृत में लिखे छः पद्यों में किया है।

६. रोला—इसका भी दो-एक ही जगह उपयोग सरहपा ने किया।

७. उल्लाला—२८ मात्राओं की दो पंक्तियों का यह छन्द बहुत कम प्रयुक्त हुआ है।

८. महानुभाव—१२ मात्राओं के ४ पादों का यह छन्द एक जगह ही प्रयुक्त हुआ है।

९. मरहट्ठ—२९ मात्राओं के इस छन्द को डा० शहीदुल्ला ने एक ही जगह पाया है।

§५. हस्तलेख

जिन हस्तलेखों के आधार पर मैंने मूल पुस्तक का सम्पादन किया है, उसके बारे में कुछ कहने के पहले यह बतला देना आवश्यक है, कि सरह जैसे भाषा, विचार, छन्द आदि में युग-प्रवर्तक पुरुष की एक ही कृति को हिन्दीभाषी पाठकों के सामने रखकर सन्तोष कर लेना मैंने अच्छा नहीं समझा। इसीलिए उनके जो अन्य अपभ्रंश ग्रंथ तिब्बती (भोट) भाषा में अनुवाद के रूप में मौजूद हैं, उनको भी हिन्दी में ला देने की मैंने कोशिश की। इस प्रयत्न में मैं अपने को सफल नहीं कह सकता, लेकिन इससे सरह के भावों को जानने में सहायता मिलेगी, इसमें सन्देह नहीं। यह भी हो सकता है, कि तिब्बत के पुराने विहारों के हस्तलेखों की अच्छी तरह छानबीन करने पर शायद उनमें कुछ और मूल भाषा में मिल जायें, उस वक्त इन अनुवादों की अवश्यकता नहीं रहेगी। यदि ऐसा न भी हो, तो भी आनेवाले विद्वान् अधिक साधन-सम्पन्न होकर अच्छा अनुवाद कर सकेंगे। सरह की भाषा अन्य सिद्धों की भाषा की तरह सन्ध्या-भाषा के नाम से अभिहित की जाती है। उसमें दूसरे रहस्यवादी कवियों की तरह अनेक भाव निहित हैं, इसलिए भी उनका हिन्दी में अनुवाद करना आसान काम नहीं। दुर्भाग्य से मुझे कोई ऐसे तिब्बती विद्वान् की सहायता नहीं मिल सकी, जो सिद्धों की भाषा और भाव का ज्ञाता हो।

१. 'दोहाकोश-गीति' की तालपोथी

शायद दोहाकोश की सबसे पुरानी प्रति यही सिद्ध होगी, जो कि सन्

१९३४ ई० में मुझे तिब्बत के ऐतिहासिक मठ स.स्क्य में मिली थी, और जिसके अनुसार मैंने कोश को संपादित किया। इसकी प्राप्ति बड़े विचित्र ढंग से हुई। मैं भारत से गई तालपत्र की पोथियों की खोज में अपनी दूसरी यात्रा में स.स्क्य पहुँचा। वहाँ तालपत्र की पोथियाँ थीं। खोज करने पर किसी ने कहा, वहां के एक मन्दिर के पुजारी के पास ताल-पत्रों का बंडल है। मेरे चिरस्मरणीय मित्र और अब दिवंगत गेशे संघ-धर्मवर्धन (गेन्दुन् छोम्फेल्) जाकर किसी तरह बंडल को ले आये।

तिब्बत में भारत से गई ताल-पोथियों को बहुत पवित्र माना जाता है। मरणोन्मुख व्यक्ति के मुँह में यदि तालपोथी का धुला एक बूँद जल पड़ जाय, तो उसके पाप धुल जाने में कोई सन्देह नहीं। यह उसी तरह का विश्वास है, जैसा हमारे यहाँ मरणासन्न के लिए गंगाजल को समझा जाता है। ऐसी पवित्र वस्तु को वहाँ का हरेक सद्गृहस्थ अपने घर में रखना चाहे, तो इसमें आश्चर्य क्या? अधिक चढ़ावा चढ़ानेवाले भक्त को पुजारी तालपोथी का एक टुकड़ा काटकर प्रसाद के रूप में दे दिया करता था, और इसी उद्देश्य से नाना पुस्तकों के पत्रों का यह बंडल उसके पास था। कौन-कौन-से ग्रंथों के कितने पत्रे इस प्रकार बँटे, इसे कौन बतला सकता है। महत्त्वपूर्ण पत्रों को फिर पुजारी को सपुर्द करना मेरे बस की बात नहीं थी। पुजारी को भी कुछ दक्षिणा मिल गई, इसलिए उसने आपत्ति नहीं की। यद्यपि हस्तलेख में सन्-संवत् नहीं दिया हुआ है, पर लिपि दसवीं-ग्यारहवीं सदी की कुटिला है। इस हस्तलेख का इतना ही महत्त्व नहीं है, बल्कि अभीतक सरहपा के इस दोहाकोश की जितनी प्रतियाँ मिली हैं, उनमें यह सबसे पुरानी होते दोहों की संख्या में भी सबसे बड़ी है। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने जिस प्रति को "बौद्ध गान ओ दोहा" में आज से ४० वर्ष पूर्व संपादित किया था, उसमें ५० के करीब दोहे थे। महाप्रस्थान के पथिक डाक्टर प्रबोधचन्द्र बागची ने आज से १५ साल पहिले जिस 'दोहाकोश' को प्रकाशित कराया था, उसमें दोहों की संख्या ११२ थी। स्वयं तिब्बती में जो इसका अनुवाद (तेर्.गी स्तन्. ग्युर्. ग्युद्. पोथी वि. पृष्ठ ७०ख५—७७क३,) में मिलता है, उसमें दोहों की संख्या १३५ है, जब कि स. स्क्य की इस तालपोथी में वह १६४ हैं। तिब्बती-अनुवाद इस प्रति से नहीं किया गया। वह उस प्रति का

अनुवाद है, जिससे मिलती-जुलती प्रति की कापी डाक्टर बागची द्वारा संपादित हुई। हमारी इस प्रति में ८० के करीब नये दोहे हैं, उधर डाक्टर बागची के प्रति में भी ५० से अधिक नये दोहे और हैं।

२. खण्डित पत्रे

तालपत्र—

तालपत्र ११"×२" पृष्ठांक १३

१३ वें पत्र की दोनों ओर ८ दोहे हैं। इससे पहिले के १२ पत्रों या २३ पृष्ठों में ७५ दोहे रहे होंगे, अर्थात् प्रतिपृष्ठ ३ दोहे। दोहों पर संख्या का अंक दिया हुआ है।

लिपि कुटिला (वर्तुल) के बाद की संभवतः १२ वीं सदी की मागधी है। पांतियों के बीच में छोटे अक्षरों में कहीं-कहीं भ्रष्ट संस्कृत में टिप्पणी-है। ग्रंथकर्त्ता का नाम नहीं है, पर जान पड़ता है, यह भी सरह-पाद की कृति है और प्रकाशित "दोहाकोश" से भिन्न। ये पत्रे भी स.स्क्य के मन्दिर के पुजारी से काटकर प्रसाद बनने से बचाये गये बंडल के हैं। तालपत्र के ८ दोहे निम्नलिखित हैं :

कमलकुलिश बेवि मज्झ ठिउ, जो सो सुरअ विलास।
को तं रम्मइ ण तिहुवणहि, कासु ण पूरिअ आस ।। (७६)

(टि.) वज्रपदमसंयोगात् बोधि चेत्तहु स्थितः सहजानन्दरूपी सुप्रपा···यत्किंचित् त्रिभुवने सहजमयं सर्वाशापरिपूरकः।

क्खणउ वाअ सुह अहवा, अहवा वेण्णिवि सोवि।
गुरुअ पसाअें पुण्ण जइ, बिरला जाण(इ) कोवि ।। (७७)

तत्क्षणगभीरतत्त्वदेसनातः तत्क्षणसरसविरससहजट्ठाणे स्त्रीप्रसायेन पुण्यधामतो नद्ययेन कोटीनासप्य—

गंभीर भिड आर फले, णउ पर णउ अप्पाण।
सहजानन्द चउक्खण, णिअ संबेअ ण जाण ।। ७८

हे सखे, निरक्खरस्क्ष स्वपरविभागं तु लौकिकं त्वजाः (ठउ) परसविरस-सुसुप्तता सहजाः निजस्वभावेन संवेदनः

घोरें अंधारें चन्दमणि, जिम उज्जोअ करेइ।
परममहासुह अेक्क क्खणे, दुरिआ एस हरेइ ।। ७९

चन्द्रकान्तिवत् अन्धकारापनयने गुरुरिव संसारिकः।

दुक्खदिवाअर अन्थविउ, उवइ ताराब्बइ सुक्क।

ठिअउ णिम्माणें णिम्मिअउ,तेण दिमण्डलचक्क। (८०)

संवृत परमसार्थः अस्तङ्गते सति बिम्बबुधबोधिचितस्थिरे सति. संवृतको यअवस्था धर्मसंस्वोगः अदृष्टः निर्मानः बाह्या आस्य सकः सबमण्डल चक्रः नानामण्डलानाम्

चिन्तहि चित्त णि ण वट्ट, सअलउ मुञ्च कुदिट्ठि।

परममहासुहमोक्ख परु, तहिं आअत्ता सिद्धि॥ (८१)

सहजअद्धषेति सुज्ञ अदित सव घर्म न नानात्मा कुदृष्टिछडह सहजात्म कु. सकलं परमसुखेन तस्योपरि परमोतम सिद्धिर् नस्तीति।

मुक्कउ चित्त गएन्द करु, एत्थवि अप्पा म पुच्छ।

मअण गिरी णइ जल पिअउ, तहिं भडु बसिउ सइच्छ॥ (८२)

योगी हस्तिवत् भवदु (:) खात् आत्मानं पृछ मा कुरु आ महासुखम. वेद्यती. आकाशे पवन न पी अथवागतः स्वतन्त्रं कुरु आभासे।

बिसअ गअंदें करें गहिअ, जिम मारइ पडिहाइ।

जोइ कवडिआर जिम, तहिं पुणु णिप्परि जाइ॥ ८३

यत्किंचिद्रूपः हस्तिवत् हस्तिखिलिकवत्. विषयेन केन चित् लिप्यते चमरी हस्तिवत्।

§६. 'चचा' (चर्या) पोथियाँ

सिद्धों के गीत ८ वीं से १२ वीं शताब्दी तक—जब तक कि बौद्ध-धर्म उत्तरी भारत में रहा—उसी तरह गायें और पढ़े जाते थे, जैसे आजकल कबीर साहब और दूसरे सन्तों की बानियाँ। आजकल के कुछ सन्त मतों में भी गुप्त पूजा-पाठ होती है, जिसमें सन्त की बानी को गाया जाता है—उदाहरणार्थं शिवनारायण साहब की बानी। इस तरह के गुप्त पूजा-पाठ को चर्या, अनुष्ठान या आचरण कहा जाता था। सरह के समय और बाद में भी उत्तरी भारत का बौद्धधर्म महायान नहीं, वज्रयान (तांत्रिक बौद्ध-धर्म) नब गया था। सरह वज्रयानी चर्याओं के प्रवर्त्तक थे, यह कहना मुश्किल है। उन्होंने अपने "दोहाकोशगीति" के आरम्भ ही में इस तरह के अनुष्ठानों और विश्वासों का खण्डन किया, जिसमें स्थविरों और महायानियों को भी नहीं छोड़ा है। यदि वह स्वयं चर्याओं के प्रवर्त्तक या समर्थक होते, तो यह वदतोव्याघात होता।

जो भी हो, सरह के बाद चर्याओं का प्रचार बहुत जोर से हुआ, जिनमें पंचमकार का प्रयोग आवश्यक था। भारत में बौद्ध-धर्म के साथ चर्या के लुप्त होने के बाद भी यह नेपाल से नहीं उठी।

इसी चर्या शब्द का विगड़ा रूप नेवारी में 'चचा' है। चर्या-पद्धति की अवश्यकता वहाँ अनुभूत हुई; क्योंकि उसके अनुष्ठान दो-एक सरल कामो या बातों तक ही सीमित नहीं, बल्कि घंटों तक चलते अनेक विधि-विधानों पर अवलम्बित। इसके लिए बहुत सी पुस्तिकाएँ भिन्न-भिन्न आचार्यों ने तैयार कीं, जिन्हें भी "चचा" कहते हैं। नेपाल के बौद्धों में जो नवजागृति हुई है, उसके कारण वज्रयान के क्रिया-कलापों से शिक्षितों की आस्था उठती जा रही है। इन अनुष्ठानों के पुरोहित बांड़ा (वन्द्य, वज्राचार्य) लोग भी अपने प्रभाव को खोते जा रहे हैं। उसके कारण डर है, कि कुछ दिनों में "चचा" की पद्धति बिल्कुल लुप्त न हो जाय, औ उसके साथ "चचा" की पुस्तिकाएँ भी नष्ट हो जायँ। यद्यपि यह वज्रयानी चर्याएँ मिथ्या विश्वास और मिथ्या आचार को फैलाती हैं, लेकिन इतिहास के लिए उनके अध्ययन की अवश्यकता है। इन गोष्ठियों में आज भी महासिद्धों और दूसरों के गीत एक खास लय में गाये जाते हैं। इनके अध्ययन से पुराने चर्यागीत के स्वरों का पता लग सकता है। शायद इसी लय में सिद्धों के गीत अपभ्रंश-काल में मध्यदेश, (उत्तर-प्रदेश, बिहार) में गाये जाते थे। यह बड़ी हानि होगी, यदि अध्ययन और संरक्षण के पहले ही वह नेपाल से लुप्त हो गये।

यद्यपि "चचा" के गीत अपभ्रंश के हैं, लेकिन उनके गानेवाले आर्य-भिन्न एक दूसरी भाषा नेवारी के बोलनेवाले हैं। वह गीतों के अर्थको नहीं समझते, यही नहीं, बल्कि उनके मुँह में पड़कर शब्दों का उच्चारण भी दूसरा हो जाता है। नेवार लोग बोलने में त और ट का भेद नहीं करते, उसी तरह र की जगह ल के प्रयोग को भी अति तक पहुँचा देते हैं। जैसा कि चचा पोथी १०, पृष्ठ १० में "सतगुरुचरणे" के स्थान पर "सतगुलु चलने", आया है। कण्हपा की बहुत पुनीत वज्रगीति को अनेक चचा पुस्तकों में देखा जाता है, लेकिन उसका सबसे अधिक शुद्ध रूप वही है, जो तन्-जुर, तन्त्र, पोथी यु, पृष्ठ १६३ में है।

मैंने नेपाल की एक यात्रा में "चचा" की डेढ़ दर्जन के करीब पोथियाँ जमा कीं, जिनमें अधिकांश सौ वर्ष से अधिक पुरानी हैं। कुछ और भी

पुरानी हो सकती हैं। खोज करने पर नेपाल में तीन-चार सौ वर्ष पुरानी पोथियाँ भी मिल सकती हैं, जिनका महत्त्व अधिक होगा, इसे कहने की अवश्यकता नहीं। इनके विकृत उच्चारणों के लिए कण्ह (कर्ण) पाकी वज्रगीनि: (तन्-जुर् यु १६३, प्रज्ञा) को देखिये—

कोल्लइ रे ठिअ बोल्ल, मुम्मुणि रे कक्कोला।
घणइ किपीटह बज्जइ, करुणे किअइ ण रोला ॥ ध्रु ॥
तहिं पल खाजइ गाढे मअ ण पिज्जइ।
हले कलिंजर पाणिअइ, दुन्दुरु तहं बज्जिअइ ॥ २ ॥
चउसम कत्थुरिसिहल कप्पुर लाइअइ।
मलअइ घणसालिअइ तहि भलु खाइअइ ॥ ३ ॥
पेंखण खेट करन्त सुद्धासुद्ध ण मणिअइ।
निरंशु एङ्ग ग चडाबिअइ, तहि जस राव पणिअइ ॥ ४ ॥
मलअज कुंदुरु बापइ, डिण्डिम तहि ण वज्जिअइ ॥ ५ ॥

१. कोलयि रे थिया बोला मूमूनि रे कंकोला।
घन किया थी होयि बज्रायि, करुणे कियायि न लोरा ॥ (I)
० मुमुरनि ले कनकोला घने कीथि होयि, करुण क्रियायि न लोला (II शेष III, वत्)

कोरयि रे थिया बोरा, सुमुनि रे कंकोरा।
घने कापि थिया बोरोरुणे क्रिया बीन लोला (IV)
० थियं. ००थिउ बोरा० यी न लोरा (IX शेष IV वत्)

२. तहि भरु खाज गाध्य, मय ना पीवयि यायी।
हले कालिजर पन यायी, दूंदूरु बजायिले (I)
० तहि बा नु खाजयी यायिया, गायें मय ना पिज।
न यायीया हले कलिंजल सालिं जल (III)
० तहि वरु खाजयि गद्धे मय ना पिजययायिया।
कलिंजर सारि जारे दुदुरु बाज न यायिया (IX)

३. चवूसम कस्तुरीं सिल्हा कपूर,
लावन यायी मलया जइ घनसो लिजरे (I)
० चउसम कस्तुरि सिल्हा कप्पुर लाव न यायि।
मलयज कुणुरू बजयि तहि भरु खाज (III)

—चउसम कस्तुरी शीलकर्पूल राव न याथियामारिय ।
इन्दु ने सालिजलतहि व, नु खाजयीयायिया (IV)
० तहि वा नु खा जयीयायियिया, गाधे मय ना पिज न यायिया (IV)
० चउसम कस्तुरी शिहला कर्प्पुर राव न यायिया ।
शरयि इन्धन शारि जलतहि वरु खा जयियायिया (IX)

४. प्रेषु न क्षेत्र कगत सोद्धासुद्ध न मूनयि ।
तिलसुह अग च वा वयीया तहि जसए पन यायी । (II)

प्रेष–क्षेत्र क्तेत्रतकशुद्धाशुद्धा नियेयायि ।
मलयज कुणरु वजयि, डिडिमा ता नहि वयि (III)

प्रेषून क्षेत्र करंत शुद्धाशुद्ध न यायि ।
० प्रेषण क्षेत्र कलंत शुद्धाशुद्ध न मानियायीया ।
नीलसुह अंग सदा ययीयातहिं जसु राव न प्रक्षमामिया (IV)
० प्रेखन कत करन्ते शद्धाशुद्ध न मुणियायिया
निल सुह अंग चढ़ावियिया, तहि जशु राव न पणसासिया (IX)

५. मलयज कुंदुरू बजायि ले, डिंडिस डिंडिभ तहि ना बाजयी । (II)
० मलयज कुणुरु बजयि डिडिमा ता नहि बजायि । (III)
० मलयज कुंदुरु बाजयिया डिन्डि बाजयि न बाजयिया । (IX)

गुडरीपा (सिद्ध ५५) का गीत—

(राग कर्नाड, ताल झप)

त्रिहंडा चापयि जोगिनी देह कवारि ।
कमलकुलिस घन करहु बियाले ।। ध्रु० ।।१।।
जोगिनी तुह्म बिनू खनहु न जिवयि ।
तोला मूह चूबिले कमल संपिवहि ।।२।।
क्षेपहु गोगिनी रेप न जायि ।
मनि कुल बहिया रे, बदिया ने समायि ।। ३ ।।
सासू घले घल क्रोंचिया रे चन्द्र सूर्य दूयी यक्षेन भण्डो ।
भनयि गोदावरी हमे कूदूरू बीश्रे ।
नरय तालि माझे उभय बूंविरा ।।

त्रिहडा चापयि जोगिनी हे हकवारि कमरकुरिस घन करहु न बिरा ।
जोगिनि तुम्ह विणु खनह न जिवंयि तोरा मुह चुंबियाने, कमरसं पिवयि ।।२
कंयहूँ मा जिनि रे पन जायि मनि करे बहि पार जो दिया न सुमान ।।३
सासु घरे घस कुचिकूभारि चन्द्रसूर्य दूयि पक्ष मं डारि
भनयि गूडालि हर कूदूरू रिानर मारि माइ उभय नबिरा ४—(८)
—त्रिहण्डा चामपयि योगिनी देह क वादि कमलकुलिश करहु बियार ।।१
योगिनी तुज्झ बिनू षणहु न जीवयि तोरा मूह चूबिया रे कमलं पीवयि ।।२
क्षेपहु योगिनी लेप न जायि, मणि कूल बहिया रे कमल सं पिवयि ।।३
शाशु घरे कूंचिया रे, चन्द्रसूर्य दूयि पक्ष न न भनतो ।।४
भनयि गोडारि हमे कूणुरू वीना, नरय नारी माझ उभय नउ वीना ।।५

लकारबहुलता—चचा-पुस्तक १० (पृष्ठ १०)

"सतगूलूचलने पनमामि"

हमारे पास की "चचा" (चर्या) पुस्तकों में निम्न पुरुषों के गीत मिलते हैं—

"चचा" पुस्तक १ : परमवज्र (१), वाक्वज्र (१०), कर्णपा (१५),
लीलावज्र (१९)
गोदावरि (गुंडली) (२०)
प्रवनपवि (२२)
कुलदत्त (२३)
सुरतवज्र (२४,३४, ७६, १०५, १०७)
वाक्वज्र (१०,३४,४०)
द्वारक (३७)
कान्ह (४४)
कर्मादिवज्र (४६)
कर्णपा (१५, १८, ५३, ७१, ९८, ११४, १२०)
अनुपम (पद्म) वज्र (५४)
रत्नवज्र (५९, ७३, १०३)
नीरावज्र (६४)
श्रीकुलिश (७७, १०९)

परमवज्र (१, ७८)
जालंधरि (७६)
अमोघवज्र (८४, ११२)
समसमवज्र (८६)
प्रवनकुलिस, प्रवनपवि (६८)
नीलवज्र (६७)

"चचा" पुस्तक २ :

तथागतवज्र (३)
वाक्‌वज्र (६)
सुरत (सुलत) वज्र (८)
अमोघवज्र (१५)
परमादिवज्र, परमवज्र (१६)
कर्णपा (२०)
लीलावज्र (२४)

"चचा" ३ :

परमादिवज्र (३ क)
कर्णपा (१० क, १८ क)
वाग्‌वज्र (११ क)
कण्हपा (१४ क)
लीलावज्र (१६ क, २१ क)
गुंडली, गोडारी (१७ क)
सुरतवज्र (१६ ख)
श्रीवज्रकुलिश (२५ क)
समरसवज्र (२६ क)
अमोघवज्र (३५ क)
प्रज्ञकुलिश (३५ क)

"चचा" ४

विरास, विलासवज्र (३ क)
परमादिवज्र (१०)

संघसया (११)
गोडारि (२४)
वाक्वज्र (२५, ३४)
कण्हपा वज्रगीति (३२)
सुरतवज्र (३५)
लीलावज्र (३६)
गोस्वामी (४०)

"चाचा" ५:

परमादिवज्र (११, ६८)
अनुपमवज्र (२१)
हासकुलिश (२३)
सुरतवज्र (२५, ७४, ८६)
कर्णपा (३१, ८०)
पवनपवि (४३)
नागार्जुन (६०)
सुधाहर्ष (६४)
लीलावज्र (७६)
संघसयरा (८४)

"चचा" ६:

लीलावज्र (७)
समरसवज्र (९)
कर्णपा (४३, ४०)

"चचा" ७ :

तथा (गत) वज्र (४)
भास्करवज्र (७)
परमाद्यवज्र (८)
सिद्धिवज्र (११)
लीलावज्र (१६)
परमाद्यवज्र (२२)

सुरतवज्र (२८, ३०)
विरूपा (३३)
कण्हपा (३४, ४४)

"चचा" ८ :

अमोघवज्र (२ वजवज्र)
चन्द्रवज्र (५, ७, ८)
वज्रवज्र (५)
चन्द्रवज्र (७, ८ ९)
अनुप्रद्मवज्र, अनुपमवज्र (१०)
कर्णपा (१२)
सुरतवज्र (१४)
विरासवज्र (१७)
गुडालि (१९)

"चचा" ९ :

परमादेवज्र, परमादिवज्र (३, १२)
सुरतवज्र (१५, १६)
कण्हपा वज्रगीति (२४)

"चचा" १० :

तथागतवज्र (७)
वाक्यवज्र (११)
सिद्धिवज्र (१२)
अनुपमवज्र (१३)
विलासवज्र (१८)
संघसयना (२९)
अवधूवपवि (३३)
अमोघवज्र (५५)
परमादिवज्र (६४)
नागार्जुन (७७)
जारंधर, जालंधर (७९)

"चंचा" ११ :

लिलासवज्र (३६)
सिद्धिवज्र (५३)
सुरतवज्र (६१)
पलमद्यवज, परमाद्यवज्र (७३)
संघसयना आचार्य (७५)

"चचा" १७ :

वाक्वज्र (१)

कण्हपा का दोहाकोश—सरहपा की तरह कण्हपा के भी अनेक दोहाकोश हैं, जिनमें से एक को महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने अपने "बौद्ध गान ओ दोहा" में संपादित किया है। वही, जान पड़ता है, अधिक प्रचलित था, तभी तो स.स्क्य के मंदिर के पुजारी से काट-काटकर प्रसाद बनने से बचाये तालपत्रों के बंडल में सरह के कोश के साथ यह खण्डित कोश भी मिला। जिसके के पहिले तीन पन्ने प्रसाद में बँट चुके मालूम होते हैं। किसी अनाम ग्रंथकर्त्ता की टीका भी इसके साथ है, जो महा-महोपाध्याय द्वारा संपादित टीका का ही लघु संस्करण मालूम होती है। इस प्रति में दोहों की प्रतीक-भर ही दी हुई है।

चौरासी सिद्धों में निम्नलिखित १० अधिक प्रभावशाली माने जाते हैं—

१. सरह (६), २. शबर (५), ३. लुई (१), ४. विरूपा (३), ५. दारिकपा (७७), ६. घंटापा (५), ७. जलंधरपा (५२), ८. डोंबिपा (४), ९. कण्हपा (१७), १०. तेलोपा (२२)। पर इन सबमें कण्हपा सबसे अधिक प्रतापी थे। आज भी नेपाली वज्रयानी बौद्ध अपनी रहस्यपूजा के समय जो "चचा" (चर्या) के गीत गाते हैं, उनमें चौरासी सिद्धों में सबसे अधिक कण्हपा (कणपा) के ही गीत मिलते हैं, यह मेरे पास मौजूद "चचा" (चर्या)-पुस्तकों (१–१७) के निम्न विवरण से मालूम होगा—

सिद्ध या कवि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१७	कुल संख्या
अनुपमवज्र	१				१			१			१		३
अमोघवज्र	२	१	१	०	०	०	०	१	०	१	०	०	६
अवघू पवि	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	० ०	१

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११			१७ कुल
कण्हपा (कर्णपा)	८	१	३	१	२	६	२	१	१	०	०	०		२५
कर्मादि०	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०		१
कुलदत्त	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१
गुंडरी (गोदावरी)	०	०	१	१	०	०	०	०	०	०	०	०		२
गोसाई	०	०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	०		१
चन्द्रवज्र	०	०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	०		१
जालंधरपा	१	०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	०		२
तथागतवज्र	०	१	०	०	०	०	१	०	०	०	०	०		२
दारिकपा	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०		१
नागार्जुन	०	०	०	१	०	०	०	०	०	१	०	०		२
नीलवज्र	२	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०		२
परमाद्यवज्र	२	१	१	१	२	०	२	०	१	१	१	०		१२
प्रज्ञाकुलिश	०	०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	०		१
प्रवनकुलिश	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०		१
भास्कर०	०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	०	०		१
रत्न	३	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०		३
लीला०	०	१	२	१	१	१	१	०	०	१	१	०		९
वज्र०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	०		१
वाक् (वाक्य)	३	२	१	२	०	०	०	०	०	१	०	१		१०
विरूपा	०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	०	०		१
विलास (विरास)	०	०	०	१	०	०	०	१	०	०	१	०		३
श्रीकुलिशवज्र	२	०	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०		३
संघसयरा (०ना आचार्य)	०	०	०	०	१	०	०	०	०	१	०	०		२
समसमवज्र (०रस०)	१	०	१	०	०	१	०	०	०	०	०	०		३
सिद्धि०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	०	१	१	०	३
सुधाहर्ष	०	०	०	०	१	०	०	०	०	०	०	०		१

सुरतवज्र	५	१	१	१	३	०	२	१	२	०	१	०	१७
हासकुलिश	०	०	०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	१

जिस सामग्री का इस ग्रंथ में उपयोग किया गया है, वह प्रायः सारी तिब्बत में प्राप्त हुई है। तिब्बत हमारी सांस्कृतिक निधियों का महान् संरक्षक रहा है। हमारे अधिकारी विद्वानों को उनको देखने का बहुत कम अवसर मिला है, और जो कुछ दूसरों के लेख और कथन के रूप में उनके सामने आया है, उससे उसके बारे में बहुत कम जानकारी प्राप्त होती है। तिब्बत में भी बहुत-सी ऐसी निधियाँ वहाँ के विद्वानों की भी पहुँच से बाहर की है। उदाहरणार्थ जिन सैकड़ों ताल-पोथियों को मैंने स.स्क्य, ङोर और शलु में देखा, उनका पता तिब्बत के और जगहों के विद्वानों को ही नहीं, बल्कि खुद उन विहारों के विद्वानों को भी नहीं या बहुत कम था। स.स्क्य विहार में ऐसी पुस्तकों का कभी बहुत बड़ा संग्रह था, और वस्तुतः उपरोक्त दोनों दूसरे विहारों में संरक्षित तालपोथियाँ भी मूलतः स.स्क्य विहार की थीं। वहाँ के महन्तराजों में से एक को तो बिल्कुल पता नहीं था, कि उनके यहाँ इतनी ताल-पोथियाँ किसी पुस्तकागार में रक्खी हुई हैं। दूसरे महन्तराज—जो उनके बाद गद्दी पर बैठे और अब इस संसार में नहीं हैं—अपने पुरखों की बात सुनकर ही जोर देकर कह रहे थे, कि पोथियाँ जरूर हैं। वह अन्त में मिलीं भी। अब इन अज्ञात अन्धेरी कोठरियों में बन्द अथवा तिब्बती हस्तलेखों के जंगल में सूई की तरह छिपी ताल-पोथियों के अतिरिक्त उन पोथियों के भी प्रकाश में आने की सम्भावना है, जो कि किसी मूर्त्ति या स्तूप के उदर में हमेशा के लिए बन्द कर दी गईं। जब वह सब बाहर आ जायँगी, तो सिद्धों की कविता के रूप में अपभ्रंश-भाषा का बौद्ध-साहित्य प्रचुर मात्रा में हमारे सामने आयेगा।

मसूरी, २६–९–५५ राहुल सांकृत्यायन
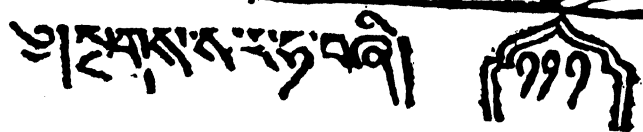
सिद्ध सरहपाद

१(क.) दोहाकोश-गीति

(हिन्दी छाया-सहित)

१(क). दोहाकोश-गीति (मूल)

१. 'षट्' दर्शन-खंडन

(१) ब्राह्मण–

१. [ब्रम्हणेंहि म जानन्तहि भेउ । एवइ पढिअउ ए च्चउवेउ ।।
मट्टि (पाणि कुस लई पढन्तं । घरहिं बइसी अग्गि हुणन्तं ।।

२. कज्जे विरहिअ हुअवह होमें । अक्खि डहाविअ कडुएं धूमें ।।
एकदण्डि त्रिदण्डी भअवँ(ा) बेसें । विणुआ होइअइ हंस उएसें ।।

३. मिच्छेहिं जग वाहिअ भुल्लें । धम्माधम्म ण जाणिअ तुल्ले ।।

(२) पाशुपत–

अइरिएहिं उद्दूलिअ च्छारें । सीससु वाहिअ ए जड-भारें ।।

४. घरही बइसी दीवा जाली । कोणहिं बइसी घण्टा चाली ।।
अक्खि णिवेसी आसण बन्धी । कण्णेहिं खुसखुसाइ जण धन्धी ।।

५. रण्डी-मुण्डी अण्णवि बेसें । दिक्खिज्जइ दक्खिण-उद्देसें ।।

(३) जैन–

दीहणक्ख जइ मलिणें बेसें । । णग्गल होइ उपाडिअ केसें ।।

६. खबणेहिं जाण विडंबिअ बेसें । अप्पण बाहिअ मोक्ख उबेसें ।।
जइ णग्गाविअ होइ मुत्ति, ता सुणह सिआलह ।।

७. लोमुपाडणें अत्थि सिद्धि, ता जुबइ णिअम्बह ।
पिच्छीगहणे दिट्ठ मोक्ख (ता मोरह चमरह) ।।

स.स्क्य को ताल पोथी का पाठ ।

इस तालपोथी का प्रथम पत्र लुप्त है, जिसे यहाँ डाक्टर बागची संपादित 'दोहाकोश' से (Calcutta Sanskrit Series 1938 pp. 14-16) दिया गया है।

१. भोट. अनुवाद (तेरगी से स्तन्. ऽग्युर्. र्गयुद्. वि, पृष्ठ ७० ख ५–७७ क ३) में एक दोहा अधिक है, । दूसरा दोहा—हरप्रसाद शास्त्री-संपादित 'बौद्ध गान ओ दोहा' में ह । ब्रह्मणहि, भोट-पाठ ग्शि=मूल ब्शि= चार का प्रमाद-पाठ है ।

१(क). दोहाकोश-गीति (छाया)

१. 'षट्' दर्शन खंडन

(१) **ब्राह्मण–**

१. ब्राह्मण न जानते भद। यों ही पढे ये चारो वेद ॥
मट्टी पानी कुश लेइ पढन्त। घरही बैठी अग्नि होमन्त ॥

२. काज विना ही हुतवह होमें। आंख जलावें कडुये धूएं।
एकदंडी त्रिदंडी भगवा भेसे। ज्ञानी होके हंस उपदेसै ॥

३. मिथ्येही जग बहा भूलैं। धर्म-अधर्म न जाना तुल्यैं ॥

(२) **पाशुपत–**

शैव साधु लपेटे राखी। ढोते जटा भार ये माथी ॥

४. घरमे बैठे दीवा बालें। कोने बैठे घंटा चालैं।
आंख लगाये आसन बांधे। कानहिं खुसखुसाय जन मूढे ॥

५. रंडी-मुंडी अन्य हु भेसे। दीख पडत दक्षिणा उदेसे।

(३) **जैन–**

दीर्घनखी यति मलिने भेसे। नंगे होइ उपाडे केसे ॥

६. क्षपणक ज्ञान-विडंबित भेसे। आतम बाहर मोक्ष उदेसे।
यदि नंगेपन होइ मुक्ति, तो शुनक-शृगालहु ॥

७. लोम उपाडे अस्ति सिद्धि, तो युवति-नितम्बहु।
पिच्छि गहे (जो) दीख मोक्ष, तो मोरहु चमरहु ॥

---

२. (भोट ३)।

३. (भोट ४। अइरिएहिं:एरइ)।

४. (भोट ५) कोणहिँ=म्छम्स्.सु एकान्त. खुसखुसाइ
=शुब्. शुब्, धन्धी=स्लुब्. (मन्द)।

५. (भोट ६) दक्खिणा, ब्ल.मऽि.योन्=गु गुण

६. (भोट ७) खबणेहि=नम्.म्खऽि.यिद्.चन् गगनमना=दिगंवर

७. (भोट ८) सिद्धि। ग्रोल्=मुत्ति।

८. उञ्छे भोअणें होइ ज ण, ता करिह तुरङ्गह ।
सरह भणइ खबणाण [*] मोक्ख, महु किम्पि न भावइ ।।
९ तत्त-रहिअ काअ(।) न ताव, पर केवल साहइ ।

(४) **बौद्ध**—
चेल्लु भिक्खु जे त्थविर उएसें । (वन्देहिअ पव्बजिजउ बेसें ।।

१०. कोइ सुत्तंत बक्खाण बइट्ठो । कोवि) चित्त करुअ मइ दिट्ठो ।।
अण्णु तहि महाजाणे धाविउ । मण्डल चक्क..मवि नाधेउ ।।

११. (तसु परि[१]आणें अण्ण न कोई । अबरे (ग)अणे सज्जइ सोई ।।
सहज च्छाडी णिब्बाणेंहिं धाविउ । णउ परमत्थ एकवि साहिउ ।।

१२. जो जसु जेण होइ सन्तुट्ठ । मोक्ख कि लब्भइ झाण-पविट्ठ ।।
किन्तह दीपे किन्तह णेवेज्जे । कि[३]न्तह किज्जइ मन्तह भावें ।।

१३. किन्तहि न्तित्थ तपोवण जाइ । मोक्ख कि लब्भइ (पाणी न्हाइ ।।
चछड्डहु रे आलीका बन्धा) । सो मुञ्चहु जो (अच्छहु धन्धा) ।।

१४. तसु परिआणहु अण्ण ण्ण कोवि । अवरे गाण्णे सब्बइ सोवि ।।
सोवि पढिज्जइ सोवि गुणिज्जइ । सत्थ-पुराणे बक्खाणिज्जइ ।।

१५. नाहि सो (दिट्ठि जो ताउ ण ल(क्खइ) । एत्तवि वरगुरुपाआ पेक्खइ ।।
जइ(गुरु-वुत्त)हो (हिअहि पईसइ । णिच्चिअ हत्थे ठवि)अउ दीसइ ।।

2b१६. सरह भणइ जग-वाहिअ आलें । णिअ[६] सहाव ण लक्खिअ बालें ।।

२. करुणा-सहित भावना

करुण-रहिअ ज्जो सुण्णहिं लग्गा । णउ सो पावइ उत्तिम मग्गा ।।

---

८. (भोट ९)

९. (भोट १०) बद. वडि. (सुख) अधिक पाठ. वन्देहिअ='बन्दें. नंम्स् (वन्दनीय लोग,

१०. (भोट ११) ग्शुड्. लग्स्. छद्.मडि. ब्स्तन्.चोस्.यि (ग्रंथ माणशास्त्र) अधिक। बाग. ११ महजाणहि धा(वइ)। तहिं सुंतन्त तक्कसत्थ होइ)। कोइ मण्डल-चक्क भावइ। अण्ण चउत्थ तत्त दीसइ।

११. कख (भोट. नहीं)। ११गघ (भोट. १३ खगघ, १४ क) धाविउ=स्गोम्.ब्येव् =भाविउ।

१२. (भोट. १४ खगघ, १५ क)। १३. (भोट. १३कख १५ खगघ) तपोवण=

८. उंछ-भोजने होइ ज्ञान, तो करिहु तुरंगहु ।
सरह भणइ क्षपणों का मोक्ष, मोहिं तनिक न भावै ।।

९. तत्त्वरहित काया न ताव, पर केवल साधै ।।

(४) **बौद्ध**–

चेला भिक्षु जे स्थविर-उदेसे । वंद्य होहिं प्रव्रजिते-भेसे ।।

१०. कोइ सूत्रांत बखानै बैठो । कोई चित्ते करि मैं दृष्टो ।।
अन्य तहां महायाने धावइ । (अन्ये) मंडल चक्रहु भावइ ।।

११. तासु परिज्ञाने अन्य न कोई । अपर गगने आसक्त सोई ।।
सहज छाडि निर्वाणे धायेउ । नहि परमार्थ एकउ साधेउ ।।

१२. जो जासु जेन होइ सन्तुष्ट । मोक्ष कि लब्भै ध्यान-प्रविष्ट ।।
क्या तंह दीपे क्या नैवेद्ये । क्या तंह कीजै मंत्रहिं भावै ।।

१३. क्या तंह तीर्थ तपोवन जाये । मोक्ष कि लब्भै पानि नहाये ।।
छाडहु रे अलीका बन्धा । सो मुंचहु जो है मूढत्ता ।।

१४. तसु परिजानहु अन्य न कोई । अपरे गान सर्बहि सोई ।।
सोई पढीजै सोई गुनीजै । शास्त्र-पुराणे बक्खानीजै ।।

१५. नहिं सो दृष्टि जो ना लक्खै । एतउ वरगुरुपादा पेखैं ।।
यदि गुरु-उक्तहु हृदये पइसै । निश्चित हस्ते स्थापित दीसै ।।

१६. सरह भनै जग बहा भूल में । निज स्वभाव नहिं लखा बालने ।।

२. करुणा-सहित भावना

करुणारहित जो शून्यहिं लागा । नहिं सो पावै उत्तम मार्गा ।।

द्कऽ-थुब् (तपस्या) ।

१३. गघ (भोट नहीं)।

१४. क (भोट. १८ क) । १४ ख (भोट. १७घ) अवरे गाण्णे=तोंग्स्. पर्. ऽग्युर. न. (गणने) । १४ ग घ (भोट. १८ खग)।

१५. (भोट. १८ घ, १९ कखग) । १६. खक (भोट १९घ, २०क), १६ गघ (भोट. १५घ, १६क) ।

१६. बाग-करुणा छड्डि जो सुण्णहिं लग्गु । ०मग्गु।० केवल भावइ । जम्मसहस्सहि मोक्ख ण पावइः—(पृष्ठ ४८) ।

१७. अहवा करुणा केवल साहअ । सो जंमन्तरें मोक्ख ण पावअ[1] ।।
जइ पुण वेण्णवि जोडण साक्कअ । णउ भव णउ णिव्वाणें थाक्कअ ।।

१८. झाण-हीण पव्वज्जें रहि(अ)उ । गही वसन्तें भाज्जें सहि(अ)उ ।।
(जइ) भिडि विसअ रमन्ते ण मुच्चअ । सरह[2] भणइ परिआण कि रुच्चअ ।।

१९. जइ पच्चक्ख कि झाणे कीअइ । अहवा झाण अन्धार साधिअअ ।।
सरह भणइ मइ कड्ढिअ राव । सहज सहाउ णउ भावाभाव ।।

२०. जा ल्लइ उवज्जइ ता ल्लइ बाज्जइ । ता लइ परममहासुह सिज्झइ ।।
सरह भणइ महु (कि) क्करमि । पसू लोअ ण बुज्झइ की[4] करमि ।।

२१. एक्कें साञ्चिअ धणअ पउरु, अवरे न्दिण्ण सआइ ।।
काल गच्छन्तें वेण्णि गउ, भणतो भण्णो काइ ।।

२२. पाणि चलणि रअ गइ, जीव दरे ण सग्गु ।
वेण्णवि[5] पन्था कहिअ मइ, जहिं जाणसि तहिं लग्गु ।।

३. चित्त

२३. चित्तेक चित्त सअल बीअ भव-णिव्वाणा जम्म विफुरंति ।
तं चिन्तामणिरूअं पणमह इच्छाफलन्देइ ।।

3a२४. बज्झइ कम्मेण जणो कम्मविमुक्केण होइ मणमुक्को ।
मणमोक्खेण अणुअरं पाविज्जइ परम (णि)व्वाणं ।।

२५. अक्खर बाडा सअल जगु, नाहि णिरक्खर कोइ ।
ताव से[1] अक्खर घोलिअइ, जाव णिरक्खर होइ ।।

२६. बद्धो धावइ दस दिसहिं, म्मुक्को णिच्चल ट्ठाअ ।
एमइ करहा पेक्ख सहि, विवरिअ महु पडिहाअ ।।

---

१७. कख (भोट. १६ खग) जंमन्तरे=ऽखोर्. ब दिर्. ग्नस्. (एहि जग ठिग्र), १७ गघ. (भोट. १६ घ, १७ क)।

१८. (भोट. २० खगघ, २१ क) जइ भिडि=गङःशिग्. (जो)। दे. ञिद्. शस् यिन्. शस्. स्त्र=सो जाणइ च्चग्र।

१९. (भोट. २१ खगघ. २२ कख)।

२०. (भोट. २२गघ.; २३ कख) जल्लइ=गङःशिग्. ब्लङ्.नस्.; बाज्जइ। ग्नस्.ऽगयुर्. (वसइ)।

१७. अथवा करुणा केवल साधा । सो जन्मांतरे मोक्ष न पावा ।।
यदि पुनि दोनों जोडन सक्कै । ना भव ना निर्वाण रहै ।।

१८. ध्यानहीन प्रव्रज्यहिं रहितउ । गृही वसन्ते भार्या-सहितउ ।।
यदि भिडि विषय रमन्ते न मुंचै । सरह भनै परिज्ञान कि रुच्चै।।

१९. यदि प्रत्यक्ष क्या ध्यानेहिं कीजै । अथवा ध्यान अंधार साधिजै ।।
सरह भनै मैं करी पुकार । सहज स्वभाव न भावाभाव ।।

२०. जे ले उपजै सो ले नाशै । सो ले परममहासुख सिद्ध्यै ।।
सरह भनै मैं का करऊँ । पशू लोक बूझै न का करऊँ ।।

२१. एकने संचा धन प्रवर, और ने दिया शताइ ।
काल बीतते दोनों गये, कहते कहा न जाइ ।।

२२. पाणि चरण रज गति, जीव दरे न स्वर्ग ।
दोनों पन्था कहेउ मैं, जहं जानहु तंह लग्ग ।।

३. चित्त

२३. चित्त एक चित्त सकल बीज भव-निर्वाण जँहि विस्फुरै ।
सो चिन्तामणि-रूप प्रणमहु इच्छा-फल देवै ।।

२४. बंधै कर्मसे जना कर्मविमुक्त होइ मन मुक्त ।
मन-मोक्ष के पाछे ही पावै परम निर्वाण ।।

२५. अक्षर बाढा सकल जग, नाहिं निरक्षर कोइ ।
तबलों अक्षर घोलिये, जबलों निरक्षर होइ ।।

२६. बद्धो धावै दस दिसहिं, मुक्तो निश्चल स्थाय ।
ऐसइ करा पेखि सखि, विवरिय मोहिं प्रतिभाय ।।

२१–२२. **(भोट नहीं) ।**

२३. **(भोट. ४१ गघ, ४२ कख), जम्म=गङ: ल. (जहिँ) । हर. तं चिन्तामणि० । एवं चित्ते बज्झे बज्झ मुक्कइ मुक्के नत्थि सन्देहो । बज्झंति जेणवि जडा लघु परिमुच्चंति तेनवि बुधा (पृ. ९८) ।**

२४. **(भोट.४० ग घ,४१ क.ख.) मण–मोक्खेण=रङ.ग्युद्.ग्रोल्. न. (स्वसन्तानमोक्षेण) ।**

२५–२६. **(भोट नहीं), बाग. अक्खर बाढा० णाहि० घोलिआ० (८८), हर. अक्खर बाढा० घोलिजा० (पृ०११४) ।**

२७. चित्तह मूल ण[२] लक्खिअइ, सहजें तिण्णवि तत्थ ।
कहिं उअज्जअ विलअ जाअ, कहिं वसअ फुड एत्थु ।।

२८. मूल-रहिअ जो चिन्तइ तात्त । गुरु-आएसह एत्त विआत्त ।।
सरह भणइ णिउ(ण)त्तणें जाणहु । एव्वहिं पर(म) महासुह माणहु ।।

(१) परमपद--

२९. इन्दी जत्थ विलीअ गउ, णट्ठो अप्प सहाव ।
सो हलें सहजानन्द तणु, फुड पुच्छह गुरूपा[४]व ।।

३०. जहि म्मण मरइ, पवणहो तहि खअ जाइ ।
एहु सो परममहासुह, सरह कहिहउ जाइ ।।

3b ३१. जहिं इच्छइ तहि जाउ मण, अहवा णिच्चल ट्ठाइ[५] ।
अद्धुग्घाटी लोअणें, दिट्ठीविसामे कोइ ।।

३२. जइ उआअ उआएँ धाहअ । अहवा करुणा केवल साहअ ।।
जइ पुणु वेण्णिवि जोडण सक्कअ । तव्वें भव-णिव्वाणहि मुक्क[६]अ ।।

३३. पढमें जइ आआस विसुद्ध । चाहन्तें-चाहन्तें दिट्ठि णिरुद्ध ।।
ऐसे जइ आआस वि कालो । णिअ मण दोसें ण बाजइ बालो ।।

३४. अहिमाण दोसें ण लक्खिअ तात्त[२] । दूसइ सअल जाण सो देत्त ।।
झाणें मोहिअ सअलवि लोअ । णिअ सहाव न लक्खिअ कोवि ।।

---

२७. (भोट. ३६ ग घ, ३७ क ख) बाग. ०लक्खिअउ० तहिं जीवइ विलअ जाइ वसिअउ तहि फुड एत्थ । (३६) हर. ०लक्खिअउ० तहिं जीव विलअ जाइ वसिअउ तहि हत ग्रन्थ। (पृ. ६५) ।

२८. (भोट. ३७ ग घ, ३८ क ख), २८ ग के स्थान पर है--ख्रो. वडि. रङ्. ब्शिन्-सेमस्.क्यि. ङो- बो. ञिद्. यिन्. श्रेस् । (सहाव चित्तहि भाव)। बाग. तत ०गुरु-उवएसे एतत विअातत । ०ब जाणहु चंगे । चित्ररूअ संसारह भङगे (३७) हर. भणइ बढ जानहु चंगे। चित्त रूअ संसारह भगे (पृ० ६६) ।

२९. (भोट. ३०) बाग. इन्दिअ जत्थु विलअ गउ ण-ठिउ अप्प सहावा। सो हले सहज तणु०पुच्छहि० पावा (२९) ।

३०. (भोट. ३१), भोट ३१ घ, ३२क ख अधिक पाठ। बाग. जहि मण।

२७. चित्तको मूल न लक्खिअइ, सहजे तीनउ तथ्य।
कहूं उपजै विलय जाय, कहूं बसै फुरि अत्र ॥
२८. मूलरहित जो चिन्तै तत्त्व, गुरु-उपदेशे एतउ व्यक्त।
सरह भनै निपुणत्वें जानहु, एवं परममहासुख मानहु ॥

(१) परमपद–

२९. इन्द्रिय यत्र विलीन गउ, नष्टो आत्मस्वभाव।
सो री सहजानन्द तनु, फुर पूछहु गुरुपाद ॥
३०. जहं मन मरै पवनहु, तहं लय जाइ।
एहु सो परममहासुख, सरह कहिअउ जाइ ॥
३१. जंह इच्छै तंह जाउ मन, अथवा निश्चल स्थाइ।
अर्ध-उद्घाटित लोचने, दृष्टि विश्रामै काइ ॥
३२. यदि उपाय उपाये धावै। अथवा करुणा केवल साधै ॥
यदि पुनि दोनों जोडन सक्कै। तब्बें भव-निर्वाणहिं मुंचै ॥
३३. प्रथमे यदि आकाश विशद्ध। देखत-देखत दृष्टि निरुद्ध ॥
ऐसे यदि आयासउ काल। निज मन दोषे न बूझइ बाल ॥
३४. अहिमान दोषे न लखियै तत्त्व। दूषैं सकल ज्ञान सो दत्त ॥
ध्याने मोहित सकलउ लोय। निज स्वभाव न लक्खै कोय ॥

पवणहो क्खअ जाइ। ०सो० रहिअ कहिम्पि ण जाइ (३०–३१)। हर. ०मन मरन पवनहि क्खअ जाइ (पृ०९३)।

३१–३२. (भोट नहीं)।

३३. (भोट. ३४ ग घ, ३५ क ख) मणदोसें=ञिद्. ल. स्क्योन्. ग्यिस्. (यिद् चाहिए)। बाग. ०विसुद्धो. ०णिरुद्धो० एसें० ण बुज्झइ बालो (३४)। हर. पउमें जइ० विशुद्धो० निरुद्धो। ऐसे जइ० दोष ण बुज्झइ बाला (९४)।

३४. (भोट. ३५ ग घ, ३६ क ख) स्क्ये. बो. म. लुस्=सअल जण। बाग. लक्खिउ तत्त। तुण ०जाणु सो दत्त। ०णउ लक्खइ कोअ (३५), लक्खिउ तत्त ०तेन दूसइ सअल जान इ सो दत्त। ०णउ लक्खई कोइ (९७)।

३५. चन्द-सुज्ज घसि घालइ घोट्टइ । सो आणुत्तर एत्थु[3] पअट्ठइ ।।
एव्वहिं सअल जाण णिगूढो । सहज सहावे ण जाणिअ मूढो ।।

३६. णिअ मण साच्चें सोहिअ जब्बें । गुरु-गुण हिअहि म्पइसइ तब्बें ।।
एव मुणेवि णु सरहें गाइव । मन्त ण तन्त ण एक्कवि गाहिव ।।

३७. सो गुण-हीणो अहवा णिरक्खर । सिरिगुरुपाए न्दिण्णु मो वाक्खर ।।
तसु चाहेन्तेंउ हमि ण दीस । सरूअ चाहेन्तेंउ हमि ण कीस ।।

३८. सअलहि तत्तसार सो वुच्चअ । सरह भणइ महुं सोवि ण रुच्चअ ।।

२ सहज, महासुख—

4a जइ पुणु अह-णिसि सहज पइट्ठइ । अमणागमण जें तहि णेवाट्टइ ।।

३९. भावाभावें वेण्णि न काज्ज । अन्तराल ट्ठिअ पाडहु बाज्ज ।।
विविह पआरें चित्तवि अपिव । सोवि चित्त ण केणवि अपिव ।।

४०. इन्दी विसअ उ असंट्ठाउ, सएं सम्विति्तए जत्था ।
णिअ चित्तन्तें काल गउ, झाण महासुह तत्थ ।।

४१. पत्त मुसारिउ मसि मिलिउ, होवि लिहे[2] ना खीणु ।
जाणिउ तें विस परमपउ, कहि(अइ कहि) लीएणु ।।

४२. झाण-रहिअ कि कीअइ झाणें । जो अवाच्च तहिं किअ वक्खाणे ।।
भुअ मु(द्)दे सअल जग वाहिउ[3]। णिअ सहाव ण केणवि णाहिउ ।।

४३. मन्त ण तन्त ण धेअ ण धारण । सव्ववि रे बढ़ वि(ब्)भम-कारण ।।
असमल चीअ म झाणें खरडह । सुह अच्छन्तें म अप्पण[4] झगडह ।।

---

३५. (भोट नहीं), बाग. पाव-पुण्ण तबें ता खणे तुट्टइ । अइसो करण काह विवरीर । तें अजरामर होइ सरीर (पृ० ४८) ।

३६. (भोट. ३९ ग घ, ४० क ख) बाग. ०सब्बें. ०हिअए पइसइ० एवं मुण मुणि सरहें गाहिउ । तन्त मन्त णउ एक्कवि चाहिउ (३९); हर. ०सबे० जबे० गुण हियए पइसइ एवम मणे सरहें० चाहिव (९७) ।

३७.–४०. (भोट नहीं) ।

४१. (भोट, १०८) । स. का पाठ खंडित ह, भोटानुवाद है—स्नग्. छ्-म्ङोस्. पस्. बलग्. तु.

३५. चन्द्र-सूर्य घसि घालै घोट्टै । सोइ अनुत्तर इहां पईठै ।।
एवं सकल ज्ञान निगूढा । सहज स्वभाव न जानै मूढा ।।

३६. निज मन साचै शोधित जब्बैं । गुरु-गुण हृदयहिं पइसै तब्बैं ।।
एवं मने करि सरहे गाइउ । मंत्र न तंत्र न एकउ ग्राहेउ ।।

३७. सो गुणहीन अथवा निरक्षर । श्रीगुरुपादा दीनु मोहि अक्षर ।।
तासु देखतेउ हम न दीख । स्वरूप देखतेउ हम न कईस ।।

३८. सकलहि तत्त्वसार सो उच्यै । सरह भनै मोहिं सोउ न रुच्चै ।

(२) सहज, महासुख–

यदि पुनि अहनिसि सहज पईसै । अवनागवन जे तंह निवर्तै ।।

३९. भाव अभाव न दोनेहु कार्य । अन्तराल स्थित पातहु बाज ।।
विविध प्रकारे चित्तउ अर्पिय । सोउ चित्त न काहुअ अर्पिय ।।

४० इन्द्रिय विषयउ न स्थाय, स्वसंवित्तिये यत्र ।
निज चित्तान्तर काल गउ, ध्यान महासुख तत्र ।।

४१. पात्र मुसारिय मसि मिलिउ, होइ लिखे न क्षीण ।
जानेउ तैं विष परमपद, कहियें करुं (सो) लीन ।।

४२. ध्यान-रहित क्या कीजै ध्यानें । जो अ-वाच्य ताहि क्यों बक्खानै ।।
भुवसमुद्रे सकल जग बहेउ । निज स्वभाव न केहूहि गहेउ ।।

४३. मंत्र न तंत्र न ध्येय न धारण । सर्बइ रे मूर्ख विभ्रम-कारण ।।
अ-समल चित्त न ध्याने खरडहु । सुख रहते ना अपने झगडहु ।।

मद् । रिग्.ब्येद्.दोन्.मे .ञाम्स्. दम्.प। सेम्स्. दङ. चिग्.शेस्. मि.शेस्.न।
गङ.नस्. शर्–चिङ. गङ. दु. नुब् ।

४२. (भोट. २३) भुग्र-मुदे=स्त्रिदद्पऽि. फ्य . र्ग्यस् (भव-मुद्दे); बाग,-झाण वाहिग्र० ग्र-वाग्र तहि काहिं बखाणे। भवमु दे सग्रलहि० णउ० साहिउ (२२)। हर. भवमुद्दे (६२)।

४३. (भोट. २४) रे बढ़, रङ. यि . (स्व मन), बाग.० बढ० चित्त० ग्रच्छन्त म ग्रप्पणु०। हर० चित्त म झाणइ खरतह० ग्रप्पनु जगतह०।

४४. गुरु-वअण-अमिअ-रस, धवहिं ण पिविअउ जहिं ।
बहु सात्थात्थ-मरुत्थलिहिं, तिसिअ मरिब्बो त्तेहिं ।।

४५. मण निम्मल सहजावत्थे गउ, अरिउल नाहि म्पवेस[५] ।
ए तें चीएहु फुड सथाविअउ, सो जिण नाहिं विसेस ।।

४६. जिम लोण विलिज्जइ पाणिएहिं, तिम जइ चित्तवि ट्ठाइ ।
4b अप्पा दीसइ परहिं सम, तत्थ समाहिए काइ ।।

४७. जोवइ चित्त ण आणइ बम्हा । अवर को विज्जइ पुच्छइ अम्हा ।।
णामेहिं सण्ण अ-(स)ण्ण पआरा । पुणु परमत्थें एकाआरा ।।

४८. खाअन्तें-पीवन्तें सुरअ[१] रमन्ते । आलि-उल बहलहो चक्क फरन्ते ।।
एवहि सिद्धि जाइ परलोअह । माथे पाअ देइ भुअलोअह ।।

३. परमपद--

४९. जहि मण पवण ण संचरइ, रवि-ससि णाहिं पवेस[२] ।।
तहिं बढ चित्त विसाम करु, सरहें कहिअ उएस ।।

५०. एक्क करु मा वेण्णि करु, मा करु विण्णि विसेस ।
एक्कें रंगे रञ्जिआ, तिहुअण सअलासेस ।।

५१. आइ[3] ण अन्त ण मज्झ तहिं, णउ भव णउ णिव्वाण ।
एहु सो परममहासुह, णउ पर णउ अप्पाण ।।

५२. अग्गें पच्छें दस दिसें, जं जं जोअमि सोवि ।
ऐव्वें तु दीठन्त डी, णाह ण पुच्छमि कोवि ।।

---

४४. (भोट. ६६ क ख) बाग. ० गरु–उवएसें० धावहि ण पीअउ जेहि । ०सत्थत्थ० तिसिअ मरिअउ तेहि (५६) । हर० ०उवअसो अमिअ–रसु हवहि ण पीअउ जहि। ०सत्यत्थ–मरुस्थलहिं तिसिअे मरिखउ तेहि (१०२) ।

४५.–४८. (भोट नहीं) ।

४८. बाग. ० (पिवन्ते ०सुह० णित्त पुणु-पुणु चक्कवि भरन्ते । अइस धम्मे सिज्झइ पर-लोअह । णाहं पाएं दलि उ भअलोअह (२४) । हर. ०भअलोअह (९२) ।

४९. (भोट. २६) ब = मि. श . प. दग्. (मर्ख) ; बाग. ०णाह०: बढ० (२५), हर. ०नाह० उवेश (९३) ।

४४. गुरु के वचन अमियरस, धाइ न पीयेउ जेहि ।
बहु शास्त्रार्थ-मरुस्थले, तृषिते मरिबो तेहि ।।

४५. मन निर्मल सहजावस्थे गउ, अरिकुल नाहिं प्रवेश ।
एते चेतेउ फुर स्थापिय, सो जिन नाहिं विशेष ।।

४६. जिमि लवण विलीजै पानियैं, तिमि यदि चित्त विलाइ ।
आपहिं दीखै परहिं सम, तत्र समाधियें काह ।।

४७. युवती चित्त न आनै ब्रह्मा । और को है (जो) पूछै हम्मा ।।
नामे सत्त असत्त प्रकारा । पुनि परमार्थे एकाकारा ।।

४८. खाते पीते सुरत रमन्ते । आलिकुल बहुलहु चक्र फिरन्ते ।।
एवं सिद्धि जाइ परलोकहिं । माथे पाद देइ भवलोकहू ।।

३. परमपद--

४९. जंह मन पवन न संचरै, रवि शशि नाहिं प्रवेश ।
तहँ मूढ, चित्त विश्राम करु, सरह कहेउ उपदेश ।।

५०. एक करु ना दोउ करु, ना करु द्वैत विशेष ।
एकहि रंगे रंगिया, त्रिभुवन सकल अशेष ।।

५१. आदि न अन्त न मध्य तंह, ना भव ना निर्वाण ।
एहु सो परम महासुख, ना पर ना अप्पान ।।

५२. आगे पाछे दसदिसहिं, जो जो जोऊं सोइ ।
एवं तो दीठंतडी, नाहिं न पूछउँ कोय ।।

---

५०. (भोट. २७) मा करु विण्ण विसेस=रिग्स्. ल. ब्ये. ग्रग्. दग्. तु. म. ब्येद्. पर्. (मा करु विज्जे विसेस) । बाग. एक्क करु (`मा वण्णि जाणे ण करह भिण्ण । एहु. तिहुअण सअले महाराअ एक्क-एक्कु वण्ण) (२६) ।

५१. (भोट. २८) बाग. मज्झ णउ णउ० (२७) ।

५२. (भोट. २९) एव्वें तु दीठन्तडी=दे. रिङः ञिद्. दु. म्गोन्. पो. द्ल्तर्. ख्युल्. प. छद्. (अब्ब हि णाहभान्ति तुट्टिअ) । बाग. (दह दिहहि जो जो दीसइ तत्त सो । अज्जहिं तइसो भन्ति मुक्क एव्वें मा पुच्छ कोइ) (२८) ।

५३. बाहरें साद को देइ, अभिन्तरे को आलवइ।
साद्धह साद्ध को मेलवइ, को आणेइ को लेइ।।

५४. अप्पा परहिं ण मेलविउ[५], गमणागमण ण भाग्ग।
तुस कुट्टंते काल गउ, चाउल हत्थ ण लाग्ग।।

४. भावना

५५. रवि-ससि वेण्णवि मा कर भान्ती। बम्हा-विट्ठु महेसर भान्ती।।

5a गाढालिङ्गमाण सो राज्ज व[६]रु, जग उप्पज्जइ तत्थु।।

५६. अरे पुत्त तोज्झ (तत्त), रसु सुसंट्ठिउ भोज्ज।
वक्खाणन्त पढन्तानिअ, जगहिं णिआ-णिअ सोज्झ।।

५७. अध-उद्ध माग्गवरें पइसरेइ। चन्द-सुज्ज वेइ[१] पडिहरेइ।।
वञ्चिज्जइ कालहुतणअ गइ। वे विआर समरस करेइ।।

५८. को पत्तिज्जइ कसु कहमि, अज्जउ किअउ अराउ।
पिअ-दन्सणें हले णट्ठ णिसि[२], संझासं हुड जाउ।।

१. शून्यता—

५९. सुण्णवि अप्पा सुण्ण जगु, घरे-घरें एहु अक्खाण।
तरुअर-मूल ण जाणिआ, सरहे हिं किअ वक्खाण।।

६०. जइ रसाअलु पइसरहु, अह दुग्गमहु आआस।
भिण्णाआर मुण तुह, कह मोक्ख-हब्बासु।।

६१. बुद्धि विणासइ मण मरइ, तुट्टइ जहिं अहिमाण।
सो माआमअ परमपउ,[४] तहिं कि बज्जइ झाण।।

६२. भव उएक्खइ खएहि णिवज्जइ। भाव-रहिअ पुणु कहिं उअज्जइ।।
वेइ-विवज्जिअ जो उअज्जइ। अच्छहु सिरिगुरुणाहें कहिज्जइ[५]।।

५३–५५. (भोट नहीं)।

५६. (भोट.६०ग घ, ६१क ख) स. का पाठ संदिग्ध। अनुवाद ह: क्ये. हो.बु.... ब्शिन्. नो. (अरे पुत्त तत्त नाना रस न सुसंठिअउ भेज्ज। सुहपरमठाण...तजिअ जगहिं उवज्जइ जिमि। हर. ०बोज्जु रसरसण सुसंठिअ अबज्ज। बक्खण पढन्तेहि जगहिं ण जाणिउ० (१०१)।

५७.–६०. (भोट नहीं)।

५३. बाहरे स्वाद को देइ, आभ्यंतरे को आलपइ ।
स्वादहि स्वाद को मेलै, को आनै को लेइ ।।

५४. आपा परहिं न मेलवै, गमनागमन न भाग ।
तुष कूटन्ते काल गउ, चावल हाथ न लाग ।।

४. भावना

५५. रवि शशि दोनों ना करु मान्ती । ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वर भ्रान्ती ।।
गाढालिंगमान सो राज, बरु जग उपजै तत्र ।।

५६. अरे पुत्र तू (तत्त्व) रस, सुसंस्थित भोगु ।
बखानंते पढंते निज, जगहिं निजानिज सोझु ।।

५७. अध-ऊर्ध्व मार्गवरे पइसइ । चन्द्र सूर्य दोनों परिहरेइ ।।
बंचि जाये कालहुसे । दो विकार समरस करेइ ।।

५८. को पतियाये कासु कहउँ, आजउ कियउ अराव ।
प्रिय दर्शन री नष्ट, निशि संध्या संफुर जाव ।।

१. शून्यता—

५९. शून्य उ आत्मा शून्य जग, घरे-घरे एहु आख्यान ।
तरुवरमूल न जानिया, साधेहि क्या व्याखान ।।

६०. यदि रसातल पइसरै, अथ दुर्गम आकाश ।
भिन्नाचार मान तोहु, कंह मोक्ष अभ्यास ।।

६१. बुद्धि विनाशै मन मरै, टूटै जँह अभिमान ।
सो मायामय परमपद, तँह का बाँधै ध्यान ।।

६२. भव उदीक्षै क्षयहि निपज्जै । भावरहित पुनि कहाँ ऊपजै ।।
द्वैतविवर्जित जो उपजै । अच्छहु श्रीगुरुनाथे कहिजै ।।

---

६१. (भोट. ६१ ग घ, ६२ क ख) परमपउ=म्छोग्. तु. तोंग्स्. प. स्ते (परमकलु). बाग. ०जहि (तुट्टइ)० परमकलु तहि किम्बज्झइ० (५३) हर. ० मरइ जहि अहिमाण। सो माआमअ परमकलु तह किम्बज्जइ (१०१)।

६२. (भोट. ६३ ग घ, ६४ क ख) भव उएक्खइ खएहि णिवज्जइ=द्ङोस्. पोर. स्क्येस् म्खऽ ल्तर्. रङ. ब्शिन् न. (भाव उवजजइ०)। बाग. भवहि उअज्जइ खअहि० केहि उवज्जइ। विण्ण० जो उवज्ज । अच्छह० णाहे।

(२) भोग में योग—

६३. देक्खउ सुणउ पईसउ साद्दउ। जिघ्घउ भमउ बईसउ उट्ठउ ।।
आलमाल ववहारें बोल्लउ । मण च्छड्डु एकाआरे म्म चलउ ।।

5b६४. चित्ताचित्त वि परिहरहु[६], तिम अच्छहु जिम बाल ।
गुरु-वअणें दिढ भत्ति करु, होइहइ सहज उल्लाल ।।

६५. अक्खरवाणो परमगुणें रहिअउ। भणइ णं जाइ सो मइ कहिअउ ।।
सो परमेसर कासु कहिज्जइ। सुरअ कुमारी[१] जिम उअज्जइ ।।

६६. भावाभावें जो परिच्छिण्णउ। त(हिं) जग तिअ सहाव विलीणउ ।।
जब्बें तहि मण णिच्चल थाक्कइ । तब्बें भव-णिव्वाणेहि मुक्कइ ।।

६७. जाव ण अप्पउं पर[२] परिआणसि। ताव कि देहाणुत्तर पावसि ।।
एमइ कहिउ भान्ति ण भावा। अप्पउ अप्पा बुज्झहि तावा ।।

६८. अणु-परमाणु ण रूअ विचित्तउ। अणवर[३] भावहु फुरइ सरइउ ।।
सरह भणइ भिडि एत्तवि मान्तउ। अरे णिकोल्ली बुज्झहु मित्तउ ।।

६९. आग्गे आच्छअ बाहिरे आच्छअ। पइ देक्खअ पडवेसी पुच्छअ[४] ।।
सरह भणइ बढ जाणहु अप्पा। णउ सो धेअ ण धारण जापा ।।

७०. जइ गुरु कहइ सब्ब वि जाणी। मोक्ख कि च्छडइ अप्पणु बाणी ।।
देस भमइ हाल्बासे लइउ। सहज ण बुज्झइ पावें गहिउ ।।

---

६३. (भोट. ६४ गघ, ६५ कख) पइसउ साद्दअ=रिग् दङ. । ञन्. प. दङः, बाग. देक्खहु सुणहु परीसहु खाहु। जिग्घहु भमहु बइद् उट्ठाहु। ०व्यवहारे पेल्लइ। मण च्छड एक्काकार म चल्लह (५५) हर. ब्यवहारे पेल्लेहु । मण च्छड्डु एक्कार म चल्लह (१०२) ।

६४. (भोट. ७०) चित्ताचित्त=ब्. थ्सम्. दङ. ब्सम्. ब्य. (चित्तचैतस) उलाल, थे. छोम्. मेद् (निसंदेह)। बाग. ०बालु : ०होइ जइ० उलालु (५७), हर. ०बालु :० हइह इ (१०३) ।

६५. (भोट. ७१), बाग. अक्खरवण्णो पर (म) गु (ण) रहिओ : ०जाण ए म कहिअओ । ०परमेसर० जिम पडिवज्ज (५८), हर. वर्णो० रहिजे। भभइण जाण सो मइ कहिजे ।

६६. (भोट. ७२) तहिं जग तिअ० विलीणउ-देर्. नि ऽग्रो. ब. म-लुस्... तहिं.. जगसअल), भव-णिव्वाणेहिः ऽखोर्.बडि. द्ङोस्पो. (भवभावहि) बाग.०

(२) भोग में योग—

६३. देखहु सुनहु पईसहु स्वादउ । सूंघउ भ्रमहु बईठहु उट्ठउ ।।
आलमाल व्यवहारे बोल्लहु । मन छोडि एकाकार न चल्लउ ।।

६४. चित्त अचित्तहु परिहरहु, तिमि रहहु जिमि बाल ।
गुरुवचने दृढ़ भक्ति करु, होइहै सहज उलास ।।

६५. अक्षर-वर्ण परमगुण रहितउ । भन्यो न जाइ सो मैं कहिउ ।।
सो परमेश्वर कासु कहीजै । सुरत कुमारी जिमि ऊपजै ।।

६६. भाव-अभावे जो परिछिन्नउ । तहँ जगत स्वभावे विलीनउ ।।
जब्बै तँह मन निश्चल थाकै । तब्बै भवनिर्वाणहिँ मुंचै ।।

६७. जौलौं न आपहुँ पर परिजानसि । तौलौं कि देह अनुत्तर पावसि।।
यह मैं कहेउ भ्रांति न भावैं । आपै अपने बूझहि तब्बैं ।।

६८ अणु परमाणु न रूप विचिंतहु । अनव भावहु स्फुरै सरैउ ।।
सरह भनै भिडि एतउ मानतउ । अरे निष्कुली बूझहु मित्रउ ।।

६९. आगे रहै बाहिरे रहै । पति देखै पडोसी पूछै ।।
सरह भनै मूढ जानहु आपा । नहिं सो ध्येय न धारण जापा ।।

७०. यदि गुरु कहै सब्बइ जानी । मोक्ष का मिलै आपन वाणी ।।
देश भ्रमै अभ्यासे लेइउ । सहज न बूझै पापे गहिअउ ।।

परिहीणो । तहिँ जगे सम्रलासेस विलीणो । ०थक्कइ । भवसंसारह० (५९); हर. ०जो परि- हीणो । तहि जग सम्रलासेस विलीनो । ०जब्बर्याँह मण णिच्चल थक्कइ । तब्य भवसंसारह मुक्क (१०३) :

६७. (भोट. ७३) बाग. अप्पहिं० । हर. जाव ण अप्पहि० अेमइ कहिजे भतिण कद्वा । अप्यहि अप्या बूझसि तब्बा ।

६८. (भोट. ७४) अणवर भावहु फुरइ सरइउ=द्ङोस्. पो. दे. दग्. ग्दोद्. नस्. शे न. प. मेद् । बाग. णउ अणु णउ परमाणु विचित्तजे । अणवर (अ) भावहि फुरइ सुरत्तजे । भणइ सरह मन्ति एत विमत्तजे । अरे णिक्कोली बुज्झहु परमत्थजे (६१), हर. अणवर भावहि स्फुरहि सुरत्तजे । भणइ सरह भिति एत विमत्तजे (१०४) ।

६९. (भोट. ७५) अगृगे=ख्यिम्. न (घरे); बाग. पडिवेसी पुच्छ ।

७०. (भोट. ७६) हब्बासे लइअइ=ग्दुङ.बस. ञो. न., ब्यस् । बाग. सम्रल विणु जाणी ।

७१. विसअ रमन्ते ण विसअहिं लिप्पइ । उअल हरन्तें ण पाणी च्छुप्पइ ।।
6a एमइ जोइ मूल सरत्तो । विसअ[६] ण बाज्झइ विसअ रमन्तो ।।

(३) भ्रान्त पथ--

७२. देव पुदिज्जअ लक्खवि दिज्जअ । अप्पउ मारी कीस करिज्जअ ।।
तहवि ण तुट्टइ एहु संसारू । विणु आभासें णाहि निसारू ।।

७३. भावाभावह भावणुरत्तो । पसुअ मज्झे ते गणिअन्ति सत्तो ।।
झाणे जा किअ मोक्खावास । सो भव-राक्खसकेरो दास ।।

७४. धरिअउ हंस मइ कहिअउ भेअ । अध-उद्ध दुइ[२] पक्खां च्छेअ ।।
पक्खविहुण्णे कहवि जाअ । देह मढ जइ णिच्चल ट्ठाअ ।।

७५. पंडिअ सअल सत्थ वक्खाणअ । देहहिं बुद्ध वसन्त ण जाणअ ।।
अमणागमण ण एक्क वि खण्डिअ । तउ णिलज्ज भणइ हंउ पण्डिअ ।।

(४) सहज अवस्था--

७६. जत्तइ चित्तहु विफुरइ, तत्तइ णाहु सरूअ ।
अण्ण तरंग कि अण्ण जलु, भव-सम ख-सम सरूअ ।।

७७. ण त्तं वाएं गुरु कहइ, णउ तं बुज्झइ सीस ।
सहज सहावा हलें अमिअरस, कासु कहिज्जइ कीस ।।

७८. जत्तइ पइसइ जलेंहि जलु, तत्तइ समरसु[१] होइ ।
दोसगुणाअर चित्तता, बढ पडिवक्ख ण होइ ।।

७९. च्छड्डुह जे सहजे सहज बुद्धिए लइउ । विविह पआर पवञ्चा सहिउ ।।
6b एक्क कहवि ण[६] कीअई वासण । एहु आणत्त सअल जिण-सासण ।।

८०. मुक्कावथि जे सअल जगु, णाहि णिबद्धो कोवि ।
मूढहि मोहे पमत्तिअइ, सत्थावत्थ जे सोवि ।।

---

७१. (भोट. ७७) उअल हरन्ते=उत्पल. ऽदब्. म. (उत्पल पत्र)। बाग. उअर सरन्तो। विसाह ण वाहइ विसअ रमन्तो।

७२. (भोट.७८) देव विज्जइ (१०७)।

७३-७४. (भोट नहीं)।

७५. (भोट. ८१ ग घ, ८२ क ख)। बाग.० वक्खाणइ। ० ण तेण विखण्डिअ। तोवि० हुउ (६८)। हर. तो वि णिलज्ज० (१०७)।

७१. विषय रमन्त न विषयहिं लिप्पै । उत्पल हरन्त न पानी छुवै ।।
एवं योगी मूल सगात्रो । विषय न बंधै विषय रमन्तो ।।

(३) भ्रान्त पथ—

७२. देव पूजियै लक्षउ दीजै । आपा मारिय कइस करीजै ।।
तथापि न टूटइ एहु संसारू । बिनु आभासे नाहि निसारू ।।

७३. भाव-अभावहि भाव अनुरक्त । पशु-मध्य ते गणियत सत्त्व ।।
ध्याने जा करि मोक्षावास । सो भवराक्षसकेरो दास ।।

७४. धरियउ हंस मैं कहिअउ भेद । अधः उर्ध्व दोउ पक्षहँ छेदि ।।
पक्ष बिहूने कहबो जाय । देह मढ जो निश्चल स्थाय ।।

७५. पंडित सकल शास्त्र बक्खानै । देहहि बुद्ध वसंत न जानै ।।
अवनागवन न एकउ खंडित । तऊ निलज्ज भनै हम पंडित ।।

(४) सहज अवस्था—

७६. जेत्तइ चित्तउ विस्फुरै, तेत्तइ नाथस्वरूप ।
अन्य तरंग कि अन्य जल, भव-सम ख-सम स्वरूप ।।

७७. ना तेहि वाचहिं गुरु कहै, ना तेहि बूझै शिष्य ।
सहज स्वभाव री अमियरस, कासु कहीजै कैस ।।

७८. जेत्तइ पइसै जलहि जल, तेत्तइ समरस होइ ।
दोषगुणाकर चित्तता, मूढ प्रतिपक्ष न होइ ।।

७९. छाडहु जे सहजे सहज बुद्धिइ लेइअउ । विविध प्रकार वंचना सहिअउ ।।
एक कहिब न कीजै वासना । एहु आज्ञप्त सकल जिन-शासना ।।

८०. मुंचावै जे सकल जग, नाहि निबद्धा कोइ ।
मूढा मोह प्रमत्तिया, शास्त्रावस्थ जे सोइ ।।

---

७६. (भोट. ८७), बाग. जत्तवि चित्तहि विफ्फुरइ तत्तवि णह० हर. जत्तवि चित्तह विस्फुरइ, तत्तवि णाह सरूप (१०६) ।

७७. (भोट. ६६ ग घ, ६७ क ख)।

७८. (भोट. ८६) बढ़=म्गोन्. पो. (नाथ); हर. दोषगुणाग्रर चित्तता बट परिवक्खा ण कोइ ।

७९.-८७ (भोट नहीं) ।

८१. चित्तका प्रसर निरंतर देखी । लोभ मोह जे कहेउ उदेखी ।।
यक्ष रूप जिमि चित्र कर विभाय । मायाजाल जे तिमि प्रतिभाय ।।

८२. सकलहु एहु सहांचित देखहु । तंह विलीन चित्त उदेखहु ।।
सहजे सहजउ बूझै जब्बै । अन्तराल गति टूटै तब्बैं ।।

८३. ऋद्धिसिद्धि री दोउ न काज । पाप-पुण्य तंह डारहु बाज ।।
सो अनुत्तर बूझै जब्बै । सरह भनै जग सिद्धै तब्बै ।।

८४. गुरू वचन संसिद्धउ जब्बै । इन्द्रजाल सब टूटै तब्बै ।।
सरह भनै अनुत्तर धर्म । हरि-हर-बुद्ध जे एहउ कर्म ।।

८५. सर्वाकारवर उत्तम कोइ । शुनक शृगालउ सत्त्व ले सोइ ।।
शुद्धि (···)जानिय जब्बै । जिन-गुण-रतन पाइय तब्बै ।।

८६. अथवा मोहे सो परिजानेउ । मोक्षहिं बुद्धिहिं जाय सम्मानेउ ।।
हाथेहि कंकण स्थितउ नाइ । गुणदोष विक्षण दर्पणहिं जानइ ।।

८७. बुद्धहि सकल मने देइ मुक्ता मल्ल मान सो बाझइ ।
जानै परमार्थ न अर्थच्छिन्न सर्वोच्छिन्न पेखै सर्वै ।।

८८. सा होहु सुव्यवच्छिन्न अव्यवच्छिन्न आनन्तर ।
स्वयं संवित्ति न करह रे धंधा । भाव-अभाव सुगति रे बंधा ।।

८९. निज मन मनन करु रे निपुणें योगी । जिमि जल जलेहि मिलन्ते सोई ।।
ध्यान मोक्ष कि देखहु रे प्रवाहे । मायाजाल कि लेहु रे क्रोडे ।।

९०. वरगुरुवचन पतियाइय साचें । सरह भनै मैं कहिअउ वाचें ।।
निज स्वभाव न लब्भै वचने । दीखै गरु आदेशे हि गगने ।।

९१. नहि तसु दोष जे एकहु ठाँव । धर्माधर्म जो मोही खाव ।।
चित्त बंधे बंधै मुक्ते मंचइ न अस्ति संदेहो ।

---

९०. ग घ (भोट. ३९ गघ)लद्धग्रः मि. ब्जो . क्यड्. (ण कहिग्रउ); बाग. णहु कहिग्रउ ग्रण्णें। ०गुरउवएसें ण ग्रण्णें।

९१. (भोट. ४०, ४२ गघ), बाग. ०तसु दस ग्रो ट्ठाइ । सा सोहिग्र खा (३८) । हर. णउ तसु दोस जे एक्कवि ठाइ । धमाधम्म सोहिग्र खोइ ।

९२. बज्झन्ति जेण जडा परिमुञ्चन्ति तेण बुधा ।।
बद्धो गमइ दस दिसेहि, मुक्को[४] णिच्चल ट्ठाअ ।
९३. एमइकरहा पेक्खु सहि, विवरिअ महु पडिहाइ ।।

(५) **सहज समरस-भाव—**

पवण धरि अप्पाण म भिन्दह । कट्ठ-जोअ नासग्ग म विन्दह ।।
९४. अरे बढ सहज गइ पर रज्जह । मा भव-गन्ध-बन्ध पडिबज्जह ।।
एहु निअ मण सबलचातर स चल । मेलहिं सहाव ट्ठाअ वसइ दोस-णिम्मल।
९५. जब्बें मण अत्थमणु जाइ, तणु[६] तुट्टइ बन्धण ।
7b तब्बें सम रसहि मज्झे, णउ सुद्द ण बाम्हण ।।

५. यहीं सब कुछ

(१) **देह ही तीर्थ—**

९६. एथु से सरसइ सोवणाह, एथु से गङ्गासाअरु ।
वाराणसि पआग एथु, से चान्द-दिवाअरु ।।
९७. खेत्त पिट्ठ उअपिट्ठ, एथु मइ भमिअ समिट्ठउ ।
देहासरिस तित्थ, मइ सुणउ ण दिट्ठउ ।।
९८. सरु पुडअणि दलु कमल, गन्ध-केसर वर णालें ।
च्छाडहु वेण्णि[२]मा करहु से, मा लाग्गहु बढ आलें ।।
९९. कामान्त सान्त खअ जाअ, एत्थ पुज्जहु कुलहीणउ ।
बाम्ह-विट्ठु-तइलोअ, जहिं जाइ विलीणउ ।।

---

९२. (भोट. ४३ क ख, ५१ ग घ), बाग. बज्झंति जेणवि जडा लहु परिमुच्चन्ति तेणवि बुहा (४२) ।
९३. (भोट. ५२ क ख, ५३ ग घ), सहि=गो. ब्स्लोग; बाग. विहरिअ महुं (४३)।
९४. (भोट. ५४), बाग. ९२।४४ पवण-रहिअ अप्पाण म चिन्तह । क -जो णासग्ग बंधह। (भोट.) .बाग. अरे बढ सहज सइ पर रज्जह । मा भव-गन्ध-वन्ध पडिचज्जह– (४४)। एहु मेल्लह तुरङ्ग सुचञ्चल। सहज सहावे सो वसइ णिच्चल (४५); हर. ०सहज शइ पर णज् जहु (९९) ।
९५. (भोट. ५५ ग घ, ५६ क ख); वाग. ०म अत्थमण० । ०समरस बज्जइ (४६); हर जब्बें मण अच्छमण जा तणु० ।

९२. बंधें जासे जडा परिमुचैं तेन बुधा ।।
बद्धोउ जावै दस दिसहि, मुक्तउ निश्चल स्थाय ।
९३. एवं करभा पेखु सखी, विवरिय मोहि प्रतिभाय ।।

(५) **सहज समरस-भाव--**

पवन धरी आपा ना भिन्दहु । कष्टे योग नासाग्र न बिन्दहु ।।
९४. अरे मूढ, सहज गति पर रंजै । ना भव-गंध-बंध प्रतिपद्यै ।।
एहु निज मन तुरंग चंचल । मेलहि स्वभाव स्थाय बसै दोष-निर्मल ।।
९५. जब्बै मन अस्तमन जाइ, तन टूटै बंधन ।
तब्बै समरस मध्ये, ना शूद्र न ब्राह्मण ।।

५. यहीं सब कुछ

(१) **देह ही तीर्थ--**

९६. एहिं सो सरस्वती प्रयाग, एहिं सो गंगासागर ।
बाराणसी प्रयाग, एहिं सो चन्द्रदिवाकर ।।
९७. क्षेत्र पीठ उपपीठ एहिं, मैं भ्रमेउ समिस्थउ ।
देह सदृश तीर्थ, मैं सुनेउ न देखेउ ।।
९८. सर पुरइणि दल कमल, गंध केसर वर नालें ।
छाडहु द्वैत न करहु से, ना लागह मढ आलें ।।
९९ कामन्त शान्त क्षय जाय, अत्र पूजहु कुलहीनहु ।
ब्रह्मा-विष्णु-त्रिलोचन, जंह जाय विलीनउ ।।

---

९६. (भोट. ५६. ग , ५७ क ख) बागची-एत्थ से सुरसरि जमणा एत्थु ०। ० पश्राग वणारसि एन्थु से चन्ददिवाश्ररु (४७); हरप्रसाद शास्त्री. एत्थु से सुरसरि जमुणा एत्थु०। अत्थु पश्राग बणारसि एत्थु०।

९७. (भोट. ५७ ग घ, ५८ क ख); बाग. क्खेत्तु पीठ उपपी एत्थु मइ मम परि्ठश्रो०। ०सरिसश्र० मयं सुह श्रण्ण ण दीट्ठश्रो = (४८)।

९८. (भोट. ५८ ग घ, ५९ क ख), बाग. सण्ड पुश्रणि-दल कमल० च्छडहु वेणिम ण करहु सोस ण लग्गहु० (४९); हर. सण्ड पूश्रणिदलकमल०। छड्डहु वणि म करहुं सोसं न लग्गहु बढ श्रालें (१००)।

९९. (भोट. नहीं); बाग (काम तत्थ खश्र जाश्र पुच्छ कुलहीणउ। बम्ह. विट्ठु तीलोश्र०।

१००. जइ णउ[3]विसअहि लीलिअइ, तहु बुद्धत्त ण केहि ।
सेउ-रहिअ णव अङ्कुरहि, तरुसम्पत्ति ण ज(1) उ ।।
१०१. जत्थवि तत्थवि जहवि तहवि, जेण तेण हुअ बुद्ध ।
सए[4]सङ्कप्पे णासिअउ, जगु सहावहि सुद्ध ।।
१०२. सहज कप्प परे वेवि ठिउ, सहज लेउ रे सुद्ध ।
कअपअपाणी पीस लउ, राअहन्म जिम दुट्ठ ।।

(२) **जग में ही सुखसार—**

१०३. जग उपपाअणे दुक्ख बहु, उप्पण्णउ तहि सुहसार ।
उप्पण उप्पाअ णहि, लोअ ण जाणइ सार ।।
१०४. अरे पुत्त तत्त विचित्त रसु, कहण ण सक्कइ वत्तु ।
8*a* कप्प-रहिअ सुह ट्ठाण कुह । णिअ सहावें सेविउ एक्कह ।।
१०५. कमणे सो गुणहि धरिअउ । अहवा एकोवि ण धरिअउ ।।
सुण्णासुण्ण वि बुज्झइ जत्थु । गुरु ण्णाउ वण्ण वि भुंजइ तत्थु ।।
१०६. बुद्ध वि[1] वअणें एत्तवि धम्म । लोआचारें एत्तवि कम्म ।।
सअल तत्त सहावें देक्खह । लोआचार जे तहि उएक्खह ।।
१०७. एवहि बुद्ध-रुअ हलें कोवि । सहज सहावें सिज्झइ सोवि ।।
सुअणे जिम वरकामिणि माणिउ । रइ-सुह तहि पच्चक्खहि समाणिउ ।।
१०८. एवहि बुद्ध-रुअहु लड सिज्झइ[2] । पज्जोपाएं कहवि ण बज्झइ ।।
जइ मण सहज णिरन्तरें पावइ । इन्दी विसअहि खणवि ण धावइ ।।
१०९. तहि सो वि देअ ए चउरिद्धी । सरह भणइ जिण-बिम्ब वि सिद्धी ।।
दोहा-सङ्गम मइ[4] कहिअउ, जेहु विबुज्झिअ तत्थ ।
११०. एहु संसार हलें लेहु, जहि जाणिज्जइ तत्थ ।।
गहि गुण धम्म संसार अहवा सत्थत्थ णिअत्थणें ।
१११. तहि भासिअ[5] दोहाकोसं तत्थ च्चिअकन्धअं समत्तं ।।

(मिगू.गसुम्), बाग. काम तत्थ खअ जाइ पुच्छहु कुलहीणओ । बम्ह० तेलोअ सअल जगु णिज्जीणओ (५०) ।

१००. (भोट. नहीं) ।

१००. यदि नहिं विषयहि लीलियइ, तो बद्धत्व न केहि ।
सेतुरहित नव अंकुरहि, तरुसंपत्ति न जेहि ।।
१०१. जहं तहं जैसेउ तैसेउ, येन-तेन भा बुद्ध ।
स्वकसंकल्पे नाशिअउ, जगत् स्वभावहि शुद्ध ।।
१०२. सहज कल्प परे द्वैत ठिउ, सहज लेहु रे शुद्ध ।
काय पग पाणि पीस लेउ, राजहंस जिमि दुष्ट ।।

(२) जग में ही सुखसार—

१०३. जग उत्पन्ने दुःख बहु, उत्पन्ने तहिं सुखसार ।
उत्पन्न उत्पाद नहिं, लोक न जानै सार ।।
१०४. अरे पुत्र तत्त्व विचित्र रस, कहन न सक्कइ वक्तु ।
कल्परहित सुखथान कहु । निज स्वभावे सेविउ एक्कउ ।।
१०५. कवने सो गुणे धरिअउ । अथवा एकउ न धरियउ ।।
शून्य-अशून्यउ बूझै यत्र । गुरु नव वर्णउ भुंजै तत्र ।।
१०६. बद्धहु वचने एत्तइ धर्म । लोकाचारे एत्तइ कर्म ।
सकल तत्त्व स्वभावे देक्खह । लोकाचार जे तहिं उदेखह ।।
१०७. एवं बुद्ध रूप है कोई । सहज स्वभावें सिद्ध्यै सोई ।।
स्वप्ने जिमि वर कामिनि मानेउ । रति-सुख तंह प्रत्यक्ष समानेउ ।।
१०८. एवं बुद्ध रूपउ लड सिद्ध्यै । प्रज्ञोपाये कंहउ न बंधै ।।
यदि मन सहज निरंतरे पावइ। इन्द्रिय विषय हिं क्षणउ न धावइ।।
१०९. तंह सोउ देइ चउऋद्धी । सरह भनै जिन-बिंबउ सिद्धी ।।
दोहा संगम मैं कहेउ, जहँ जाणीजै तथ्य ।
११०. एहु संसार री लेहु, जंह जानीजै तथ्य ।।
गहि गुण धर्म संसार अथवा शास्त्रार्थ निजस्थाने ।
१११. तहँ भाषेउ दोहाकोश, तत्र चित्तस्कंधकं समाप्तं ।।

१००–१११. (भोट. नहीं) ।

१०४. बाग. अरे पुत्तो तत्तो० रसु० वत्थु । ०सुइठाणु वर जगु उअज्जइ तत्थु (५२) ।
हर. अरे पुत्त० वत्थ । ०ठाणु वरु जग उवज्जइ तत्थ (१०१) ।

६. सहज यान

जइ कहमि तोज्झु कहण ण जाइ । अहवा कहमि जणकेर मणपत्तअ ण जाइ ।।

११२. जइ पमाएँ विहि बसें, बढ लद्धउ[६] भेउ ।
9a जइ चण्डाल-घरें भुञ्जइ, तअवि ण लग्गइ लेउ ।।

११३. सहज-सहज मु माणहु आलें । जें पुणु बन्ध होइ भवपासें ।।
अरे बढ आसा कहवि ण काज्ज । दस (?सद)गुरु किरणे पाडहु बाज्ज ।।

(१) सहानुभूति—

११४. सग्रं-संवेअण तत्त बढ, लोएं तं काइ मणन्ति ।।
जो मण-गोअरें पाविअइ, सो परमत्थ न होन्ति ।।

११५. णिअ सहाव गअण-सम, अप्पा पर[२] णउ सोइ ।
सहजाणन्द चउट्ठउ, सो की वुच्च ण जाइ ।।

११६. विण बज्जे जिम च्छान्ती जावतिअ, मण माआकेर सहाव ।
सअल विसअ ण सहावें सिज्झअ । पज्जोपाएं[३] कहवि ण बाज्झअ ।।

११७. जिणवर-वअण पत्तिज्जहु साच्चें । सरह भणइ मइ कहिअउ वाच्चें ।।
सहजें सहज वि बाहिअ जबें । अचिन्त जोएं[४] सिज्झइ तब्बें ।।

११८. जिम जल-मज्झें चन्दडा, णउ सो साच्च ण मिच्छ ।
तिम सो मण्डलचक्कडा, णउ हेडइ णउ खित्त ।।

(२) चित्त देवता

११९. चित्त देव जे सअलहि राज्जइ । पर-चित्तन्त[५] चाउलि भुंजइ ।।
9b चित्तहिं सअल जग जो दीसअ । सहज सहावें किम्पि ण दीसअ ।।

१२०. चित्तहिं चित्त जइ लक्खण जाइ । चञ्चल मण पवण थिर[६] होइ ।।
चित्त थिर जो णिम्मल भाव । तहिं ण पइसइ भावाभाव ।।

१२१. एहु देव बहु आगम दीसअ । अप्पण इच्छें फुड पडिहासअ ।।
अप्पणु णाहो पर विरुद्धो । घरे-घरे सो सिद्धांत पसिद्धो ।।

---

११५. हर. सहजानन्द चउट्ठ कवणे णिअ संवेसइ जाण (११७ ? १२१) ।

१२०. (भोट. नहीं) ।

१२१ ख. (भोट. ९७ ग घ, ९८ क ख) ।

६. सहज यान

यदि कहउ तोहि कहन न जाइ। अथवा कहउ जनके मन प्र.यय न जाइ ॥

११२. यदि प्रमादे विधिबस, मूढ लहेऊ भेद।
यदि चंडालघरे भुंजइ, तऊ न लागै लेप ॥

११३. सहज सहजें मानहु आशे। जे पुनि बन्ध होइ भव पाशे ॥
अरे मूढ आशा कहब न काज। सदगुरु किरने डारहु बाज ॥

(१) सहानुभूति

११४. स्वकसंवेदन तत्त्व मूढ, लोग से काह मानंत ॥
जो मन गोचरे पाइयइ, सो परमार्थ न होन्ति ॥

११५. निज स्वभाव गगनसम, आपा पर न सोइ।
सहजानन्द चतुर्थउ, सो की कहा न जाइ ॥

११६. बिन वद्धे जिमि शांति जौलौं, मन मायाकेर स्वभाव ॥
सकल विषय न स्वभावे भावे सिद्धै। प्रज्ञोपाये कहब न बाझै ॥

११७. जिनवर-ववने पतियाहू साचे। सरह भनै मैं कहिअउं वाचे ॥
सहजे सहज उ बोधिय जब्बै। अचिन्त योगे सिद्धै तब्बै ॥

११८. जिमि जलमध्ये चंदडा, ना सो सत्त्य न मिथ्य।
तिमि सो मंडल-चक्कडा, ना हेठइ ना क्षिप्त ॥

(२) चित्त देवता

११९. चित्त देव जे सकलहि राजै। पर चित्तन्त चाउ ली भुंजइ ॥
चित्तदेव जे सकलहिं राजै। सहज स्वभावे किमपि न दीसै ॥

१२०. चित्तहिं-चित्त यदि लखा न जाइ। चंचल मन पवन स्थिर स्थाइ ॥
चित्त स्थिर जो निर्मल-भाव। तंह ना पइसै भाव-अभाव ॥

१२१. एहु देव बहु आगम दीसै। आपन इच्छे फुरि प्रतिभासै ॥
आपन नाथो पर-विरुदधो। घरे-घरे सो सिद्धान्त प्रसिद्धो ॥।

---

१२१. बाग. एक्कु देव० दीसइ। अप्पणु इच्छें फुड पडिहासइ। अप्पणु णाहो अण्ण विरुद्धा। घर-घरें सो अ० (८७)। हर. अप्पणु नाहो अण्ण विरुधो। हो घरें-घरें सोअस सिद्धान्त पसिद्धो। १२१-१२७. (भोट. नहीं)।

१२२. हिअहिं काच मणि लइ तुट्ठो । बोहिमण्डल महासुह ण पइटठो ।।
सम्वर चित्त-राअ दिढ चाङ्गो । जाव ण दंसअ विसअ भुजंगो ।।

१२३. पञ्जरे जिम पगि पक्खि णिचञ्चल । तिम मण राउ लगइ सुठु वञ्चल ।।
सो जइ लइअइ अइन्त विरालें । चलइ न बुल्लइ ट्ठिअइ निरालें ।।

१२४. चिन्ताचिन्त ण किअउ मइ, णउ परिआणिअ कीस ।
बुज्झहो जो गुणवन्तो, वेण्णि करिआ सीस ।।

१२५. जइ ट्ठाण ण घेप्पइ दुट्ठ मण, इन्दी काइ चरेइ ।
पसुघरें, चोरह मन्त ण पेच्छइ, जो तइलोअ हरेइ ।।

१२६. च्छाआच्छाअहिं जइ सो पइट्ठो । देह वसन्तो चित्त ण दिट्ठो ।।
जो सो जाणइ णिअ मण ट्ठाणा । सअल जग[५] भवति भव सुइणा ।।

१२७. णिब्बाणें ट्ठिअ झाणे राजइ । आण्ण मान्द आण्ण आउ सह कीजइ ।।
णउ सो झाणें णउ पब्बाजें । गेह वसंतें समरस भाज्जें ।।

10a १२८. घरे-घरें[६] कहिअअ सोज्झु कहाणो । णउ परिआणिअ महासुह ट्ठाणो ।।
सरह भणइ जग चित्तें वाहिउ । सोवि अचिन्त ण केणवि गाहिउ ।।

(३) **भव-निर्वाण एक–**

१२९. ए जे करुण मुणन्ती मागहि, दिढ लाग्गइ तें भव-पास ।
अइ अण्णो सो अणक्खरु णव, सुण्णहिं चित्त णिरास ।।

१३०. जिम जलेहिं ससि दिसइ च्छाआ । तिम भव पडिहासइ[२] सअलवि माआ ।।
अइसो चित्त भमन्ते ण दिट्ठो । भव णिव्वाण णिरन्तरें पइट्ठो ।।

१३१. अन्तो णत्थ सुइउआ णट्ठो काल दुइउ । एको[३] वि सो जाणिव्वो जेण कम्मसउ ।।
णिजिअ सासो णिहन्द-लोअणो सअल विआर विमुक्को मणो ।।

१३२. जो ए आवत्थ गउ सो जोइ णत्थि संदेहो[४] ।
णिट्ठुर सुरअ सं पाणिअ, कमल-कुलिस सम्पत्ति ।।

१३३. खणे-खणे किं विबोहिअ णिब्वाण सएसम्वित्ति।
वेवि कोडि ण रत्तो, कहि म्पुण लक्ख क्हाण[५] ।।

---

१२८ कख. (भोट. ४६ ग घ और ६४); हर. रे घर काहिअइ सोज्झ

१२२. हृदये काच मणि लेइ तुष्ट । बोधि-मंडल महासुख न प्रविष्ट ।।
संवरचित्तराग दृढ़ चंगा । जौ लौं न दंशे विषय-भुजंगा ।

१२३. पंजरे जिमि पडि पक्षि निश्चंचल । तिमि मन राव लगै सुठबंचल।।
सो यदि लेइ अचिन्त बिडाले । चलै न बोलै स्थिरे निराले ।

१२४ चिन्ताचिन्त न कियउ मैं, ना परिजानेउ कैस ।।
बूझहु जे गुणवन्ता, दोनों करिया सीस ।

१२५. यदि स्थान न गहै दुष्ट मन, इन्द्री काह चरेइ ।।
पशुघरे चोरह मंत्र न पेखइ, जो त्रैलोक हरेइ ।

१२६. छाया-छायेंहि यदि सो पइठो । देह वसन्त चित्त ना दृष्टो ।।
जो सो जानइ निज मन थाना ।। सकलजग होइ भव-स्वप्ना ।

१२७. निर्वाणे स्थिय ध्याने राजै । अन्य मन्द-अन्य आयु सह कीजै ।।
ना सो ध्याने ना प्रव्रज्यहिं । गेह बसन्ते समरस भार्ये ।।

१२८. घरे-घरे कहियइ सोझ कहानो । ना परिजानिय महासुख थानो
सरह भनै जग चित्ते बहेउ । सोउ अचिन्त न कोउ गहेउ ।।

(३) **भव-निर्वाण एक—**

१२९. ये जे करुण मनंती मांगै, दृढ़ लागै तें भवपाश ।
अति अन्य सो अनक्षर ना, शून्यहिं चित्त निराश ।।

१३०. जिमि जलेहिं शशि दीखै छाया । तिमि भव प्रतिभासै सकलउ माया ।।
ऐसो चित्त भ्रमन्त न दृष्ट । भव-निर्वाण निरन्तरे प्रविष्ट ।।

१३१. अन्त नाहि सुपिना नष्ट काल दुइउ । एकउ सो जानिबो जेहि कर्मशत
निर्जिति श्वास निष्पन्द लोचनं । सकल विचार विमुक्त मन ।।

१३२. जो ये अवस्था गउ, सो योगी नाहि संदेहा ।
निठुर सुरति संपानिय, कमल-कुलिश संपत्ति ।।

१३३. क्षणे क्षणे का विबोधिय, निर्वाण स्वक-संवित्ति ।
दोउ कोटिन रक्त, कंह पूर्ण लक्ष्य कहान ।

कहाणा। णउ पर सुणिउ महासुह ठाणा।० सो अचिन्त णउ केणवि गाहिअ (१११)।

१३४. तह वेवि रहिअ णिउगो, अणुत्तर बोहि विण्णाण ।।
10a रसु परिभुञ्ज ण मूल-रस, कमलवगें पण मज्जइ ।
१३५. बहु सन्तावें सअलें, चित्त-गएन्द ण रज्जइ ।।
आलअतरु उमलइ, हिण्डइ जग च्छाच्छान्द ।
१३६. गम्मागम्म ण जाणइ, मत्तो चित्त-गअन्द ।।
जइ जग पूरिअ सहजाणन्दे । णाच्चहु गाअहु विलसहु चङ्गे ।
१३७. जइ पुणु घेप्पहु वासण विन्दे । तह फुड बाज्झहु ए भव -फान्दे ।।
समता कामिणि अणुह णिवास । समरस भोअण अम्वर वास ।
१३८. तहि पुणु किम्पि ण दीसइ आन्तर । सम गउ चित्तराअ णिरन्तर[१] ।।

(४) **परमपद—**

(क) **शून्य निरंजन**

सुण्ण णिरञ्जण परम पउ, सुइणोमाअ सहाव ।
१३९. भावहु-चित्त सहावता, जउ णासिज्जइ जाव ।।
रवि-ससि बन्धण गउ जब्बें । उअरे अरइ तलें खरइ ण तब्बें ।
१४०. देक्खइ रवि परि त बुद्ध विण्णाणा । उअरे अरइ तलें णाहि मोक्खरणा ।।
णउभव णउ णिब्बाणे दिट्ठिअउ, महासुह बाज्ज ।
10b १४१. जो भावइ मणु भावणे, सो पर साहइ काज्ज ।।
अक्खर-वण्ण-विवज्जिअ, णउ सो विन्दु ण चित्त ।
१४२. एहु सो परममहासुह, णउ फेडिअ णउ खित्त ।।
जिम पडिबिम्ब-सहावता, तिम भाविज्जइ भाव ।
१४३. सुण्ण णिरञ्जण परमपउ, ण तहिं पुण्ण ण(उ) पाव ।।
पञ्च कामगुण भोअणेहिं, णिचिन्त थियेहिं ।
१४४. एब्वें लब्भण[२] परमपउ, किम्बहु बोल्लिअ एहिं ।।
हउँ पुणु जाणमि जेण मणु, च्छाडइ चिन्ता-तात्त ।
१४५. जो दुज्जअ पडिअ मणु, णउ सो बुज्झइ तात्त ।।

(ख) **धेय-धारणादि व्यर्थ—**

धेअ ण धारण[३] मन्त तहिं, णउ तहिं सिव (अ) सत्ति ।

---

१३९ ख. बाग. अक्खर मन्त विव जिअो०।०महासुहो० (पृ० ५६) ।

१३४. तंह द्वैत-रहित निपुण, अनुत्तर बोधि विज्ञान ।।
रस परिभुंज न मूल रस, कमलवनें घन मज्जै ।
१३५. बहु संतापे सकले, चित्तगयंद न रज्जै ।।
आलय-तरु उमडै, हिलै जग स्वच्छन्द ।
१३६. गम्य-अगम्य न जानै, मस्तो-चित्त गयंद ।।
यदि जग पूरित सहजानन्दे । नाचहु गावहु विलसहु चंगे ।
१३७. यदि पुनि लेहु वासना वृन्दे । तंह फुरि बाझहु ये भव-फन्दे ।।
समता कामिनि अनुभ(व) निवास। समरस भोजन अम्बर बास ।
१३८. तंह पुनि कैस न दीसै अन्तर । सम गउ चित्तराग निरंतर ।।

(४) **परमपद**—

(क) **शून्य निरंजन**

शून्य निरंजन परमपद । स्वप्नोपमा स्वभाव ।
१३९. भावहु चित्त स्वभावता, ना नाशीजै जाव ।।
रवि-शशि बन्ध गउ जब्बै । उतरे अरति तले खरै न तब्बै ।
१४०. देखहु रवि परित बुद्धविज्ञाना । उतरे अरति तले नाहि मोक्षरणा ।।
ना भव ना निर्वाणे, दृष्टउ महासुख बाज ।
१४१. जो भावै मन भावने, सो पर साधै काज ।।
अक्षर-वर्ण-विवर्जित, ना सो विंदु न चित्त ।
१४२. एहु सो परम महासुख, ना फैलिय ना क्षिप्त ।।
जिमि प्रतिबिंब स्वभावता, तिमि भावीजै भाव ।
१४३. शून्य निरंजन परम पद, ना तहिं पुण्य न पाप ।।
पंच काम-गुण भोजनेहिं, निश्चिन्त स्थितेहि ।
१४४. एवं लहै परमपद, क्या बहु बोलिय एहिं ।।
हौं पुनि जानउ येन मन, छाड़ै चिंता तत्त्व ।
१४५. जो दुर्जय पडिय मन, ना सो बुज्झइ तत्त्व ।।

(ख) **धय-धारणादि व्यर्थ**—

ध्येय न धारण मंत्र तहँ, ना तँह शिव (अरु) शक्ति ।

---

१४०. बाग ।

१४६. लक्खालक्ख विणाहि न्तेहिं, णउ तहिं भाव-पसत्ति ।।
नउ तहिं णिन्दा णउ सिविण, णउ जागर सुसुत्त ।
१४७. भावाभाव-णिबन्दणु[४], णउ तहिं थाक्कअ चित्त ।।
णउ जाइअइ णउ सरइ, णउ अवित्थिण्ण वि होइ ।
१४८. णउ करावइ णउ करइ, हेउ विआरह तोवि ।।

(५) परमपद-साधना

11*a* जसु आइ ण[१] आन्त, णउ जाणिअ मज्झ ।
१४९. तसु कहि किज्जइ कहसु मइ, जोईहिं पुज्जा कज्ज ।।
वण्ण-आआर पवाण-रहिअ, अक्खुरु वेउ अणन्त ।
१५०. को पुज्जइ कह पुज्जिअइ , ज । सु आइ ण अन्त ।।
सहि संसरह कहिं तुहु, एत्थ कहिज्जइ तत्त ।
१५१. णउण विआर करन्तहिं, णउ कत्थवि परमात्थ ।।
जिम केलतरु सोहणेहि , णउ पाविज्जइ सारु ।
१५२. तिम भुअ तत्त विआरणें, दीसइ एहु संसारु ।।
बन्द ण दीसइ एत्थु हलें, णउ सो मोक्ख सहाव ।
१५३. बुद्ध संयोग[३] परमपउ, एहु से मोक्ख-सहाव ।।
जेण पसवइ हिअअ पज्जोर, तेण किसेवि एण ।
१५४. सगुण पइसइ तिअस जणु, भावउ चित्त मणेण[४] ।।
णिपुंखो वाणो वाणवासो एत्थ कारणें, किम्पि ण जाणो अणुसरइ ।
१५५. सुण्णहि मज्झे सुण्ण पउ, तहि सन्धाण पइसरइ ।।
सब्ब धम्म जे खसम करीहसि[५] । खसम सहावें चीअ ट्ठवीहसि ।।
१५६. सोवि चीअ अचीअ करीहसि । एवहि सो अणुत्तर गमीहसि ।।
11b णअण दुहहु अणुपम णिबन्धह । णिअ गइ णिअ मणें[६] जइ भिडि बन्धह ।
१५७. सरह भणइ एह दुइ पावहु । तुरिअ दुक्ख मिच्चु णिवारहु ।।
एहु घरें ट्ठिअ महिला मणुसा । एहु ण दीसइ भण सहिं कइसा ।
१५८. पासें पास भमन्ते अच्छह । सरह भणअ तसु घरिणी णेच्छअ ।।
साङ्के खाद्धउ सअल जगु, सङ्का ण केणवि खाद्ध ।

१४६. लक्ष्यालक्ष्य बिना हि तेहि, ना तँह भाव-प्रसक्ति ।।
ना तंह निद्रा ना स्वपन, ना जागर न सुषुप्त ।
१४७. भाव अभाव निर्वधन, ना तँह रहई चित्त ।।
ना जाइअ ना मरै, ना अविच्छिन्नउ होइ ।
१४८. ना करावै ना करै हेतु विचारह मोइ ।।

(५) परमपद-साधना—

जासु ण आदि ण अन्त, ना जानिय मध्यं ।
१४९. तासु कहा कीजै कहहु मैं, योगि हि पूजा काज ।।
वर्ण आचार प्रमाण रहित, अक्षर वेद अनन्त ।
१५०. को पूजइ कंह पूजियइ, जासु आदि न अन्त ।।
सखि संसारहि कंह तुहुं, एहि कहीजै तत्त्व ।
१५१. निपुणे विचार करन्तहिं, ना कतहुं परमार्थ ।।
जिमि केलातरु शोभनेहि, ना पावीजै सार ।
१५२. तिमि भूत-तत्त्व विचारणे, दीसइ एहु संसार ।।
वन्ध न दीसे एहुं री, ना सो मोक्ष स्वभाव ।
१५३. बुद्ध संयोग परमपद, एहु सो मोक्ष स्वभाव ।।
जेहिते न प्रसवै हृदय प्रज्योत, तेहिते कैसे भी येन—।—
१५४. सगुण पइसै त्रिदशजन, भावउ चित्त मनेन ।।
निपुंख वाण वाणवास एह कारणे किमपि न जानो अनुसरै ।
१५५. शून्य मध्ये शून्य पद, तँह संधान पइसरै ।।
सर्व धर्म जे ख-सम करीअसि । ख-सम स्वभावे चित्त स्थपीयसि ।
१५६. सोपि चित्त अचित्त करीअसि । एवं सो अनुत्तर जाइहसि ।।
नयन दोउ अनुपम निबंधह। निज गति निज मने यदि भिडि बंधह ।
१५७. सरह भनै एहु दुहु पावहु । तुरीय दुःख मृत्यु-निवारहु ।।
एहि घरे स्थित महिला-मनुषा । एहु न दीसइ भन सखि कैसा ।।
१५८. पासे पास भ्रमरसो आछै । सरह भनै तासु घरनी न इच्छै ।।
शंकहिं खायेउ सकल जग, शंका न कोऊ खाउ ।

१५६. जें सङ्का सङ्किअउ, सो परमत्थ वि लद्ध ।।
मल्ल आदि उअत्ति कम्म, जो भावइ उअत्ति ।
१६०. सो णव धम्मिअ बप्पडो, च्छाडहु अलिआ तत्ति ।।
मरण मरन्त पवण तल्लयें गअउ, तिहुअण[3] सहल समाउ ।
१६१. मग-तणें जो पडिहासइ । सरह भणइ सो तत्त ण गवेसइ ।।
तेल्ल-खिच्चडइ अक्खर सारा । भव-णिब्बाण किम्पि ण[4] दूरा ।।
१६२. संसार अणुपलम्भ णिब्बाण । एहु बोह ण धेअ ण धारण ।।
अ-दसण दसण जत्तिवि ताण । तेत्तिवि मात्तम् भव-णिव्वाण ।।
१६३. अ-मुसिआरह तत्तें काल[5] । एहु उएस ण जाणइ बाल ।।
गुञ्जा-रअण मज्झें दीप उजाल । चञ्चल थिर करि पवण णिवार ।।
१६४. जो बढ मूलह सार वि जाणइ । ता की काल-विकाल वि[6] लागगअ ।।
णादह विन्दुह अन्तरें जो, जाणइ तिअ तिअ भेअ ।
१६५. सो परमेसर परमगुरु, उत्तारइ तइलोअ ।।

कृतिरियं सरहपादानां

१५९. जे शंका शंकियउ, सो परमार्थ उ लब्ध ।।
मल्ल आदि उत्पत्ति कर्म, जो भावइ उत्पत्ति ।

१६०. सो ना धार्मिक बापुडो, छाडहु अलीका तत्ति ।।
मरण मरन्त पवन तल्लए गयउ, त्रिभुवने सकल समाय ।

१६१. मनसे जो प्रतिभासै, सरह भनै सो तत्त्व न गवेपै ।।
तेल-खिच्चडइ अक्षर सारा । भव-निर्वाणे किमपि न दूरा ।।

१६२. संसार अनुपलंभ निर्वाण । एहु बोध न ध्येय न धारण ।।
अदर्शन दर्शन जेत्तउ तान । तेत्तउ मात्र है भव-निर्वाण ।

१६३. ना समुझे तत्त्वे काल । एहु उदेस न जानइ बाल ।।
गुंजा रतन मध्ये दीप उजाल । चंचल थिर करि पवन निवार ।।

१६४. जो मूढ़ मूलको सार विजानै । ताहि कि काल-विकालउ लागै ।।
नादहु विन्दुहु अन्तरे, जो जानै सो-सो भेद ।

१६५. सो परमेश्वर परमगुरु, उत्तारै त्रैलोक ।।

यह कृति सरहपाद की (है)।

१(ख). दोहाकोश-गीति

(भोट अनुवाद और मूल)

दोहा.म्जोद्.क्यि. ग्लु

१(ख). दोहा कोश-गीति*

ऽऽम्. द्पल्. ग्श़ोन्. नुर्. ग्युर्. व. ल. फ्यग्. ऽछल्. लो ।

१. 'षट्' दर्शन-खंडन

१. दुग्. स्ग्रुल. ल्त. वडि. स्कल्. मेद्. नि ।
ङ्ग स्. पर. स्क्ये. वो. दम्. प. ल. ।।
स्क्योन्. ग्यि. द्रि. मस्. द्गोद्. पडि. फ्यिर् ।
म्थोङ. व. चम्. ग्यिस्. ऽजिग्स्. पर. ब्योस्. ।।१।।

(१) ब्राह्मण-

२. दे. ञिद्. मि. शेस्. ब्रम्. जे. नि ।
ग्यि. न. रिग्स्. ब्येद्. ग्शि. दग्. ऽदोन्. ।।
स. छु. कु. श. दग्. ब्येद्. दङ ।
ख्यिम्. न. ग्नस्. शिङ. मे. ल. ब्स्रेग् ।।२।।

३. दोन्. मेद्. स्ब्यिन्. स्रेग्. ब्येद्. प. नि ।
दु.बस्. मिग्. ल. ग्नोद्. पर. ब्यस् ।।
द्ब्यु. गु. द्ब्युग्. ग्सुम्. लग्स्. ल्दन्. ग्स्.ग्स् ।
थ. दद्. प ऽङ. ङङ. पस्. ब्स्तन्. प. दग्. ।।३।।

४. छोस्. दङ. छोस्. मिन्. शेस्. पर्. मि. म्ञम्. शिङ. ।
ऽग्रो. ब. नमस्. नि. ग्र्जुन्. प. ञिद्. दु. ऽग्रोल् ।।

---

*स्तन. ऽग्युर, ग्युंद., वि ७० ख ५–७७ क ३. ५. (तेर्. गी ब्लाक-छापे का पाठ) ।
बोद्. स्कद्दु. बो. ह. म्जोद.-क्यि. गलु.

२. ग्शि नहीं, ब्शि होना चाहिए। भोट-अनुवाद और तदनुक्रम से मूल ।

१(ख). दोहाकोश-गीति*

(नमो मंजुश्रियै-कुमारभूताय)

१. षड्दर्शन-खंडन

१. [विषसर्प जिमि अभव्य, निश्चय (ह) सत्पुरुष को।

दोष-गंधमें हंसने को, देखने मात्र से भय करै]

(१) ब्राह्मण –

२. बह्मणेहि म जानन्त हि भेउ। एवइ पढिअउ ए चउव्वेउ॥

मट्टी (पाणि कुस लइ पढन्ते। घरहिं बइसी) अग्गि हुणन्तें॥१॥

३. कज्जे विरहिअ हुअवह होमें। अक्खि डहाविअ कडुएँ धूमें॥

एकदण्डी त्रिदण्डी भअवँ वेसें। विणुआ होइअइ हंस उएसें॥२॥

४. मिच्छेंहि जग वाहिअ भुल्ले। धम्माधम्म ण जाणिअ तुल्ले॥

---

*डाक्टर प्रबोधचंद्र बागची (बाग.) द्वारा सम्पादित 'दोहाकोश' का पाठ (Calcutta Sanskrit Series, 1938)। ब्रेकेट [ ] में स. स्वय. पाठ या हमारा पुनरनुवाद और ( ) डाक्टर बागची संपादित अनुवाद है।

२. म. म. हरप्रसाद शास्त्री (हर.) 'जाणन्त ही भेउ', 'अग्नि हुणन्त।

(२) **पाशुपत**—

ए. रि. थल्. बस्. लुस्. ल. ब्युग्स्. नस्. सु ।

71a म्गो. ल. रल्. पऽि. खुर्. बु. खुर्. बर्. ब्येद. ॥४॥

५. ख्यिम्. दु. मर्. मे. ब्तङ. नस्. ग्नस् ।

म्छम्स्. सु. ऽदुग्. नस्. द्रिल्. बु. ऽख्रोल्. ॥

स्क्यिल्. क्रुङ. ब्चस्. नस्. मिग्. ब्चुम्स्. ते ।

र्न. बर्. शुब्. शुब्. स्क्ये.बो. स्लु. बर्. ब्येद् ॥५॥

६. ख्यो. मेद्. स्क. मेद्. ऽदि. ऽद्र. ग्शन्. ल. स्तोन् ।

द्वङ. र्नम्स्. ब्स्कुर्. [१]शिङ. ब्ल. मऽि. योन्. र्नम्स्. लेन् ॥

(३) **जैन**—

सोन्. मो. रिङ. शिङ. लुस्. ल. द्रि. मस्. ग्योग्स् ।

गोस्. दङ. ब्रल्. शिङ. स्क. नि.ब्बल्. बर्. ब्येद् ॥६॥

७. नम्. म्खऽि. यिद्. चन्. ग्नोद्. ब्येद्. लम्. गिय. ग्स्ुग्स् ।

थर्. पाऽि. छेद्. दु. ब्दग्. ञिद्. ऽग्रो. ब्येद्. स्लु ॥

ग्चेर्. बुस्. गल्. ते. ग्रोल्. ऽग्युर. न ।

ख्यि. दङ. व.[२] सोग्स्. चिस्. मि. ग्रोल् ॥७॥

८. स्पु. ब्तोग्स्.पस्. नि. ग्रोल्. ऽग्युर्. न ।

बुद्. मेद्. स्पु. ब्तोग्स्. ग्रोल्. बर्. ऽग्युर. ॥

म्जुग्स्. स्पु. ब्स्लङ. बस्. ग्रोल्. ऽग्युर्. न ।

र्म. ब्यग्. सोग्स्. ग्रोल्. बर्. ऽग्युर ॥८॥

९. लङस्. ते. स. बस्. ग्रोल्. ऽग्युर्. न. ।

र्त. दङ. ग्लङ. पो. चि. फ्यिर. मिन् ॥

म्दऽ. ब्स्मुन्. न. रे. नम्. म्खऽि. यिद्. चन्. ल ।

थर्. प. नम्. यङ. योद्. प. म. यिन्. स्रे्. ॥९॥

१०. ब्दे. वऽि. दे. ञिद्. दङ्.नि. ब्रल्. ऽग्युर्. शिङ ।

लुस्. क्यि. द्कऽ. थुब्. ऽबऽ. शिग्. चम्. ल्दन्. पस् ॥

(२) पाशुपत--

अइरिअँहिं उद्दूलिअ च्छारें। सीससु वाहिअ ये जडभारें ॥३॥

५. घरही वइसी दीवा जाली। कोणहिं बइसी घण्टा चाली ॥

अक्खि णिवेसी आसण बन्धी। कण्णेंहिं खुसखुसाइ जण धन्धी ॥४॥

६. रण्डी-मुण्डी अण्णवि वेसें। दिक्खिज्जइ दक्खिण उद्देसें ॥

(३) जैन—

दीहणक्ख जइ मलिणें वेसें। अप्पण वाहिअ मोक्ख उवेसें ॥५॥

७. खबणेंहिं जाण विडंबिअ बेसें। णग्गल होइ उपाडिअ केसें ॥

जइ णग्गाविअ होइ मुत्ति ता सुणह सिआलह ॥६॥

८ लोमुपाडणें अत्थि सिद्धि, ता जुवइ णिअम्बह ।

पिच्छी-गहणे दिट्ठ मोक्ख, (ता मोरह चमरह) ॥७॥

९. उञ्छे-भोअणें होइ जाण, ता करिह तुरङ्गह ॥

सरह भणइ खवणाण मोक्ख, महु किम्पि न भासइ ॥८॥

१०. तत्तरहिअ काआ ण ताव, पर केवल साहइ ॥

(४) **बौद्ध—**

द्गे. छुल्. द्गे. स्लोङ. ग्नस्. बतन्. श्स्. ब्य. वस् ।
बन्दे. नम्स्. नि. दे. ल्तर्. रब्. ब्युङ. नस् ।।१०।।

११. ख. चिग्. म्दो. स्दे. छद्. पर्. ब्येद्. चिग्. ऽजुग् ।
ल. ल. रोग्. चिग्. सेम्स्. क्यि. छुल्. ऽजिन्. म्योङ ।।
ख. चिग्. थेग्. छेन्. दे. ल. ग्युंग्. ब्येद्. चिङ ।
दे. नि. गशुङ. लुग्स्. छद्. मऽि. ब्स्तन्. चोस्. यिन् ।।११।।

१२. ग्शन, थङ. द्क्यिल. ऽखोर. ऽखोर्. लो. म. लुस. ब्स्ग्रोम ।
ल. ल. नम्. म्खऽि. खम्स्. (सु) र्तोग्. पर्. स्नङ. ।।
ल्हन्. चिग्. ब्शि. पऽि. दोन्. छद्. प. ल. शुग्स् ।
ग्शन्. यङ. स्तोङ. ञिद्. ल्दन्. पर्. ब्येद्. प. दे ।।१२।।

१३. फल्. छेर्. मि. म्थुन्. ऽफ्योग्स्. ल. शुग्स्. प. यिन् ।।
ल्हन्. चिग्स्. स्क्येस्. ब्रल्. ग्शन्. गङ. गिस् ।
म्य. ङन्.ऽदस्. गङ. स्गोम्. ब्येद्. प. ।
दे. दग्. ऽगस्. क्यङ्. दोन्. दम्.नि. ।।
चिग्. सोग्स्. ग्रुब्. पर्. मि. ऽग्युर्. रो ।।१३।।

१४. गङ. शिग्. गङ. ल. मोस्. पर्. ग्युर्. प. देस् ।
ब्सम्. ग्तन्. ग्नस्. पस्. थर्. प. थोब्. बम्. चि ।
मर्. मे. चि. द्गोस्. ल्ह. ब्शोस्. दे. चि. द्गोस्.
दे. ल. चि. ब्य्. ग्सङ. स्ङग्स्. ब्स्तन्. चि. शिग्स्. द्गोस् । ।।१४।।

१५. ऽबब्. स्तेग्स्. ऽग्रो. दङ. द्कऽऽथुब्. मि. द्गोस्. ते ।
छु. ल. शुग्स्. पस्. थर्. ब. थोब्., बम्. चि ।

२. करुणा-सहित भावना

स्ञिङ्. जें. दङ. ब्रल्. स्तोङ. प. ञिद्. शुग्स्. गङ ।।
देस्. नि. लम्. म्छोग्. ञेद्. प . म. यिन्. ते ।।१५।।

१६. ऽोन्. ते. स्ञिङ. जें. ऽबऽ. शिग्. ब्स्गोम्स्. न. यङ ।।
ऽखोर्. ब. ऽदिर्. ग्नस्. थर्. प. थोब्. मि. ऽग्युर् ।

(४) बौद्ध—

चेल्लु भिक्खु जे त्थविर-उएसें। वन्देहिअ पव्वज्जिउ वेसें ।।९।।

११. कोइ सुत्तन्त वक्खाण वइट्ठो, कोवि चिण्ते कर सोसइ दिट्ठो

अण्ण तहि महजाणहिं धा (वइ)। [ग्रंथ प्रमाण शास्त्र हो सोइ ।।१०।।

१२. अगरेमंडल चक्र नव भावैं। अन्ये आकाशधातु समुझि भासे ।।११।।

अन्य चतुर्थ अर्थ छेदि बैठे। अन्ये शून्यवान् सो करै ।।

१३. बहु प्रतिकूल विपक्ष में बैठे।] सहज च्छाडी णिव्वाणेहिँ धाविउ ।।

णउ परमत्थ एक्कवि साहिउ। एक्कवि सिद्धि नहिं होइ ।।१२।।

१४. जो जसु जेण होइ संतुट्ठो। मोक्ख कि लब्भइ झाण-पविट्ठो ।।

किन्तहँ दीवें किन्तह णेविजज्जें। किन्तह किज्जइ मन्तह सेज्जे ।।१३।।

१५. किन्तह तित्थ तपोबन जाइ। मोक्ख कि लब्भइ पाणी ह्नाइ ।।

२. करुणा-सहित भावना

करुण-रहिअ ज्जो सुण्णहिं लग्गा। णउ सो पावइ उत्तिम मग्गा ।।१४।।

१६. अहवा करुणा केवल साहअ। सो जम्मन्तरें मोक्ख ण पावअ ।।

---

११. कोइह चिन्ता (हर.)।

१५. स.स्वय. तालपत्र–१

गङ. यङ. गुञिस्. पो. स्व्योर्. बर्. नुस्. प. देस्
ऽखोर्. बर्. मि. ग्नस्. म्य.ङन्.ऽदस्. मि. ग्नस् ।।१६।।

१७. क्ये. लगुस्. गङ. स्म्रस्. बृज्ुन्. शिङ् लोग्. प. दे. बोर्. ल ।।
गङ. ल. शेन्. प. योद्. प. दे. यङ.म्थोङ. ।
र्तोगुस्. पर्. ग्युर्. न. थम्स्. चद्. दे.यिन्. ते ।
दे. ल. गृशन्. प. सुस्. क्यङ् शेस्. मि.ऽग्युर् ।।१७।।

१८. क्लोग्. प. दे.यिन्. ऽजिन्. दङ. स्गोम्. प. दे. यिन्. ते ।
ब्स्तन्. ब्चोस्. स्ञिङ्. ल. ऽछद्. पऽङ. दे. यिन्. नो ।।
दे. मि. म्छोन्. पऽि. ल्त. बु. योद. मिन्. ते ।
ऽोन्. क्यङ. ग्चिग्. बु. ब्ल. मऽि. शल्. ल. स्तोस्. प. यिन् ।।१८।।

१९. ब्ल.मऽि. स्म्रस्. प. गङ. गि. स्ञिङ. शुगस्. प. ।
लग्. पऽि. म्थिल. दु. ग्नस्. पऽि. ग्तेर्. म्थोङ. ऽद्र ।
ग्ञुग्. मऽि. रङ. ब्शिन्. ब्यिस्. पस्. म. म्थोङ. बर् ।
ऽख्रुल्. पस्. ब्यिस्. प. ब्स्लुस्. शेस्. मृदऽ. ब्स्मुन्. स्म्र ।।१९।।

२०. ब्सम्. ग्तन्. मेद्. चिङ. रब्. तु.[3] ऽब्युङ. ब. मेद् ।।
ख्यिम्. न. ग्नस्. शिङ्.छुङ्. म.दग्. दङ. ल्हन्. चिगं. तु ।
गङ. शिग्. युल्. गिय. द्गऽ.बस्. ब्चिङस्.लस्. मि. ग्रोल्. न
मृदऽ. ब्स्मुन्. द. नि. दे. ञिद्. शेस्. प. यिन्. शेस्. स्म्र । ।।२०।।

२१. गल्. ते. म्ङोन्. दु. ग्युर्. न. ब्सम् ग्तन्. चि ।।
गल्. ते. क्लोग्. तु. ग्यर्. न. मुन्. प. ऽजल् ।
ल्हन्.चिग्.[4] क्येस्.पऽि. रङ. ब्शिन्. दे. ञिद्. नि ।।
द्ङोस्. दङ. द्ङोस्.पो.मेद्.प. म. यिन्. ते । ।।२१।।

२२. मृदऽ.ब्स्मुन्. ऽो. दोङ. र्तग्. तु. ऽबोद्. पर्. ब्येद् ।
गङ. शिग्. ब्लङस्. नस्. स्क्ये. शिग्. ग्नस्. ग्युर्. प ।
दे. ञिद्. ब्लङस्. नस्. ब्दे. छेन्. म्छोग्. ग्रुब्. चेस् ।।
स्कद्. ग्सङ. म्थोन्. पोस्. मृदऽ. ब्स्मुन्. स्म्र. ब्येद्. क्यङ ।
ब्योल्. सोङ[5] ऽजिग्. र्तेन्. मि. ो. जि. ल्तर्. ब्य ।।२२।।

जइ पुणु वेण्णवि जो उण साक्कअ। णउ भव णउ णिव्वाणें थाक्कअ ॥१५॥

१७. चक्कड्डइ रे आलीका बन्धा। सो मुञ्चहु जो अच्छहु धन्धा ॥

तसु परिआणें अण्ण ण कोइ। अवरें गणणें सव्ववि सोइ ॥१६॥

१८. सोवि पढिज्जइ सोवि गुणिज्जइ। सत्थ-पुराणें वक्खाणिज्जइ ॥

नाहिं सो दिट्ठि जो ताउ न लक्खइ। एक्के वर-(गुरुपाअ पेक्खइ) ॥१८॥

१९. जइ गुरु बुत्तउ हिअअ पइसइ। णिच्चिअ हत्थे ठविअ उ दीसइ ॥

सरह भणइ जग वाहिअ आलें। णिअ सहाव णउ लक्खिउ बालें ॥१९॥

२०. झाणहीण पव्वज्ज रहिअउ। घरहि वसंते भज्जे सहिअउ ॥

जइ भिडि विसअ रमन्त ण मुञ्चइ। (सरह भणइ) परिआण कि मुञ्चइ ॥२०॥

२१. जइ पच्चक्ख कि झाणें कीअअ। जइ परोक्ख अन्धार म धीअअ ॥

सरहें (णित्त) कड्ढिउ राव। सहज सहाव ण भावाभाव ॥२१॥

२२. जल्लइ मरइ उवज्जइ बज्झइ। तल्लइ परममहासुह सिज्झइ ॥

(सरहें) गहण गुहिर भास कहिअ। पसु-लोअ निव्बोह जिम रहिअ ॥२२॥

२३. ब्सम्. ग्तन्. ब्रल्. बस्. चि. शिग्. ब्सम्. ब्यर्. योद् ।
ब्र्जोद्. दु. मेद्. गङ. जि.ल्तर्. ब्शद्. दु. योद् ।।
स्निद्. पऽि. फ्यग्. ग्र्यस्. ऽग्रो. ब. म. लुस्. ब्स्लुस् ।
रङ. ब्शिन्. ग्ञुग्. म. सुस्. क्यङ. ब्लङस्. प. मेद् ।।२३।।

२४. ग्.युद्. मेद्. स्ङग्स्. मेद्. ब्सम्.ब्य. ब्सम्. ग्तन् मेद् ।
दे. कुन् रङ.[६] यिद्. ऽख्रुल्. बर्. ब्येद्. पऽि. ग्र्यु ।
रङ ब्शिन्. दग्. पऽि. सेम्स्. ल. ब्सम्.ग्तन्. दग्. गिस्.मि.ब्स्लद्. दे ।
ब्दग्. गि. दे.ञिद्. ब्दे. ल. ग्नस्. शिङ. ग्दुङ. बर्. म. ब्येद्. चिचग् ।

२५. स. शिङ. थुङ. ल. ग्ञिद्. स्प्रोद्. क्यिस्. द्गऽ. शिङ ।
र्तग्. तु.यङ. दङ. यङ. दु. ऽखोर्. लो. ऽगोङस् ।।२५।।

72a. छोस्. ऽदि. ल्त. बुस्. ऽजिग्. र्तेन्. फरोल्. ग्रुब्. ऽग्युर्. ते ।
र्मोङस्. प. ऽजिग्. र्तेन्. म्गोन्. पोर्. र्दोग्. पस्. म्नन्. नस्. सोङ ।।२५।।

२६. गङ. दु. र्लुङ. दङ. सेम्स्. नि. मि. ग्र्य. शिङ ।
ञि. म. स्.ल. ब. ऽजुग्. प. मेद्. ऽग्युर्. ब ।।
मि.शेस्.प. दग्. ग्नस्. देर्. गुग्स्. फ्युङ. चिग् ।
म्दऽ.ब्स्मुन्.ग्यिस्.नि.मन्.ङग्.थम्स्.चद्.[१] ब्स्तन्.नस्. सोङ ।। २६।।

२७. ग्ञिस्. सु. मि. ब्य. चिग्. तु. ब्य. ब. स्ते ।
रिग्स्. ल. ब्ये. ब्रग्. दग्. तु. म. ऽब्येद्. पर् ।।
खम्स्. ग्सुम्. म.लुस्. ऽदि.दग्. थम्स्.चद्. नि ।
ऽदोद्. छग्स्. छेन्. पो. ग्चिग्. तु. ख. र्दोग्. स्ग्युर्. चिग्. दङ. ।।२७।।

२८. देर्. नि. थोग्. मेद्. द्बुस्. म्थऽ. मेद् ।
जि. स्निद्. म्य.ङन्.ऽदस्.प. मिन् ।।
ब्दे. ब. छेन्. पो. म्छोग्. ऽदि. ल ।
ब्दग्. दङ. गशन्. दु. योद्. म. यिन् ।।२८।।

२९. म्दुन्. दङ. र्ग्यब्. दङ. फ्योग्स्. ब्चु. रु. ।
गङ. गङ. म्थोङ. ब. दे. दे. ञिद् ।।

२३. झाण-वाहिअ कि कीअइ झाणें। जो अवाअ तहि काहि बखाणें॥

भव मुद्दे सअलहि जग वाहिउ। णिअ-सहाव णउ केणवि साहिउ ॥२३॥

२४. मन्त ण तन्त ण धेअ ण धारण। सव्ववि रे बढ विब्भम-कारण॥

असमल चित्त म झाणे खरडह। सुह अच्छन्त म अप्पणु झगडह ॥२४॥

२५. खाअन्ते (पिवन्ते सुह रमन्ते। णित्त पुणु पुणु चक्कवि भरन्ते॥

अइसे धम्मे सिज्झइ परलोअह। णाह पाअें दलि)उ भुअलोअह ॥२४॥

२६. जहि मण पवण ण सञ्चरइ, रवि ससि णाह पवेस।

तहि बढ चित्त विसाम करु, सरहे कहिअ उएस ॥२५॥

२७. एक्कु करु (मा वेण्णि. करु, मा करु विण्णि विसेस॥

एक्के रंगे रञ्जिआ, तिहुअण सअलासेस ॥२६॥

२८. आइ ण अन्त ण मज्झ णउ, णउ भव णउ णिव्वाण।

एहु सो परममहासुह, णउ पर णउ अप्पाण ॥२७॥

२९. आगें पच्छें दस दिसें, जं जं जोअमि सोवि॥

---

२६. भोट. बढलोकह=मूढलोकहि।

दे. रिङ. ञिद्. दु. म्गोन्. पो. द. ल्तर. ऽखुल्. प. छद् ।
द. नि. सु. ल.ऽङ. द्रि. बर्. मि. व्यऽो ।।२६।।

(१) **परमपद--**

३०. द्बङ. पो. गङ. दु. तुब्. ग्युर्. चिङ[3] ।
रङ. गि. ङो. बोर्. ञम्स्. पर्. ऽग्युर् ।।
ग्रोग्स्. दग्. दे. नि. ल्हन्.चिग्. स्क्येद्. पऽि.लुस् ।
ब्ल. मऽि. शल्. लस्. ग्सल्. बर्. ब्रिस् ।३०।।

३१. यिद्. नि. गर्. ऽछिङ. ल्हुङ. गर्. दे. ङस् ।
स. स्तेङ. ऽदि. न. यन्. लग्. ग्नस् ।।
दे. नि. मोंङस्. पस्. म्छम्स्. सु. योङस्. शेस्. व्य ।
ग्ति. मुग्. गॅ्य. म्छो. ऽछद्. प. गङ.[4] शेस्. प. ।।३१।।

३२. क्ये. हो. ऽदि. नि. रङ. रिग्. यिन्. प. स्ते ।
ऽदि. ल. ख्रुल्. प. म. व्येद्. चिग् ।
द्ङोस्. दङ. द्ङोस्. मेद्. ब्दे. बर्. ग्शेग्स्. पऽि. ऽछिङ. ब. स्ते ।
स्निद्. दङ. म्ञम्. ञिद्. थ. दद्. म. ऽव्येद्. पर् ।।३२।।

३३. ग्ञग्. मऽि. यिद्. नि. ग्चिग्. तु. ग्तोद्. दङ. नल्. व्योर्. प. ।
छ्. ल. छु. ब्शग्. ब्शिन्. दु. शेस्. पर्. व्योस् ।।
ब्सम्. ग्तन्. ब्र्जुन्. पस्. थर्. ब. ञोंद्. मिन्. नो ।
स्ग्यु. लुस्. द्र. ब्स्. जि. ल्तर्. बङ. दु. ऽख्युद्. ।।३३।।

३४. ब्ल. म. दम्. पऽि. ब्कऽ. यिस्. व्दे. बर्. यिद्. छेस्. पर् ।
ङ. यिस्. ब्र्जोद्. दु. योद्. मिन्. शेस्. नि. म्दऽ. ब्स्मुन्. स्म्र ।।
ग्दोङ. नस्. दग्. प. नम्. म्खऽ. रङ. ब्शिन्. ल ।
ब्ल्तस्. शिङ. ब्ल्तस्. शिङ. म्थोङ. ब. ऽगग्.पर्. ऽग्युर् ।।३४।।

३५. दे. ल्त. बु. ञिद्. दुस्. सु. ऽगोस्. पर्. ऽग्युर् ।
ग्ञग्. म. ञिद्. ल. स्क्योन्. ग्यिस. ब्यिस्. प. ब्स्लुस् ।।

72b. स्क्ये. बो. म. लुस्. ल्हग्. पर्. सुन्. ऽब्यिन्.चिङ ।
ङ. गॅ्यल्. स्क्योन्. ग्यिस्. दे. ञिद्. म्छोन्. मि. नुस् ।

एब्वें तु दीढन्तडी, णाह् ण पुच्छमि कोवि] ।।२८।।

१. परमपद--

३०. इन्दिअ जत्थ विलीअ गउ, णट्ठो अप्प सहाव ।

सो हले सहजानन्द तणु, फुड पुच्छह गरुपाव ।।२९।।

३१. जहि मण मरइ, पवणहो, तहि क्खअ जाइ [एहि भूमि अंग बिसै ।

सोई मूढ को एकांते पज्ञेय । तमसागर नशै जो जानै ।।

३२. सअ-सम्विन्ति म करहु रे धन्धा । भावाभाव सुगति रे बन्धा ।।३१।।

३३. णिअ मण मुणहु रे णिउणें जोई । जिम जलहि मिलन्ते सोई ।।

झाणें मोक्ख कि चाहु रे आलें । माआजाल कि लेहु रे कोलें ।।३२।।

३४. वरगुरु-वअणें पड़िज्जहु सच्चें, सरह भणइ मइ कहिअउ (अ)वाचें ।।

पढ़में जइ आआस विसुद्धो । चाहन्ते-चाहन्ते दिट्ठि णिरुद्धो ।।३३।।

३५. ऐसें जइ आआस वि कालो । णिअ मण दोसें ण बुज्झइ बालो ।।३४।।

अहिमाणदोसें ण लक्खिउ तत्त । तेण दूसइ सअल जाणु सो दत्त ।।

---

३१. के स्थान पर भोट में है--

०। ए ही भूमि ऊपर अंग बसई ।

सोइ मूढ ध्यान परिजानै । मोह समुद्र निरोध जो जानै ।

३२. ०सुगति रे बन्धा के बाद भोट में अधिक है "भवसमतुल्य भेद न कर हु", ।

३६. ऽजिग्. तेन्. म. लुस्. ब्सम्. ग्तन्. ग्यिस्. मोंङस्. ऽग्युर् ।
गञाुग्. मऽि. रङ. ब्शिन्. सुस्. क्यङ. म्छोन्. दु. मेद् ।।
सेम्स्. क्यि. चॅ. ब. मिन्. म्छोन्. ते. ।
ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. प. नॅम्. ग्सुम्. गिय् ।।३६।।

३७. गङ. लस्. दे. स्क्येस्. गङ. दु. नुब् ।
गङ. दु. ग्नस्. ऽग्युर्. ग्सल्. बर्. मि. शेस्. सो ।।
चॅ. ब. ब्रल्. बऽि. दे. ञाद्. गङ. सेमस्. प ।
ब्ल. मऽि. म. मन्. ङग्. म्थोङ. ब. दे. यि. छोग् ।।३७।।

३८. खग्रो. बऽि. रङ. ब्शिन्. सेम्स्. क्यि. ङो. बो. ञाद्. यिन्. शेस् ।
मोंङस्. नॅम्स्. म्दऽ. ब्स्मुन्. ग्यिस्. स्म्रस्. चे. नि. शेस्. पर्. ब्योस् ।
ग्ञाुग्. मऽि. रङ. ब्शिन्. छिग्. गिस्. मि. ब्र्जोद्. क्यङ ।
स्लोब्. द्पोन्. मन्. ङग्. मिग्. गिस्. म्थोङ. बर्. ऽग्युर् ।।३८।।

३६. छोस्. दङ. छोस्. मिन्. म्ञोस्. नस्. सोस्. प. यिस् ।
ऽदि. ल. ञोस्. प. र्दुल्. चम्. योद्. म. लेग्स् ।।
ग्ञाुग्. मऽि. यिद्. नि. गङ. छे. स्ब्यङस्. ग्युर्. प ।
दे. छे. ब्ल. मऽि. योन्. तन्. स्ञाङ. ल. ऽजुग्. पर्. ऽग्युर् ।।३६।।

४०. ऽदि. ल्तर्. र्तोग्स्[3]. नस्. म्दऽ. ब्स्मुन्. ग्लु. लेन्. ते ।
स्ङग्स्. दङ. ग्युंद्. नॅम्स्. ग्चिग्. क्यङ. म. म्थोङ. ङो ।।
ऽग्रो. नॅम्स्. लस्. क्यिस्. सो. सोर्. ब्चिङस्. ग्युर्. ते ।
लस्. लस्. ग्रोल्. न. यिद्. नि. थर्. प. यिन् ।।४०।।

४१. रङ. ग्युंद्. ग्रोल्. न. ङेस्. पर्. ग्शन्. मेद्. दे ।
म्छोग्. गि. म्य. ङन्. ऽदस्.प. थोब्. पर्. ऽग्युर्[4] ।।

चित्त

सेम्स्. ञिद्. ग्चिग्. पु. कुन्. ग्यि. स. बोन्. ते ।
गङ. ल. स्रिद्. दङ. . म्य.ङन्.ऽदस्. फ्रोब्प ।।४१।।

---

३६. स. स्क्य. के अनुसार ञिद् नहीं, यिन् चाहिए ।

३६. झाणें मोहिअ सअल वि लोअ । णिअ-सहाव णउ लक्खइ कोअ ॥

चित्तह मूल ण लक्खिअउ, सहजें तिण्णवि तत्थ । ।।३५।।

३७. तहिं जीवइ विलअ जाइ, वसिअउ तहि फुड एत्थ

मूल-रहिअ जो चिन्तइ तत्त । गुरु-उवएसें एत्त विअत्त ।।३६ ।।

३८. सरह भणइ बढ जाणहु चंगे । चित्तरूअ संसारह भङ्गे ।।

णिअ-सहाव णउ कहिअउ अण्णें । दीसइ गुरु-उवएसे अप्पणें ।।

३९. णउ तसु दोसश्रो एक्कवि ट्ठाइ । धम्माधम्म सो सोहिअ खाइ ।।३८।।

णिअ-मण सब्बें सोहिअ जब्बें । गुरु-गुण हिअए पइसइ तब्बें ।।

४०. एवँ मणे मुणि सरहें गाहिउ । तन्त मन्त णउ एक्कवि चाहिउ ।।

बज्झइ कम्मेंण जणो, कम्मविमुक्केण होइ मणमोक्खं ।।३९।।

४१. मणमोक्खेण अणूणं, पाविज्जइ परमणिव्वाणं ।।

३. चित्त

चित्तेक सअल बीअं, भव-णिव्वाणावि जस्स विफुरन्ति ।।४०।।

---

४१. स्वसंतान मोक्ष से (७० भोट)।

४२. ऽदोद्. पऽि. ऽब्रस्. बु. स्तेर्. बर्. ब्येद्. प. यि ।
यिद्. ब्शिन्. नोर्. ऽद्रिऽि. सेम्स्. ल. फ्यग्. ऽछल्. लो ।।
सेम्स्. बचिङस्. पस्. नि. ऽछिङस्. ऽग्युर्. ते ।
दे. ञिद्. ग्रोल् न्. थे. छोम्. मेद् ।।४२।।

४३. ब्लुन्. पो. गङ. गिस्. ऽछिङ. ग्युर्. ब ।
म्खस्. नम्स्. दे. यिस्. म्युर्. दु. ग्रोल् ।।
सेम्स्. नि. नम्. म्खऽ. ऽद्र. बर्. ग्सुङ. ब्य. स्ते ।
नम्. म्खऽि. रङ. ब्शिन्. ञिद्. दु. सेम्स्. ग्सुङ. ब्य ।।४३।।

४४. यिद्. दे. यिद्. म. यिन्. पर्. ब्येद्. ऽग्युर्. न ।।
देस्. नि. ब्ल. मेद्. ब्यङ. छुब्.थोब्. पर्. ऽग्युर् ।
म्खस्. ऽद्रर्. ब्यस्. न. लुँङ. नि. नँम्. पर्. ऽछिङ ।
म्ञम्. ञिद्. योङस्. सु. शेस्. पस्. रब्. तु. थिम् ।।४४।।

४५. म्दऽ. बस्मुन्. ग्यिस्. स्म्रस्. नम्. शिग्. नुस्. ल्दन्. न ।
मि. तँग्. ग्यो. ब. म्युर्. दु. स्पोङ. बर्. ऽग्युर् ।।
लुँङ. दङ. मे. दङ. द्बङ. छेन्. ऽगग्स् प. नि ।
ब्दुद्. चिं. ग्युं. बऽि. ऽदुस्. सु. लुँङ. नि.सेम्स्. ल.ऽजुग् ।।४५।।

73a ४६. नम्. शिग्. स्न्योर्. ब्शि. ग्नस्. ग्चिग्. ल. नि. शुग्स. प. न ।
ब्दे. छेन्. म्छोग्. नि. नम्. म्खऽि. खम्स्. सु. मि. शोङ. ङो ।।
ख्यिम्. दङ. ख्यिम्. न. दे. यिस्. ग्तम्. स्म्र. यङ ।
ब्दे. छेन्. ग्नस्. नि. योङस्. सु. शेस्. प. मेद् ।।४६।।

४७. ऽग्रो. कुन्. ब्सम्. पस्. सुन् . ब्यिन्. म्दऽ. ब्स्मुन्.स्म्र ।
ब्सम्. ग्यिस्. मि. ख्यब्. ग्रुब्. प. ऽगऽ. यङ. मेद् ।।
स्रोग्. छग्स्. थम्स्.चद्. कुन्. ल. यङ ।
दे. ञिद्. योद्. दे. तोँग्स्. प. मेद् ।।४७।।

४८. थम्स्. चद्. रो. म्ञम्. रङ. ब्शिन्. पस् ।
बसम्. पस्. ये. शेस्. ब्ल. मेद्. पऽो ।।

---

४४. म्खस् (पंडित) नहीं म्खऽ (खं, आकाश) ठीक होगा ।

४२. तं चिन्तामणिरूअं पणमह इच्छाफलं देति ॥

चित्तें बज्झे बज्झइ मुक्कें मुक्केइ णत्थि सन्देहा ॥४१॥

४३. बज्झन्ति जेण वि जडा लहु परिमुञ्चन्ति तेणवि बुहा ॥

[चित्तहि गगन समान कहीजै। गगन स्वभावहि चित्त कहीज ॥४२॥

४४. सो मन न मन कर दे तो। इससे अनुत्तर बोधि पावै ॥

खसम करे तो पवन विच्छिन्न। समता परिजान से बिलीन ॥४३॥

४५. सरह भनै यदा शक्ति होइ। अनित्य चल तुरंत छोड़ जाइ ॥

पवन अग्नि महासामर्थ्य निरुद्धै। अमृत हेतुकाले पवन चित्ते पइसै ॥४४॥

४६. यदा चारि योग एक स्थाने रक्खे। परम महासुख आकाशह तुम्हें न भरै ॥

[घरें-घरें कहिअअ सोज्झु (सोइ) कहाणो, णउ परिआणिअ महासुह-ठाणो।

४७. सरह भणइ जग चित्तें वाहिउ। सोंवि अचित्त ण केणवि गाहिउ ॥१२८॥]

[सब प्राणी सर्वत्र ही, सोइ है सो ना बूझे।

४८. सब समरस स्वभाव से, समुझि अनुत्तरज्ञान ॥

ख. सङ. दे. रिङ. दे. ब्शिन्. सङ. दङ. ग्शन् ।
दोन्. नॅम्स्. फुन्. सुम्. म्छोग्स्. पर्. स्क्ये. बो. ऽदोद् ॥४८॥

४९. क्ये. हो. ब्शिन्. ब्स्ङस्. स्ञोम्. प. छुस्. ब्कङ. ब ।
ऽजॅग्स्. प. ब्शिन्. दु. ञम्स्. प. म्छोर्. रो ॥
ब्य. ब. ब्येद्. दङ. ब्य. ब. मिन्. ब्येद्. प ।
ङस्. पर्. तॅग्स्. न. ऽछिङ. दङ. ग्रोल्. ब. मेद्.[3] ॥४९॥

५०. यि. गे. मेद्. लस्. ऽछद्. पर्. योद्. ऽदोद्. प ।
गङ. शिग्.नॅल्. ऽब्योर्. ब्ग्य. ल. ऽगऽ. यिस्. मछोन् ॥
ऽजुर्. बुस्. बचिङस्. पऽि.सेम्स्. ऽदि. नि ।
ग्लोद्. न. ग्रोल्. बर्. थे.छोम्. मेद् ॥५०॥

५१. द्ङोस्. पो. गङ. गि. मॉङस. पस्. ऽछिङस् ।
म्खस्. नॅम्स्. दे. यिस्. नॅम्. पर्. ग्रोल्[4] ।

सहज—

ब्चिङस्. प. दग्. नि. फ्योग्स्. वचुर्. ऽग्रो. ब. म्रॅमि् ।
म्थोङ. बर्. ग्युर्. न. मि. ग्यो. बर्तन्. पर्. ग्नस् ॥५१॥

५२. गो. ब्स्लोग्. ङॅ. मो. ल्त.बुर. ब्दग्. गिस्. तॅग्स् ।
बु. ख्येद्. नॅम्स्. क्यङ. रङ. ल.छेर्. ते. ल्तोस् ॥
क्ये. लग्स्. द्बङ. पो. ल्तोस्. शिग्. दङ ।
ऽदि. लस्. ङस्. नि. म. ग्तोग्स्. सो[5] ॥५२॥

५३. लस्. सिन्. प. यि. स्क्येस्. बु. यि ।
द्रुङ. दु. सेम्स्. थग्. ग्चद्. पर्. ब्योस् ॥
र्लुङ. ब्चिङस्. प. ल. रङ. ञिद्. म. सेम्स्. स्क्ये ।
शिङ. गि. नॅल्. ऽब्योर्. स्न. चॅर्. ऽदुग्ग चिग् ॥५३॥

५४. ए. मऽो. म. यिन्. ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. प. म्छोग्. छुग्स्. ब्योस् ।
स्निद्. पऽि. स्न. चॅर्. ऽछिङ. व. यङ. दग्. स्पङ[6] ।
ऽदि. नि. यिद्. ऽदुस्. प. ल. र्लुङ. गि. लॅब्स् ॥
ग्यो. शिङ. ऽफ्यिर्. ल. शिन्. तु. मि. स्नुन्. ऽग्युर् ॥५४॥

कल आज तथा और कल; अर्थ संपत्ति पुरुष चाहै।

४९. रे मुखधारिणी जलपूर्ण, अंजलि छरै जैसे संवेदै ।।

क्रिया करना और न करना, निश्चय जानि बंधनमुक्ति नहीं ।।

५०. निरक्षर से करै इच्छा, सो योगी में विरला लखै ।।

कोने बीच बंधा यह चित्त, सुरक्त मुक्त हो निस्सन्देह ।।

१. बज्झंति जेण जडा परिमुंचन्ति तेण बुधा ।। ।।]

सहज—

बद्धो धावइ दहदिहहि, मुक्को णिच्चल ठाइ ।

५२. एमइ करहा पेक्खु सहि, विहरिअ महुं पडिहाइ ।।४३।।

[अरे इन्द्रिय देखि, इससे मैंने नहीं बूझा ।।]

५३. [कर्म से बंधे पुरुष का चित्त आसन्नहि रज्जु तोडै ।।]

पवण-रहिअ अप्पाण म चिन्तह। कट्ठजोइ णासग्ग म बंदह ।। ४४।।

५४. अरे बढ सहजे सइ पर सज्जह । मा भवगन्थबन्ध पडिच्चज्जह

एहु मण मेल्लह (?मेल्ल) पवण तुरङ्ग सुचञ्चल ।

सहज सहावे सो वसइ णिच्चल ।।४५।।

५१-५२. स. स्वय. दोहा ९२, ९३ में कुछ अन्तर है।

५५. ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. पऽि. रङ. ब्शिन्. र्तोग्स्. ग्युर. न ।
दे: यिस्. ब्दग्. ञिद्. ब्र्तेन्. पर्. ग्युर्. प. यिन् ।।
73b गङ. छे यिद्. नि. ञो. बर्. ऽगग्स्. ग्युर्. न ।
लुस्. क्यि. ऽछिङ. ब. र्नम्. पर्. ऽछद्. पर्. ऽग्युर ।।५५।।

५६. गङ. छे. ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. दङ. रो. म्ञम्. प ।
दे. छे. द्मन्. पऽि. रिग्स्. दङ. ब्रम्. से. मेद् ।।

४. यहीं सब कुछ

(१) देह ही तीर्थ—

ऽदि. नि. र्ल. ब ग्यं. म्छो. ञिद्. दङ. नि ।
ऽदि. नि. गङ. गऽि. ग्यं. म्छो. ञिद्. दङ. नि ।।५६।।

५७. बा. रा. ण. सी. प्र. य. घ. य. ति ।
ऽदि. नि. र्ल. ब ग्सल्. त्थेद्. ञिद् ।।
शिङ. कुन्. ग्नस्. दङ. ञे. बऽि. ग्नस्. सोग्स्. प ।
फ्यिन्. ते. ब्ल्तस्. पऽि. र्तोग्स्. प. गङ. स्म्र. ब ।।५७।।

५८. लुस्. दङ. ऽद्र. बऽि. मु. ग्नस्. ग्शन्. मेद् ।
द्गे. ब. ङ. यिस्. ङेस्. पर्. यङ् दग्. मथोङ[1] ।।
दब्. ल्दन्. पद्मऽि. स्तोङ. पो. गे. सर्. ग्यि. द्बुस्. न ।
शिन्. तु. फ्र.बऽि. र्नल्. म. द्रि. दङ. ख. दोग्. ल्दन् ।।५८।।

५९. स्ये. ग्रग्.[2] ऽोङस्. शिङ. मोंङस्. प. म्य. ङन्. ग्यिस् ।
ग्दुङस्. पऽि. ऽब्रस्. बु. मेद्. पर्. म. त्थेद्. चिग् ।।
गङ. छे. छङस्. प. ख्यब्. ऽजुग्. मिग्. ग्सुम्. दङ ।
ऽजिग्. र्तेन्. म. लुस्. थम्स्. च.द्. ग्शिर्. ग्युर्. प ।।५९।।

६०. रिग्स्. मेद्. दे. ल. म्छोङ. न. लस्. क्यि. यङ ।
म्थऽ. यि. छोग्स्.[3] नि. यङ. दग्. सद्. पर्. ऽग्युर् ।
क्ये. हो. बु. ञोन्. चोंद्. पऽि. रो. नि.
दग्. पर्. यङ. दग्. ग्नस्. शेस् प ।।६०।।

५५. [सहज स्वभाव समझि, सो स्वयं स्थिर होई ।।]

जब्बें मण अत्थमण जाइ, तणु तुटटइ बन्धण ।

५६. तब्बे समरस सहजे वज्जइ, णउ सुद्द ण बम्हण ।।४६।।

४. यहीं सब कुछ

(१) **देह ही तीर्थ—**

एत्थु से सुरसरि जमुणा, एत्थु से गङ्गासाअरु ।

५७ एत्थु पआग वणारसि, एत्थु से चन्द दिवाअरु ।।४७।।

क्खेत्तु पीठ उपपीठ, एत्थु मइँ भमइ परिट्ठओ ।

५८. देहासरिसअ तित्थ, मइँ सुहअण्ण(?सुणेउ)ण दिट्ठओ ।।४८

सण्ड-पुअणिदल-कमल-गन्ध-केसर-वरणालें ।

५९. छड्डहु वेणिम ण करहु सोस, ण लग्गहु बढ आलें ।।४९।।

काम तत्थ खअ जाइ, पुच्छह कुलहीणओ ।

बम्ह बिट्ठु तेलोअ(ण), सअल जगु णिलीणओ ।।५०।।

६०. [तँह अजाति में आश्रम कर्म का भी अंतिम समूह सम्यक् नष्ट होइ ।।]

अरे पुत्त बोज्झु रस, रसण सुसण्ठिअ अवेज्ज ।

---

५६. गध–पृ० ५८ के स. स्वय पाठ से थोड़ा अंतर है ।

६१. बक्खाण पढन्तेहि, जगहि ण जाणिउ सोज्झ ।।५१।।

बुद्धि विणासइ मण मरइ, जहि (तुट्टइ) अहिमाण ।

६३. सो माआमअ परम कलु, तहि किम् बज्झइ झाण ।।५३।।

भवहि उअज्जइ खअहि णिवज्जइ । भाव-रहिअ पुणु कहि उवज्जइ ।

६४. विण्ण-विवज्जिअ जो उवज्जइ । अच्छह सिरिगुरुणाह कहिज्जइ ।।५४।।

(२) **भोग में योग—**

देक्खहु सुणहु परीसहु खाहु । जिग्घहु भमहु वइट्ठ उट्ठाहु ।।

६५. आल-माल व्यवहारें पेल्लह, मण च्छड्डु एक्काकार म चल्लह ।।५५।।

गुरु-उवएसें अमिअ-रसु, धावहि ण पीअउ जेहि ।

६६. बहु सत्थत्थ-मरुत्थलिहिं, तिसिए मरिअउ तेहि ।।५६।।

[ण त्तं वाएं गुरु कहइ, णउ तं बुज्झइ सीस ।

६७. सहज सहावा हले अमिअ रस, कासु कहिज्जइ कीस ।

जह पमाएं विहिवसें, बढ लद्धउ भेड ।।

६८. दे. छे. दोल्. पऽि. ख्यिम्. दु. रोल् ।
ऽोन्. क्यङ. द्रि. मस्. मि. गोस्. सो ।।
गङ. छे. स्लोङ. न. स्रङ. खऽि. खम्. फोर.ग्यिस्. स्प्योद्. दे ।
ब्दग्. नि. र्ग्यल्. पो.यिन्. न. स्लर्. यङ. चि. ब्यर्. योद्. ।।६८।।

६९. द्ब्ये. ब. र्नम्. पर्. स्पङस्. नस्. दे. ञिद्. ग्नस्. प. ल ।
रङ. ब्शिन्. मि. ग्यो. ब्तङ. स्ञोम्स्. ल्हुन्. ग्यिस्. ग्रुब् ।।
म्य. ङन्. ऽदस्. प. ल. ग्नस्. स्रिद्. पर्. म्जेस् ।
नद्. ग्शन्. दग्. ल. स्मन्. ग्शन्. ग्तङ. मि. ब्य ।।६९।।

(३). सहज भावना—

७०. ब्सम्. दङ. बसम्. ब्य. रब्. तु. स्पङस्. नस्. स् ।
जि. ल्तर्. बु. छुङ. छल. दु. ग्नस्. पर्. ब्य ।।
ब्ल. मऽि. लुङ. ल. ब्स्ग्रिम्स्. ते. रब्. ऽबब्. न ।
ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. प. ऽब्युङ. बर्. थे. छोम्. मेद् ।।७०।।

७१. ख. दोग्. योन्. तन्. यि. गे. द्पे. ब्रल्. ब ।
स्म्र. रु. मि. ब्तुङ. दे. नि. ब्दग्. ग्यिन्. म्छोन् ।।
ग्शोन्. नु. म. यि. ब्दे. ब. स्ञिङ. ल. शेन्. प. ब्शिन् ।
द्बङ. फ्युग्. दम्. प. दे. नि. सु. ल. ब्स्तन्. नुस्. सम्[3] ।।७१।।

७२. द्ङोस्. दङ. द्ङोस्. मेद्. योङस्. सु. ब्चद्. प. दङ ।
देर्. नि. ऽग्रो. ब. म. लुस्. रब्. तु. थिम्. पर्. ऽग्युर् ।।
गङ. छे. यिद्. नि. मि. ग्यो. रङ. ग्नस्. ब्र्तन्. प. स्ते ।
दे. छे. ऽखोर्. बऽि. द्ङोस्. पो. लस्. नि. रङ. ग्रोल्. ऽग्युर ।। ७२।।

७३. गङ. छे. ब्दग्. ग्शन्. योङस्. सु. शेस्. मेद्. नि ।
दे. छे. ब्ल.मेद्. लुस्. नि. थोब्. पर्. ऽग्युर् ।।
दे.[4] ल्तर्. ब्स्तन्. प. ञिद्. लस्. ङेस्. पर्. म. ऽखुल्. पर् ।
रङ.गिस्. रङ. ल. लेग्स्. पर्. शेस्. पर्. ब्यस्. नस्. नि ।।७३।।

जइ चंडालघरे भुंजइ, तअवि ण लग्गइ लेउ ।।

६८. [जब पल सरावे भिक्षा मांगे, म राजा हूं (कहेत)तो क्या कीजिये ।।

भेद छाड़ि सोई रहै, अचल स्वभाव समापत्ति।

६९. निर्वाणे वसि भवे सुंदर, रोग अन्य औषधि अन्य न दीजै ।।]

(३) **सहज भावना--**

७० चित्ताचित्त वि परिहरहु, तिम अच्छहु जिम बालु।

गुरु-वअणें दिढ भत्ति करु, होइअइ सहज उलालु ।।५७।।

७१. अक्खर-वण्णो पर(म)गुण-रहिओ। भणइ ण जाणइ ये मइ कहिअओ ।।

सो परमेसरु कासु कहिज्जइ । सुरअकुमारी जिम पडि(व)ज्जइ ।।५८।।

७२. भावाभावें जो परिहीणो । तहिं जग सअलासेस विलीणो ।

जब्बें तहिं मण णिच्चल थक्कइ । तब्बें भवसंसारह मुक्कइ ।।५९।।

७३. जाव ण अप्पहिं पर परिआणसि ।ताव कि देहाणुत्तर पावसि ।।

ए मइ कहिओ भन्ति ण कब्बा । अप्पहि अप्पा बुज्झसि तब्बा ।।६०।।

७४. ङुल्. मिन्. ङुल्. ब्रल्. म. यिन्. सेमस्. क्यङ. मिन् ।
दङोस्. पो. दे. दग्. ग्दोद्. नस्. श्न्. प. मेद् ॥
म्दऽ. स्मुन्. गियस्. स्म्रस्. दे. चम्. शिग्. तु. सद् ।
क्ये. हो. म. लुस्. द्रि. मेद्. दोन्. दम्. शेस्. पर्. [५] ब्योस् ॥७४॥
७५. ख्यिम्. न. ग्नस्. प. फ्यि. रोल्. सोङ. नस्. छोल् ।
ख्यिम्. ब्दग्. म्थोङ. नस्. ख्यिम्. छेस्. दग्. ल. द्रि. ॥

(४) धेय-धारणादि व्यर्थ--

म्दऽ. स्मुन्. गियस्. स्म्रस्. ब्दग्. ञिद्. शेस्. पर्. ब्योस् ।
ब्लुन्. पोस्. ब्सम्. ग्तन्. ब्सम्. ब्य.ब्स्लस्. ब्जोद्. मिन् ॥७५॥
७६. गङ. छे. ब्ल. मस्. ब्स्तन्. चिङ. थमस्. चद्. शेस्. व्यस्. क्यङ ॥
ब्दग्. [६] गिस्. योङस्. सु. ब्तंग्स्. पस्. थर्. प. थोब्. बम्. चि ।
युल्. नंम्स्. ब्ग्रोद्. चिङ. गुदुङ. बस्. ञोन्. ब्यस्. क्यङ ।
ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. प. मि. ञोंद्. स्दिग्. पस्. ऽजिन् ॥७६॥
७७. युल्. नंम्स्. ब्स्तेन्. पस्. युल्. गियस्. मि. गोस्. सो ।
उत्पल. ऽदब. म. छु. यिस्. म. रेग्. ब्शिन्
74b गङ. ल्तर्. चं.ब. नंल्. ऽब्योर्. [७] स्क्यब्स्. सु. ऽग्रो ।
दुग्. गि. स्ङग्स्. चन्. दुग्. गिस्. ग. ल. छुग्स् ॥७७ ॥
७८. ल्ह. ल. म्छोद्. प. ख्रि. फग्. ब्यिन्. नस्. क्यङ ।
ब्दग्. ञिद्. दे. यिस्. ऽछिङ. ऽग्युर्. चि. शिग. ब्य ।
दे. ऽद्रस्. ऽखोर्. ब. दि. नि. ऽछद्. मिन्. ते ।
ग्ञुग्. मऽि. रङ. ब्शिन्. म. र्तोग्स्. गंल्. मि. नुस् ॥७८॥
७९. मिग्. नि. मि. ऽजुम्स्. [१] सेम्स्. क्यङ. मि. ऽगोग्. दङ ।
लुंङ. ऽगोग्. प. नि. द्पल्. ल्दन्. ब्ल.मस्. र्तोग्स्
गङ. छे. लुंङ. ग्युंद्. दे. नि. मि. ग्यो. स्ते ।
छिङ. बऽि. छे. न. नंल्. ब्योर्. पस्. चि. ब्य ॥७९॥
८०. जि– स्त्रिद्. द्बङ. पो. युल्. गिय. ग्रोङ. ल. ल्हुङ ।
दे. स्त्रिद्. रङ. ञिद्. लस्. मेद. रब्. तु. ग्यंस् ॥

७४. णउ अणु णउ परमाणु विचिन्तजे । अणवर भावहि फुरइ सुरत्तजे ।।
भणइ सरह भन्ति एतवि मत्तजे । अरे णिक्कोली बुज्झह परमत्थजे।।६१।।

७५. घरें अच्छइ बाहिरे पुच्छइ । पइ देक्खइ पडिवेसी पुच्छइ ।।

(४) धेय-धारणादि व्यर्थ—
सरह भणइ बढ जाणउ अप्पा । णउ सो धेअ ण धारण जप्पा ।।६२।।

६. जइ गुरु कहइ कि सव्ववि जाणी । मोक्ख कि लब्भइ सअल विणु जाणी ।।
देस भमइ हव्वासें लइजे । सहज ण बुज्झइ पापें गाहिजे ।।६३।।

७७. विसअ रमन्त ण विसएँ विलिप्पइ । उअर हरइ ण पाणी छिप्पइ ।।
एमइ जोई मूल सरन्तो । विसहि ण वाहइ विसअ रमन्तो ।।६४।।

७८. देव पिज्जइ लक्खवि दीसइ । अप्पणु मारिइ स कि करिअइ ।।
तोवि ण तुट्टइ एहु संसार । विणु आआसें णाहि णिसार ।।६५।।

७९. अणिमिसलोअण चित्त णिरोहे । पवण णिरुहइ सिरिगुरु-बोहेँ ।।
पवण वहइ सो णिच्चलु जब्बें । जोई कालु करइ कि रे तब्बेँ ।।६६।।

८०. जाउ ण इन्दिअ-विसअ-गाम । तावइ विफुरइ अकाम ।।

ब्येद्. चग्. द. ल्तर्. चि. ब्येद्. सम्. दङ. क्ये ।
दे. नि. शिन्. तु. द्कऽ. बऽि. द्गोङस्. प. ऽजुग् ।।।८०।।

८१. गङ. शिग्.गङ. ल. ग्नस्. प. नि ।
दे. नि. दे. रु. मि. म्थोङ. स्ते ।।
म्खस्. प. थम्स्. चद्. ब्स्तन्. ब्चोस्. ऽछद्. प. यिस् ।
लुस्. ल. सङस्. ग्र्यस्. योद्. पर्. म. र्तोग्स्. सो ।।८१।।

८२. ग्लङ. छेन्. लोब्स्. नस्. सेम्स्.[3] छग्स्. छुद्. पस्. न ।
देर्. मि. ऽग्रो. ऽोङ. छद्. नस्. ङल्. ब. स्ते
दि. ल्तर. र्तोग्स्. न. गङ. दु ऽङ. द्रि. स. मेद् ।
म्खस्. प. ङो. छ. मेद्. पस्. दे. म. र्तोग्स् ।।८२।।

८३. ग्सोन्. प. गङ. शिग्. र्मम्. पर्. म. ग्युर् . प ।
दे. नि. र्गस्. शिङ. ऽछि. बर्. ऽग्युर्. रम्. चि
ब्ल. मस्. ब्स्तन्. प. द्रि. मेद्. ब्लो.[4] ग्रोस्. नि ।
दे. ञिद्. ग्तेर्. यिन्. ग्शन्. प. गङ. शिग्. लो ।।८३।।

८४. युल्. ञिद्. र्नम्. पर्. दग्. स्ते. ब्स्तन्. ब्य. मिन् ।
स्तोङ. ब. ऽबऽ. शिग्. गिस्. नि. स्प्यद्. पर्. ब्य ।
जि. ल्तर्. ग्सिङस्. लस्. ऽफुर्. बऽि. ब्य. रोग्. ब्शिन् ।
स्कोर्. शिङ. स्कोर्. शिङ् स्लर्. यङ. दे. रु. ऽबब् ।।८४।।

८५. थग्. प. नग्. पोऽि. दुग्. स्ब्रुल्. ब्शिन्[5] ।
म्थोङ. ब. चम्. ग्यिस्. स्ङङ. बर्. ऽग्युर् ।।
ग्रोग्स्. दग् स्क्ये. बो. दम्. प. नि ।
युल्. ग्ञिस्. स्क्योन्: ग्यिस्. ब्चिङ. बर्. ऽग्युर् ।।८५।।

५. परमपद साधना

(१) **इंद्रिय-संयम**—

८६. युल्. ल. श्रेन्. पस्. ऽछिङ. बर्. म. ब्येद. चिङ ।
क्ये. हो. मोङस्. प. म्दऽ. ब्स्मुन्. ग्यिस. स्म्रस्. प ।।
ञ. दङ. फ्यि. लेब्. ग्लङ. छेन्. बुङ. व. दङ ।
ऽदि.[6] नि. रि. द्गस्. ब्शिन्. दु. ब्य. बर्. ब्योस् ।।८६।।

[अरे अब तू क्या कना सोचै । यह अति कठिन ध्यान प्रवेश ।।]

८१. अइसें विसम सन्धि को पइसइ । जो जहि अत्थि ण जाव ण दीसइ ।।६७।।

पण्डिअ सअल सत्थ वक्खाणइ । देहहिं बुद्ध वसन्त ण जाणइ ।।

८२. गज सिखि चित्ते राग दृढ़ावै ।।

अमणागमण ण तेण बिखण्डिअ। तोवि णिलज्ज भणइ हउँ पण्डिअ ।।६८।।

८३. जीवन्तह जो णउ जरइ, सो अजरामर होइ ।

गुरु-उवएसें विमल-मइ, सो पर धण्णो कोइ ।।६९।।

८४. विसअ-विसुद्धें णउ रमइ, केवल सुण्ण चरेइ ।

उड्डी बोहिअ काउ जिम, पलुटिअ तहवि पडेइ ।।७०।।

८५. काल रज्जु में सर्प जिमि, देखने मात्र भय उपजावै ।

सखे, सुजन जन हे, विषय दोष से बंधै ।।]

५. परमपद साधना

(१) **इन्द्रिय-संयम—**

८६. विसआसत्ति म बन्ध करु, अरे बढ़ सरहें वुत्त ।

मीण-पअङ्गम-करि-भमर, पेक्खह हरिणह जुत्त ।।७१।।

८७. गङ. शिग्. सेम्स्. लस्. नंम्. ऽफ्रोस्. प ।
दे. स्निद्. म्गोन्. पोऽि. रङ. ब्शिन्. ते ।
छु. दङ्. लंब्स्. दग्. ग्शन्. यिन्.नम् ।
स्निद्. दङ. म्ञाम्. शिङ. नम्. म्खऽि. रङ. ब्शिन्. नो ।।८७।।

८८. गङ. शिग्. ब्स्तन्. ते. गङ. थोस्. प ।
75*a* द्गोङस्. प. गङ.[१] यिन्. दम्. पर्. स्क्योल्. ब. न ।।
ञि. स्र्. ल्कुग्स्. प. स. यि. र्दुल. ब्शिन्. ब्लंग् ।
स्ञिङ. ग. ञिद्. दु. नुब्. पर्. ग्युर. प. यिन् ।।८८।।

८९. जि.ल्तर्. छु.ल. छु. बशग्. न.दे. ञोंद्. छु. रु. रो. म्ञाम्. ऽग्युर् ।।
स्क्योन्. दङ्. योन्. तन्. मञाम्. ल्दन्. सेम्स् ।
म्गोन्.पो. सुस्. क्यङ. म्थोङ. मि. ऽग्युर् ।।८९।।

९०. मोंङस्. प. दग्. ल. ग्ञोन्. पो. गङ. यङ. मेद् ।
नग्स्. ल. म्छेद्. पऽि. मे. ल्चे. ब्शिन् ।।
ग्दोङ. दु. बब्. पऽि. ऽदि. ल्तर्. स्नङ. ब. कुन् ।
सेम्स्. क्यि. चं. ब. स्तोङ. प. ञिद्. दु. ल्हन्. चिग्. ब्योस् ।। ९०।।

९१. गल्. ते. यिद्. दु. ऽोङ. ङम्. स्ञाम्. पऽि. सेम्स् ।
स्ञिङ. ल. बब्. प. ग्चेस्. पर्. ब्यस्. न. नि ।।
तिल्. ग्यि. शुन्. प.[२] चम्. ग्यि. स्ुग्. र्ङ्स्. क्यङ ।
नम्स्. क्यङ. स्दुग्. ब्स्ङल्. ऽबऽ. शिग्. ब्येद्. पर्. स्रद् ।।९१।।

९२. दे. ल्तर्. यिन्. ते. दे. ल्तर्. म. यिन्. नो ।
ग्रोग्स्. पो. फग्. दङ. ग्लङ. छेन्. ल्तोस्
जि. ल्तर्. यिद्. ब्शिन्. नोर्. बुऽि. द्गोस्. प. ब्शिन् ।
ऽख्रुल्. प. शिग्. पऽि. म्खस्. प. ङो. म्छर्. छे ।।
रङ. ल. रङ. रिग्. ब्दे. ब. छेन्[३] पोऽि. बग्. छग्स्. ग्स्ुग्स् ।।९२।।

८७. जत्तवि चित्तहि विप्फरइ, तत्तवि णाह सरूअ ।

अण्ण तरङ्ग कि अण्ण जलु, भव-सम ख-सम सरूअ ।।७२।।

८८. कासु कहिज्जइ को सुणइ, एत्थु कज्जसु लीण ।

दुट्ठ सुहङ्गा धूलि जिम हिअ जाअ हिअहि लीण ।।७३।।

८९. जतवि पइसइ जलहि जलु, तत्तइ समरस होइ ।

दोस—गुणाअर चित्त तहा, बढ परिवक्ख ण कोइ ।।७४।।

९०. [मूढ़ों का मित्र कोई नहीं, वन दाहक अग्नि-शिखा जिमि ।।

वृक्ष पर गिरी; ऐंसे सब भासै चित्त मूल शून्यता में एक बार ।।]

९१. सुण्णहि सङ्गम करहि तुहु, जहिँ तहिँ समचिन्तस्स ।

तिल-तुस-मत्तवि सल्लता, वेअणु करइ अवस्स ।।७५ ।।

९२. अइसें सो पर होइ ण अइसों । जिम चिन्तामणि कज्ज सरीसों ।।

अक्कट पण्डिअ भत्तिअ णासिअ । सअ-सम्विति महासुह-वासिअ ।।७६।।

९३. थम्स्. चद्. दे. छ्रे. म्खऽ. म्ञम्. ब्येद्. पर्. ऽग्युर् ।।
क. ल. कु. ट. स्मोस्. स्ु. चि. रुङ. स्ते ।
रङ. ब्शिन्. म्खऽ. म्ञम्. यिद्. क्यिस्. ऽजिन्. प. यिन् ।।
यिद्. दे. यिद्. म. यिन्. पर्. ब्येद्. ऽग्युर्. न ।
रङ. ब्शिन्. ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. प. मछोग्. तु. म्जे्स् ।।९३।।

९४. ख्यिम्. दङ. ख्यिम्. न. दे. नि. ब्र्जोद्. मिन्. ते ।
ब्दे. छेन्. ग्नस्. नि. योङ्स्. सु. शेस्. प. मिन् ।।
ऽग्रो. कुन्. सेम्स्. ख्ल्. खुर्. ब. म्दऽ. ब्स्मुन्. ऽद्र ।
दे. नि. ब्सम्. मेद्. सुस्. क्यङ. र्तोग्स्. म. यिन् ।।९४।।

९५. ब्दे. ग्सङ. यन्. लग्. योङ्स्. सु. स्पङ्स्. प. न ।
ब्स्गोम्. दङ. मि. स्गोम्. द्ब्येर्. मेद्. ब्दग्. गिस्. म्थोङ[१] ।
युल. ग्यिस्. म्छोन्. पस्. ग्शन्. दग्. ब्सम्. पर्. ब्येद् ।
दे. ञिद्. ब्सम्. पस्. म. र्तोग्स्. रङ. गशिन्. ऽगग्स्. पर्. ऽग्युर् ।।९५।।

९६. गल्. ते. सेम्स्. क्यिस्. सेम्स्. नि. म्छोन्. दु. ऽग्रो ।
र्नम्. र्तोग्. दङ. नि. मि. ग्यो. ब्र्तन्. पर्. ग्नस् ।।
जि. ल्तर्. लन्. छ्व. छु. ल. थिम्. प. ल्तर् ।
दे. ल्तर्. सेमस्. नि. रङ[१] ब्शिन. ल. थिम्. ऽग्युर् ।।९६।।

९७. दे. छ्रे. ब्दग्. दङ. ग्शन्. नि. म्ञम्. पर्. म्थोङ ।
ऽबद्. दे. ब्सम्. ग्तन्. ब्यस्. पस्. चि. ब्यर्. योद् ।।
ल्हन्. चिग्. ल. नि. लुङ. र्नम्स्. म. लुस्. मथोङ ।
रङ. गि. ऽदोद्. प. मङ. पो. ग्सल्. बर्. स्नङ ।।९७।।

(२) भोग में योग

75b ९८. म्गोन्. पो. ब्दग्. ञिद्. ग्चिग्. पु. ग्शन्. र्नम्स्. ऽगल्[१] ।
ख्यिम्. दङ. ख्यिम्. न. ग्रुब्. म्थऽ. दे. ग्रुब्. पो ।।

---

९४. 'मिन्' (नहीं) नहीं, 'यिन्' (है) चाहिए, 'ऽद्र (इव) नहीं, स्ब्रस् (मानें) चाहिए ।

६३. सब्ब रूअ तहिँख-सम करिज्जइ । खसम-सहावें मणवि धरिज्जइ ::

सोवि मणु तहि अ-मणु करिज्जइ। सहज सहावें सो परु रज्जइ ।।७७।।

६४. घरे-घरे कहिअइ सोज्झु कहाणा । णउ परिसुणिअइ महासुह-ठाणा ।।

सरह भणइ जग चित्तें वाहिअ । सो अचित्त णउ केणवि गाहिअ ।।७८।।

६५. [गुह्य सुख अंग परिहरिय, ध्यानाध्यान मैंने देखा ।

विषय लखि अन्य ध्यावै, सो ध्यान से न जान स्वभाव विरुद्ध हो ।

६६. यदि मनसे लखि जावै, और विकल्प अचल स्थिर रहै ।]

जिम लोण विलिज्जइ पाणिएहि, तिम जइ चित्तवि ठाइ ।।

६७. अप्पा दीसइ परहिं सम, तत्थ समाहिए काइ ।।४६।।

[एहु देव वहु आगम दीसअ । अप्पण इच्छें फुड पडिहास अ ।]

(२) **भोग में योग—**

६८. अप्पणु णाहो अण्ण विरुदधो । घरें-घरें सोअ सिद्धन्त पसिद्धो ।।

ग्चिग्. सोस्. पस्. नि. थम्स्. चद्. छिग् ।
फ्यि. रोल्. सोङ. नस्. ख्यिम्. ब्दग्. छ़ोल् ॥९८॥

९९. ऽोङस्. क्यङ. म. म्थोङ. फ्यिन्. क्यङ. मेद् ।
ऽदुग्. पर्. ग्युर्. क्यङ. ङो. म. शेस् ॥
दब्. ऽलंबस्. मेद्. पऽि. द्बङ. फ्युग्. म्छोग् ।
ञोंग्. प. मेद्. पऽि. ब्सम्. ग्तन्.[1] ऽग्युर् ॥९९॥

१००. छु. दङ. मर्. मे. रङ. ग्सल्. ग्चिग्. तु शोङ ।
ग्रो. ऽोङ. ङ. यिस्. मि. लेन्. मि. ऽदोर्. रो ॥
गङ. यङ. स्ङ. न. मेद्. पऽि. स्गोग्. मो. दङ. फ्रद. नस् ।
ञाल्. बऽि. सम्स्. नि. ग्शि. मेद्. प. ल. ब्र्तेन् ॥१००॥

१०१. रङ. गि. ग्सुग्स्. दङ. थ. दद्. म. ल्त. च्गि ।
दे. ल्तर्. सङस्. ग्यस्. लग्. तु. ग्तोद्. प[2].यिन् ॥
गङ. छे. लुस्. दङ. ङग्. यिद्. द्ब्येर्. मेद्. प ।
ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. पऽि. रङ. ब्शिन्. दे. छे. म्जेस् ॥१०१॥

१०२. ख्यिम्. बदग्. सोस्. नस्. ख्यिम्. ब्दग्. मो. पोङस्. स्प्योद् ।
युल्. नि. गङ. सग्. म्थोङ. स्ते. स्प्यद्. पर्. ब्य ॥
ङ. यिस्. च्रेंद्. मो. ब्यस्. प. ल. ।
बुस्. प. नंम्स्. नि. अ. थङ. छद् ॥१०२॥

१०३. अ. म.[3] ब्शग्. नस्. बु. दे. स्क्ये. मि. ऽग्युर्. ।
देस्. नि. नंल्. ऽब्योर्. स्प्योद्. प. द्पे. दङ. ब्रल् ॥
ब्दग्. पो. स. शिङ. रङ. ब्शिन्. म्जेस्. छग्स्. पऽि ।
स्प्योद्. देस्. दगऽ. बऽि. सेमस्. दे. ञिद् ॥१०३॥

१०४. छग्स्. दङ. छग्स्. ब्रल्. स्पङस्. नस्. द्बु. मर्. शुग्स् ।
सेम्स्. ञम्स्. पस्. न. नंल्. ऽब्योर्. ङस्. म. म्थोङ ॥
स. शिङ. ऽथुङ. ल. ब्सम्. दु. मेद्. पर्. ग्युर् ।
ग्रोग्स्. मो. ऽदि. नि. सेम्स्. ल. गङ. स्नङ. ब ॥१०४॥

एक्कु खाई अवर अण्णवि पोडइ । बाहिरें गइ भत्तारह लोडइ ॥८०॥

९९. आवन्त ण दीस्सइ जन्त णहि अच्छन्त न मुणिअइ ।

णित्तरङ्ग परमेसुरु णिक्कलङ्क धाहिज्जइ ॥८१॥

१०० [जल और दीप स्वयं प्रकाश, एकत्र पूरै]

आवइ जाइ ण च्छड्डइ तावहु । कहिं अपुव्व-विलासिणि पावहु ।

१०१. सोहइ चित्त णिरालं दिण्णा । अउण रूअ म देखह भिण्णा ॥

काअ-वाअ-मणु जाव ण भिज्जइ । सहज–सहावे ताव ण रज्जइ ॥८३॥

१०२. घरवइ खज्जइ घरिणिएहि, एहिँ देसहि अविआर ।

[मैंने खेल किया, फूत्कारों से विच्छिन्न किया ।।]

१०३. माइए पर तहिं कि उवरइ, विसरिअ जोइणिचार ॥८४॥

घरवइ खज्जइ सहजें रज्जइ, किज्जइ राअ-विराअ ।

१०४. णिअ-पास बइट्ठी चित्ते भटठी, जोइणि महु पडिहाअ ॥८५॥

खज्जइ पिज्जइ णवि चिन्तेज्जइ, इहले जो चित्ते पडिहाअ ।

---

१०२. ख. 'अउण' स्थाने 'अप्पण' ।

स-स्क्य. दोहा ४१ ।

१०५. फ्यि. रोल्. सेमस्. ल. म्छोन्. मेद्. ब्दग्. गिस्. ऽजिन् ।
स्ग्यु. मऽि. नंल्. ऽब्योर्. प. नि. द्पे. दङ., ब्रल्. ब. स्ते ॥
स. ग्सुम्. दु. यङ. द्रि. मेद्. मि. ग्नस्. मि. ऽब्युङ. स्ते ।
मे. नि. स्प्रब. ऽदि. ल. क्यॆन. ग्यिस्. ऽबर् ॥१०५॥

१०६. स्ल. ब. छु. ऽजग्. नोर्. बु. रङ. द्बङ. मेद् ।
थब्स्. क्यिस्. ग्यॆल्. स्रिद्. कुन. ल. द्बङ. ब्स्ग्युर्.ब ॥
सेमस्. ञिद्. दे. ञिद्. ग्रुब्. पऽि. नंल्. ऽब्योर्. मऽो ।
ल्हन्. चिग्. स्क्येस्.पऽि. स्दोम्. पर्. शेस्. पर्. ब्य ॥१०६॥

१०७. यि. गे. ऽग्रो. ब. म. लुस्. प ।
यि. गे. मेद्. प. ग्चिग्. क्यङ. मेद् ॥
जि. स्रिद्.[१] यि. गे. मेद्. ग्युर्. प ।
दे. स्रिद्. यि. गे. रब्. तु. शेस् ॥१०७॥

१०८. स्नग्. छ. म्ञोस्. पस्. क्लग्. तु. मेद् ।
रिग्. ब्येद्. दोन्. मेद्. ऽदोन्. पस्. ञाम्स् ॥
दम्. प. सेम्स्. दङ. चिग्. शोस्. मि. शेस्. नि ।
गङ. नस्. शर्. चिङ. गङ्. दु. नुब् ॥१०८॥

१०९. जि. ल्तर्. फ्यि. रोल्. दे. ब्शिन्. नङ ।
ब्चु. ब्शि. प.यि.स गंल. युन्. दु ग्नस् ॥
लुस्. मेद्. लुस्. ल. स्बस्. प. स्ते ।
दे.शेस्. दे. यिस्.ग्रोल्. बर्. ऽग्युर् ॥१०९॥

११०. स्ग्रुब्. यिग्. ब्शि. लस्. दङ. पो. ब्दग्. गिस्. स्तोन् ।
खु. ब. ऽथुङस्. पस्. ङ. नि. ब्र्जोद्. पर्. ग्युर् ॥
गङ. गिस्. यि. गे. ग्चिग्. शेस्. प. ।
दे. यिस्. मिङ. नि. मि शेस्. सो ॥११०॥

१११. क्यॆन्. ब्रल्. ग्सुम्. नि. यि. गे. ग्चिग् ।
सग्. मेद्. ग्सुम्. गिय. द्बुस्. न. ल्ह ॥

---

१०५. 'लंन. ऽब्योर्. प' के स्थान पर 'नंल् ०म' चाहिए।

१०५. मणु वाहिरे दुल्लक्खे हले, विसरिस जोइणि-माअ ।।८६।।

त्रिभुवने निर्मल अप्रतिष्ठि अभूत, आग तण हेतु जलै ।।।

१०६. चंद्र जले परि नहीं स्वबश मणि, उपाय राज्य के सब वशीभूत ।

सो चित्तसिद्धि जोइणि, सहज सम्वरु जाण ।।८७।।

१०७. अक्खर बाढा सअल जगु, णाहि णिरक्खर कोइ ।

ताव से अक्खर घोलिआ, जाव णिरक्खर होइ ।।८८।।

१०८. पत्त मुसारिउ मसि मिलिउ, होवि लिहे ना खीणु ।

जाणिउ तें विस परमपउ, कहि (अइ कहि) लीएणु (लीणु) ।।४१।।

१०९. जिम बाहिर तिम अब्भन्तरु । चउदह भुवणें ठिअउ णिरन्तरु ।।

असरिर (कोवि) सरीरहि लुक्को । जो ताहि जाणइ सो तहि मुक्को ।।८९।।

११०. सिद्धिरत्थु मइ पढमे पढिअउ । मण्ड पिवन्तें विसरअ ए मइउ ।।

अवखरमेक्क एत्थ मइ जाणिउ । ताहर णाम जाणमि ए सइउ ।।९०।।

१११. प्रत्ययरहित तीन एक अक्षर, तीन अनास्रव मध्ये देव ।

गङ. शिग्. ग्सुम्. पो. सग्. प. नि ।
ग्दोल्. ब. रिग्. ब्येद्. दे. ब्शिन्. नो ॥१११॥

(३) सहज महासुख

११२. म. लुस्. रङ. ब्शिन्. मि. शेस्. पस् ।
कुन. दु. रु. यि. स्कब्स्. सु. ब्दे छेन्. स्ग्रुब्. प. नि ॥
जि. ल्तर्. स्गोम्. पस्. स्मिग्. ग्र्यु ऽि. छु. स्ञोग्स्. ब्शिन् ।
स्कोम्. नस्. ऽछि. यङ. नम्. म्खऽि. छु. ञोंद्. दम ॥११२॥

११३. र्दो. र्जे. पद्म. ग्ञिस्. किय. बर्. ग्नस्. प ।
ब्दे. ब. गङ. गिस्. र्नम्. पर्. रोल्. प. यिन् ॥
चि. स्ते. दे. ब्देन्. नुस्. प. मेद्. पस्. न ।
स. ग्सुम्. रे. ब. गङ. गिस्. र्जोग्स्. पर्. ऽग्युर् ॥११३॥

११४. यङ. न. थब्स्. किय. ब्दे. ब. स्कद्.चिग्.म[3] ।
यङ. न. दे. ञिद्. ग्ञिस्. सु. ऽग्युर्. व. स्ते ॥
ब्ल. मऽि. द्रिन्. ग्यिस्. स्लर्. यङ. नि ।
ब्ग्यं. ल. ऽगऽ. यिस्. शेस्. पर्. ऽग्युर् ॥११४॥

११५. ग्रोग्स्. दग्. सब्. प. दङ. नि. ग्यं. छे. ब ।
ग्शन्. मेद्. ब्दग्. ञिद्. म. यिन्. नो ॥
ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. द्गऽ. ब्शि. पऽि. दुस् ।
ग्ञुग्. म. ञाम्स्. सु.[4] म्योङ. बर्. शेस् ॥११५॥

११६. मुन्. नग्. छेन्. पोर्. साल्. व. नोर्. बु. नि ।
जि. ल्तर्. ऽछर्. बर्. ब्येद्. प. ब्शिन् ॥
म्छोग्. तु. ब्दे. छेन्. स्कद्. चिग्. ग्चिग्. ल. नि ।
ब्सम्. पऽि. स्दिग्. प. म. लुस्. फन्. पर्. ब्येद्. पऽो ॥११६॥

११७. स्दुग्. ब्स्ङल्. स्नङ्. ब्येद्. नुब्. प. न. ।
स्कर्. मऽि. ब्दग्. पो.[5] ग्सऽ. दङ. म्ञम्. दु. शर् ॥
ऽदि. ल्तर्. ग्नस्. पस्. स्प्रुल्. बर्. स्प्रुल् ।
दे. नि. द्क्यिल्. ऽखोर्. ऽखोर्. लो. दम्. पऽो ॥११७॥

जो तीन अनास्रव; चंडालकुल क्रिया तिमि ।।¹

(३) सहज महासुख—

११२. रुअणे सअलवि जोहि णउ गाहइ। कुन्दुर-खणहि महासुह साहइ ।।

जिम तिसिग्रो मिअ-तिसिणें धावइ। मरइ सो सोसहिं णभजलु कहिँ पावइ।९१

कन्ध-भूअ-आअत्तण-इन्दी-विसअ-विआरु अप्प हुव।

णउ-णउ दोहाच्छन्दे कहवि ण किम्पि गोप्प ।।९२।।

पण्डिअ-लोअहु खमहु महु, एत्थु ण किअइ विअप्पु।

जो गुरु-वअणें मइ सुअउ, तहि कि कहमि सुगोप्पु ।।९३।।

११३. कमल-कुलिस वेवि मज्झ ठिउ, जो सो सुरअ बिलास।

को तं रमइ णह तिहुअणें, कस्स ण पूरइ आस ।।९४।।

११४. खण उवाअ-सुह अहवा, अहवा वेण्णिवि सोवि।

गुरुपाअ-पसाएँ-पुण्ण जइ, विरला जाणइ कोवि ।।९५।

११५. गम्भीरइ उआहरणें, णउ पर णउ अप्पाण।

सहजाणन्दे चउट्ठ-क्खण, णिअ-सम्वेअण जाण ।।९६।।

११६. घोरान्धारें चन्दमणि, जिम उज्जोअ करेइ।

परमहासुह एक्कु खणे, दुरिआसेस हरेइ ।।९७।।

११७. दुक्ख-दिवाअर अत्थ गउ, उवइ तारावइ सुक्क।

ठिअ-णिम्माणें गिम्मिअउ, तेगवि मण्डल-चक्क ।।९८।।

---

¹ ११२ और ११३ के बीच के दो दोहों का भोटानुवाद नहीं है।

११८. क्ये. हो. मोंङस्. पऽि. सेम्स्. क्यिस्. सेम्स्. ल. ब्र्तग्स्. न. नि ।
ल्त. ब. ङन्. प. थम्स्. चद्. लस्. नि. रङ. ग्रोल्. ऽग्युर् ॥
म्छोग्. तु. ब्दे. ब. छेन्. पोऽि. द्बङ्. गिस्. नि ।
दे[1]. ल. ग्नस्. न. द्ङोस्. ग्रुब्. दम्. पऽो ॥११८॥

११९. सेम्स्. क्यि. ग्लङ. पो. बन्. दु. छग् ।
दे. नि. ब्दग्. ञिद्. द्रिस्. ल. ग्चिग् ॥
नम्. म्खऽि. रि. बो. छु. ऽथुङ. दङ ।
दे. यि. ऽग्रम्. दु. श्रोग्. चिग्. रङ. द्गऽ. बर् ॥११९॥

१२०. युल्. ग्यि. ग्लङ. पोऽि. द्बङ. पो. लग्. पस्. ब्लङस. नस्. सु ।
76b जि. ल्तर्. ग्सोद्. पर्. रङ. द्बङ.[1] स्नङ. बर्. ऽग्युर् ।
र्नल्. ऽब्योर्. प. नि. ग्लङ. पो. स्क्योङ. ब. ब्शिन् ॥
दे. ञिद्. नस्. नि. ल्दोग्. पर्. ऽग्युर्. प. यिन् ॥१२०॥

१२१. गङ. शिग्. ऽखोर्. ब. दे. नि. म्य. ङन्. ऽदस्. पर्. ङेस् ।
द्ब्ये. ब. ग्शन्. दु. सेम्स्. प. म. यिन्. ते ।
रङ. ब्शिन्. ग्चिग्. गिस्. द्ब्ये. ब. र्नम्. पर्. स्पङस् ।
द्रि. म. मेद्. प. ङ. यिस्. रब्. तु. र्तोग्स् ॥१२१॥

१२२. यिद्. क्यिस्. दे. ञिद्. द्मिग्स्. दङ. ब्चस् ।
द्मिग्स्. प. स्तोङ. प. ञिद्. यिन्. ल ॥
ग्ञिस्. ल. स्क्योन्. नि. योद्. प. स्ते ।
र्नल्. ऽब्योर्. गङ. गिस्. स्गोम्. प. मिन् ॥१२२॥

१२३. स्गोम्. प. द्मिग्स्. ब्चस्. द्मिगस्. मेद्. दे ।
स्गोम्. दङ. मि. स्गोम्. थ. स्ञाद्. मेद् ॥
ब्दे. बऽि. र्नम्. पऽि. रङ. ब्शिन्. नो ।
रब्.[2] तु. ब्ल. मेद्. रङ्. ऽब्युङ्. ब ॥
ब्ल. मऽि. दुस्. थब्स्. ब्स्तेन्. पस्. शेस् ॥१२३॥

१२४. नग्स्. सु.म. ऽग्रो. ख्यिम्. दु. म. ऽदुग्. पर् ॥
गङ. यङ. दे. रु. यिद्. क्यिस्. योङस्. शेस्. नस् ।

११८. चित्तहिं चित्त णिहालु बढ, सअल विमुच्च कुदिट्ठि ।

परममहासुहे सोज्झ परु, तसु आअत्त सिद्धि ॥९९॥

११९. मुक्कउ चित्तगएन्द करु, एत्थ विअ णु पुच्छ ।

गअणगिरी-णइ-जल पिअउ, तहि तड वसउ स-इच्छ ॥१००॥

१२०. विसअ-गएन्दें करें गहिअ, जिम मारइ पडिहाइ ।

जोई कवडिआर जिम, तिम हो णिस्सरि जाइ ॥१०१॥

१२१. जो भव सो णिव्वाण खलु, स उ ण मण्णहु अण्ण ।

एक्क सहावें विरहिअ, णिम्मल मइ पडिवण्ण ॥१०२॥

१२२. [मन सोई सालंवन, आलंबन है शून्यता ॥

दोनों में ही दोष है, जिससे योगी का ध्यान नहीं ॥

१२३. ध्यान सालंब निरालंब, ध्यान-अध्यान व्यवहार नहीं ॥

सुखाकार स्वभाव, सु अनुत्तर स्वयं होता ।]

१२४. घरहि म थक्कु म जाहि वणे, जहि तहि मण परिआन ॥

म. लुस्. ग्युन्. दु. ब्यङ. छुब्. तंग्. पर्. ग्नस् ।।
ऽखोर्. ब. गङ. यिन्. म्य. ङन्.ऽदस्. प. गङ ।।१२४।।

१२५. यिद्. क्यि. द्रि. म. दग्. ल.[3] ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. प. स्ते ।।
दे. छे. मि. म्थुन. फ्योग्स्. क्यिस्. ऽजुग्. प. मेद् ।
जि. ल्तर्. र्ग्य. म्छो. दङ. बर्. ग्युर्. प. ल. ।।
छु. बुर्. छु. ञिद्. यिन्. ते. दे. ञिद्. थिम्. पर्. ऽग्युर् ।।१२५।।

१२६. नग्स्. दङ. ख्यिम्. न. ब्यङ. छुब्. ग्नस्.प. मेद् ।।
दे. ल्तर्. ब्येद्. प. योङस्.सु.शेस्. नस्. सु ।
द्रि.म. मेद्. पऽि. सेम्स्. क्यि., रङ. ब्शिन्. ग्यिस् ।।
म. लुस्. मि. र्तोग्. प. रु. ब्तेन्. पर् ऽोस् ।।१२६।।

(४) परमपद—

१२७. दे. नि. ब्दग्. यिन्. ग्शन्. यङ.. दे. ब्शिन्. नो ।
गङ. ब्स्गोम्. योङस्. सु. ब्स्गोम्. प. गङ ।।
द्ब्ये. ब. दे. ञिद्. ऽछिङ. दङ. ब्रल्. बर्. ब्य ।
ऽोन्. क्यङ. ब्दग्. ञिद्. र्नम्. पर्. ग्रोल्. बऽो ।।१२७।।

१२८. ब्दग्. दङ. ग्शन्. दु. ऽख्रुल्. प. म. ब्येद्. दङ् ।
म. लुस्. ग्युन्. दु. ग्नस्. पऽि. सङ्स्. र्ग्यस्. ते ।।
सेम्स्. नि. ङो. बो. ञिद्. क्यिस्. दग्. प. न. ।
दे. ञिद्. द्रि. मेद्. म्छोग्. गि. गो ऽफङ ङो ।।१२८।।

१२९. ग्ञिस्. मेद्. सेम्स्. क्यि. स्दोङ. पो. दम्. प. नि ।
खम्स्. गसुम्. म. लुस्. कुन्. दु. ख्यब्. पर्. सोङ ।।
स्ञिङ. र्जेऽि. मे. तोग्. ग्शन्. दु. ऽख्रुल्. प. म.ब्ये्.द्.दङ ।।
मिङ. नि. म्छोग्. तु. ग्शन्. ल. फम्. पऽो ।।१२९।।

१३०. स्तोङ. पऽि. स्दोङ. पो. दम्. प. मे. तोग्. र्ग्यस्
स्ञिङ.. र्जे. दम्. प. स्न. छोग्स्. दु. मर्. ल्दन् ।।
ल्हुन्. ग्यिस्. ग्रुब्. प. फ्यि्. मऽि. ऽब्रस्. बु. स्ते ।
ब्दे. ब. ऽदि. नि. ग्शन्. पऽि. सेम्स् मिन्. नो ।।१३०।।

सअल णिरन्तर बोहि ठिअ, कहिं भव कहिँ णिब्वाण ।।१०३।।

१२५. [सहजै चित्त निर्मल (जब), तब प्रतिपक्ष प्रवेश नहीं ।।

जिमि सागर मध्य बुद्‌बुद, उसी जल में होइ विलीन ।।]

१२६ णउ घरे णउ वणें बोहि ठिउ, एहु परिआणहु भेउ ।

णिम्मल-चित्त-सहावता, करहु अविकल सेउ ।।१०४।।

१२७. एहु सो अप्पा एहु परु, जो परिभावइ कोवि ।

तें विणु बन्धे बेट्ठि किउ, अप्प विमुक्कउ तोवि ।।१०५।।

(४) परमपद

१२८. पर अप्पाण म भान्ति करु, सअल णिरन्तर बुद्ध ।

एहु से णिम्मल परमपउ, चित्त सहावें सुद्ध ।।१०६।।

१२९. अद्दअ चित्त-तरुअरह, गउ तिहुअणें वित्थार ।

करुणा फुल्ली फल धरइ, णउ परत्त ऊआर ।।१०७।।

१३०. सुण्ण-तरुवर फलिलअउ, करुणा विविह विचित्त ।

अण्णा भोअ परत्त फलु, एहु सोक्ख परु चित्त ।।१०८।।

१३१ स्तोङ. पऽि. स्दोङ. पो. दम्. पऽि. स्ञिङ. जे. मिन् ।
77a गङ. ल. स्लर्. यङ. च्. ब. मे. तोग्.[१] लो. ऽदब्. मेद् ।।
दे. ल. द्मिग्स्. पर्. ब्येद्. प. गङ. यिन्. प ।
देर्. ल्हुङ. बस्. नि. यन्. लग्. मेद्. पर्. ग्युर् ।।१३१।।

१३२. स. बोन्. ग्चिग्. ल. स्दोङ. पो. ग्ञिस् ।
ग्यु. म्छन्. दे. लस्. ऽब्रस्. बु. ग्चिग् ।।
दे. यङ. द्ब्येर्. मेद्. गङ. सेम्स्. प ।
दे. नि. ऽखोर्. दङ. म्य. ङन्. ऽदस्. नेम्स्. ग्रोल्[१] ।।१३२।।

(५) परोपकार--

१३३. गङ. शिग् . ऽदोद्. प. चन्. गि्य्. स्क्ये. बो. ऽोङस्. पऽि. छे ।
दे. नि. रे. ब. मेद्. न. गल् ते. ऽग्रो. ब. नि ।।
फिय. स्गोर्. बोर्. वऽि. खम्. फोर्. ब्लग्स्. नस्. सु ।
दे. बस्. ख्यिम्. थब्. बोर्. नस्. ब्स्दद्. प. रुङ ।।१३३।।

१३४. ग्शन. ल. फन्. पऽि. दोन्. नि. मि. ब्येद्. प ।
ऽदोद्. प. पो. ल. स्ब्यिन्. प. मि. स्तेर्. ब ।।
ऽदि. नि. ऽखोर्. बऽि. ऽब्रस्. बु.[२] गङ. यिन्. लो ।
दे. बस्. ब्दग्. ञिद्. बोर्. बर्. ब्यस्. न. रुङ ।।१३४।।

नेल्. ऽब्योर्. गि्य. द्बङ. फ्युग्. छेन्.
पो. द्पल्. सरह. छेन्.पोऽि.शल्.
स्ङ. नस्. म्जद्. प. दो. ह. म्जोद्.
चेस्. ब्य. ब. दे. खो. न. ञिद्. नेल्.
दु. म्छोन्. प. दोन्. दम्.
पऽि. यि. गे. जोगिस्. सो ।।

१३१. सुण्ण-तरुवर णिक्करुण, जहि पुणु मूल ण साह ।
तहि आलमूल जो करइ, तसु पडिभज्जइ वाह ।।१०६।।

१३२. एक्केम्बि एक्केवि तरु तें, कारणे फल एक्क ।
ए अभिण्णा जो मुणइ, सो भव-णिव्वाण-विमुक्क ।।११०।।

(५) परोपकार

१३३. जो अत्थीअण ठीअऊ, सो जइ जाइ णिरास ।
खण्डसरावें भिक्ख वरु, च्छड्डुहु ए गिहवास ।।१११।।

१३४. परऊआर ण किअऊ, अत्थि ण दीअउ दाण ।
एहु संसारे कवण फलु, वरु छड्डुहु अप्पाण ।।११२।।

इति महायोगीश्वर महासरह के श्रीमुख से रचित···दोहाकोष···समाप्त ।

---

२. दोहाकोश चर्यागीति

(भोट, हिन्दी)

२. दोहाकोश चर्यागीति

(भोट)

दो.ह.म्ज़ोद्, स्प्योद्.पऽि. ग्लु

ऽफग्स्.प. ऽजम्.द्पल्.ल. फ्यग्.ऽछ़ल्. लो ।
ब्दुद्. क्यि. स्तोब्स्. रब्. तु.ऽजोम्स्. प. ल. फ्यग्.ऽछ़ल्.लो ॥

१. जि. ल्तर्. लुङ्. गिस्. ब्र्ग्यब्.पस्. मि. ग्यो. बऽि ।
छु.ल. ग्यो.बस्. ब.लब्स् नम्स्.सु ऽग्युर ॥
27a दे.ल्त. ग्यॅल्.पोस्. म्दऽ.ब्स्मुन् स्नङ्.ब. य़ङ् ।
ग्चिग्. ञिद्. न. यङ्. नम्.प. स्न.छ़ोग्स्. ब्येद् ॥

२. जि.ल्तर्. मोंङ्स्.पस्. ब्स्लोग्.नस्. ब्ल्तऽ्.प.यिस् ।
मर्.मे. ग्चिग्. ञिद्. ग्ञिस्.सु. स्नङ्ब. ल्तर् ॥
दे. ल. ब्ल्त.ब्य. ल्त.ब्येद्. ग्ञिस्.मेद्.ल ।
क्ये. म. ब्लो. नि. ग्ञिस्.क्यि.[1] द्ङोस्.पोर्. स्नङ् ॥

३. ख्यिम्.दु. मर्.मे. मङ्.पो. स्बर्.ग्युर्. क्यङ् ।
मिग्.मेद्.प.ल. मुन्.पर्. ग्नस्.प. ल्तर् ॥
ल्हन्.चिग्. स्क्येस्.पस्. थम्स् चद्. ख्यब् ब्यस्. क्यङ् ।
ञो. यङ्. मोंङ्स्.प.दग्. ल. शिन्.दु. रिङ् ॥

४. छु.बो. स्न.छोग्स्. यङ् ग्यॅ म्छ़ो. ग्चिग्. ञिद्. दङ् ।
बर्जुन्.प. दु.म.दग्. क्यङ्[1] ब्देन्. प.ग्चिग् गिस्.ऽजोमस् ॥
ञि.म. ग्चिग्. दङ्. स्नङ्बर्. ग्युर्.प.यिस् ।
मुन्.प. दु.म.दग्. क्यङ् ऽजोमस्.पर. ब्येद् ॥

---

१. तेर्-गिके स्तन्-ऽग्युर, ग्युंद् पोथी शि, पृष्ठ २६ ख ६—२८ख ६

२. दोहाकोश चर्यागीति

(हिन्दी)

नमो मंजुश्रियै। नमो मारबलविध्वंसिने।

१. जिमि पवन-घाते अचल जल, चलै तरंगित होइ।
तिमि राजहि सरह प्रतिभासै, तऊ एक नाना विध करै॥

२. जिमि मूढ विलोम-नेत्र को, एकै दीप दो भासै।
तँह दृश्य दर्शन दो नहीं, (तऊ) बुद्धि में दो वस्तु दीखै॥

३. घरे बहुत दीपक जलै, तऊ जिमि नयनहीन को अंधार रहै।
सहज सर्वव्याप्त समीप है, तऊ मूढों को दूर (है)॥

४. नदी नाना तउ समुद्र एक (है), नाना मिथ्या को सत्य एक विध्वंसै।
सूर्य एक प्रकाशै (तो), अंधार नाना भी ध्वस्त होइ॥

५. जि.ल्तर्. छु.ऽजिन्.ग्यिस्. नि. र्ग.य. म्छों.लस् ।
छु.ब्लङस्.नस्. नि. स. ग्शि. गङ. ब्यस्. क्यङ ।।
दे. नि. म. ञमस्. नम्.म्खऽ.दग्. दङ. म्ञम् ।
ऽफेन्.ब.मेद्.[३] चिङ. ऽग्रिब्.प.दग्. क्यङ.मेद् ।।

६. र्ग्यल् बऽि. फुन्.सुम्.छोग्स्.पस्. योङस्. गङ् बऽि ।
ल्हन्.चिग्.स्क्येस्. प. ग्चिग्. मि. रङ.ब्शिन्. ञिद् ।।
दे. लस्.ऽग्रो.ब. स्क्ये. शिङ.ऽगग्.प.स्ते ।
दे.ल. द्ङोस्. दङ. द्ङोस्.पो.मेद्. पऽङ मेद् ।।

७. दम्.पऽि. ब्दे.ब. स्पङस्.नस्. ग्शन्.दु. ऽग्रो ।
क्यंन्.[४]लस्. स्क्येस्.पऽि ब्दे.ल. रे.बर्. ब्येद् ।।
रङ.गि. खर्ञ्चुग्. स्ब्रङ.चि. ञो.ब. नि ।
ऽथुङ.बर्. मि.ब्येद्. शिन्.दु. रिङ.बर्. ऽग्युर् ।।

८. ब्योल्.सोङ्. दग्. स्दुग्.बस्ङल्. मि.ब्यद्.ल ।
म्खस्.प.दग्.गिस्. दे.ल. स्दुग्.ब्स्ङल्. ब्येद् ।।
चिग्.शोस्. नम्.म्खऽि. ब्दुद्.चि. ऽथुङ्.बर्. ब्येद्[५] ।
ग्शन्. नि. युल्.नम्स्. दग्. लऽङ्. र्नम्.पर्. छग्स्. ।।

९. ब्शद्.बऽि. स्रिन्.बु. द्रि.ल. छग्स्.प. नि ।
चन्दन्.दग्.ल. द्रिङ.न.दग्.तु. सेम्स् ।।
जि.ल्तर् म्य.ङन्.ऽदस्.प. स्पङस्.नस्. नि. ।
स्रिद्.पऽि. ऽब्षुङ.ग्नस्. म्थुग्.पोस्. छगस्. पर. ब्येद् ।

१०. ब.लङ. र्कङ. र्जेस्. छु.यिस्. गङ.ब्यस्[६].क्यङ ।
जि.ल्तर्. दे. बङ. स्कम्.पर्.ऽग्युर्.ब. ब्शिन् ।।
फुन्.छोग्स्. म. यिन्. फुन्.छोग्स्.बर्तन्.पऽि. सेम्स्. ।
यङ.न. फुन्.सुम्.छोग्स्.प. स्कम्.पर्.ऽग्युर् ।।

११. जि.ल्तर्. र्ग्य. म्छो. ब.छ.चन्.ग्यि. छु. ।
छु.ऽजिन्. ख.यिस्. ब्लङस्.दङ.र. बर्. ऽग्यर् ।।

५. जिमि जलधर समुद्र से पानी ले भूमि भरै।
सो अनष्ट शुद्ध आकाश सम, नहीं बढ़ै औ ना घटै ।।

६. जिन-संपत्ति से परिपूर्ण, सहज एक स्वभावता।
तेहि से जग उत्पन्न हो निरुद्ध होइ ।।

७. परम सत्य छाडि अन्यत्र जाइ, प्रत्यय से उत्पन्न सुख की आशा करै।
अपने डंडे से मधु हिंडोलै, (पर उसे) न पिये अतिचिर हुआ ।।

८. पशु (जिसमें) दुःख न करै, पंडित उसमें दुःख करै।
एक हो आकाश का अमृत पान करै : अन्य शुद्ध विषयों में भी रागै ।।

९. गूथ-कीट गंधे रागी, शुद्ध चन्दन में दुर्गन्ध मानै ।
जिमि निर्वाण छाडि, मन्द (जन) भव के उत्पाद-स्थान में रागै ।। ।।

१०. जिमि जलपूर्ण गोष्पद सोइ सूख जावै।
(तिमि) ना संपत्ति दृढ़ चित्त, भी संपत्ति सूख जाये ।।

११. जिमि समुद्र का क्षार-जल, जलधर के मुख में जा मधुर हो जाये।

27b ब्र्तन्.पऽि. सेम्स्.[१]क्यिस्. ग्शन्.ग्यि. दोन्.ब्येद्.प ।
युल्.ग्यि. दुग्. क्यङ्. ब्दुद्.च्रि. ऽग्युर्. प. यिन् ।।

१२. ब्जोंद्.दु. मेद्.न. स्दुग्.ब्स्ङल्. म. यिन्. ते ।
ब्स्गोम्.दु. मेद्. न. दे. ञिद्. ब्दे.ब. यिन् ।।
जि.ल्तर्. ऽब्रुग्.गि. स्ग्र.यिस् स्पङस्. न. यङ. ।
छर्.प. बब्.पस्. लो.तोग्स्. स्मिन्.पर्. ब्येद् ।।

१३. दङ्. पो. थ. म. दें. ब्शिन् ग्शन् न. मेद् ।
थोग्.म. थ.म बर्.दु. ग्नस्.प. मेद् ।।
कुन्.तु. र्तोग्.पस्. र्मोङस्.पऽि. यिद्.चन्. ल ।
स्तोङ्.प. दङ्. नि. स्ञिङ्.जें. ब्जोंद्.पस्. स ।।

१४. जि.ल्तर्. मे. तोग्. नङ्. ग्नस्. स्ब्रङ्.चि. नि ।
बुङ्. बु. ञिद्. क्यिस्. शे.स्. पर्. ऽग्युर्. प. यिन् ।।
स्रिद्. दङ्. म्य. ङन्. ऽदस्.प. मि. ऽदोर्. रो.[२] ।
र्मोङ्स्.प. दग्. गिस्. जि.ल्तर्. योङ्स्.सु. शेस्. ।।

१५. जि. ल्तर्. मे.लोङ. ङोस्.क्यि. ब्शिन्. ग्यि. ग्सुग्स् ।
र्मोङस्.प. मि. शेस्.प. यिस्. ब्ल्तस्.प. ल्तर् ।।
दे. ल्तर्. ब्देन. प. स्पङ्स्.पऽि. सेम्स्. ऽदि. नि ।
मि. ब्देन्.प.ल. मङ्.दु. बर्तेन्. पर्. ब्येद् ।।

१६. मे.तोग्. द्रि. नि. गसुग्स्. सु. मेद्. न. यङ्[३] ।
मङोन्.सुम्. कुन्.दु. ख्यब्.पर्. ब्येद्.प. ल्तर्. ।।
दे. ब्शिन्. गसुग्स्.सु. मेद्.पऽि. रङ्.ब्शिन्-ग्यिस् ।
द्क्यिल्.ऽखोर्. ऽखोर्.लो. दग्. क्यङ्. शेस्.पर्.ग्यिस् ।।

१७. लुङ्. गिस्.छु.ल. शुग्स्. शिङ्. द्क्रुग्स्.प.यिस् ।
ऽजम्. पऽि. छु. यङ. दों. यि. ग्सुग्स्.ल्तर्.ऽग्रो ।।
र्तोग्. पस्[४] द्क्रुग्स्. पस्. र्मोङस्.प. ग्सुग्स्.मेद्.प ।
शिन्.तु स्र. शिङ् म्ख्रेग्. प ञिद्. दु. ऽग्युर् ।।

स्थिर चित्त से परमार्थ करे, (तो) विषय-विष भी अमृत हो जाये ॥

१२. अवाच्य में दुःख न है, भावना रहै (जो) सोई सुख है ॥
जिमि अशनि-शब्द करै, पर-वर्षा से फ़सल पक जाये ॥

१३. प्रथम अन्तिम तथा अन्य नहीं, आदि अन्त मध्य में रहै नहीं ।
सर्व कल्पना से मूढ़ हृदय को, शून्य और करुणा कथन की भूमि (है) ॥

१४. जिमि फूल बीच स्थित मधु को, भ्रमर ही जानै ।
भव-निर्माण न छाडि, मूढ जिमि परिजानै ॥

१५. जिमि दर्पण-तलके मुख-बिंब को, मूढ़ अजान का देखना ।
तिमि सत्त्य त्याग यह चित्त, असत्त्य में बहुत स्थिर होइ ॥

१६. पुष्प-गंध अ-काय भी, यथा प्रत्यक्ष सर्वव्यापी ।
तथा स्वभावतः अकाय, मंडल-चक्र को भी जानिये ।

१७. पवन पानी में बल से हिलाया, कोमल जल भी पाषाण-काय जिमि चलै ।
कल्पना-चालित मूढ काय बिनु, अति कठोर ही होइ ॥

१८. सेमस्. गङ्. द्रि.म.मेद्.पऽि. रङ्.ब्शिन्. ल ।
स्रिद्. दङ्. म्यङ्.ऽदस्. ऽदम्. ग्यिस्. म.गोस्. सो ॥
ऽदम्.दु. ब्चुग्.न. म्छोग्.गि. रिन्.पो.छे ।
दे.यि. ऽोद्. क्यङ्. ग्सल्.ब. म. यिन्. नो ॥

१९. ग्ति.मुग्. ग्सल्. बस्. ये.शेस्. मि.ग्सल्. ते ।
ग्ति.मुग्. ग्सल्.बस्. स्दुग्.ब्स्ङल्. ग्सल्.ब. यिन् ॥
जि.ल्तर्. स. बोन्.लस्. नि. म्यु.गु. ऽब्युङ् ।
म्यु.गुऽि. ग्यु.लस्. यल्. ग. ऽब्युङ्.बऽो ॥

२०. ग्चिग्. दङ्. दु.म. सेम्स्. ल. द्प्यद्.प.यिस् ।
ग्सल्.ब. स्पङस्. नस्. स्रिद्.प.दग्. तु ऽग्रो ॥
म्थोङ.ब्शिन्.दु. नि. दोङ. दु. ऽग्रो.ब.ल ।
दे.लस्. स्ञिङ.र्जे. ब. नि. चि.शिग्. योद् ॥

२१. ख.स्व्योर्. ब्दे.ल. योङ्स्. सु. छग्स्.नस्. सु ।
ऽदि. ञिद्. दोन्.दम्. यिन्. शे.स्. मोङ्स्. प. स्म्र ॥
गङ. शिग्. ख्यिम्.नस्. ब्युङ्.नस्. स्गो. ब्रुङ. दु ।
का. म. रू. पऽि. ग्तम्. नि. ऽद्रि. बर्. ब्येद् ॥

28a२२. लुङ्. गि. ग्यु. लस्. स्तोङ्.पऽि. ख्यिम्. दु. नि ।
नम्.प. दु.मऽि. छुल्. ग्यिस्. ब्चोस्.म.बस् ॥
नम्. म्खऽ. लस्. बब्. ञास्.प. दङ्. ब्चस्. पऽि ।
ग्दुङ्.बस्. ब्ग्यल्.बर्.ग्युर. पऽि. नल्.ऽब्योर्.प ॥

२३. जि.ल्तर. ब्रम्. से. मर्. दङ्. ऽन्नस्.क्यिस्. नि ।
बर्.बऽि. मे.ल. स्प्यन्.स्नेग्. ब्येद्.प. नि ॥
नम्.मखऽि. ब्चुद्.क्यि. जस्.क्यिस्. ब्स्क्येद्.प. स्ते ।
ऽदि.नि. दे.ञिद्. ग्रोल्. प. शेस्. सेर् ॥

२४. ख.दोग्. द्ब्ये.बस्. ऽछिद्. बु. म. गंद. सेर् ।
मोंङस्.पस्. रिन्.छेर्. ब्तंग्.प. म. शेस्.पस् ।

१८. असमल स्वभाव चित्त में, भव-निर्माण पंक न चाहिये ।
पंक में रखे वररत्न की भी प्रभा प्रकाशित न होइ ।।

१६. अंधार प्रकटै, (तो) ज्ञान न प्रकटै ।
अंधार प्रकटन से दुःख प्रकटित होइ ।

२०. एक-अनेक चित्त में चर्या से, प्रकाश छाडि भव में जावै ।
दर्शन जिमि पास जाये, तो कारुणिक कैसा ।।

२१. आकाश योग (है) सुख में परिराग से, यही परमार्थ (है) यह मूढ भनै ।
जो घरसे जाइ द्वारे, कामरूप की कथा पूछै ।।

२२. पवन कारण शून्य घरे, अनेक विध वृत्ति क्रिया ।
आकाश से गिर सदोष, दाह-जयी योगी ।।

२३. जिमि ब्राह्मण घृत-तंडुल, ज्वलित अग्नि में होम करै ।
आकाश रस द्रव्य से उत्पन्न यह, सोई मुक्ति कहै ।।

२४. वर्ण-भेद से बंधन न जीर्ण कहै, मूढ रत्न-परीक्षा न जानै ।

दे. नि. र.गन्. ग्सेर्. गि. ब्लो.यिस्. लेन् ।
ञमस्. म्योङ्. ब्येर्. नस्. दोन्.दम्. स्ग्रुब्.पर्. ब्येद्[3] ॥

२५. मि.लम्. ब्दे.ल. र्जेस्. सु. छगस्. पर्. ब्येद् ।
फुङ्.पो. मि.र्तग्. ब्दे. ब. र्तग्. चेस्. स्रेर्. ॥
ए. बं. यि. गेर्. रङ्.गिस्. गो. बर्. ब्येद् ।
स्कद्.चिग्. द्ब्ये. बस्. फ्युग्. ग्र्य्. ब्शि. ब्कोद्. चिङ ॥

२६. ञम्स्.सु. म्योङ्.बस्. ल्हन्.चिग्. स्क्येस्. प. स्रेर् ।
ग्सुग्स्. ब्ञन्. शेस्. प. मे. लोङ्. ल्त. ब. ब्शिन् ॥
जि. ल्तर्.[4] म. र्तोग्स्. स्मिग्. ग्युडि. छु.ल. नि ।
ऽख्रुल्.पऽि. द्बङ. गिस्. रि. दग्स्. ग्युग्. पर्. ब्येद् ॥

२७. र्मोङस्.प. स्कोम्. प. मि. दोम्स्. ऽछिङ. बर्. ऽग्युर् ।
गङ्.शिग्. दोन्.दम्. सेर्. शिङ्. ब्दे. ब. लेन् ॥
कुन्.ज्र्बि. ब्देन्. प. द्रन्.प. मेद्.प. स्ते ।
सेम्स्. दङ्. सेम्स्. नि. मेद् पर्. ग्युर्.पऽो ॥

२८. दे. ञिद्.[5]योङ्स्. सु. ग्युर्. प. म्छोग्. गि. मछोग् ॥
म्छोग्.गि. दम्. प. ग्रोग्स्. दग्. शेस्. पर्. गियस् ॥
सेम्स्. नि. द्रन्. मेद्. तिङ.ङे.ऽजिन्. दु. स्ब्योर् ।
ऽोन्. र्मोङस. योङस्. सु. दग् पऽङ.दे ञिद्. दो ॥

२९. जि. ल्तर्. ऽद्म्. स्क्येस्. ऽदम् गियस्. मि. छुग्स्-ब्शिन् ।
स्रिद्. ऽग्युङ. ञोस् पस्. ग्र्यल्. छोस्. मि. गोस्. सो[6] ॥
दे. यङ. थम्स्. चद्. स्यु. मर्.ङेस्. पर्. ब्ल्त. ब्य. स्ते ।
ऽजिग्. र्तेन्. ऽदस्. प. स्कद्, चिग्. लेन्. दङ. ब्तङ. स्ञोम्स्. ब्येद् ॥

३०. ब्र्तन्. पऽि. ब्लो. चन्. दे. दग्. ग्ति. मुग्. ऽछिङ. बर्. ऽग्युर् ।
रङ. ब्युङ. ब्सम्.गियस्. मि. ख्यब्. रङ. ब्शिन्. ग्नस्. प. यिन् ॥
स्नङ. ऽदि. ग्सल्. बर्. दङ. पो. ञिद्. नस्. म. स्क्येस्.ते ।
गसु.ग्स्. चन्. म. यिन्. ग्सु.ग्स. क्यि. रङ. ब्शिन्. र्नम्. पर्. स्पङस् ॥

वह पीतल सोने के खयाल से, अनुभव ले परमार्थ साधै ।।

२५. स्वप्न-सुख में अनुराग करै, स्कन्ध अनित्य सुख नित्य कहै ।
एवं अक्षर स्वयं जानै, क्षण भेद से मुद्रा रचै ।।

२६. अनुभव से सहज कहै, रूप-प्राप्ति दर्पण-दर्शन जिमि ।
जिमि बे समझे मायाजल में, भ्रमवश मृग धावै ।।

२७. मूढ़ प्यासा अतृप्त फँसै, जो परमार्थ कह सुख लेइ ।
संवृति-सत्य स्मृति नहीं, और चित्त न चित्त होइ ।।

२८. सोई परिणाम उत्तमोत्तम, परमोत्तम सखे, जान ।
चित्त स्मृतिरहित समाधि में जुडै, अंध-मूढ परिशुद्ध सोइ ।।

२९. जिमि पंकज न पंके, तिमि भव-दोष न जिनधर्म लिपै ।
सो भी सब माया अवश्य जानिये, लोकोत्तर क्षण दानादान समापत्ति करे ।।

३०. सो स्थिरमति अंधार नाशै, अव्याप्त स्वयंभू चित्त स्वभाव में रहै ।
यह प्रभास स्पष्ट पहिले से ही न उपजै, अरूपी रूप-स्वभाव परिहरै ।।

३१. दे. ञिद्. ग्युन्. दु. ग्नस्. शिङ. ब्सम्.ग्तन्. ग्चिग्. पु. ब्येद् ।
यिद्.ल. मि. ब्येद्. द्रि.मेद्. ब्सम्. ग्तन्. सेम्स् म. यिन् ।।
ब्लो. दङ. सेम्स्. क्यि. स्नङ. ब. दे. ब्दग्. ञिद् ।
ऽजिग्.र्तेन्. गङ. दग्. ग्शन्. दु. स्नङ. ब्दग्. ञिद् ।।

३२. स्न.छोग्स्. म. लुस्. म्थोङ. ब्येद्. दे. ब्दग. ञिद् ।
छग्स्. दङ. ग्ति. मुग्. ब्यङ. छब्. सेम्स्. क्यङ. दे. ब्दग्. ञिद ।।
ग्ति.मुग्. मुन्. बर्. स्ग्रोन्. मे. ऽबर् ।
जि.स्निद्. ब्लो. यि. द्ब्ये. बस्. क्ये ।।

३३. दे.स्निद्. सेम्स्. क्यि. द्रि. म. स्पङ्स् ।
म. शेन्. रङ. ब्शिन्. गङ. शिग्. ब्सम् ।।
द्गग्. प. मेद. चिङ. स्म्रुङ. ब. मेद् ।
ऽजिन्. प. मेद्. दे. ब्सम्. गि. ख्यब् ।।

३४. ब्लो. यि. द्ब्ये. बस्. मोंङ्स. र्नम्स्. ऽछिङ ।
द्ब्येर्. मेद्. ल्हन्.चिग्.स्क्येस्. र्नम्. दग् ।।
ग्चिग्. दङ. दु.मस्. र्नम्. ब्र्तग्. ग्चिग्. ञिद्. मिन् ।
शेस्. प. चम्. ग्यिस्. ऽग्रो. ब. र्नम्. पर्. ग्रोल्. ।।

३५. ग्सल. ब. गङ. शिग्. शेस्. प.[३] ब्स्गोम्. प. ब्स्तन् ।
मि. ग्योऽि. सेम्स्. नि. ब्दग्. ञिद्. दे. रु. ग्सुङ ।।
द्गऽ. ब. ग्यंस्. पऽि. युल्. थोब्. प ।
म्थोङ. बऽि. सेम्स्. नि. र्नम्. पर्. ग्यंस् ।।

३६. युल्. ल. ब्रोस्. क्यङ. थ. दद्. मेद् ।
द्गऽ. ब. ब्दे. बऽि. म्यु. गु. दङ ।।
म्छोग्. गि. ऽदब्. म. स्क्येद्. प. स्ते ।
जि. स्निद्. ब्योस्.प. ब्चुङ. मि. फ्रोग् ।।

३७. स्प्रोस्. मेद्. ब्दे. बऽि. ऽब्रस्. बु. ञिद् ।
गङ. गिस्. गङ. दु. गङ. ल. दे. दग्. मेद् ।।

३१. उसी स्रोत में रहि ध्यान एक (मात्र) करै,
अमनसिकार निर्मल ध्यान चित्त न है
बुद्धि, चित्त और चित्ताभास यह सब लोक
जो अन्यत्र आभासै सो अपने ही ॥

३२. सकल नाना दृश्य दर्शन सो अपने ही, राग, अंधार, बोधिचित्त भी अपने ही ।
तिमिरनाशक जलता दीप जिमि बुद्धि का भेद रे ॥

३३. तिमि चित्त का मल त्यागै, अनासक्त स्वभाव जो समझै ।
अनिवारित न धारे सो समुझि न व्यापै ॥

३४. बुद्धि-भेद से मूढ बँधै, अभेद (है) सहज विशुद्ध ।
एक और नाना विकल्प एक ही नहीं, ज्ञान मात्र से जग विमुक्त ॥

३५. स्पष्ट जो ज्ञान भावना कहै, अचल चित्त अपने ही वहाँ कहै ।
विकसित आनंद का विषय पाइ, दर्शन का चित्त विकसै ॥

३६. विषय में सक्ति भी भेद नहीं, आनंद सुख का अंकुर (है) ।
उत्तम पत्र जमनि, जिमि कर कुछ ना हरै ॥

३७. निष्प्रपंच सुख का जो फल, सो जँह जिसका शुद्ध नहीं ।

सो तँह तिस को चाह करै, अनुराग और विराग की ।।

३८. शुद्ध रूप ही शून्यता, भवपंक में आसक्ति शूकर जिमि ।
विमल चित्त होइ, दोष क्या है ?
जो शुद्ध न चाहै, सो तिस से क्यों बंधै ।।

महायोगीश्वर-सरहपादकृत दोहाकोश चर्यागीति समाप्त ।।

---

३. दोहाकोश उपदेशगीति

(भोट, हिन्दी)

३. मि. स्द्. पऽि. ग्तेर्. म्ज़ोद. मन्. ङग्. गि. ग्लु*

(भोट)

28b ऽजम्.द्पल्.ग्श ोन्. नुर्. ग्युर व. ल. फ्यग्.ऽछ्ल्. लो ।

१. ए. म. म्खऽ. ऽग्रो. ग्सङ. बऽि. स्कद् ।
   ग्ञिस्. मेद्. रङ. ब्शिन्. फ्यग्. ग्य. छेन्. पोऽि. ग्नस् ।
29a सङस्. ग्यस्. छोस्. दङ. द्गे.ऽदुन्. रङ. ब्शिन्. नि ।
   ब्यङ. छुब्. सेम्स्. द्पऽ. ब्दे. बऽि. म्गोन्. पो. ल ॥
२. फ्यग्. ब्सङ. पो. यिस्. ब्तुद्. दे. ब्शद् पर्. ब्य.
   स्क्ये. बो. स्निद्. पऽि. ऽख्रि. शिङ. ल्त. बुस्. ब्क्रिस्. प. नंमस् ।।
   ब्दग्. तु. ऽजिन्. पऽि. म्य. ङन्. थङ. ल. रब्. तु. स्कम्स् ।
   ग्यल्. बु. ग्श ोन्. नु. ख्रिद्. मेद्. फ. दङ. ब्ल्. ब. ब्शिन्[1] ॥
३. ब्दे. बऽि. गो. स्कब्स्. मेद्. पस्. सेम्स्. ल. स्नुग्. दुर्. ग्युर् ।
   द्प्यद्. पस्. म.ऽोङस्. दे. ब्शिन्. ञिद्. क्यि. ये. शेस्. नि ॥
   ब्यस्. प. नंम्स्. दङ. ब्रल्. शिङ. बसग्स् पऽि. लस्. मिन्. श स् ।
   रङ. ञिद्. शेस्. पऽि. म्दऽ. ब्स्मुन्. ग्यिस्. नि. दे. स्कद्. स्म्रस् ॥
४. म्खस्. प. थम्स्. चद्. स्ञिङ. ल. दुग्. गिस्. ख्यब्[2]. पर्. ग्युर् ।
   सेम्स्. ञिद्. नंल्. पऽि. दोन्. नि. कुन्. ग्यिस्. र्तोग्स्. द्कऽ. प ॥
   म्थऽ. यिस्. म्गोस्. द्रि. म. मेद्. पऽि. स्ञिङ. नि. ।
   रङ. ब्शिन्.ग्दोद्. नस्. नंम्. प. कुन्. ग्यि. द्प्यद्. ब्यमिन् ॥
५. गल्. ते. द्प्यद्. न. दुग्. स्ब्रुल्. ग्चेस्. प. खो. नर्. स्द्. ।
   ब्लो. यिस्. ग्शन् पऽि. छोस्. ऽदि. थम्स्. चद्. रङ.[3] गिस्. स्तोङ ॥

---

* स्तन. ऽग्युर. ग्र्युद्. शि. पृष्ठ २८ ख ५–३३ ख ४

३. दोहाकोश 'अनुच्छिन्नकोश' उपदेशगीति

(हिन्दी)

नमोमंजुश्रियै कुमारभूताय ।

१. अहो डाकिनी गुह्य वचन, अद्वय स्वभाव महामुद्रावास ।
बुद्ध धर्म संघ स्वभाव, बोधिसत्त्व सुख-नाथके अर्थ ।।

२. सुहस्तसे नमि कहिये, पुरुष के भवमें लता जिमि मंगल ।
शोक-स्थाने आत्म-ग्रह सूखै, जिमि पिता विनु राजकुमार का भव* नहीं ।।

३. सुख-अवस्था विनु चित्ते रूप होइ, तैसे ही अनागत-चर्या× का ज्ञान ।
क्रिया विनु संचित कर्म नहीं, सरह भनै स्वयं जानि यह वचन ।।

४. सब पंडितों के हृदये व्याप्त विष, चित्त ही नाल-अर्थ सब कठिन कल्पना।
अन्ततः निर्मल (है) हृदय, स्वभाव राग से सर्वथा त्याज्य नहीं ।।

५. जो परखै सर्प डंसै सोई मरै, बुद्धि से भिन्न यह सब धर्म स्वतः शून्य ।

---

* जन्म । × आचरण, साधना ।

क्येन्. दङ. ब्रल्. पियर्. ब्र्तग्. प. थम्स्. चद्. योद्. म. यिन्. ।
रङ. ब्शिन्. ग्नस्. सु. ग्रोल्. बऽि. दे. ब्शिन्. ञिद्. शेस्. न ।।

६. म्थोङ. थोस्. ल. सोग्स. मेद्. च्चिङ. दे. यिस्. मि. म्थुन्. ब्रल् ।
द्ङोस्.पोर्. र्तोग्. प. थम्स्. चद्. फ्युग्स्. दङ. ऽद्र. बर्. ब्जोद् ।।
द्ङोस्. मेद्. र्तोग्. प. दे. बस्. शिन्. तु. ब्लुन्. ऽग्युर्. शेस् ।
मर्. मे. ऽबर्. दङ. ब्सद्. पऽि. द्पे. यिस्. ब्जोद्. प. दग्. ।।

७. ग्ञिस्. मेद्. रङ. ब्शिन्. फ्यग्. र्ग्य. छेन्. पोर्. ग्नस् ।
द्ङोस् पोर्. स्क्येस्. प. द्ङोस्. पो. मेद्. पर्. रब्. शि. शिङ ।।
दे. यि. फ्योग्स्. दङ. ब्रल्. ब. म्खस्. प. दे. ञिद्. नि.
ब्लुन्. पो. र्नम्स्. क्यि. ब्लो. ल. रङ. गिस्. द्प्यद्.[५] ब्यस्. न ।।

८. स्कद्. चिग्. ग्रोल्. ब. दे. ल. छोस्. क्यि. स्कु. शेस्. ब्य ।
ग्रोल्. ब. दे. लस्. ग्शन्. पऽि. ब्दे. छेन्. स. योद्. चेस् ।।
ब्यिस्. प. र्नम्स् क्यिस्. स्प्रस्. क्यङ. स्मिग्. र्ग्युऽि. छु. दङ. म्ब्ुङस् ।
स. दङ. लम्. दङ. सङस्. र्ग्यस्. चम्स्. चद्. गो. ग्चिग्. पऽि ।।

९. ग्ञुग्. मऽि. ये. शेस्. ऽदि. ञिद्. यिन्. गिय. यिद्. ल.[६] द्रिस् ।
दे.ल्तर्. र्तोग्स्. पऽि. मि. दे. ल. नि. ऽछिङ. ब. मेद् ।।
ङुल्. म. स्पङस्. शिङ्. ङुल्. गियस्. चुङ.सद्. गोस्. प. मेद् ।
ञोन्. मोंङ्स्. गञेन्. पो. ग्ञिस्. सु.ऽप्येद्. प. ग. ल. योद् ।।

१०. दे. ल्तर्. ब्चोंन्. पऽि. स्क्येस्. बु. दे. नि. ऽखोर्. बर्. ऽछिङ ।
स. दङ. छु. दङ. मे. दङ. लुङ. दङ्. नम्. म्खऽ. र्नम्स् ।।

29b ल्हन्.[७] चिग्. स्क्येस्. पऽि. रो. ग्चिग्. लस्. नि. ग्शन्. योद्. मिन् ।
स्रिद्. दङ्. म्य. ङन्. ऽदस्. प. ग्ञिस्. सु. मि. र्तोग्स्. प ।।

११. ऽदि.नि. छोस्. क्यि. द्ब्यिङस्. क्यि. ग्नस्. लुग्स्. यिन्. पर्. ब्शद् ।

ए.म. म्खऽ.ऽग्रो. ग्सङ.बऽि. स्कद् ।।

क्ये. म. रङ. ल रङ.गिस्. दे. ञिद्. मछोन्. ते. ल्तोस् ।।
म. येङस्. प.[१] यि. सेम्स्. क्यिस्. ल्त. दङ. ब्रल्. ग्युर्. न ।

अ-प्रत्यय* होने से सारी परीक्षा न होई, स्वभाव-स्थाने मुक्ति जैसा जो जाने ।।

६. दर्शन-श्रवण आदि विनु उससे प्रतिकूल नहीं,
वस्तुकल्पना सारी पशु-सदृश कहिये ।
विना वस्तुकी कल्पना से अतिमूढ़ हो जानै,
दीपक जलने बुझनेकी उपमा की कथा ।।

७. अद्वय स्वभाव महामुद्राका वास, वस्तुकी उत्पत्ति अवस्तु स्वभाव ।
उसका निष्पक्ष पंडित सोइ, मूढ़ोंके मतमें अपने चर्या करै ।।

८. उसी क्षणिक मुक्ति में धर्मकाय जानिये, उस मुक्तिसे अन्य महासुख भूमि यह ।
बालोंका कथन, मृगजलकी वंचना ; भूमि, मार्ग, बुद्ध सब एक जान ।।

९. निज ज्ञान यही है, यह मनसे पूछ ; ऐसा समझे नरको बंधन नहीं ।
धूल न छोड़ धूल कुछ भी ना चाहिये, पाप-विरोधी दोनोंमें करना है कहाँ ।।

१०. ऐसे वह पराक्रमी पुरुष संसार में बँधै ; धरती, जल, अग्नि, वायु औ आकाश ।
सहज एकरस (तत्त्व) से अन्य नहीं, भव-निर्वाण दोनो समझै ।।

११. यही धर्म-धातुकी स्थिति कहिये,
अहो डाकिनी गुह्य बचन ।।
अहो अपनेहि अपने को प्रहरै देख, अनलस चित्ते दृष्टि न होई ।।

---

*हेतु विना ।

2१२. योङ्स्. पऽि. सेम्स्. क्यिस्. दे. ञिद्. तोंग्स्. पर्. मि. ऽग्युर्. ते ॥
दङोस्. पोऽि. छङ. छिङ. ग्सेब्. तु. दे. ञिद्. नोर्. बु. स्तोर् ।
क्ये.म. ऽग्रोद्. पऽि.दङोस्.पो.गङ. लऽङ. ख्योद्. ञिद्. छग्स्. म.ब्येद् ॥
गल्. ते. छग्स्. पर्. ब्य. बऽि. युल्. ल. यिद्. छग्स्. न ।

१३. ऽदि.[2] नि. ब्दे. छेन्. सेम्स्. म्छोग्. ग्सिर्. थऽि. नद्. रब्. स्ते ॥
द्रि. म. मेद्. पऽि. सेम्स्. ल. ऽदोद्. पऽि. म्छोन्. ग्यिस्. ब्तब् ।
क्ये. म. ग्युँ. दङ. ऽब्रस्. बु. गञिस्. सु. म. ल्त. चिग् ॥
दङोस्. पोर्. स्क्ये. बऽि. ग्युँ. दङ. ऽब्रस्. बु. योद्. मिन्. ते. ।

१४. रे. दङ. दोग्स्. पऽि. दुग्. गिस्. नंल्. ऽब्योर्. सेम्स्. म्योस्. न ॥
ल्हन्.[3] चिग्. स्क्ये. पऽि. ये. शेस्. ग्नस्. दे. ऽछिङ. बर्. ऽग्युर् ।
क्ये. म. रङ. ब्शिन्. ब्रल्. बऽि. दे. ञिद्. ब्स्गोम्. दु. योद्. म. सेर्. ॥
गल्. ते. ब्स्गोम्. पर्. ब्य. दङ. स्गोम्. ब्येद्. गञिस्. तोंग्स्. न ।

१५. ग्ञिस्. सु. ऽजिन्. पऽि. यिद्. क्यिस्. ब्यङ. छुब्. सेम्स्. स्पङ्स्. ते ॥
स्क्येस्. बु. दे. यिस्. रङ. गिस्. रङ. ल.[4] स्दिग्. प. ब्यस् ।
क्ये. म. ब्ल. मऽि. शल्. ग्यि. ब्दुद्. र्चिऽि. थिग्स्. प. जि. स्ञेद्. प ॥
देस्. शेस्. स्ङोन्. ऽग्रो. प. यिस्. रब्. तु. ब्लङ. बर्. ब्य ।

१६. दुस्. दङ. थब्स्. ल. म्खस्. पस्. दुस्. सु. म. ब्स्तेन्. न ॥
लोङ. बस्. ग्यंल्. पोऽि. बङ. म्जोद्. कुँ. दङ. ऽद्र. थर्. ऽग्युर् ।
क्ये. म. रिन्. छेन्. द्बङ. दङ. ब्रल्.[5] बऽि. स्क्येस्. बु. नि. ॥
ग्दोल्. प. द्मन्. प. शिग्. गिस्. ग्यंल्. पोर्. रे. स्मोन्. ब्शिन् ।

१७. रिग्. प. ऽजिन्. पऽि. ग्युंद्. नंम्स्. देर्. ब्स्लुस्. पस् ॥
म्खऽ. ऽग्रोस्. छद्. प. ब्चद्. नस्. दों. जेंऽि. द्म्यल्. बर्. ल्तुङ ।
क्ये. म. द्गे.बऽि.ब्शेस्. ग्ञोन्. दग्. लस्. म्छोग्. गि.दोन्. ब्लङ्स्.नस् ॥
दम्.पर्. मि.[6] ऽजिन्. द्मन्. पऽि. .सेमस्. क्यिस्. योङ्स्. स्पोङ्. व ।

१८. स्क्ये.ब्रो. रब्.रिब्. ग्सेब्. क्यिस्. ख्येर्. बर्. ग्युर्. प. न ॥
ब्स्हल्.प. छेन्.पोर्. रङ. ल. स्दुग्. ब्स्ङल्. ब्यस्. पर्. सद् ।

१२. अलस चित्तेहिं सो समुझ न होइ, वस्तुके मदमें बँधि सोइ मणि-भ्रान्ति ।
अरे किसी इच्छित वस्तु में राग न कर, जो रजनीय विषयमें मन रागी होइ ।।

१३. यह महासुख-चित्तवर में महाशूल रोग, निर्मल चित्त पार राग प्रहार करै ।
अहो कार्य-कारण तू दोनों ना देखु । वस्तु-उत्पत्तिमें कार्य-कारण
ना होइ ।।

१४. आशा-शंका-विषसे योगी-चित्त मातै तो, सहज ज्ञान में बसि वह बद्ध होई ।
अहो ध्यान में सो नि स्वभाव ना कह जो ध्यान औ ध्येय दो समुझै ।।

१५. द्वैत ग्राही मन बोधिचित्त को छोड़ै, सो पुरुष अपनेहि अपने पाप करै !
अहो गुरुमुखामृत विन्दु मात्र पाइ, निश्चय आगे बढिज्ञान भले लेइ ।।

१६. काल औ उपाय में पंडित काल का आश्रय ना ले, जैसे भिखारी राज-
कोशकी चोरी करै ।
अहो रत्न औ बल बिनु पुरुष सोइ, जिमि चंडाल-शूद्र राजा ने
बनना चाहै ।।

१७. विद्याधरकी जाति वहाँ राखै, डाकिनी निग्रह तोडि नरक में गिरै ।
अहो कल्याणमित्रों से परमार्थ ले
उत्तम न धरि हीन चित्त परित्यागै ।।

१८. पुरुष मेरुशिखरे जावै तो, महाकल्प भर अपनेहि दुखी हो मरै ।

क्ये.म. ब्र्तन्. पऽि. स. ल. फ्यि- नस्. दम्. छिग्. मि. ल्द्न. न ।
ग्यंल्.पोस्. छद्.प. ग्चोद्. पऽि. मि. नि. ब्सुङ ब. ल्तर् ।
१९. र्नम्.[७]स्मिन्. ल्वग्स. क्युस्. स्रोग्. गि. र्लुङ. नि. ब्सुङ. ब्यस्. नस् ॥
30a ग्रो.छ. मोल्.म. खर्.ब्लुग्स्. प. नि. ब्सोद्.पर्.द्कऽ ।
क्ये.म. ग्नस्.लुग्स्. र्तोग्स्. क्यङ. द्मन्.ब्शि. स्प्योद्.प.
ञिद्. ब्यद्. न. ॥
र्ग्यल्.पो. ख्रि.लस्. बब्.नस्. फ्यग.दर्. ब्येद्.प.ब्शिन् ।
२०. स्द्. मि. शेस्. पऽि. ब्दे. ब.[८] छेन्. पो. ञिद्. स्पङस्. नस् ॥
ऽखोर्.बऽि. ब्दे.ब. दग्. ल. रेग्. प. ञिद्. क्यिस्. ऽछिङ ।
क्ये.म. स्ब्रोस्. प. र्नम्स्. दङ. ब्रल्. बऽि. रङ. गि. सेम्स्. म्थोङ. नस् ॥
स्ब्रोस्.प. र्नम्स्. ल. छेद्. दु. ऽबद्. पऽि. र्नल्. ऽब्योर्. नि ।
२१. नोर्.बु.रिन्.छेन्. ञोंद्.नस्. ऽछिङ.बु. छ्रोल्. ब. ब्शिन् ॥
ऽबद्. प. ब्यस्. क्यङ. स्ञिङ. पोऽि. स. नि. नम्. यङ. मिन् ।

ए.म. ऽम्ख.ऽग्रो. ग्सङ.बऽि. स्कद् ॥

ब्यङ. छब्. सेम्स्. सिन्. प. दङ. व्यङ. छुब्. सेम्स्. र्तोग्स. दङ ।
२२. ऽबद्.प. दङ.ब्चस्. ऽबद्.प. ब्रल्. बऽि. ये. शेस्. नि ॥
दम्.प. र्नम्स्. क्यि. शल्. ग्यि- ब्दुद्. चि.लस्. ब्युङ. ब ।
ञि.म. स्ल.ब. ग्ञिस्. क्यि. द्बुस्.सु. ग्सल्. बर्. ब्येद्[३] ॥
छ.ददङ. ल्दन्. पऽि. स्क्येस्. बुऽि. स्न. चें. लस्. ब्युङ. शिङ ।
२३. म्छन्. दङ. ल्दन्. पऽि. फ्यग्. र्ग्य. लस्. नि. दे. सेम्स्. ग्चिग् ॥
ग्सुग्स्. सोग्स्. द्ङोस्. पोऽि. छोस्. र्नम्स्. दे. यिस्. म्दोग्.
ब्स्ग्युर. नस् ।
शि.ब. दङ.ब्चस्. मन्.ङग्.गिस्. नि. शेस्. पर्. ब्य ॥
ऽोद्. ग्सल्. ब. यि. छोस्. ञिद्. दे. नि. ङेस्. म्थोङ. ङे[४]-नस् ।
२४. ब्ल.मऽि. दुस्.थब्स्. ब्स्तेन्. प. दे. नि. छेर्. र्तोग्स्. ल ॥
शेस्.रब्. फ.रोल्.फ्यिन्. दङ म्दो. ग्शन्. लस्. ञोंद्. चिङ ।
कुन्.ल. स्ब्यर्. बऽि. सेम्स्. नि. रब्.तु. ब्स्गोम्.पर.ब्य ॥

अहो स्थिर-भूमि में बाहर से ना जो सद्वचनयुक्त,
राजदंडतोड़क पुरुषके पकड़ने-सा ।।

१६. वितप्त लोहांकुश से प्राणवायु को पकड,
उबलते पात्र के मुँहमें डालना जैसा दुःसह ।
अहो स्थिति-रीति जान भी हीन आचरण करि,
जिमि राजासन से उतर कूड़ा बुहारै ।।

२०. कुछ न समझ महासुख छाड़ि, सांसारिक सुखोंके स्वाद ही में बँधा ।
अहो अपने चित्त को निष्प्रपंच देखि भागनेवालों को,
वेदना में व्यवहारी योगी ।।

२१. मणि-रत्न पाकर बंधन ढूँढने जैसा, व्यवहार किया नहीं हृदय-भूमि कभी ।
अहो डाकिनी गुह्य बचन ।।
बोधिचित्त-ग्रहण औ बोधिचित्त-अवबोधन, सव्यवसाय औ अव्यवसाय ज्ञान।।

२२. सन्तोंके मुखामृतसे संभूत, रवि शशि दोनोंके मध्य प्रकाश करै ।
ज्वर-युक्त पुरुष की नासिकासे संभूत, लक्षणवती मुद्रासे एक-चित्त ।।

२३. रूपादि वस्तु के उन धर्मों से शंकित होने पर, स-शांति उपदेश जानिये ।
उस प्रभास्वर धर्मता के अभिसमय से, गुरु-समय* का सेवन बड़ा समझै ।।

२४. प्रज्ञापारमिता औ अन्य सूत्र पा कर, सबमें युक्त-चित्त सुभावित करै ।

---

* साक्षात्कार ।

फ्यि.दङ. नङ. दु.ब्ल्त. ब. मेद्. पऽि. सेम्स्. दे. नि ।
गङ. गिस्. मि. ब्सम्. गङ. ल. यङ. नि. सेम्स्. म. यिन् ।।

२५. रङ.[5] ब्शिन्. ग्नस्. प. र्दो.र्जे. च्ँ. मोर्. गलु ब्लङस्. प ।
ब्दे. छेन्. ग्सब्. ग्तङ. ब्रल्. ब. छु. बो. ल्त. बुर्. ब्स्गोम् ।।
ऽदुस्. पऽि. छोग्स्. सु. स्प्रोस्. प. कुन्. ग्यिस्. ग्येङस्. पऽि. सेम्स् ।
ऽफो. दङ. ऽजुग्. प. मेद्. पऽि. रङ. ब्शिन्. बर्तन्. प. ञिद् ।

२६. सेम्स्. क्यि. स्ञिङ. पो. रङ. द्गऽ. बर्. नि. लेग्स्. ब्तङ. स्ते ।
स्क्योन्.[6] प. ल्त. बुऽि. सेम्स् नि. ब्य. ब. दङ. ब्रल्. ब ।।
म्थऽ. यिस्. म. गोस्. ब्ये. शेस्. दे. नि. ब्स्गोम्. पर्. ब्य ।
स्गोम्. दङ. ब्स्गोम्. ब्य. मेद्. पऽि. सेम्स्. नि. रङ. ब्शिन्. ब्रल् ।

२७. रे. दोग्स्. मेद्. पऽि. म्थर्. थुग्. प. नि. र्दो. र्जेऽि. सेम्स्. ।
30b द्म्यल्. बर्. सोङ. स्रिद्. न. यङ. दे. ल. स्दुग्. ब्स्ङल्. मेद् ।।
स्रिद्. दङ.ऽब्रस.[6] बु. म्छोग्. ल. ग्नस्. क्यङ. ल्हग्. प. ञोद्. मिन्. पस् ।
ब्दे. दङ स्दुग्. ब्स्ङल्. ग्ञिस्. क्यिस्. फन्. दङ. ग्नोद्. स्पङस्. नस् ।।

२८. ब्सङ. दङ. ङन्. पऽि. स्प्योद्. पस्. दे. ल. ऽफेन्. ऽग्रिब्. मेद् ।
र्तोग्स्. पऽि. ये. शेस्. ग्ञिस्. ब्रल्. ऽदि. लस्. ग्युं. यि. द्रि. म.ब्रल् ।।
गङ. दुऽङ. म. ल्त. ये. शेस्. छेन्. पो. ञिद्.[2] स्योङ. ब ।
ऽखोर्. बऽि. दुग्. नंग्स्. शि. बर्. नुस्. पऽि. र्नल्. ऽब्योर्. पस् ।।

२९. द्गे. स्लोङ. ग्शु. ऽद्र. ग्यल्. स्रिद्. कुन्. ल. द्बङ. स्ग्युर. ब्येद् ।
मिग्. नि. मि. ऽजुम्स्. ब्स्गोम्. दु. मेद्. पऽि. र्नल्. ब्योर्. प ।।
द्बेन्. पऽि. ग्नस्. दङ. ग्नस्. मल्. मेद्. पऽि. ग्नस्. ञिद्. दु ।
छग्स्. दङ. स्दुङ. ब. स्पङस्. पऽि. द्रि. म.[3] मेद्. पऽि. यिद् ।।

३०. दोन्. दम्. सेम्स्. क्यि. ङो. बो. दे. नि. ब्स्गोम्. पर्. ब्य ।

ए.म. म्खऽ.ऽग्रो. ग्सङ.बऽि. स्कद् ।।

द्क्यिल्. ऽखोर्. ब. दङ. स्ब्यिन्. स्रेग्. पस्. स्तोङ. शिङ ।
स्ङग्स्. दङ. फ्यग्. ग्‍ँय. रब्. ग्नस्. ल. सोग्स्. र्नम्. ब्रल्. ब ।।

बाह्य औ अन्तर दृष्टि के विना सो चित्त जिससे ध्यावै (वहाँ)
जहाँ चित्त नहीं ।।

२५. स्वभाव में स्थित वज्रशिखर गीत गाना, गंभीर महासुख की अविगत
नदी जिमि भावना ।

समाजों में सर्वप्रपंच से अलस-चित्त, संक्रमण औ प्रवृत्ति विना दृढ़
स्वभाव (हो) ।।

२६. चित-धार को स्व-आनन्द में मत डाले, दोष जिमि चित को निष्क्रिय (करे)।
अन्त न चाहिए, वही ज्ञान भावना करै ; ध्यान-ध्येय विना चित्त
निःस्वभाव ।।

२७. आशा-शंका-रहित भूतकोटि है वज्र-चित्त, नरकगति भव* में भी दुख नहीं।
भव औ उत्तम फल में स्थित भी अधिक लाभ विना, सुख-दुख दोनों
में हित-अहित (भाव) छोडि।

२८. गुह्य औ दुचर्या से उसकी प्राप्ति[3] नहीं, कल्पना ज्ञान
इस उद्वय से कारणगंध नहीं।

महाबुद्ध चाहो तो मूढको जानै, निष्क्रिय मन से कहीं न ढूँढ़ै जो ।।

२६. गुण न ढूँढ़ि उस के विपक्ष से रहित, कारण और सब शास्त्र से ना वह पावै।
द्वेष-राग-रहित चित्त में कारण का मल नहीं,
कहीं मत देख महाज्ञान ही अनुभव करै ।।
संसार विष शमन समर्थ योगी ।

२६. भिक्षु, धनुष जिमि सर्व राज्य वश करै।
आँख मत बंद कर भावना विना ही, योगी,
एकान्तवास औ शयनासन विना रहते ही ।।

३०. काम औ आसक्ति त्याग निर्मल मन ।
परमार्थ चित्त सोई भाव भावना करै ।।
अहो डाकिनी गुह्य बचन ।।

मंडल औ होम हजार एक ।।
मंत्र औ मुद्रा प्रतिष्ठा आदि के विना ।।

---

* जन्म, योनि।

३१. ग्युं. दङ. ब्स्तन्. ब्चोस्. कुन्. गियि. ब्स्गुब्. पर्. मि. नुस्. पऽि ।
दों. जें.[४] ये. शेस्. ऽदि. नि. रङ. ब्शिन्. ग्नस्. न. म्जेंस् ।।
ग्चिग्. गिस्. गो. बर्. नुस्. प. रिन्. छेन्.ब्र्दं.यि. मछोग् ।
स्ग्रुल्. गियि. ग्सोब्. ल्तर. ग्शन्. ल. म्जेस्.प.योद्. म. यिन् ।।

३२. ह्नियङ.पोस्. ह्नियङ. पो. मछोन्. प.ब्ल.म. म्छोग्. दग्.लस् ।
तोंग्स्. पस्. ग्शन्. ल. म्छोन्. ते. दे. ञिद्. रङ. ल. म्छोन्[५] ।।
नम्. म्खऽ. नोर्. बु. ञि. म. ल्त. बुऽि. मथु. म्दऽ. ब ।
थिग्. ले. ग्सुम्. दङ. यिद्. द्रन्. प. दङ. द्रन्. मेद्. दङ ।।

३३. स्ब्योर्. बऽि. स्ग्र. सोग्स्. गङ. लऽङ. स्प्योद्. पर्. नुस्. रुङ. पऽि ।
ग्सेर्. ऽग्युर्. चि. ल्तर्. छोस्. नंम्स्. थम्स्. चद्. रो. म्ञम्.ऽग्युर् ।।
लम्. स्ब्यङ. ब. ल. ग्ञग्. मऽि. ये. शेस्. ग्चिग्. पु. ग्चिग्[६] ।
लम्. ञिद्. ब्र्दस्. स्तोन्. प. नि. ब्ल. म. म्छोग्. दग्. ल ।।

३४. ग्सुग्स्. स्ग्र. द्रि. रो. रेग् दङ. छोस्. ल. ब्र्तेन्. पर्. ब्य ।
छोस्. नंम्स्.थम्स्. चद्.कयेन्.मेद्.पर्.नि. स्क्ये. न. यिन् ।।

31*a* म. स्क्येस्. प. ल. म्खस्. स्कल्. ल्दन् दे. दग्. गिस् ।
स्क्येस्. प. थम्स्. चद्. ल. नि. शुग्स्. क्यिस्. म्खस्. पर्. ऽग्युर्[७] ।।

३५. थ. मि. दद्. पऽि.ये. शेस्. खो. न. ग्चिग्. पु. ञिद् ।
रङ. ब्शिन्. ग्शग्. पऽि. सेम्स्. क्यिस्. रङ. ल. ख्यब्.ऽग्युर् ।।
ब्दग्. दङ. ग्शन्. दु. स्नङ. बऽि. रङ. ब्शिन्. ग्चिग्. शेस्.शिङ ।
दे. ञिद्. खो. न. म. येङस्. प. यिस्. योङस्. ब्सुङ. स्ते ।।

३६. दे. ञिद्. सेम्स्. क्यि. सुग्स्.[१] यिन्. पियर्. ब्तङ. नस्. क्यङ ।
गङ. लऽङ. शन्. प. मेद्. पस्. ब्दे. ब. लेन्. पर्. ब्येद् ।।
सेम्स्. ल. ग्नोद्. पऽि. लस्. नि. थम्स्. चद्. क्यिस्. स्तोङ. शिङ. ।
ञेंद्. दङ. लेन्. पऽि. ब्य. ब. गङ. गिस्. गोस्. प. मेद् ।।

३७. चोंल्. दङ. ब्रल्. शिङ. ग्नस्. स्कब्स्. ग्लो. बुर्. क्येन्. मेद्. पर् ।
स्नङ. ब. स्न. छोग्स् पयग्.[२] ग्यं. ऽदि. नि. ग्सिग्स्. मोर्.छे ।।

३१. कारण औ सर्व शास्त्र (जिसे) सिद्ध करने में असमर्थ।
इस वज्रज्ञान स्वभाव में स्थित सुन्दर ।
एक के द्वारा जानने में समर्थ रत्न उत्तम संकेत ।
निर्मित रचना जिमि दूसरे को सुन्दर नहीं ।।

३२. हृदय से हृदय में प्रहारि उत्तम गुरुओं से ।
अवबोध से दूसरे को प्रहारि सोई अपने को प्रहरै ।
गगनमणि सूर्य जिमि समर्थ धनुष् ।
तीन तिलक औ स्मृति से सहित-रहित मन ।।

३३. प्रयोग शब्द आदि कहीं भी चर्या उचित ।
कंचन भूत औषधि जिमि सब धर्म* पदार्थ समरस होइ ।
मार्गशोधमें निज ज्ञान ही अकेला एक ।
मार्गसंकेत-कर्त्ता उत्तम गुरु ।।

३४. रूप-शब्द-गंध-रस-स्पर्श औ धर्म का आलंबन करै,
सभी धर्म विना प्रत्यय× उत्पन्न ।
अनुत्पन्न को भव्य सभी उत्पन्न के रूप में पंडित ने जान लिया ।।

३५. अभिन्न ज्ञान सोई एक स्वभाव में स्थापित चित्त अपने में व्याप्त ।
स्व-पर में भासित स्वभाव को एक जानि, तत्त्व को अनुद्धत (हो) धारै ।।

३६. सोई चित्त का रूप है, अतः छोड़कर भी, जहाँ अमन्द सुख लेवै ।
चित्त-अपकारी सब कामों से शून्य कर, लाभ औ लेना जिसे न चाहिए ।।

३७. यत्नरहित क्षेत्र में अवस्थित अकस्मात् विना प्रत्यय२, नाना अवभास
यही मुद्रा का महाप्रेक्षण ।

---

* पदार्थ । ×हेतु ।

थम्स्. चद्. थम्स्. चद्. दम्. पऽि. दुस्. सु. ञ्ोर्. म्थोङ. नस् ।
ब्ल. मर्. म. ग्युर्. छोस्. नि. गङ. यङ. योद्. म. यिन् ।।
३८. बर्. स्नङ. म्जुब्. मोस्. म्छोन्. पस्. बर्. स्नङ. म्थोङ. ब. मेद् ।
ब्ल. मस्. म्छोन्. पऽि. ब्ल. म. दे. यङ. दे. ब्शिन्. नो ।।
ब्तुल्. शुग्स्. स्प्योद्. पऽि. र्नल्.[३] ऽब्योर्. ब. नि. ग्रोङ. ख्येर्. सेम्स् ।
ग्र्यल्. पोऽि. फो. ब्रङ. ऽजुग्. चिङ. बु. मो. दङ. चें. यङ ।।
३९. स्क्युर्. ब. स्ङर्, ब्रोस्. प. यिस्. स्क्युर्. ब. म्थोङ. ब. ब्शिन् ।
युल्. र्नम्स्. थम्स्. चद्. दे. ब्शिन्. ञिद्. दु. रिग् ।।
छोग्स्. क्यि. ऽखोर्. लो. ञो. बर्. बर्ग्यन्. पऽि. ग्नस्. ञिद्. दु ।
कुन्. दु. रु. यि. स्कब्स्. सु. ब्दे. ब. छे.[४] म्थोङ. नस् ।।
४०. ब्दे. दङ. दम्. छिग्. ल्दन्. पऽि. र्नल्. ऽब्योर्. र्नम्स्. वियस्. नि ।
स्त्रिद्. दङ. शि. ब. म्ञाम् प. ञिद्. लेग्स्. फ्यग्. र्ग्य. छे ।।

ए.म. म्खऽ.ऽग्रो. ग्सङ.बऽि. स्कद् ।।

ये.शेस्. स्क्येस्. पऽि. र्नल्. ऽब्योर्. गर्. लऽङ. दोग्स्. मेद्. पस्. ।।
द्बङ. फ्युग्. थब्स्. दङ. ल्दन्. पस्. म्थर्. स्क्येस्.[५] ब्चल्. बर्. ब्य ।।
४१. द्मन. पऽि. ग्रोङ. ख्येर्. शुग्स्. नस्. गङ. दङ. म्थुन्. प. ल ।
छुङ. दु. छुङ. दुस्. ब्रिद्. चिङ. छेन्. पो. दे. ल. स्ब्यन् ।।
दे. यिस्. ब्स्ञोन्. ब्कुर्. ब्यस्. पऽि. र्जेस्. नि. जि. स्ञोद्. प ।
ब्दग्. गिर्. मेद्. पऽि. सेम्स्. क्यिस्. दे. ल. ग्तङ. बर्. द्ब्य ।।
४२. कुन्. दु. ऽखग्रम्. शिङ. म्छन्. म. रब्. तु. ब्र्तग्. ब्य. स्ते[७] ।
रिग्स्. दङ. ख. दोग्. म्छन्. मऽि. छोग्स्. क्यिस्. रिम्. शेस्. द्ब्य ।।
रङ. गि. बु. मो. म. दङ. स्त्रिङ. मो. छ. मो. दङ ।
ग्युङ. मो. छोस्. म. स्मद्. ऽछोङ. ग्सो. रस्. क्यिस्. ऽछोब् ।।
४३. स्ङो. ब्सङम्. दङ. नि. द्कर्. शम्. द्मर्. सेर्. स्मुग्. नग्. म. ।
स्मे. ब. चन्. ल. ग्युद्. स्ब्यर्. स.ल. बऽि . फ्यग्. र्ग्य. नि ।।
31b ब्चु. द्रुग्. लो. लोन्. रब्. तु. म्जेस्. प. स्क्र. सेर्. लि ।
उत्प. ल. यि. द्रिस्. ख्यब्. नु. म. स्र. मख्रेग्स्. र्कद्. प. फ्र. ।।

सब को उतमकालमें उपदर्शन कर. गुरु धर्म कोई नहीं।।

३८. तर्जनी से लखाये अन्तरिक्ष दीखै नहीं, गुरु से लखाया गुरु तैसा भी।
तैसा ही व्रत योगी नगर चिन्तै,
राजप्रासाद पइठि (राज) कन्या से क्रीडै ।।

३९. खटाई के हटने से पूर्व जिमि,
खटाई देखै सर्व-विषय तथतामें* जानै ।
गणचक्र के समीप ललाट में ही, कुन्दुरु×,
आकाश-अवकाश में महासुख देखि ।।

४०. संकेत औ सद्वचनी योगियों ने (देखा) भव
औ शान्ति के तुल्य शुभ महामुद्रा ।

अहो डाकिनी गुह्य वचन ।।

ज्ञान-उत्पन्न कहीं भी निःशंक योगी,
ईश्वर-उपाययुक्त अन्त्यजन्म (का) यत्न करै ।।

४१. हीन नगर में बैठि जिसके सपक्षमें,
उस महान् को थोड़ा-थोड़ा बचा देना ।
उससे उपासित जितना द्रव्य,
आत्मा नहीं उसे चित्तसे वहाँ छोड़ै ।।

४२. सर्वभ्रामक लक्षणा भले निरखै,
जाति वर्ण लक्षणा की गोष्ठीसे परिपाटी जानै।
अपनी कन्या माता भगिनी नतनी औ डोमनी रजकी वेश्या दरजिनी ।।

४३. पथरकटिनी औ श्वेतपटी। लाली पीली धूँधली काली,
तिलवाली संततियुक्त सुकर मुद्रा ।
षोडशी अतिसुंदरी पीतकेशी, उत्पलगंधी, कठोरकुचा तनू-उदरा ।।

---

*वास्तविकता। ×भग, आकाश।

४४. स्मद्. किय. श्ेङ. ग्यॅस्. भ.ग. रुब्. चिङ. छगस्. पऽि. म्दङस।
क्युंद्. म्दङ. ब्चस्. ग्सङ. थुब्. गुस्. पस्. रब्. तु. ग्शोल् ॥
दद्. प. रब्. तु. ब्र्तन्. शिङ. तोंग्. प. छुङ. ग्युर्. प ।
तंगस्. ग्सुम्. ल्दन्. पऽि. फ्यग्. र्ग्य. दब्ङ. गिस्[1]. स्मिन्. पर्. द्ब्य ॥

४५. योन्. तन्. ब्सुङ. न. रङ. गिस्. रिग्. पऽि. ये. शेस्. स्ब्यिन् ।
स्कब्स्. सु. रो. स्ञोम्स्. ग्ञुग्. मऽि. ये. शेस्. फ्यग्. ब्र्ग्यं. ब्सुङ ॥
ब्चुन्. मोऽि. शु. क. द्गुग्. पऽि. फ्यग्. र्ग्य. छेन्. मो. नि ।
दुस्. क्यिस्. ब्स्ड्ु. ब. ब्यस्. नस्. तोंग्. मेद्. म्खऽ. ल. लस्ति. म ॥

४६. रेस्. ऽगऽ. छोङ. दुस्. ग्नस्. न. जि. ल्तर्. ऽदुग्[2] ।
दोन्. ग्यिस्. दोन्. लं. ब्ल्तस्. नस्. दोन्. ञिद्. गर्. द्गर्. ब्तङ. ॥
रेस्. ऽग्ऽ. दुर्. ख्रोद्. शुग्स्. नस्. स्प्रोन्. म. दग्. ल. स्प्योद् ।
ञम्. ङ मेद्. पऽि. सेम्स्. क्यिस्. यि. दग्स्. ग्नस्. सु. ञल् ॥

४७. ग्दोल्. प. नंम्स्. दङ. ऽग्रोग्स्. तो. रो. यि. ऽखोर्. लो. द्रङ ।
दि. ब्य. मेद्. पऽि. स्प्योद्. प. छद्. दु.[3] ग्सुङ. मि. ब्य ॥
ग्लु. गर्. गि्लङ. बु. चेंद्. ऽजो. रोल्. मोऽि. छोग्स्. सु. ऽजुग् ।
हे. रु. क. यि. गर्. दङ. द्रुग्. ल. स्क्येस्. सोग्स्. ग्लुस् ॥

४८. सेम्स्. ल. ग्सेङस्. ब्स्तोङ. चुङ. सद्. स्क्यो. बर्. मि. ब्यऽो ।
ग्यंब्. तु. ल. ब. ब्गो. शिङ. यन्. लग्. सङस्. मस्. स्प्रस् ॥
ऽखोर्. लो. ल्दन्. पऽि. थोर्. छुग्स्. स्प्यिग्[4]. चुग्. दग्. तु. ग्सुङ ।
रुस्. पऽि. दुम्. बुस्. यन्. लग्. कुन्. ल. ब्र्ग्यंन्. ब्यस्. नस् ॥

४९. ग्लङ. छेन्. स्तग्. गि. पग्स्. पस्. स्तोङ. दङ. स्मद्. द्क्रिस्. ते ।
ख. ट्वां (ग). द्रिल्. बुर्. ल्दन्. प. लग्. तु. थोग्स्. पर्. ब्य ॥
ग्लङ. छेन्. स्म्योन्. पऽि. स्प्योद्. प. ल्कुग्स्. प. ब्यस्. नस्. नि ।
ब्य. मेद्. मि. ब्य. मेद्. पऽि. स्प्योद्. प. रङ. शुग्स्. क्यिस् ॥

५०. ग्लङ. छेन्. म्छो. रु. शुग्स्. ऽद्र. तंग्. तु. स्म्योन्. सेम्स्. क्यिस् ।
द्मन्. पऽि. छोस्. नंम्स्. स्प्यद्. न. ग्रोल्. बर्. म्दऽ. ब्स्मुन्. स्म्र ॥

४४. विपुल भग योनि प्रहारि रति कान्त,
तांत्रिकी-सहित गुह्य सेवन में अतिनिम्न।
अति दृढ़ श्रद्धा कर कल्पना में क्षुद्र हो,
त्रिलिंगी मुद्रा के वश परिपक्व होइ।

४५. गुण-ग्रहण करि स्वयं विद्या-ज्ञान देइ,
अवकाश-समरस निज ज्ञान मुद्रा गहै।
रानी का शुक्र खींचै महामुद्रा,
काले संग्रह करि निर्विकल्प आकाशे लीन होइ ।।

४६. कभी हाट के स्थान में ऐसा रहै, अर्थ से अर्थ को दखि ही नाचै-उच्चाटै।
कभी श्मशान में बैठि दीप बारि, निर्भय चित्त से प्रेत-स्थान में सोवै ।।

४७. चंडालों का साथी सुख से चिता-चक्र शीतल करै,
इस क्रिया विना चर्या का प्रमाण नहीं।
गीत नृत्य वाद्य क्रीड़ा गन्धर्व-समाज में प्रविशै,
हेरुक के नृत्य आदि के गीत से ।।

४८. चित्त को ऊपर उठा जरा भी खेद ना करै,
पीठ में कस्तूरी लगा अंग ताम्र से रचै।
चक्र की शिखा सामान्य चूड़ा में धरै,
अस्थिखंड से सारे अंग को भूषित करै ।।

४९. हाथी बाघ का छाला ऊपर औ नीचे लगा, खट्वांग घंटा हाथ में धरै।
मस्त हाथी की चाल से जड़ बन निष्क्रिय अनिष्क्रिय चर्या में स्वयं बैठै ।।

५०. सरोवर में बैठे गज-सा सदा विक्षिप्त-चित्त,
हीन धर्मों को आचरि मुक्त होइ सरह भणै।

ए.म. म्खऽ.ऽग्रो. गसङ.बऽि. स्कद् ॥

स्न. छोग्स्. छोस्. नंमस्. थम्स् चद्.. रो. ग्चिग्. पर् ।
स्तोन्. पर्. ब्ये्द्. प. ब्ल. म.[६] दम्. प. ञिद. यिन्. ते ॥

५१. दङ. पऽि. म्छु. दङ. म्छुङ.स्. पऽि. र्जे. ब्चुन्. मछोग्. दे. नि ।
गुस्. पऽि. सेम्स्. क्यिस्. ग्चङ. मऽि. स्बि्य. बोर्. ब्लङ. बर्. ब्य ॥
ग्चिग्. तु. ब्स्दुस्. पऽि. सेमस्. नि. म्छोन्.ब्येद्. ब्ल. म. स्ते ।
म्छोन्. पर्. ब्य. बऽि. ग्शि. नि. स्लोब्. पऽि. स्ञिङ. ञिद्. दो ॥

५२. दे. र्तोग्स्. प.[७] यिस्. स्दुग्. ब्स्ङल्. थमस्.चद्. स्रुद्. चिग्. ल ।
32a जोम्स्. पर्. ब्येद्. पऽि. द्पऽ. बो. दे. नि. द्रिन्. चन्. पस् ॥
दोन्. ल. ब्ल्तस्. नस् ब्यस्. प. द्रिन्. दु. ग्सो. बऽि. फ्यिर् ।
स्मन्. पऽि. ग्र्यल्. पो. दे. नि. र्तग्. तु. ग्सुङ. बर्. ब्य ॥

५३. ऽखोर्. बऽि. ग्र्य. म्छो. सब्. चिङ. ग्यु[१]. छे. लस् ।
स्ग्रोल्. बऽि. ग्रु. म्छोग्. दे. नि. ग्शन् मेद्. दे ॥
दम्. पऽि. ग्रु. ल. ब्र्तेन्. नस्. ब्दे. छेन्. ञोंद्. ग्युर्. पऽि ।
स्तोब्स्. छेन्. गञोन्. प. दे. नि. ग्यो. मेद्. कुन्. ग्यिस्. ब्कुर् ॥

५४. ये. शेस्. ञि. म. ल्त. बुऽि. ऽोद्. सेर्. दग्. प. यिस् ॥
म. रिग्. पर्. ब्येद्. पर्. पऽि. स्क्येस्. बु. म्छोग्. दे. नि[२] ॥
ग्सेर्. ग्युर्. चि. ल्तर्. छोस्. नंम्स्. थम्स्. चद्. ब्दे. बर्. स्ग्युर्. म्जद् पऽि ।
थब्स्. ल. म्खस. प. ऽखोर्. लोस्. स्ग्युर्. ग्र्यल्. र्तग्. तु. ब्स्तिन् ॥

५५. छ. बो. ल्त. बुऽि. सेम्स्. क्यिस्. ग्ञिस्. ल्त. सिल्. ग्नोन्. चिङ् ।
गङ्. यङ्. म. स्पङस्. गोस्. प. मेद्. पऽि. ये. शेस्. ल्दन् ॥
ब्लो. म. ब्चोस्. शिङ.[३] ब्लो. यि. नंम्. प. ग्नस्. ग्युर्. प ।
ब्ल. म. दम्. पऽि. शल्. ग्यि. ब्दुद्. चि. लस्. नि. ब्युङ ॥

५६. सेम्स्. दङ. सेम्स्. लस्. ब्युङ. शेस्. थ. स्ञाद्. प. नंम्स्. क्यिस् ।
ब्र्तग्. प. ऽदि. नि. नंल्.ऽब्योर्. प. यि. ग्रोम्स्. नंग्स्. सु ॥
स्ग्युर्. बर्. ब्येद्. प. बल्. मऽि. शल्. ग्यि. पद्. मो. स्ते ।
थम्स्. चद्.[४] द्गे. बऽि. ब्शेस्. सु. ब्स्ग्युङ. ब. दे. लस्. ब्यङ ॥

अहो डाकिनी गुह्य बचन ।।

धर्म नाना, (पर) सबका रस एक देशना करता सद्‌गुरु है ।।

५१. हंस-चंचु तुल्य महाभट्टारक उसे गौरव-सहित शिर पर लेवै ।
एकाग्रचित्त लखै (सोई), गुरु लक्ष्य वस्तु शिष्य का हृदय है ।।

५२. वह समझै सारे दु:ख को क्षण में, नाश करै उसे, वीर नायक है ।
अर्थ देखि दया करने के लिए, दया वह वैद्यराज सदा धारै ।।

५३. गंभीर संसार-सागर महाकारण से, तारक नाव उत्तम सोइ अन्य नहीं ।
सुनाव के आश्रय महासुख पाने का, महाबल अचल मित्र सोई पूजै ।।

५४. सूर्य सम ज्ञान की शुद्ध प्रभा से, अविद्या का अन्त करै उत्तम पुरुष सोई ।
सुवर्ण जिमि सारे धर्मों का सुख में परिवर्तक,
उपाय-चतुर चक्रवर्ती (को) सदा सेवै ।।

५५. नदी जिमि चित्त से द्वैत-दृष्टि का पराभवकारी,
कुछ भी न छाड़ि (सो) निर्लेप ज्ञानी ।
बुद्धि ना मथि बुद्धि के आकार में स्थित, सद्‌गुरु के मुखामृत से संभूत ।।

५६. चित्त औ चेतसिक व्यवहारों से, यह (है) परीक्षा योगी की मित्रों में ।
परिवर्तनकारी गुरुमुख कमल,
सारे कल्याणमित्रों में परिवर्तन उससे होवै ।

५७. ग्युद्. नंम्स्. कुन्. दु. स्प्रस्. शिङ. थ. स्ञाद्. क्यिस्. द्बन्. प ।
सङस्. ग्यंस्. नंम्स्. क्यि. ग्सङ. ब. सुस्. क्यङ. शेस्. मि. ऽग्युर् ।।
मन्. ङग्. मिग्. गिस्. म्थोङ. शिङ. द्बङ. बऽि. रस्. ख्यब्. प ।
शब्स्. क्यि. ङंल्. ल. रेग्. न. ये. शेस्. रिग्.[१] पर्. ऽग्युर् ।
५८. स्न. छोग्स्. द्ङोस्. पोऽि. छोस्. ल. स्तोङ. पऽि. म्द. फंन्. दङ ।
स्तोङ. प. स्नङ. बऽि. थब्स्. क्यिस्. म्योङ. बर्. ऽग्युर्. ब्येद्. प ।।
शेस्. रब्. शेस्. पस्. स्नङ. ब. ग्शल्. ब्यर्. म्थोङ. ब. स्ते ।
शेस्. रब्. दे. नि. ब्ल. मेद्. स्लोब्. द्पोन्. दग्. लस्. ऽब्युङ ।।
५९. ञोन्. मोंङस्[२] थम्स्. चद्. थब्स्. क्यिस्. म्छोग्. तु. स्ग्युर्. ब्येद्. दङ ।
तोंग्. पऽि. स्. ग्. ङ्. गङ. गिस्. स्ग्युर्. बर्. मि. नुस्. प ।।
ऽदि. नि. मन्. ङग् रिङ. पो. लस्. नि. ङेस्. ऽब्युङ. दङ ।
दे. यङ. जें. ब्चुन्. मथु. लस्. ङेस्. पर् ञोंद्. पर्. ग्युर् ।।
६०. दे. फ्यिर्. ग्युद्. पर्. ल्दन्. पऽि. ब्यिन्. लंब्स्. गङ. ल्दन्. प ।
32b दुस्. थब्स्. ब्स्तेन्. प. म्खस्. पस्. तंग्. तु. ब्स्तेन् पर्. ब्य ।।

ए.म. म्खऽ.ऽग्रो. ग्सङ.बऽि. स्कद् ।।

थब्स्. दङ. शेस्. रब्. रङ्. ब्शिन्. म्ञाम्. प. ञिद्. तोंग्स. नस् ।।
६१. ऽोद्. ग्सल्. लस्. नि. ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. प. ञोंद्. पर्.ऽग्युर् ।।
स्.ल. ब. ग्यंस्. ऽद्र. ब. नि. गोम्स्. प. लस्. ब्युङ. स्ते[१] ।
ग्सल्. बर्. ब्येद्. प. सा. लु. स्.लऽि. ऽोद्. ऽद्रर्. स्प्योद् ।।
द्ङोस्. ग्रुब्. कुन्. ग्यि. चं. ङ. दों. जें. स्लोब्. द्पोन्. यिन् ।
६२. लेग्स्. पर्. स्ब्यङस्. प. ग्युं. ञि.द्. ऽब्रस्. बु. कुन्. ग्यि. लुस् ।।
ब्दे. बर्. ग्शेग्स्. पऽि. ब्कऽ. दङ. म्थुन्. पर्. ब्य. बऽि. फ्यिर् ।
ब्यङ् छुब्. सेम्स्. द्पऽ. ब्दे. बऽि. म्गोन्. पोस्.[२] लेग्स्. ग्सुङस्. प ।।
छोस्. क्यि. स्कु. दङ् लोङस्. स्प्योद्. जोंग्स्. दङ. स्प्रुल्. पऽि. स्कु ।
ङो. बो.जिद्. क्यि. स्कु. नि. ग्युं. ऽब्रस्. रब्.श.स्. ब्य ।।
६३. स्गो. स्कुर्. ग्ञिस्. क्यिस्. स्तोङ. ब. ग्ञिस्. मेद्. छोस्. यिन् ते ।
ङो. बो. ञिद्. क्यि. ब्दे. ब. दे. नि. लोङस्. स्प्योद्. छे ।।

५७. सारे तंत्रों में रचि व्यवहार से एकान्त, बुद्धों का रहस्य कोई ना जान ।
उपदेश-नेत्र से देखि वशिता-पट-व्याप्त, चरणधूलि स्पर्श करि जानै ।।

५८. नाना वस्तु धर्म पर शून्य वाण फेंकि, शून्य-भासी उपाय से अनुभव करै ।
प्रज्ञा-ज्ञानसे प्रभासित प्रमेय देखै, सो प्रज्ञा अनुपम आचार्योंसे होवै ।।

५९. सर्व क्लेश उत्तम उपायसे परिवर्तन कर, समझ शल्य जो न परिवर्तन करै ।
यही उपदेश हृदय-निर्गत औ, सोई भट्टारक* प्रभावसे निश्चय पावै ।।

६०. अतः तंत्रधारी अधिष्ठान-पूर्ण, हो समय-उपाय-धर पंडित को सदा अवलंबै ।
अहो डाकिनी गुह्य बचन ।।
प्रज्ञा-उपायके स्वभावको समता समुझि, प्रभासे सहज को पावै ।।

६१. भावनासे विपुलचंद्र-सा हो, प्रकाशशाली रवि-शशि-किरण सदृश आचरै।।
सर्वसिद्धि मूल (है) वज्राचार्य, सुधौत सर्व-हेतु-फल शरीर ।।

६२. सुगत-वचन के अनुसार क्रियार्थ के लिए, सुख-स्वामी बोधिसत्त्व-सुभाषित ।
धर्मकाय संभोग औ निर्माणकाय, स्वभाव-काय ही हेतु-फल मूल जानै ।।

६३. पक्षबन्धन अभ्याख्यान उभय शून्य अद्वय धर्म में, स्वभाव सो सुख-महासंभोग ।

* गुरु, दृढ़संकल्प, हेरुक ।

स्न.छोग्स्.प.यिस्. ऽग्रो.ब. थम्स्.चद्[३]. स्प्रुल्.प.लस् ।
द्ब्येर्.मेद्. येशेस्.ञिद्. नि. कुन्.ग्यि. ब्दग् ।।

६४. स्क्येद्.पर्.ब्य. दङ. ब्येद्.पऽि. रङ्ब्शिन्. मि.द्मिग्स्. क्यङ ।
गोम्स्.पऽि. म्थु.यिस्. दोग्स्.प. थम्स्.चद्. सिल्.म्नन्.नस् ।।
ऽब्रस्.बु. ग्ञिस्. नि. रङ. दङ'. ग्शन्. दोन्. कुन्.छोग्स्. यिन् ।
ग्युं. दङ. ऽब्रस्.बुर्[४]. ब्तग्स् . क्यङ . ङो.बो. दे. द्ब्येर्.मेद् ।।

६५. स्मोन्.लम्. स्ञिङ.र्जे. स्तोब्स्.क्यिस्. ग्सुग्स्. स्कु. र्नम्. ग्ञिस्.
बुम्.प. ब्सङ. द्पग्.ब्सम्.शिङ. दङ. नोर्.बु. रिन्.छेन्. ल्तर् ।।
गङ.गिस्. ब्सुङ.ब.मेद्.पऽि. स्कु. नि. रब्.तु. म्ज़ेस् ।
ग्दुल्.ब्य.र्नम्स्.ल. स्न.छोग्स्प.यि. ग्सु ग्स[१]. शर्.बस ।।

६६. दे.दग्. थम्स्.चद्. व्सम्. मिं. ख्यब्. (प) स्प्रुल्.प. स्ते ।
ब्सम्.दु.मेद्.पऽि. ये.शेस्. रङ.व्युङ. गङ. व्स्गोम्.प ।।
देर्. नि. ऽब्रस्.बु. म.लुस्. ब्स्गोम्.पर्. ग्युर्.ब. यिन् ।
थेग्.प.छेन्.पो. ब्ल.मेद्. स्ञिङ्.पोऽि. लम्. ऽदि. नि ।।

६७. ऽब्रस्.वु. लम्.दु. ख्येर्.नस्. ग्दोङ.नस्. ऽब्रस्. ग्नस् ।
ग्शन्.दोन्. फुन्.सुन्.छोग्स्.प. ऽब्रस्.बुऽि. म्छोग्. यिन्. ते ।।
स्ब्यङस्.प. ग्चो.बोर्. ग्युर्.प. सोग्स्.लस्. दे. नि. ऽब्युङ ।
ग्रोल्.ब. छेन्.पो. लस्. स्ब्यङस्. रि.ब.मेद्.पऽि. सेम्स् ।।

६८. ग्युंन्. मि.ऽछद्.पऽि. म्थु.लस्. ङेस्.प. ञेद्.पर्. ग्युर् ।
स्क्येस्.बु. ख्. नि. छेन्. गङ.ल. ल्ह.र्जेस्. ऽदि. स्क्येस्.पस् ।।
ग्दुङ.प. म.लुस्. थम्स्.चद्. स्कद्.चिग्. ञोर्. शि. थिम् ।
सेङ.गे. ग्लङ.छेन्. स्म्योन्. दङ. स्तग्. दङ. द्रेद्.मो. दङ ।।

६९. ग्चन्.सन्. ख्रो.बो. दुग्.स्प्रुल्. मि. दङ. ग्यङस्. (प.) दङ ।
र्ग्यल्.पोऽि. छद्.प. दुग्. दङ. थोग्. दङ. ल्चे. ऽबब्.प[१] ।
थम्स्.चद्. ङो.बो. दे. ञिद्. यिन्.फ्यिर्. ग्नोद्.प.मेद् ।
र्नम्.तोंग्. द्ग्र.छेन्. छोम्स्.पस्. द्ग्र. ऽदि. थम्स्.चद्. छोम्स् ।।

नाना जगत् सब निर्माण से (हुआ), अभेद ज्ञान ही सबका आत्मा ।।

६४. उत्पाद्य-उत्पादक का स्वभाव न पाते भी,
भावना शक्ति से सब नाश करि ।
उभय-फल है स्व-पर के अर्थ संपत्ति,
हेतु-फल की परीक्षा भी उसके भाव से न भिन्न ।।

६५. अधिष्ठान करुणाबल से रूप-काय द्विविध हुआ,
भद्रकलश, कल्पवृक्ष औ मणिरत्न जिमि ।
न धरने की जो अतिसुन्दर, विनेयों की काया नाना रूप उद्गमन से ।।

६६. वे सर्व अचिन्त्य तारण है, चित्त में नहीं ज्ञान जो स्वयंभू भावना ।
वहीं अशेष फल भावित है, अनुपम महायान-सार का यही मार्ग ।।

६७. मार्ग में फल को लेजा सामने फले स्थित,
अन्य के अर्थ सम्पन्न फल-उत्तम है ।
मुख्य भूत हो घोष आदि से यही हुआ,
महामोक्ष से घोष इच्छा विना चित्त ।।

६८. अविच्छिन्न स्रोत की शक्ति से अवश्य पावै,
पुरुष महाछाग जिससे यह हव्य उपजै ।
अशेष व्याल सब उपशम-मग्न, सिंह गज पागल बाघ औ भालू ।।

६९. श्वापद तीव्र आशीविष मानुष औ उलूक,
राज-निग्रह विष छत औ जिह्वा निपात ।
सर्व वस्तु सोई होने से हानि नहीं, महाशत्रु लुटेरा दुश्मन यह सबको लूटै ।।

---

१. शिष्य, साधक ।

७०. ब्दग्. ल्तऽि. ग्दुग्.प. थुल्.बस्. ग्दुग्.प. थम्स्.चद्. थुल्. ।
दे.फ्यिर्. सेम्स्.क्यि. नोर्.बु. ऽदि. नि. दम्.पर्. ब्योस्. ।।
ग्रे. म. म्खऽ.ऽग्रो. ग्सङ.बऽि. स्कद्[2] ।।
स्कु. दङ. ग्सुङ. दङ. थुग्स्.क्यि. ग्सङ.ब. गङ. रिग्.प ।
स्क्येस्.बु. दे.ल. ग्दुग्.पऽि. ल्कुग्स्.प. योद्. म. यिन् ।।

७१. लस्.नँम्स्. गङ. लऽङ. द्गे. दङ. स्दिग्.प. ग्ञिस्. र्तोग्स्. प ।
गङ. शिग्. र्चोल्.व. दे. नि. ग्दुग्.पऽि. स्व्योर्.बर्. ब्शद् ।।
गङ.सग्.गिस्. स्प्योद्. दे. नि. रङ.गिस्. रङ[3] ब्चिङस्.पऽो ।
मोस्.प. ग्ँयुन्. छग्स्.प. यि. नङ.वियस्. ऽखोर्.बर्. ल्तुङ ।।

७२. र्तोग्.गिस्. द्गोस्.प. मेद्. चिङ. स्ङ.मस्. छोग्.पर्. सद् ।
गङ.ल. द्मिग्स्. क्यङ. द्मिग्स्.प. दे.यिस्. थर्.प. स्ग्रिब् ।।
ब्सङ.पोर्. र्तोग्स्. क्यङ. दे.यि. नद्.क्यिस्. ऽखोर्.बर्. ल्तुङ ।
द्मन्.पऽि. लस्.ल[1]. ब्र्तग्. नँ.नम्. स्मिन्. ग्र्युन्. मि.ऽछद् ।।

७३. ब्तग्. प. मेद्.पऽि. सेम्स्. नि. नम्.म्खऽ.ल्त.बुर्. ग्नस् ।
नम्.म्खऽ. ग्नस्.प.मेद्.प. दे. ञिद् थ.स्ञद्.ब्रल् ।।
ब्रल्.बऽि. सेम्स्.ल ब्र्त. दङ. द्प्यद्.प. मि.द्गोस्.विय ।
रङ.ब्शिन् ग्शग्.प. जि.ल्त.बु. ञिद्. दे.ल्त. ञिद् ।।

७४. ब्रस्.बु[5].थोग्स.प.मेद. प. ग्दोद्.नस. रङ.ल. ग्नस्
दे.पियर्. रे. दङ दोग्स्.पऽि. ग्ञोन्.पोस्. छिङ. मि. द्गोस् ।।
ब्र्द. दङ थ.स्ञद्. ब्तग्स्.प. कुन्. क्यङ. दे.ब्शिन्. ते ।
यङ. दम्. म.यिन्. यिन्.प. म्खस्.प.कुन्.ग्यि. युल् ।।

७५. गँ्यु. दङ्. ऽब्रस्.बु. द्ब्येर्.मेद्. ऽदि. नि. स्ञिङ.पोऽि. सेम्स्[6] ।
दे. म्योङ.ब.यि. ऽबद्.पस्. कुन्.लस्. ब्चल्. मि.द्गोस् ।।
दम्.प. ब्स्तेन्. दङ. ञोन्. दङ. थोस्.प. ल्हुर्. लेन्. दङ ।
योन्.तन्.द्बङ.लस्. ऽब्युङ. श्स्. ब्यिन्.र्लब्स्. नोद्.प. दङ ।।

७६. तिङ.ऽजिन्. ब्लोर्. ग्शन्.नस्. नि. स्ब्योर्. दङ. स्गोम्.प. दङ ।
फन्. ङस्. स्ङोन्.दु. सोङ.नस्. ब्र्तुल्.शुग्स्.[7] गङ. स्प्योद्. प. ।।

७०. आत्मदृष्टि-विष के दमनसे सब विष दमित, अतः यह चित्त-मणि उत्तम करै।
अहो डाकिनी गुह्य वचन ॥
काय वाक् मन के रहस्य को जो जाने,
उस पुरुष को व्याल (से) जड होना नहीं ॥

७१. कर्म जिन्हें पुण्य औ पाप दो समझैं,
जो व्यायाम सोई व्याल-योग कहिए।
पुद्गल[२] करि सोई अपने आप बद्ध,
अविच्छिन्न अधिमोक्ष भीतरी भव में गिरै ॥

७२. कल्पना से अनिच्छुक पहिले ही गण मारै,
जो उपलब्ध भी उस उपलब्धि से मोक्ष ढँकै।
भले समुझि भी उसके रोग से संसार में गिरै,
हीन कर्म को परखै तो परिपक्व सन्तान अविच्छिन्न ॥

७३. ख-सम निर्विकल्प चित्त रहै, गगन (सम) न रहे सोई व्यवहाररहित।
विरहित चित्तमें कल्पना औ परीक्षा नहीं चाहिए,
स्वभावस्थापना जैसे (हो) तैसे ही ॥

७४. फल अव्याहत प्रथमसे अपनेमें रहै,
तिससे आशा औ शंका प्रतिपक्ष से बँधे नहीं।
संकेत औ व्यवहार सब परीक्षा भी वैसी,
असम्यग्[३] होना सब पंडित का विषय ॥

७५. हेतु-फल अभिन्न यही हैं सार चित्त,
इसे अनुभवके प्रयत्नसे सर्वत्र ढूँढिये।
सन्त-सेवन, उपश्रवण में तत्परता औ, गुणवश संभूत यह अधिष्ठान-हानि औ ॥

७६. समाधि बुद्धिमें अन्यसे प्रयोग औ भावना,
हित निश्चय करि पूर्व-गतिसे व्रत जो आचरै।

---

२. व्यक्ति। ३. बेठीक।

दे. दग्. थम्स्.चद्. लोग्.र्तोग्. ब्चोस्.म. ल. स्प्योद्. यिन् ।
स्ञिङ.पोऽि. सेम्स्. नि. स्क्योन्. दङ. योन्.तन्.र्नम्स्. दङ. ब्रल् ॥

७७. दोन्. दे.ञिद्. नि. ब्य.ब. गङ. यङ मि.द्गोस्.क्यि ।
ब्य.ब. ब्तङ.बऽि. सेम्स्. नि. ब्दे.ब.छे. म्छोग्. ञिद् ॥
ल्ङ.रिग्. ल.सोग्स्. श्. ऽदोद्. ग्दोन्.ग्यिस्[1]. सिन् ।
द्ङोस्. पोर्. ऽजिन्. पऽि. दुग्. गिस्. रङ. गि. सेम्स्. ल. ख्यब् ॥

७८. फ्यि.रोल्. स्पङस्.पऽि. सेम्स्. नि. नङ.दु. ऽजोग्.प.चन् ।
स्ञिङ.पो.ल. स्प्योद्. र्नमस्.क्यिस्. ऽदि. ञिद्. ब्सम्.पर्. रिग्स् ।
र्तोग्.गे. स्प्रोस्.पऽि. स्बुन्.प. फ्यिर्. ब्सल्. नस् ।
ग्ञुग्. मऽि. द्बङ.पो.दग्.लस्. स्क्येस्[2].प.यि ।

७९. दोन्. ग्यि. स्ञिङ.पो. ब्ल.न.मेद्.प. ऽदि ।
र्तोग्स्.पस्. ब्चु.ब्शिऽि. स.ल. ग्नस्.पर. ऽग्युर् ॥
र्नल्.ऽब्योर्. ये.शेस्.छेन्.पो. गङ. ऽदोद्. प ।
रिम्. दङ. चिग्.चर्. ऽजुग्.पऽि. रिम्.छोस्.क्यिस् ॥

८०. ये.शेस्.म्छोग्.गि. गो.फङ. स्ञिङ.पो.र्नम्स् ।
ब्कोद्.पस्. ऽग्रो[3].र्नमस्. फ्यग्.र्गय.छे. थोब्. शोग् ॥

स्ञिङ्.पो. ब्ल.न.मेद्.प. ग्तन्.ल. द्बब्.प. दो.ह. म्जोद्. चेस्. ब्य. ब.,
र्नल्.ऽब्योर्.क्यि. द्बङ.फ्युग्. द्पल्. स.र.ह.पस्. म्जद्.प. र्जोग्स्. सो ॥

॥ र्ग्य.गर्.ग्यि. म्खन्.पो. बज्र.पाणि. दङ्. ब्ल.म. ऋ.सुस्. शुस् ॥

ये सब उलटी समझ कृत्रिम चर्या[1] है, सारचित्त (तो है) गुणदोषविवर्जित ।।

७७. सोई अर्थ-क्रिया[2] कुछ नहीं चाहिए, क्रिया-रहित चित्त महासुख उत्तम (है)।

पंच विद्या आदि राग-द्वेष रज्जुसे बँधा ही,

धारा विष अपने चित्तमें व्याप्त ।।

७८. बाहर क्षिप्त चित्त भीतर निक्षेपी, सारतः चर्याओंसे यही ठीक चिन्तन ।

अवबोध-प्रपंच के भुस को बाहर फेंकि, निज इन्द्रियों से (जो) उत्पन्न ।।

७९. अनुपम यह अर्थ-सार, अवबोध कर चौदह भुवन में रहै ।।

योग महाज्ञान जो चाहै, क्रम औ सद्यःप्रवेश क्रमधर्म से।

८०. उत्तम ज्ञान का कपाट सारोंसे विरचित, जगतके लोग महामुद्रा पावें ।।

इति अनुत्तरसार निर्णय दोहाकोश नाम योगीश्वर श्री सरहकृत समाप्त ।
भारतीय पंडित वज्रपाणि औ गुरु असु द्वारा अनुवादित ।

---

१. व्रत, साधना। २. वास्तविकता की कसौटी है—वस्तु का अर्थयुक्त क्रिया में समर्थ होना।

४. क. ख. दोहा

(भोट, हिन्दी)

४(क). क. ख. दोहा

(भोट)

ब्चोम्.ल्दन्.ऽदस्. द्पल्. हे.रु.क.ल. फ्यग्.छल्.लो ।

61.१. क. नि. युम्.गिय. पद्.मऽि. नङ.दु. ग्नस्.प. ऽदि. यिन्. ते ।
लुस्. नि. नंम्.पर्.ब्चिङस्.शिङ. ब्दुद्.चि. ऽजुग् ॥
म्गुल्.नस्. ख्युद्.पऽि³. डों.बि. ग्श़ोन्.नु.म ।
ग.बुर्.ऽजुग्.चिङ. ऽदि. नि. प्यिद्.कऽि. यल्.ग्. यिन् ॥

२. ख. नि. नम्.म्खऽ. ग्नस्.पर्. द्प्रल्. बऽि. स्तोङ.प. स्ते ।
द्गेस्. दङ. मि.द्गेस्. म.गोस्. ग्चेर्.बु.ल ॥
स. शिङ. ऽथुङ. यङ. म्य.ङन्.ऽदस्.ल. गनस् ।
नंल्.ऽब्योर्. ग्चेर्.बु. ब्जुङ.नस्. शिन् दु. द्गऽ ॥
नम्[४].म्ख.दग्. नि. ख्यब्.चिङ. ब्र्तन्. ग्युर्.पऽो ।

३. ग. नि. नम्.म्खऽ. ऽजो.शिङ. जो.शिङ्. ऽथुङ.बर्. ब्येद् ॥
गं.गा. य.मु.न. ग्ञिस्. नि. लेग्स्.पर्. छिङस् ।
स्त्रिद्.ल. ब्र्तेन्.ते. ऽग्रो. ऽोङ. ऽछद्.पर. ऽग्युर् ॥

४. घ. नि. द्रिल्.बुऽि. स्ग्र.यिस्. द्पल्.ल्द्न्. हे. रु. क. नि. म्ञोस् ।
ब्दग्.मेद्.म.यिस्.[५] म्गुल्.नस्. यङ. दङ. यङ. दु. ऽख्युद् ॥
नंल्.ऽब्योर्.म.यिस्. लुंङ.नंम्स्. यङ. नस्. यङ. दु. ऽफो ।
ख्यिम्.ब्दग्.मो. नि. ग्ञुग्.मऽि. यिद्.क्यि. दङ. ल.ऽफो ॥

५. ङ. नि. ग्ञुग्.मऽि. रङ.ब्शिन्. रङ.ब्शिन्. ग्यिस्. नि. स्तोङ ।
ग्ञुग्.मऽि. ख्यिम्.ब्दग्.मो. ल. द्गे. दङ. मि. द्गे. मि. ऽफो.शिङ ॥

---

*स्तन्. ऽग्युर् ,ग्र्युद्, शि, पृ० ५ख ३–५७ ख २।

४(ख). क. ख. दोहा

(हिन्दी)

नमो भगवते श्री हेरुकाय ।

१. क-का (कुलिश) मातृकमल मध्ये स्थित यह काया बेधि अमृत झरै ।
गले बद्ध डोंबी कुमारी, कपूरसे निकली यह वसन्त शाखा ।।

२. ख-खा ख-सम वसि ललाट शून्य, पुण्य अ-पुण्य न चाहिये नग्नको ।
खा - पी निर्वाणमें बस, नग्न योगी गहि अति आनंदित
शुद्ध आकाश व्यापि दृढ़ हुआ ।।

३. ग-गा गमन लास्य करि-करि स्थूल कर, गंगा यमुना दोनों को भले बांधै ।
भव आश्रय करि गमनागमन खंडित होई ।।

४. घ-घा घनघन श्री हेरुक मुदित नैरात्मासे कंठे समाश्लिष्ट ।
योगिनी पवन बार-बार डोलावै, घरनी निज मन हंसमें लगावै ।।

५. ङ-ङा निज स्वभाव स्वभावसे शून्य, निज घरनीमें पुण्य-अपुण्य ना प्रसरे ।

ग्यं.न्. दु. नंल्[६].ऽब्योर्.प. नि. ब्दे.वर्.ब्येद्. नुस्. न।
नुब्.मोऽि. मुन्.प. छद्.नस्. ऽोद्.ग्सल्. पर्. ऽग्युर्(.प) ॥

६. चं. नि. द्गऽ.ब. ब्शिन्. नि.ऽदि. दङ. यङ.दग्.ल्दन्।
क्ये. हो. म्थऽ. ब्शि. दङ, नि. ब्रल्.पऽि. सेम्स्.ब्सुङ.चिग् ॥
स्कद्.चिग्. ब्शि. नि. यङ. दग्. ब्ल. मऽि. ग्सुङ. लस्. गो. वर्. ग्यिस्।
थिग्. ले. ब्शि. नि. मोंङस्.[७] पऽि. बग्.छग्स्.क्यिस्. नि. मि. शेस्. सो ॥

56.।७. छ. नि. द्बङ. पो. स्पोङस्. ल. दग्. पऽि. रङ. ब्शिन्. ग्यिस्।
ऽदोद्. योन्. दङ. नि. द्ङोस्. दङ. द्ङोस्. मेद्. स्पोङस् ॥
चल्. चोल्. गुंतम्. नंम्स्. दोर्. चिग्. ऽदि. नंम्स्. क्यिस्।
रो. ऽदि. थोङ. ल. नम्.म्खऽ.ल. नि. लोङ्स्.स्प्योद्.ग्यिस्॥

८. ज. नि. स्क्ये[१]. दङ. गं. दङ. ऽछि.ब.मेद्.पऽि. नम्.म्खऽ.यिन्।
गङ. दङ. गङ. दु. ब्ल्तस्. क्यङ. दे. दङ. देर्. नम्. म्खऽो ॥
जि.ल्तर्. ग्नस्.प. दे.ल्तर्. दे. नि. दे. ञिद्. दो।
जि. ल्तर्. म्थोङ. ब. दि. ल्तर्. दे. नि. दोन्. दम्. मो ॥

९. झ. नि. मे.तोग्. मङ.पोऽि. स.बोन्. जि.ल्तर्. ब्स्तेन्. प. दङ।
दे.ल्तर्. स्न.छोग्स्.क्यिस्. नि. फुङ.पो. ऽग्रुब्[२].प. यिन् ॥
स्न.यिस्. स्ब्रङ.चि. दङ. नि. मर्.ग्ञिस्. ऽथुङ.नुस्. न।
युन्.रिङस्.दुस्. दग्. ऽछो.ब. ल. नि. थे.छोम्. मेद् ॥

१०. स्कब्स्. ऽदिर्. ञ.यिग्.गि. द्रङस्.पऽि. छिग्स्. ब्चद्. ग्चिग्. मेद्. प
ऽदि. ऽग्रेल्.पर्. यङ. नि. ङ. दङ. म्छुङस्.सो.
श्स्.प. चम्.लस्. म. ब्युङ. ङो।

११. ट. नि. क्ये.हो. यङ.दग्. ब्ल.मऽि. ग्सुङ.गि. थिग्.ले. फब्।
स.ग्शि[३]. ऽगुल्.बस्. नम्.म्खऽ.लस्. नि. थिग्.ले. ऽजग् ॥
लम्.लोग्. चल्.चोल्. म.ब्येद्. क्ये.हो. नल्.ब्योर्.प।
ब्येद्.क्यिस्. चल्.चोल्.ग्यिस्. नि. ल्हन्. स्क्येस्. मि.र्तोग्स्. सो ॥

निरन्तर योगी सुख करै जो, निसि अंधकार काटि उसे प्रभा प्रकशै ।।

६. च-चा चउथ आनंद यह औ संयुक्त, अहो चउथ अनन्त चित्त गहो ।
चउ क्षण सम्यग् गुरुके वचनसे जानैं, चउ विन्दु मूढ़ के रागसे न जाना ।।

७. छ-छा छाडहु इन्द्रिय प्रतिक्रमण शुद्ध स्वभावसे, इच्छित गुण औ वस्तु-अवस्तु
आलमाल[१] कथायें छाडि इनसे, यह रसना देखनेको गगन में भिक्षा चरै ।।

८. ज-जा जन्मजरामृत्यु विना आकाश, जहँ जहँ भी देखै तहँ तहँ आकाश ।
जैसे रहै, तैसे सोइ-सोई, जैसे अनुभवै तैसे परमार्थ सोई ।।

९. झ-झा बहु कुसुम का जैसे बीज औ आश्रय, तैसे नाना स्कन्ध सिद्ध है ।
नासासे मधु घृत उभय पी सकै तो, दीर्घकाल तृप्ति होने में संदेह ना ।।

१०. इस स्थानमें अक्षरकी गिनतीका एक पद नहीं है । टीकामें
भी और 'ङ तुल्य' इति मात्र होने से अनुवाद नहीं हुआ ।

११. ट-टा अहो सद्गुरुवचन विन्दु के नीचे, मही कंपसे गगनसे विन्दु झरै ।
विपथ टालमाल[१] मत कर हे योगी, तू टालमाल सहज न समझै ।

१. बेकार ।

१२. **ठ**. ठऽि. स्ग्रस्. नि. स्ङग्स्.नंम्स्. ब्र्जोद्.प. दङ।
ठ.यि. यि.गे. ब्लङ्स्.नस्. ग्नस्.थोब्.ऽग्युर्॥
छुल्. ब्शिन्. लोङ. नि. तिङ.ङे.ऽज़िन्. नि. ऽफो[४].बर्.ऽग्युर्।
यङ.दग्.ब्ल.मस्. नम्. म्खऽ. गो.बस्. व्यङ.छुब्. यिन्॥

१३. **ड**. नि. स्ङग्स्.नंम्स्. ब्र्जोद्. चिङ. डों.बि. लोङ।
तुम्.मोस्. ब्स्रेग्स्.शिङ. छु.नंम्स्. ऽज़ग्.पर्. ऽग्युर्॥
ड.म.रु. नि ग्र.न.ह.यि. स्कद्.दु. ग्रग्स्।
ड.म.रु. दे. ब्सुङ्स्.बस्. नल्.ऽब्योर्. म. स्ग्र. यिन्.॥

१४. **ढ**. नि. रिल्.प. फोब्स्[५]. नंम्. प.ग्चिग्.तु. ख्यब्.पर्. ग्युर्।
सेम्स्.नि. ऽफोब्स्. ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.पऽि. म्छोग्. तु. ग्युर्॥
द्बङ.पो. ल्ङ. यङ. ऽफो. शिङ. ल्ह. न. स्क्येस्. देर. ऽशुग्स्. सो।
गब्. पऽि. ख्यिम्.ब्दग्.मो. नि. द्ङोस्.पो. चिर्. मि. म्थोङ।

१५. ण नि. ग्ञुग्. मऽि. रङ.ब्शिन्. रङ.ब्शिन्.ग्यिस्. नि. स्तोङ।
ग्ञुग्. मऽि. यिद्. नि. गो. न. द्गे[६]. दङ. मि. द्गे. मि. ऽगोस्. शिङ।
ग्ञुग्.मऽि. ख्यिम्. ब्दग्.मो. नि.ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.पस्. बङ्स्. पर्.ग्युर्।
ग्युन्.दु. ब्स्तेन्.न. स्क्ये. शि. दङ. नि. ऽछिङ.बर्. ऽग्युर. ब. मेद्॥

१६. **त**. नि. स्कु.ग्सुम्. ग्शुङ.ग्सुम्. ब्र्तन्.नस्. श्स्.पर.ग्यिस्।
यि.गे. ग्सुम्. नि. स.र.ह.यि. छिग्. ल. ब्र्तन्. ते. ब्स्गोम्स्.[७]॥
सेम्स्.नि. म्ञम्.प.ञिद्.क्यि. ब्सम्.ग्तन्.ग्यिस्।
गल्.ते. चं.बऽि. सेम्स्. दङ. ब्लो. ग्ञिस्. ग्चिग्.तु. ब्येद्. प. नुस्.॥

१७. सेम्स्. नि. शिङ. छद्. पर्. ग्युर्. पस्. रङ. ब्शिन्. ग्चिग्. यिन्. नो।
थ. नि. गङ.छे. ना.द. दङ. थिग् ले. ऽदि. स्ग्रस्. न॥
नंल्. ऽब्योर्. म. यि. स्ग्र. यिस्. दे[१]. छे. ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. पर्. तोंग्स्।
जि. ल्तर्. रङ. द्गर्. ग्नस्. पर्. ग्युर्. न. छे. ऽदि. ऽफेल्. बर्. ऽग्युर्॥

१८. **द**. नि. स. र. ह. यि. छिग्स्. थम्स्. चद्. ब्स्तेग्स्. दङ. ऽछि. मेद्. ऽग्युर्।
ऽो. म. ग्ञिस्.क्यिस्. ब्दे.म्छोग्. दे. ल. ख्रुस्.ग्यिस्. शिग्॥

१२. ठ-ठा ठवनिसे मंत्रों का वांचना, ठण अक्षर उठि स्थान पावै ।
शीलसदृश मांग समाधि संचरै, सद्गुरु गगन जान बोधि है ।।

१३. ड-डा डोंबी अन्ध मंत्रोंको पढ़े, चंडाली होवै जल झरै ।
डमरू अनहद बाजै, सो डमरू कहै योगिनी शब्द है ।

१४. ढ-ढा ढलै एक प्रकार से व्याप्त, चित्त सहज उत्तम होइ ।
पाँचो इन्द्रिय ढलि सहज तंह रहै, गुप्त घरनी वस्तु क्यों ना देखै ।।

१५. ण-णा णिअ (निज) मन स्वभावसे शून्य,
निज स्वभाव जाने तो न पुण्य अपुण्य न चाहिये।
निज घरनी सहज आयत्त होइ, सदा आश्रय ले जनम-मरन ना रुकै ।।

१६. त-ता त्रिकाय त्रिग्रंथ दृढ़ जाने, त्रि–अक्षर सरह वचन दृढ़ भावै ।
तुल्य चित्त की समाधि से, यदि मूल चित्त औ बुद्धि उभय एकत्र कर सकै,
तो चित्त क्षेत्र उच्छिन्न होने से स्वभाव एक रहै ।।

१७. था-था थिर कर चन्द्र-गगनको, स्थानोंको छाडि शुभ शरीर में जिमि होइ ।।

थान थिर करि पवन से सूख जाइ, थिर बैठे तब्बे बृद्धि होइ ।

१८. द-दा दुइ सभी सरहकी वाणी अमर होइ,
दोनों दुद्धी-दूध से उस उत्तम सुख में नहाइ ।

दुइ विन्दु जानै शुद्ध स्वभाव है, दुःख विषधर वस्तु अवस्तु (है) ।।

१९. ध-धा धोबी स्वभाव धोइ बैठ, धोवते भी न देख भीतर बैठ जा ।
धोबिन सरह की वाणी माँगती, धुन मायायोग गगनस्वभाव से ।।

२०. न-ना नाना प्रकार से भले, एकत्र लग, पामर ना बूझे नाना कहै ।
जो कि नाश भय नहीं सो शुल्क मिला, ना भव ना निर्वाण ना अन्य ही है ।

२१. प-पा पंच अमृत नासामें डाल, पद्म वज्र जोडि जोडि समता साथ ।
पद्म-पुष्प से वज्रासन पूज, सोई पद्म न जाने तो, महासुख राजा नहीं ।।

२२. फ-फा फट्कार यह संग्रह चित्त ख-सम है, उत्साह ना देखै भी खसम चाहै ।
फट्कार औ हुंकार जिमि प्रसरै, तिमि कल्पद्रुम विरति भासै ।।

२३. ब-बा बनका ब्रह्मपुष्प मुखपरिमंडल विभाग तडाग धरै,
वज्र जा मनोहर इच्छित फल वसन्त (-पल्लव) जिमि,
बसमें संचय कर भले ना उद्यम कर,
विहरत जग योगिनी अपने शरीर मे ले ।।

२४. भ-भा भग ही भग के स्वभाव शून्य वसै भनइ,
मैं सरह सो पुण्य-अपुण्य ना भनँ ।

ब्ल.मऽि. ग्सुङ.गिस्. ऽदोद्. योन्. ल्ङ. ल. सो।
ख्रुल्.पर्. म. ब्येद्. सेम्स्. ञिद्. ऽदि. नि. नम्.म्खऽ. यिन्॥

२५. **म**. नि. नन्. तन्. ग्यिस्. नि. यङ. दङ. यङ. दु. छङ. ऽज़ग्. चिङ।
द्पल्[७].ल्दन्. ब्ल.म. ब्स्तेन्.पस्. र्च.ब. गो.बर्.ग्यिस्॥
गल्.ते. र्च.बऽि. सेम्स्. दङ. ब्लो. ग्ञिस्. ग्चिग्. तु. ब्येद्. नुस्. न।
सेम्स.नि. शि. शिङ. छद्.पर्.ग्युर्.पस्. रग्.ब्शिन्.ग्चिग्.यिन्.नो।

२६. **य**. नि. गङ.छे. ना.द. दङ. थिग्.ले. ऽदिर्. स्म्रस्. न।
र्नल. ऽब्योर्. म. यि. स्म्र. यिस्. दे.[१] छे. ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. पर्. र्तोगस्।
जि. ल्तर्. रङ. द्गर्. ग्नस्. प. दे. ब्शिन्.दु. नि. ब्र्तेन्।
स्क्ये. शि. ग्ञिस्. क्यिस्. ऽजिग्स्.(प.)मेद्.प. थोब्. पर्. ऽग्युर्॥

२७. **र**. नि. ञि. म. स्ल. बऽि. थिग्. ले. नम्. म्खऽ. ब्शिन्. दु. शि. ब. मेद्।
ञि. मस्. गङ. न. ब्दे. ब. छेन्. पोऽि. छुल्. नि. शिन्. दु. ज्र्स्॥
र. स. ना. नि. थिग्.[२]ले. थिग्.ले. फोब्।
ञिन्. दङ. म्छन्. दु. ग्ञुग्. मऽि. यिद्. क्यि. ङङ. दु. सोद्॥

२८. **ल**. नि. क्ये. हो. ल्हुङ.गि. ख्यिम्. ब्दग्. मो. दे. ख्यिम्. नङ. लोङ।
ना. द. थिग्. ले. लोङ. चिग्. छोस्. नि. सग्. मेद्. यिन्. नो॥
ल. ल. ना. दङ. ब्चस्. दङ. र. स. अ. व. धू. तिऽि. र्च. नङ. नस्।
थिग्. ले. ऽजग्. प. दे. ञिद्. शिन्. तु. ङो. म्छर्. फियर् नि. ऽथुङ॥

२९. **व**. नि. छु. यि. म्छोग्. नि. रोल्. पस्. ऽथुङ. चिग्. क्ये।
र्दो. र्जे. र्नल्. ऽब्योर्. म. नि. रोल्.पस्. ऽफ्रो॥
गङ. छे. दपल्. मो. र्नल्. ऽब्योर्. म. नि. ल्हन्. चिग्.स्क्येस्. पस्. म्ञेस्।
दे.यि. छे. न. ड. म. रु. नि. अ. न. ह. यि. स्कद्. दु. ग्रग्स्॥

३०. **श**. नि. रङ.ब्शिन्.ग्यिस्. नि. ल्हुन्. ग्रुब्. अ. न. ह. यि. स्म्रस्।
थिग्.[४] ले. ऽज़ग्. प. गङ. शिङ. र्नल्. ऽब्योर्.म. यिन्. म्गोन्॥
स. र. ह. यि. छिग्. गिस्. ग्सिल्.बऽि. स्म्रर्. नि. ब्य।
नम्. म्खऽ. ऽजो.शिङ.. ऽजो.शिङ. थिग्.ले. फोब्. ल. ऽथुङ।

भुंज गुरुवचनसे पंच कामगुण[1], भ्रान्ति न कर यह चित्त आकाश है ।।

२५. म-मा मदिरा बलात् पुनः पुनः झरै, श्रीगुरुसेवा से मूल को जानै ।
मूल-चित्त औ उभय एक तो कर सकै, चित्त मरि नष्ट होने से स्वभाव एक है ।।

२६. य-या जब्बै नाद औ विन्दु यहां बोलै,
तब्बै योगिनीके शब्दसे सहजै समुझै ।
जैसे स्वानन्द में स्थित तैसे आश्रय (लेइ),
जनम मरण दोनोसे निर्भयता पावै ।।

२७. र-रा रवि-शशि विन्दु खसम अ-मर, रविसे पूर्ण महासुख प्रकार अतिसुंदर ।
रसना विन्दु-विन्दु चुवै रातिदिन, निज मन के हंस मारै ।।

२८. ल-ला लेहु पवनकी करिनी सो घर भीतर अंध,
नाद विन्दु अन्ध धर्म अनास्रव है ।
ललना सहित रस(ना) अवधूति के भीतरसे,
विन्दु झरै सोई अतिअचरज के लिये पी ।।

२९. व-वा वर वारि ललित पीओ रे, वज्रयोगिनी ललित प्रकाशै ।
जब्बै श्रीयोगिनी सहजसे मुदित, तब्बै डमरू अनहद व्यापै ।

३०. श-शा स्वभावसे स्वकृत अनहद शब्द, विन्दु झरैं जो योगिनी स्वामिनी ।
सरह वचन से शीत शब्द करे,
गगन लास कर लास कर शशधर विन्दु पी ।।

---

१. भोग ।

३१. **ष**. नि. गङ.छे. ल्हन्.चिग्. स्क्येस्. पऽि. म्छोग्.गिस्. म्ञेस्।
दे. छे. रङ. दङ. ग्शन्.गि्य. ब्य. छग्स्. ऽगग्स् ।।
म्ञम्. दङ. मि[५]. म्ञम्. र्नल्. ऽब्योर. म. ऽदि. ग्रुब्. पर्. थे. छोम्. मेद्।
क्ये. हो. म्दऽ. ब्स्मुन्. नि. ऽदि. ल. थे. छोम्. मेद्. चेस्. स्म्र।।

३२. **स**. नि. द्ङोस्. पो. ऽदि. कुन्. द्ङोस्.पो.मेद्. पर्. म्ञम्।
स्तोङ. प. स्ञिङ.र्जे. ख्रुल्.पस्. म.स्पङस्.शिग् ।।
ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.पऽि. द्गऽ.बस्. र्तग्. तु. म्ञेस्।
ल्हन्. स्क्येस्. म्छोग्. ऽदि.[६] गङ. गिस्. क्यङ. नि. ऽछिङ. मि. नुस् ।।

३३. **ह**. नि. क्ये. हो ब्शद्. पऽम्. स्वये. व. स्न. छोग्स्. क्यिस्. नि. छिम्।
क्ये. हो. र्मोङस्.प. ऽफ्रोग्. चिङ. व्कङ. यङ. द्गऽ. व. मेद् ।।
गङ. छे. लुस्. ल. द्वङ. पयुग्. म्गेग्. मेद्. छिङस्. शिग्. दङ.।
रोल. पस्. दे. छे. ब्ल. मेद्. लेग्स्. पर्. ऽग्रुब्. पर्. ऽग्युर्. ।।

57b३४. **क्ष**. नि.युल्[७]. दु. ल्हुङ. न. ऽयङ. छुब्. सेम्स्. नि. छुद्. सोस्. ऽग्युर्।
क्ष. क्षऽि. स्ग्रस्. नि. गँ्य.म्छो. दग्. क्यङ. स्केम्स्. नुस्. न ।।
ऽदि. नि. र्चुब्. मोऽि. व्दर्. ब्शिन्. तिङ.जिन्.र्नोन्. पोस्. द्गऽ. बर्. ऽग्युर।
क्ये. हो. ग्चेर्. बुर्. थम्स्. चद्. स्लु. बर्. ङेस्.पर्. थे. छोम्. मेद्।

क. ख. दो. ह. श्रेस्. ब्य. ब. र्नल. ऽब्योर्. ग्यि. द्बङ. पयुग्. छेन्. पो. द्पल्. ब्रम्. से
छेन्. पो. स. र. हऽि. शल्. स्ङ. नस्. ग्सुङ.प. र्जोग्स्. सो ।

युल्. को. स. लर्. ख्रुङस्. पऽि. ब्ल. म. र्नल्. ऽब्योर्.प.छेन्.पो. बै. रो. च. न.
बज्रऽि. शल्. स्ङ. नस्. रङ.ऽग्युर्. दु. ग्सुङस्. पऽो ।।

---

३१. ष-षा सहजे उत्तम मुदित जब्बे, तब्बे स्व-पर वासना निरुद्ध ।
समग्रौर विषम यह योगिनी सिद्ध निस्सन्देह अहो सरह भने यहाँ न संदेह ।।

३२. स-सा सम यह सब वस्तु, श्रौ अवस्तु शून्य करुणा भ्रम से नारी छोड़ ।।
सहज आनंद से सदा मुदित, सहज उत्तम इसे कोई भी न बाँध सके ।

३३. ह-हा हे हास नाना उत्पत्ति सन्तोष, हरिये अरे मूर्ख कहीं भी आनन्द नहीं ।
हरहर जब्बै शरीर में वर्ण विनु बाँध, हलेस तब्बै अनुत्तर भले सिद्ध होइ ।।

३. क्ष-क्षा (क्षले) विषय में गिरकर बोधिचित्त नाश खावे,
क्ष-क्ष, शब्द सागरों को भी सोख सकै ।
यह कठोर प्रसरि तीक्षण समाधि से आनंदित होइ,
अहो क्षपण नियम नहीं संदेह सर्व वंचना ।।

(इति) क-ख दोहा महायोगीश्वर [श्री महान्‌ब्राह्मण सरह] मुखोक्त समाप्त ।।
(दक्षिण) कोसलदेश-जन्मा गुरु महायोगी वैरोचनवज्र के मुख से कथित स्व-अनुवाद ।।

---

५. कायकोश अमृतवज्रगीति

(भोट, हिन्दी)

५(क). स्कुऽि.म्ज़ोद् ऽछि.मेद्.दों.जेंऽि. ग्लु[1]

(भोट)

ऽजम्.द्पल्.ग्शोन्.नुर्.ग्युर्.[1]प. ल. फ्यग्.ऽछल्.लो ।।

१. नाना मत

१. क्ये.हो. द्बङ. दङ. ब्येद्.पर्. ऽजिन्.प. रल्.प.चन् .
ब्रम्. से. ग्चेर्.बु. सङ्स्. ग्र्यंस्.ग.प. दङ. नि ।।
सो.न.ञिद्. ब्शि. ऽदोद् पऽि. ग्र्यंङ. फन्.प. ।
थम्स्.चद्.म्ख्येन्. शेस्. सेर्.नस्. रङ. म.रिग् ।।

२. देस्.नि. स्लु.बर्. ऽोङ. स्ते. थर्.स्ते. थर्.लम्. रिङ .
ब्ये.ब्रग्.प. दङ. म्दो.स्दे[५]. स्ङग्स्.प. दङ ।।
नेल.ऽब्योर्.प. दङ. द्बु.म. ल.सोग्स्. ते
ग्चिग्.ल. ग्चिग्. स्क्योन्.ऽगेल्.शिङ. चोंद्.पर्. ब्येद् ।।

२. सहजयोग, महामुद्रा

३. स्नङ.स्तोङ. म्खऽ. म्ञम्. दे.ञिद्. मि.शेस्. प ।
ल्हन्.चिग्.स्क्येस्. ल. ग्र्यंब्.क्यिस्. फ्योग्स्.पर्. ग्युर् ।।
स्कु.ग्सुम्. थुग्स्. ग्सल्. मेर्. मेर्. रस्. दङ. मर्[६]. नग्.ब्शिन् ।
खो.न.ञिद्.ल्दन्. रङ.स्नङ. मर्.मे.ल्त.बुर्. ग्सल् ।

४. रङ.रिग्.ग्सल्.बस्. ऽग्रो.ब.कुन्.ल. ख्यब् ।
द्ब्येर्.मेद्. छुल्.ग्यिस्. म.स्क्येस्.म.यि. रङ ब्शिन्. यिन् ।।
107a ब्दग्.तु. ऽजिन्.पऽि. सेम्स्.क्यिस्. द्रन्.प. स्न्.छोग्स्.ग्र्युऽि ।
ङो.बो.ञिद्.ल. स्नङ.छल्. चिर्. यङ[७]. ऽछर् ।।

---

१. स्तन्. ऽग्युर, ग्र्युद्, शि, पृष्ठ १०६ ख४—११३ क २ ।

५(ख). कायकोश 'अमृतवज्रगीति'

(हिन्दी)

नमो मंजुश्रियै कुमारभूताय ॥

१ नाना मत

१. अहो प्रभुता औ कार्यवाले जटाधर, ब्राह्मण निर्ग्रंथ औ बौद्ध ।
चार तत्त्व इच्छा के उपहित, सर्वज्ञ यह कहने से स्वयं न युक्त ।

२. तिससे बचकर आता दीर्घ मुक्ति-मार्ग, वैभाषिक सौत्रान्तिक औ मांत्रिक ।
योगाचार माध्यमिक आदि, पारस्परिक दोष हटा वाद करैं।

२ सहजयोग महामुद्रा

३. अवभास शून्य ख-सम सोई ना जानै, (जो) सहज की पीठ होइ ।
त्रिकाय चित्त प्रकाशै दीप में घी औ बत्ती जिमि,
तत्त्वयुक्त स्वप्रभास दीप सा भासे ॥

४. स्वसंवेद्य प्रकाशसे सकल जग व्याप्त, अभिन्न प्रकार अज-स्वभाव है।
आत्मग्राही चित्तकी स्मृति नाना हेतु की,
भाव ही को प्रकाशक क्यों फिर उगै ॥

---

१. छत्तीसगढ ।

५. मुन्.प.ल्त.बुऽि. बग्.ल. कुन्.ग्नस्. क्यङ्. ।
दे. ञिद्. ञ्र्दे.पऽि. नॅल्.ऽब्योर्. स्ग्रोन्.मे. ऽबर् ।।
स्ञिङ. पोऽि. दोन् नि. र्तोग्.गेऽि. युल्.ल्स्. ऽदस् ।
मङोन्.दु. मि.ग्सल्. द्रन्.पऽि. म्थु.यिस्. ब्स्ग्रिब्स् ।।

६. र्तोग्.मेद्. देस्. शेस्. द्रन्.मेद्. ब्दे. पऽि. लम्[१] ।
ग्रोद्. मेद्. ऽब्रस्.बु. ब्लो.लस्.ऽदस्.पर्. स्नङ. ।।
ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.प. थुग्स्.क्यि. ग्तेर्.म्ज़ोद्.नस् ।।
दग्. दङ. म.दग्. ऽखोर्.ऽदस्. ग्सुग्स्. सु. स्नङ ।।

७. स्नङ. यङ. स्क्ये.ब.मेद्.पऽि. ङङ.दु. ग्चिग्. ।
दे.ञिद्. मि.ग्यो. थ.स्ञाद्. रङ.ब्शिन्. मेद्. ।।
फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. र्ग्युर्.[२] मेद्. ब्दे. छेन्. दङ ।
र्ग्यु.ल. मि.ल्तोस्. ऽब्रस्.बु. ब्लो.लस्.ऽदस् ।।

८. फ्यग्.र्ग्य.छेन्पो. र्ज़ोग्स्. पऽि. ऽब्रस्.बु. यिन्. ।
थ.स्ञाद्.लम्.ग्यि. दोन्.ल. म्.छोन्.ते. स्ब्यर् ।।
ब्र्जोद्.ब्येद्.मेद्.प. स्ञिङ.पोऽि. दोन्. ।
कुन्.ग्यि. ब्र्जोद्.ब्य. द्रन्.मेद्. रिग्.पऽि. द्ब्यिङस् ।।

९. मोस्.पऽि[३]. शेस्.पस्. र्तोग्स्.प. थ.दद्. क्यङ ।
द्रन्.मेद्. ऽदि. ल. ब्र्ज़ुन्.प. योद्. रे. स्कन् ।।
लम्.ग्यि. चॉल्.बस्. ऽब्रस्.बु. सो.सो. यङ ।
द्रन्.प. ऽदि.ल. ब्देन्.प. योद्. रे. स्कन् ।।

१०. ब्तङ. स्ञोम्स्. द्बङ.गिस्. रे. ऽजोग्. थ.दद्. क्यङ ।
स्क्ये. मेद्. ऽदि. ल. ग्ञिस्.सु. योद्. रे. स्कन् ।।
यिद[४].ल. ब्य. दङ. मि.ब्य. स्ञाद्.ऽदोग्स्. क्यङ ।
ब्लो.ऽदस्. ऽदि.ल. ब्चल्.दु. योद्. रे. स्कन् ।

११. स्नङ.बऽि. र्क्येन्.ग्यिस्. द्रन्.प. स्क्ये.ऽग्युर्. यङ ।
स्तोङ्.बऽि. द्रन.मेद्. र्क्येन्.लस्. ऽद्रऽ.ब.मेद् ।।

५. अंधकार जिमि अप्रमाद में सर्वस्थिति भी, सोई लेने को योगप्रदीप जलावै
सार-अर्थ तर्कके विषयसे परे, पहिले अप्रकट स्मृति-शक्तिसे छादित ।।

६. उस निर्विकल्प से स्मृति, विनु सुख-मार्ग, अगम फल बुद्धि से परे प्रकाशै।
सहज चित्तकी विधि से, शुद्ध-अशुद्ध संसार से परे रूप भासै ।।

७. भासित भी अजहंस में एक, सोई अचल व्यवहार निःस्वभाव।
महामुद्रा अविकार औ महासुख, हेतु न देख फल (है) बुद्धि से परे ।।

८. महामुद्रा निष्पन्न फल है, व्यवहार मार्ग के अर्थ आयुध जोड़ ।
न कहने का सार-अर्थ, सर्व वाच्य स्मृति विनु विद्या-धातु ।।

९. अधिमुक्ति[1] ज्ञानसे अवबोध भिन्न (होते) भी,
इस विस्मृतिमें मिथ्या है रे कह।
मार्ग के अभ्याससे फल पृथक् (होते) भी, इस स्मृतिमें सत्य है रे कह ।।

१०. उपेक्षा वश आशा निक्षेप से भिन्न भी, इसी अ-जातमें द्वैत है रे कह।
मनमें करना न करना व्यपदेश[2] भी, इस बुद्धिसे परेकी अपेक्षा है रे कह ।।

११. आभास प्रत्ययसे स्मृति उत्पन्न (हो) भी,
शून्य विस्मृति प्रत्ययसे अतिक्रमण नहीं।

---

१. मुक्ति। २. कथन।

र्तोग्.मेद्. दोन्.ल. ब्य.ब्रल्. ब्ल्त.रु. मेद् ।
रङ.ल. ग्शन्.नस् छोब्.ब. अ. रे. ऽख्र्ुल् ।।

१२. क्ये.होॱ. र्दो र्जे.ल्त.बुर्. र्तोग्स्. द्कऽ. खो.न.ञि-द् ।
म.शेस् चोंल्.बस्. स्प्र.फियर्. ब्रङ.सेम्स्.क्यिस् ।।
ब.मेद्.पऽि. दोन्. दङ. फ्रद्.पर्. द्कऽ ।
ब्य.बऽि. रङ. ब्शिन्. मि.ब्य. शेस्. ग्युर्. न ।।

१३. र्ग्य.ल.बऽि. द्गोङस्.प. ञाग्.ग्चिग्. युल्.लस्.ऽदस् ।
स्कु. नि. मि.ऽग्युर्. छोस्.ञिद्. खोङॱ. स्तोङ. लग्स् ।।
लुस्.ल. मि.ग्नस्. ब्य. दङ. ब्येद्.प.ब्रल् ।
लम्. ब्स्लद्. लम्.ग्यि. ऽब्रस्.बु. म्थोङ. मि. ऽग्युर्. ।।

३. महासुख, अकथ

१४. स्क्ये.मेद्. दङ. ल. मि.ब्येद्.पयि. थुग्स् ।
द्रन्.मेद्. दङ. ल. मम्ञाम्. ग्शग्. ब्दे.ब.छे ।।
107b ब्दे.छेन्. दङ.ल्. मि.र्तोग्. र्ग्युन्.ल. ग्नस्. ।
यिद्.ल. मि.ब्येद्. स्नङ.ब. रङॱ.गर्.दग् ।।

१५. र्कयेन्. नि. द्रन्.प. म.ऽगग्. शेस्. प.ग्सल् ।
र्चे.ब.ग्चिग्.र्ग्यस्. स्क्योन्.मेद्. पद्.म.ब्शिन् ।।
ऽग्रो.ब.कुन्.ल. ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.ब्शिन्. ग्नस् ।
ग्शन्. योद्. लोङ. म्थोङ. स्तोब्स्.क्यिस्. ब्स्लद्. मोद्. क्यङ ।।

१६. जि.ब्शिन्. थोग्.मऽि. पद्.मऽि. मे.तोग्.ब्शिन् ।
लेग्स्. म्थोङ. स्तोब्स्७.क्यि. पयग्.र्ग्य.छे. मि.ग्यो ।।
ग्स्ुङ. दङ. ऽजिन.पऽि. ञोंग्.मस्. ब्स्लद्. ग्युर्.क्यङ ।
दुस्.ग्सुम्. ऽग्युर्.मेद्. र्चे.ब. ब्दग्.ञिद्.छे ।।

१७. नम्.शेस्. र्लुङ. दङ.ऽोग्. स्गो. स्डग्स्. ल.सोग्स् ।
ये.नस्. स्प्योद. ब्रल. रङ.ग्शन्. ब्तङ. ग्शग्. ब्रल् ।।

निर्विकल्प अर्थमें निष्क्रिय दृष्टि नहीं, अपनेमें परसे ढूँढ़ना अरे भ्रम ।।

१२. अहो वज्र-सदृश दुरवबोध तत्त्व, न जान अभ्यासमें शब्दके लिये मधु-चित्तसे ।
निष्क्रिय अर्थ का संग कठिन, क्रिया का स्वभाव न करे जान कर ।।

१३. जिनका[३] आशय एक ही विषयातीत, काय निर्विकार धर्म ही कोटरीकृत ।
शरीर में ना रह औ क्रियाहीन, मार्ग मलिन (तो) मार्गफल ना दीखै ।।

३. महासुख अकथ

१४. अजात निरंतर अ-कर्ता चित्त, विस्मृति औ समापत्ति (हैं) महासुख ।
महासुख औ निर्विकल्प स्रोतमें बसै, अमनसिकार भासै स्वभूमिमें शुद्ध ।।

१५. प्रत्यय तो स्मृति ना निरोधै ज्ञान प्रकाशै, एक मूल निर्दोष फुल्ल पद्म जिमि ।
सब जग में सहज जिमि रहै, अन्य तो हैं अंधदृष्टि बलसे कलुष भी ।।

१६. जैसे आदिम कमल-पुष्प सुदर्शन बलकी महामुद्रा अचल ।
वहन-ग्रहण के दोलनसे कलुषित भी, त्रिकाल निर्विकार मूल महात्मा ।।

१७. विज्ञान पवन अधोद्वार मंत्र आदि से,
चर्याहीन स्व-पर त्याग-स्थापना-विहीन ।

---

३. बुद्ध ।

ऽखोंर.बर्. मि.सेम्स्. म्य.ङन्.ऽदस्. मि. ल्तोस ।
दुस्.ग्सुम्. स्निद्.ग्सुम्. स्कु.ग्सुङ.थुग्स्. (ग्सुम्.) ल ।

१८. दुस्. गङ.ल. मि.ऽबद्. ब्लङ.दोर्. ल्त.ब.मेद्. ॥
म्थऽ.द्बुस्. मि. ऽब्येद्. द्बु.म. द्रङ.पोऽि. लम् ।
ब्चस्.बचोस्.ब्रल्.न शुग्स्.क्यि.ल्.म. म्छोग्. सो ॥
ब्ग्रोद्.ऽजुग्. रिम्.सोग्स्. फ.रोल. पियन्.पऽि. लम् ।

१९. ञ्ो.लम्. ग्शग्.नस्. रिङ.दु. ऽखोर.वऽि. ग्यं ॥
ल्हन्.चिग्.स्क्ये. दङ. ग्ञ्ेन.पो. ऽग्रन्.स्.ल ब्रल ।
खो.न.ञ्िद्.ल. स्कु.ब्शि. ये.शेस्.ल्ङ ॥
ञ्ोन्.मोङ्स्. ल.सोग्स् छोग्स्.पस् ऽखोर्.वऽि.लम् ।

२०. युल्.दु. गङ. स्क्येस्. मि.स्प्यद्. युल्.मेद्. म्थोङ ॥
ङो.बो.ञ्िद्.ल. द्गऽ. दङ. मि.द्गऽ. मेद्[४] ।
ऽजिन्.र्तोग्. ग्ञ्िस्. ब्चस्. म.ब्चोस्. छोस्.क्यि. छु ॥
द्बङ.पो. रङ. यन्. म.सिन्. स्तोङ.पर्. ग्नस् ।

२१. स्म्रर्. मेद्. ञ्ाम्स्.सु. म्योङ.ब. ग्युन्. मि. ऽछद् ॥
रङ.गि. ग्युद्.ल. स्ब्यर्. ते. शेस्.पर्. ब्य ।
द्रि.म.मेद्.पऽि. दोन्.ल. फ्यग्.ग्यं.छे ॥
ग्यं.म्छो. नम्.म्खऽ.ल्त.बुऽि. ञ्ाम्स्.म्योङ. ऽब्युङ[५] ।

२२. द्बङ.पो.युल्.ब्रल्. ल्तुङ.बऽि. ग्यङ. स. मेद् ॥
द्रन.पस्. सिन्.पस्. ख्योद्. ञ्िद्. छग्स्.प. स्ते ।
रङ.ब्तङ. ग्शग्.पस्. स्प्रोस्.प. स्लर्.ल. ल्दोग् ॥
ऽछर्.नुब्. मेद्.न. नंम्.र्तोग्. मुन्.प. नुब् ।

२३. छोस्.ञ्िद्. रो. म्ञ्ाम्. बुद्.पऽि. मे.तोग्. म्छङस् ॥
स्क्योन्. दङ. योन्.तन्. द्ब्येर्.मेद्.[६] ञ्िद्. दु. म्छङस् ।
ङो.म्छर्.छे. स्ते. ञ्ाम्स्. म्योङ. स्म्रर्. म. ग्तुब् ॥
ब्दे.ब. द्ब्येर्.मेद् जि.ल्तर्. छु.ग्शग्.ब्शिन् ।

संसार ना चिन्तै निर्वाण न देखै, त्रिकाल त्रिभव काय-वाग्-मनको मिलावै ।।

१८. जिसे अप्रयास ग्रहण-त्याग की दृष्टि नहीं,
अन्त मध्य में न बँटै मध्य (है) ऋजु मार्ग।
प्राकृत-कृत्रिम विना हृदय मध्ये न उत्तम,
यात्रा प्रवेश क्रम आदि पार-गमन मार्ग ।।

१९. समीप मार्ग राखि लंबा (है) संसार का कारण,
सहज और प्रतिपक्ष सपत्नी रहति।
तत्त्व के चार काय (और) पाँच ज्ञान, क्लेश आदि समूह संसार का मार्ग ।।

२०. विषयमें जो बंधै न चरित निर्विषय देखै, भावमें ही आनन्द निरानन्द नहीं।
ग्रहण अवबोध दोउ साथ न मथै धर्मकाय,
इन्द्रिय स्वच्छन्द न पकड़ शून्ये रहै ।।

२१. अकथ अनुभव सदा न काटै, स्वसन्तान में युक्त हो जानै।
निर्मल अर्थमें महामुद्रा, सागर में गगन सम अनुभव होइ ।।

२२. इन्द्रिय-विषय विनु प्रपात नहीं, स्मृति से बँधा तू ही कामुक।
स्वयं त्याग-स्थापना से प्रपंच क्षण निवृत्त,
उदय-अस्त विनु विकल्प अंधकार असत् ।।

२३. धर्मता समरस कूपक कुसुम तुल्य, दोष औ गुण अभिन्नता में तुल्य।
महा अचरज अनुभव कहने में अस्पष्ट, सुख भिन्न नहीं जिमि जल स्थापना ।।

२४. ल्हन्.ग्चिग्.स्क्येस्. दङ. नॆल्.ऽब्योर्. दे. मि.ऽब्रल् ।।
दङोस्.ग्चिग्. ब्सम्.प. दु.मर्. द्रन्. म्थोङ. यङ ।
द्रन्. मेद्. ग्चिग्. यिन्. दु.म.ञिद्.दु.मिन् ।।
103a गङ.शिग्. ल्हन्.चिग्.स्क्येस्. द्गऽ. ब्दे.छेन्. स्तोङ ।

२५. नॆल.ऽब्योर्.स्प्योद्.प. ब्लो.लस्.ऽदस्.पर्. स्प्योद् ।।
छग्स्. लम्. ग्ञुग्.मऽि. दोन्.ल. स्ब्योर्.ऽदोद्. न ।
नङ. दङ. फ्यि.रोल्. म.द्मिग्स्. ब्दग्.ग्शन्.मिन् ।।
दे.ञिद्. दोन्.शेस्. रङ.ब्शिन्. ग्रोल्.बर्. ब्स्तन्. ।

२६. स्कु.ग्सुम्. छोस्.स्कुर्.[1] द्ब्ये.ब.मेद्. मोङ. क्यङ ।।
ञम्स्.सु. ब्लङस्. न. ऽब्रस्. बु. सो.सो. ऽब्युङ ।
क्ये.हो. द्ब्येर्.मेद्. र्तोग्स्. न. ल्त.ङन्. म्युर्.दु. ऽजोम्स् ।।
स्क्ये.मेद्. स्तोङ.प. द्ब्येर्.मेद्. थुग्.फ़द्. दोन् ।

२७. यिन्.पर्. शेस्.न. नग्स्.ऽदब्. र्तेन्. दङ. ब्रल् ।।
थुग्.फ़द्. म.शेस्. म्छन्. मऽि. स्ञिङ. र्जे. नि ।
ऽखोर्.[2].बऽि. ग्नस्.सु. चि. स्प्यद्. सग्.पऽि. र्ग्यु ।।
स्तोङ. दङ . स्ञिङ. र्जे. द्ब्येर्. मेद्. स्क्ये. ब. मेद् ।

२८. गङ.शिग्. ऽखोर्. दङ. म्य.ङन्.ऽदस्. रे.दोग्स्.ब्रल् ।।
लुस्.सेम्स्. म.ञॆद्. द्रन्.मेद्. रङ.द्गर्. ग्शग् ।
दे. ञिद्. ब्लो.यिस्. म.ञॆद्. रङ.ब्युङ. यिन् ।।
म्ञम्.ग्शग्. र्जेस्.थोब्. शि. ग्नस्. म्छन्.ञिद्. दे[3] ।

२९. दोन्.दम्. म. यिन्. ब्लो.यिस्. ब्स्गोम्.दु. मेद् ।।
लुस्.दग्. सेम्स्.क्यिस्. ग्सग्स्. सोग्स्. चॊल्.मेद्. ग्सल्
स्न.चॆ. ल.सोग्स्. द्व्यिब्स्. दङ. नम्.म्खऽ. दङ ।।
चॊ.ल. रेग्.पर्. म. स्प्यद्. ग्ञुग्.मर्. ग्नस् ।

३०. स्नङ.ब.थम्स्.चद्. ब्दे.ब. योद्. मि.ब्येद् ।।
द्रन.प.स्नङ.चम्. स्ग्यु.मर्. शेस्[4]. चम्. ग्सल् ।

२४. सहज वह जोग उसके विना,
एक वस्तु चिन्तन नाना चित्त में स्मृति देखे भी ।
विस्मृति एक अनेकता में ही है, जो सहज आनन्द महासुख शून्य ।।

२५. योगचर्या बुद्धिसे परे आचरै, काम-मार्ग निज-अर्थ जोड़ना चाहै तो,
अन्दर बाहर न लहै आप औ पर नहीं, सोई अर्थ जानै स्वभाव मोक्षशासन ।।

२६. त्रिकाय धर्मकायमें भेद नहीं (तो) भी, समता उठानेमें फल भिन्न होइ ।
अहो अभिन्न समझै तो कुदृष्टि तुरन्त मर्दै,
अजात शून्य अभिन्न चित्त संसर्गके अर्थ ।।

२७. है जानै तो वनस्पति आश्रयहीन, चित्त संसर्ग न जानै निमित्त करुणा तो,
संसारके स्थान में चर्याके आस्रवका[४] कारण क्या,
शून्यता करुणा अभिन्न अनुत्पन्न नहीं ।।

२८. जो संसार औ निर्वाणकी आशा-शंका रहित,
काय-चित्त न लहै विस्मृति स्वच्छन्द ।
सोई बुद्धिसे ना मिलै स्वयंभू है,
समापत्तिके बाद प्राप्त सोई शान्ति-स्थान सो लक्षण ।।

२९. परमार्थ नहीं बुद्धिसे भावनीय नहीं,
काय-वाग्-चित्तसे रूप आदि व्यायाम के विना भासै ।
नासा आदि संस्थान[१] औ आकाश, तृण को मत छ अपने में रह ।।

३०. सब आभास सुख है मत कर, स्मृति आभास माया-ज्ञान मात्र भासै ।

---

४. मल । १. शरीर अवयव ।

स्ल.बऽि. ग्सुग्स्. ब्र्ञन.छ. मेद्. ग्सुङ.बस्. स्तोङ ।।
ब्चल्. क्यङ. मेद.ल. बल्तस्. क्यङ. म्थोङ.ब. मेद् ।

४. ध्यान, महामुद्रा

३१. स्ग्यु.मर्. स्नङ.बऽि. द्रन्.प. दे. द्रन्. ते ।।
द्रन. प. मेद् लस्. चिर्. यङ. म्थोङ. ब. मेद् ।
द्रन्.पर्. स्नङ. यङ. दे. ल. ऽजिन्.प. मेद् ।।
द्रन्.पस्. रेग्. क्यङ. रेग्.गि.[५] ब्सम्.ब्रल्.बस् ।।

३२. ब्सम्.दु. मेद्.पस्. ब्रल्.बस्. स्क्ये.ब.मेद् ।
द्रन्.प. स्क्येस्. क्यङ. युल्.ल. मि.स्प्योद्.पर् ।
चिर्. यङ. म.ग्रुब्. स्तोङ.बऽि. रङ.सोर्. ग्शग् ।।
जि.ल्तर्. ब्यस्. क्यङ. फ्यग्.र्ग्य. र्ग्युन्. मि. ऽछद्. ।

३३. यन्.लग्.ब्शि.ल्दन्. फ्यग्.र्ग्य .छेन्.पो. ब्शि ।।
स्क्ये.मेद्. दोन्.र्तोग्स्.प.यि[६]. यन्.लग्. दङ. ।
ब्देन्.ग्ञिस्. थ.मि.दद्.क्यि. यन्.लग्. दङ ।।
स्नङ.ब. स्क्ये.मेद्. थुग्.फ्रद्. ञिद्. दु. र्तोग्स्. ।

३४. द्रन्.प. ग्सुङ.दु.मेद्.पऽि. यन्.लग्. दङ. ।।
स्तोङ.प. र्क्येन्. दङ. द्रन्.मेद्.ब्लो.लस्.ऽदस् ।
दङोस्.पो. द्गग्. स्ग्रुब्.मेद्.पऽि. यन्.लग्. गो ।
108b. दे. ञिद्. ग्शिर्.ल्दन्[७]. ऽदोद्.पस्. द्बेन्.प् दङ. ।

३५. र्तोग्.दङ.बचस्. द्प्योद्.पर्. ब्चस्.प. दङ ।।
द्गऽ. दङ. ब्दे. दङ. द्बेन्.पर्.ग्नस्.ल.सोग्स् ।
थ.स्ञाद्. दे.ञिद्. म्छोन्.पऽि. युल्.दु. ग्सुङस् ।।
ग्शिर्.ल्दन्. रब्.ऽब्रिङ. थ.मर्. ग्सुङस्.प. यङ ।

३६. द्मन्.पऽि. दोन्.दु. म्खस्.पस्. रब्.तु.ब्शद्[१] ।।
फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. ग.ल. ग्नस्. मि.ब्येद्. ।
ब्लङ.दोर्.ब्रल्.बऽि. दोन्. दु. दे.ब्शिन्. ब्शद् ।।
ग्चङ. स्मेर्. मि.ऽब्येद्. गङ. यङ. द्ङोस्.ग्रुब.दग्.तु. ब्येद् ।

चन्द्र पुतली अंश-विनु ग्रहण में शून्य,
यत्न (कर) अभाव की दृष्टि से भी न दीखै ॥

४. ध्यान, महामुद्रा

३१. माया प्रतिभास की स्मृति सोई सुमिरै, विस्मृति से क्यों ना दीखै ॥
स्मृति-प्रतिभास भी उसका न धारण होई,
स्मृति द्वारा स्पर्श भी स्पर्श ध्यान-रहित ॥

३२. ध्यान में अभाव से वियोग से उत्पत्ति नहीं,
स्मृति उपजी भी जो विषय में न आचरै ।
क्यों कर भी न सिद्ध स्व-अंगुलि रख, जैसे करी हुई मुद्रा कभी न टूटै ॥

३३. चतुरंगी महामुद्रा चार, अनुत्पन्न अर्थ अवबोध का अंग ।
दो सत्य अभिन्न का अंग औ, आभास अनुत्पन्न चित्त संसर्ग में ही समुझै ॥

३४. स्मृति ग्रहण विनु अंग, शून्य प्रत्यय औ विस्मृति बुद्धि से परे ।
वस्तु प्रवारण असिद्धका अंग (है), सोई मूल युक्त इच्छासे विविक्त औ ॥

३५. सवितर्क औ सविचार, आनन्द सुख औ विविक्त स्थान इत्यादि ।
सोई व्यवहार लखनेके विषयमें धरै, मूलयुक्त अधिमात्र[२] मृदुग्रहण भी।

३६. हीनके अर्थ पंडितने कहा, महामुद्रा जहाँ न रहै ।
ग्रहण-त्याग-रहित अर्थमें वैसा कहा,
पवित्र-अपवित्र न विभाग कर जो भी भले साधै ॥

---

२. अत्यधिक ।

३७. ल्हन्.चिग्.स्क्येस्. दङ. युल्.ल. ग्तुम्.मो. स्पर्. ल.सोग्स् ।।
दम्.छिग्.ब्दग्.गि. खो.न.ञिद्. दङ. र्नल्ऽब्योर्. ब्स्गोम् ।
दङोस्.पो.[२] थम्स्.चद्. म्ञम्. ञिद्. फ्यग्.र्ग्य. छेन्.पो.ल ।।
र्तोग्-प. स्पङ.शिङ. मि.र्तोग्. ब्स्गोम्.प. चि.शिग्. ऽग्युर् ।

३८. ब्ल.म.ल. गुस्. ग्सङ.बऽि. ऽदुल्.स्दोम्. दे.रु. र्जोग्स् ।
फ्यि. नङ. ग्सङ.बऽि. द्बङ.ब्स्कुर्. सो.सोऽि. म्छन्.ञिद्.दङ ।।
बुम्.प. ग्सङ.ब. शेस्.रब्. ये.शेस्. दङ ।।
ङो.बो. ङेस्[३]. छिग्. द्बो.ब. ल.सोग्स्. कुन् ।

३९. थुन्.मोङ. म्थु. स्क्यस्. फ्यग्.र्ग्य.छे.ल. रेग्. मि.नुस् ।।
क्ये.हो. फ्यग्.र्ग्य. छे. ल. ऽब्रस्.बुऽि. ब्दग्.ञिद्. स्कु.ग्सुङ.
थुग्स्.ल्दन्.पस् ।
ऽब्रस्.बु. दे.यङ. स्ञिङ.पोऽि. दोन्.ल. ऽथद्.क्यिस्. द्रङ.
दङ. ङेस्.पऽि. दोन्.ल. मिन् ।।
लम्. दङ. ऽब्रस्.बु. स्ञिङ. पो.थम्स्.चद्[४]. ब्चुद्. ब्स्दुस्. दङ ।

४०. थेग्.छेन्. ब्ल.न.मेद्.पऽि. द्ङोस्. दङ. थेग्.प.दग्. गि.
ख्यद्.पर्. दङ ।।
कुन्.ग्यि. स्ञिङ.पोर्. ग्युर्.नस्. ग्सङ.ब. ब्ल.न.मेद् ।
फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. ङेस्.पऽि. म्छन्.ञिद्. नि ।।
द्रन्. दङ. द्रन्.मेद्. ग्ञिस्.सु.मेद्.पस्. स्क्ये.मेद्. दे ।

४१. ब्लो.लस्.ऽदस्.शिङ. नम्.म्खऽ[५].ल्त.बुर्. चिर्. मि. ग्नस् ।।
लस्.क्यि. फ्यग्.र्ग्य. द्पे. दङ. छोस्.क्यि. फ्यग्.र्ग्यऽि. लम् ।
फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. ऽब्रस्.बु. दम्.छिग्. फ्यग्.र्ग्य. ग्शन्.दोन्. ते ।
छोस्.क्यि. फ्यग्.र्ग्य. मन्.छद्. ब्स्तेन्.पस्. म्थर्.मि.ऽग्रो ।

४२. रो.दोग्स्. म्थर्.ल्हुङ. ऽदु.ऽजि.ब्य.बऽि. स्क्योन्.दु. ऽग्युर् ।।
खो.न.ञिद्.ल.[६] ग्ञेन्.पो. द्ब्येर्.मेद्. रङ.सोर. ग्शग् ।
र्नम्.र्तोग्. जि.स्ञेद्. शर्. यङ. ल्हुग्.पऽि.ञिद्. ल. शर् ।।
द्रन्.प. रङ.सर्. ग्रोल्.नस्. द्रन्.मेद्. ल्हुग्.प. ञिद् ।

३७. सहज औ विषय में चंडिका बेंत इत्यादि,
सत्य वाणी आत्मका तत्त्वं औ योगभावना ।
सर्व वस्तु सम ही (है) महामुद्रामें,
कल्पना छाड़ि भावना अविकल्प क्यों होवै ॥

३८. गुरु-भक्ति गुह्य विनय-संवर वहाँ निष्पन्न,
बाहर-भीतर गुह्य-अभिषेक भिन्न-भिन्न लक्षण ।
कलश गुह्य प्रज्ञा औ ज्ञान, भाव निश्चय वचनभेद इत्यादि सब ॥

३९. साधारण शक्ति से उत्पन्न महामुद्रा को छू न सकै,
अहो महामुद्रामें फल की आत्मा काय-वाक्-चित्तवाले से ।
सो भी फल सार-अर्थमें उपपत्ति से ऋजु औ निश्चित अर्थ नहीं,
मार्ग औ फल-सार औ सब रससंग्रह ।

४०. महायान, अनुत्तर वस्तु औ यानोंके, विशेष सबके सारभूतसे गुह्य अनुत्तर ।
महामुद्रा निश्चयका लक्षण ही (है),
स्मृति-विस्मृति अद्वय से उत्पन्न नहीं (है) ॥

४१. बुद्धिसे परे हो खसम क्यों ना रहै, कर्ममुद्रा दृष्टान्त धर्ममुद्राका मार्ग ।
महामुद्रा फल सद्वचन मुद्रा परार्थ (है)
धर्ममुद्रा यावत् सेवनसे अन्त न होइ ॥

४२. आशा-शंका अन्तच्युत संकर[३] का दोष होइ,
तत्व का परिपक्ष भेद नहीं स्व-अंगुलि रख ।
विकल्प जितना भी उगै मुक्त में उगै,
स्मृति स्वभूमि में मुक्त हो तो विस्मृति मुक्त ही ॥

---

३. भीड़, मिश्रण ।

४३. गङ. यङ. लोङस्. स्प्योद्. स्नङ.बर्. शेस्. शिङ. द्रन्.मेद्. ग्सोस् ॥
रङ.ब्शिन्. ञम्स्.ञिद्. स्क्ये.मेद्. दग्.तु.ल्दन् ।
109। कुन्.ल. ख्यब्[७].चिङ. बब्. छु.ल्त.बुर्. ग्नस् ॥
र्ग्युन्.मि.छद्.पऽि. ऽबब्.छु. ल्त.बु. दङ ।

४४. मर्.मे.ल्तर्. ग्सल्. रङ.रिग्. ब्यङ.छुब्.सेम्स् ॥
ऽगोग्.प.मेद्.ब्शिन्. द्रन्.रिग्. रङ.गिस्. स्तोङ ।
यङ.दग्.खो.न.ञिद्. नि. गङ. शे.न ॥
ग्शन्.योद्. (प.) न. कुन्.ग्यिस्. म्थोङ.बर्[१]. रिग्स् ।

४५. रङ.ल. योद्. क्यङ. ल्कोग्.ग्युर्. ब्ल.मऽि.शल्. ॥
सेम्स्.ञिद्. सङ्स्.र्ग्यस्.खो.न.ञिद्. यिन्. ते ।
द्रन्.पस्. ब्स्लद्.चिङ. दे.ञिद्. ग्शन्.दु. ब्र्तग्स् ॥
सङस्.र्ग्यस्. यिन्.पियर्. योन्.तन्. गङ. शे. न ।

४६. योन्.तन्. रस्. दङ. द्कर्.पो. ल्त.बु. स्ते ॥
खो.न.ञिद्.क्यि. योन्.तन्. फ्यग्.र्ग्य.छे[२] ।
ङो.बो. योन्.तन्. सो.सो. म.यिन्. थ.दद्. मिन् ॥
फ्यग्.र्ग्य.छे. दङ. ब्शि.ब.ल.सोग्स्. कुन् ।

४७. योन्.तन्. सो.सो. म.यिन्. थ.दद्. मिन् ॥
द्रन्.मेद्. योन्.तन्.र्ग्य.म्छो. म.ऽगुल्.बर् ।
द्रन.पर्. मि.ऽग्युर्. छु.यि. द्बऽ.र्लब्स्. मेद् ॥
स्क्ये.मेद्. योन्.तन्. मि.ऽग्युर्. ब्रग्.दङ.द्र ।

४८. ब्रग्.च. ग्रग्.चम्. र्जेस्.[३]सु. ऽब्रङ.ब. मेद् ॥
ब्लो.यि.ऽदस्.शिङ. युल्.दु. म.ग्युर्. प ।
फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पोऽि. योन्. तन्. नम्.म्खऽ.ऽद्र ॥
द्रन्प. सेम्स्.चचन्. सेम्स्.लस्.ब्युङ.ब. यिन् ।

४९. दे.फ्यिर्. स्तोङ.प. ग्शन्.नस्. ब्चल्. मि.द्गोस् ॥
ब्शि.रु. स्नङ. यङ. ग्चिग्.गि. योन्.तन्. नि ।

४३. जो भी संभोग भासना जानि विस्मृति पोषै,
स्वभाव तुल्य ही अज शुद्ध (होना) युक्त ।
सर्वत्र व्याप्त निर्झर जल जिमि रहै,
औ अविच्छिन्न स्रोत निर्झर जल जिमि ।।

४४. दीप जिमि प्रकाशै स्वसंवेद्य बोधिचित्त,
अनिरुद्ध सी स्मृतिवेदना स्वतः शून्य ।
सम्यक् तत्त्वमें जो आसक्त, अन्य होवे तो सबका देखना युक्त ।।

४५. अपनेमें होवै तो परोक्ष गुरु-मुख, चित्त ही बुद्ध तत्त्व है ।
स्मृति से कलुषित सोई अन्यत्र परीक्षा कर,
बुद्ध है, इसलिए जिस गुणमें आसक्त होवे ।।

४६. गुण श्वेत पट-सा है, तत्त्व का गुण महामुद्रा है ।
भाव गुण प्रत्येक का भिन्न नहीं, महामुद्रा औ चतुर्थ आदि सब ।

४७. गुण प्रत्येक नहीं भिन्न नहीं, स्मृतिहीन गुण सागर अचल ।
स्मृति में अविकृत जलकी तरंग नहीं,
अनुत्पन्न गुण अविकृत शैल सदृश (है) ।

४८. शिला ख्याति मात्र (से) अनुसरै नहीं, बुद्धि से परे विषयमें हुआ नहीं ।
महामुद्राका गुण गगन-सम, स्मृति प्राणीके चित्तसे संभूत नहीं ।।

४९. अतः शून्यता को अन्यत्र खोजिए, चारमें भासे तो भी एकका गुण ।

फ्यग्.ग्यं.ब्शि.रु. स्नङ[४].ब. चि.फ्यिर्. म्छो्न् ॥
गोङ.गि. ख्यद्.पर्. दग्.गि. ब्शि.रु. ब्युङ ।
५०. फ्यग्.ग्यं.छे्न्.पो. ग्सुम्.दु. र्तोग्. मि.ब्येद् ॥
गङ.ल. मि.ग्नस्. छ्ग्स्. प. मेद्.पर्. स्प्योद् ।
मे.र्तोग्. स्ब्रङ.चि. स्ब्रङ.मस्. ऽथुङ.दङ.ऽद्र ॥
सो.सोर्. र्तोग्.पऽि. ये.शेस्. थब्स्. यिन्. ते ।
५१. रो. दङ. फ्रद्.न. रो.ल. शेन्.प. मेद्[५] ॥
दे.ल्तर्. कुन्.ग्यिस्. शेस्.पर्.ऽग्युर्. म. यिन् ।
स्ञिङ.पोऽि. दोन्.ग्यि. ऽग्रो.द्रुग्. ख्यब्.मोद्. क्यङ ॥
ऽग्रो.ब. द्रन्.पस्. ब्चिङस्.ते. पद्.त्रऽि. स्रिन् ।
५२. सेम्स्.लस्. द्रन्.प. ब्युङ.फ्यिर्. ऽख्र्रुल्.पऽि. र्ग्यु ॥
यिद्.ल. मि.ब्येद्. शेस्.न. सङस.र्ग्यस्. ञिद् ।
ऽख्रुल्.प. दे.ल. थब्स्. दङ्. शेस्.रब्. मेद्[६] ॥
वये.हो. द्ब्येर्.मेद्. शेस्. न. थब्स्.म्छोग्. दे.खो.न ।

५. सहज, महामुद्रा

५३. सङ्स्.र्ग्यस्. स्ेम्स्.चन्. छोस्.र्नम्स्. थम्स्.चद्.कुन् ॥
रङ.गिस्. सेम्स्. ञिद्. दग्.दङ. ल्हन्.चिग्. स्क्येस्. ।
यिद्.ल. मि.ब्येद्. यिद्.ल. स्क्येस्.चम्. न ॥
109b द्रन्.पऽि. स्नङ.ब. नुब्. स्ते. ब्देन्. बर्जुन्. मेद् ।
५४. दे.फ्यिर्. दे.ञिद्. खो.नऽि. युल्.[७] म. यिन् ॥
द्पेर्.न. मिग्.गि. युल्.दु. स्ग्र. मि. स्नङ ।
र्नम्.पर्.मि.र्तोग्. र्तोग्.पऽि. युल्. म. यिन् ॥
स्तोङ.पऽि. र्क्येन्.ग्यिस्. द्रन्.प. ग्सल्.चम्. न ।
५५. द्रन्.पऽि. स्नङ.ब. नुब्.नस्. म्थोङ. ब.मेद् ॥
ये.शेस्. ऽोन्. लोङ. स्कुग्स्. पर्. मि.ऽग्युर्. ते ।
म.द्रेन्.प.ल. ऽोन्.लोङ.ल्कुग्स्.र्ग्यु. मेद्[१]. ॥
ब्रेमस्.पो.ल.सोग्स्. थ.स्ञाद्. कुन्.दङ.ब्रल् ।

चार मुद्रामें भासित क्यों लखै, आगेके चारों विशेषों में संभूत ॥

५०. महामुद्रा तीनमें नहीं समझै, जहाँ न रहै निष्काम आचरै ।
मक्खीके पुष्प मधु पीने जैसा, प्रत्येकमें कल्पना-ज्ञान उपाय है ॥

५१. रसमें संसर्ग हो पर रसमें आसक्ति नहीं, तैसे सबसे ज्ञान होता नहीं ।
सार अर्थ के छ गति व्याप्त होने पर भी, गति स्मृतिसे बद्ध पत्रका कीट ॥

५२. चित्तसे स्मृति संभव होनेसे भ्रान्ति का कारण,
अमनसिकार जानै तो बुद्ध ही (है) ।
उस भ्रान्तिमें उपाय औ प्रज्ञा नहीं,
अहो अभेद जानै तो उत्तम उपाय सोई ॥

५. सहज चित्त, महामुद्रा

५३. बुद्ध प्राणी सारे धर्म सब, स्वयं शुद्ध सहज (यह) चित्त ही ।
अमनसिकार मनमें उत्पन्न मात्र यदि,
स्मृति-आभास अस्त होइ सत्य औ मिथ्या नहीं ॥

५४. अत : सोई उसका विषय नहीं, जैसे चक्षुके विषय में शब्द नहीं भासै ।
अविकल्प कल्पनाका विषय नहीं,
शून्यताके प्रत्ययसे स्मृति मात्र प्रकाशै यदि ॥

५५. स्मृति-आभास अस्त होनेसे न दीखै, ज्ञान बधिर-अन्ध-मूक ना होइ ।
न-स्मृतिमें बधिर-अंध-मूक कारण नहीं, जड़ आदि सर्वव्यवहार-रहित ॥

५६. स्नङ.ब. नुब्. चेस्. ब्य.बऽि. थ.स्ञद्. नि ।।
द्रन्.प. फ्यग्स्. ते. द्रन्. मेद्. ग्सोस्.सु. स्पुङस्.
दे. ञिद्. स्क्ये.मेद्. ब्लो.लस्.ऽदस्. प. नि ।।
द्रन्.प.मेद्. दङ. स्क्ये.मेद्. ये. शेस्. मेद्. ।

५७. गसुङ.ऽगिन्. ब्स्रेग्स्. स्ब्यङस्. ब्लो.लस्.ऽदस्. फुल्.बस्
स्मोन्.[2]लम्. द्बङ.गिस्. स्क्ये.ब. फ्यिस्. मि. ब्ग्युद. ।
दे.फ्यिर्. फ्यग्.ग्र्य.छेन्.पो. स्ङोन्. सोङ. ल ।।
सु.ल. मि.ब्र्तेन्. गङ.ल. रग्. म.लुस् ।

५८. छु.ल. शुग्स्. दङ. छोग्स्. दङ. स. ऽग्येद्. ब्येद् ।।
रिग्.ब्येद्. ग्रोङ.ख्येर्. द्क्रोग्.प. दग्.दङ. म्छुङस्. ।
फ्यग्.ग्र्य.छेन्.पो. रङ.लस्. ग्शन्.मेद्. फ्यिर् ।।
म्छोद्. र्जेस्.[3] द्रन्.प. म्ग्रोन्. दङ. म्छोद्. ग्नस्. रङ.शेस्. पस् ।

५९. म्छोद्.प. रङ.गि. द्रन्.प.मेद्. ल. म्छोद् ।।
ब्लो. लस्.ऽदस्.क्यि. स्क्ये. मेद्. छोग्स्.ल. रोल् ।
फ्यग्.ग्र्य.छेन्.पो. ग्शन्.ल. मि.ल्तोस्.फ्यिर्. ।।
ब्स्गोम्.ब्य. रङ.ल. स्गोम्.ब्येद्. रङ.गि. सेम्स्. ।

६०. ब्लो.ऽद्स्. रङ.ल. द्मिग्स्.प.ञिद्.दङ.ब्रल्[4] ।।
दे.ञिद्. ऽब्रस्.बु.यिन्.फ्यिर्. ग्शन्.ल. रग्.म.लुस्. ।
ब्स्गोम्.ब्स्ग्रुब्. स्ङग्स्. ब्स्.लस्. रङ.गि. सेम्स्. यिन् ते ।।
यि.दम्. ल्ह. दङ. रङ.गि. सेम्स्. यिन्.पस् ।।

६१. दे.फ्यिर्. म्खऽ.ऽग्रो. लुङ. स्तोन्. ल.सोग्स्. रङ.गि. सेम्स् ।
सेम्स्. नि. द्रन.प. चिर्. (यङ) स्नङ.बर्. स्तोन् ।।
म.द्रन्. (प.) ल.[5] थम्स्.चद्. द्मिग्स्.सु. मेद् ।
फ्यग्.ग्र्य.छेन्.पो. रङ.लस्. ग्शन्.मेद्.फ्यिर् ।।

६२. सङस्.ग्र्यस्. छोस्. दङ. द्गे.ऽदुन्. ल.सोग्स्. ते ।
फ. म. द्कोन्.म्छोग्. रङ.ब्शिन्. ब्यङ.छुब्.सेम्स् ।।

५६. आभास अस्त (है) इसीका व्यवहार,
स्मृति से मुद्रित विस्मृत प्रत्यय-राशि।
सोई अज बुद्धिसे परे, स्मृतिहीन औ अज ज्ञान अग्निसे ॥

५७. धारणी-धर होम-घोष बुद्धि से परे अर्चना,
अधिष्ठानवश उत्पन्न पीछे असंतान ।
अतः महामुद्रा पूर्व गतिमें, किसीको न आलंबै कहीं ना अधीन ॥

५८. जलवास समाज औ भोज करै, वेद नगर दूहना (?) तुल्य।
महामुद्रा अपनेसे परे नहीं जो,
पूजाद्रव्य स्मरण दीप औ पूज्य स्वयं जानि ॥

५९. पूजा अपनी विस्मृतिमें पूजै, बुद्धिसे परे के अजन्मा समाजमें ललित।
महामुद्रा अन्यत्र न देखै अतः, भावै अपनेमें भावनीय अपना चित्त ॥

६०. बुद्धिसे परे अपनेमें निरालंब, सोई फल होनेसे दूसरेके न अधीन ।
भावना साधन मंत्र जप अपना चित्त, औ इष्टदेव अपना चित्त है ॥

६१. अतः डाकिनी व्याकरण इत्यादि अपना चित्त,
चित्त स्मृति क्यों भासित बता देइ ।
अ-स्मृतिमें सब आलंबन में नहीं, महामुद्रा अपनेसे पर ना होवै ॥

६२. बुद्ध धर्म संघ इत्यादि, माता पिता रत्न स्वभाव बोधिचित्त (है)।

म्छोद्. दङ. ब्ञेन्. ब्कुर्.ब्यस्. न . द्रन्.पऽि. र्ग्यु ।
थ.दद्. मेद्.न. स्क्ये.मेद्. रङ.सर्. ग्रोल् ।।

६३. ब्लो.लस्.[६] ऽदस्.न. ब्य. दङ. मि.ब्य. मेद् ।
सङस्.र्ग्यस्. सेमस्.चन्. म्छोन्.छुल्. सो.सो. यङ ।।
ल्हन्.चिग्.दग्.तु. स्क्येस्. ते. रिग्.म. रिग् ।
गङ.शिग्. स्नङ. यङ. द्रन्.पर्. मि.र्तोग्.न ।।

६४. सेम्स्.चन्. ञिद्. नि. ऽब्रस्.बु. स्क्ये.ब. मेद् ।
गङ.शिग्. मि.स्नङ. द्रन्.पर्. र्तोग्.चे. न ।।
सङस्.र्ग्यस्. ञिद्[७] वयङ. खम्स्.ग्सुम्. ऽखोर्.बऽि. र्ग्यु ।
गङ.शिग्. द्रन्.मेद्. यिद्.ल. ऽछङ.ब्येद्. चि ।।

६५. सेम्स्.चन्. स्नङ. यङ. सङस्.र्ग्यस्. दग्. दङ. म्छुङ ।
गङ.शिग्. द्रन्.प. सङस्.र्ग्यस्. र्तोग्स्.ऽदोद्. न ।।
सङस्.र्ग्यस्. स्नङ. (ब.) सेम्स्.चन्. ख्यद्.पर्.मेद् ।
देस्.न. स्नङ.[१] ब्तग्स्. ग्ञिस्. ल. ब्र्तग्. तु. मेद्. दे. पोर् ।।

६६. बोर्. यङ. रङ.लस्. ग्शन्.मेद्. ऽग्रो. ग्युन्. ऽछद् ।
रङ.लस्. योद्.स्ञाम्. र्तोग्.गि. द्रन्.पस्. ब्स्लङ ।।
स्नङ.ब. ग्सल्.ल. मि.र्तोग्. म. शेन्. सेम्स् ।
दे.फ्यिर्. योद्. दङ. मेद्. पऽि. र्तोग्. प. ग्ञिस्. ब्रल्. ते ।।

६७. ग्ञेग्. मर्. ग्नस्. न. गङ.[२] ल्तर्. ब्यस्. क्यङ. ब्दे ।
द्रन.प. ऽोद्.ग्सल्.ऽज़िन्.पऽि. स्ञिङ.पो.चन् ।
शेन्.प.ग्ञिस्.दङ.ब्रल्. ते. रङ.ब्शिन्.ग्ञेग्.मर्. ग्शग् ।।
देस्.न. फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. सुङ.दु. रब्.ऽजुग्. स्ते ।

६८. द्रन.प. द्रन्.मेद्. स्क्ये.मेद्. सुङ.दु. ऽजुग् ।।
द्रन.मेद्. मि.र्तोग्.प.यि. रङ.ब्शिन्. दङ. ।
र्तेन्.ब्रेल्[३]. ग्लो.बुर्. स्क्ये.बऽि. द्रन्.प.गञिस्. ।।
स्क्ये.ब.मेद्.पऽि. दङ. दु. रो.ग्चिग्.फ्यिर् ।

पूजा औ उपासना करे तो स्मृतिका कारण,
भेद नहीं उत्पत्ति नहीं तो स्वभूमिमें मुक्त।

६३. बुद्धिसे परे हो तो क्रिया अ-क्रिया नहीं,
बुद्ध (औ) प्राणी के लखने का ढंग पृथक्-पृथक् भी।
शुद्ध सहजमें जनमी विद्या अविद्या, जो भासै भी स्मृतिमें न अवबोधित यदि।।

६४. प्राणी ही फल उत्पन्न नहीं, जो न भासै भी स्मृतिमें अवबोधित यदि।
बुद्ध ही त्रिधातु संसारका कारण, जो विस्मृति (सो) मनमें धारिये क्या।।

६५. प्राणी भासै भी शुद्ध बुद्ध (के) तुल्य, जो स्मृति बुद्ध समझा चाहे तो।
बुद्ध भासै भी प्राणी से विशेष नहीं,
अतः आभास परीक्षा दोनोंमें निरूपण नहीं उसे छोड़।।

६६. छोड़ा भी अपनेसे पर नहीं जग प्रवाह टूटै,
अपनेसे है चिन्ता कल्पनाकी स्मृति से ले।
आभास प्रकटमें अविकल्प अमन्द चित्त,
अतः भाव-अभाव दोनों कल्पना से रहित।।

६७. निजमें रहै तो जैसे करा भी सुख, स्मृति आभास्वर धारी सारवान्।
आसक्ति द्वैतरहित स्वभाव निजमें थापै, अतः महामुद्रा युगमें प्रविष्ट (है)।।

६८. स्मृति विस्मृति अजन्मा युगमें उतरै, औ विस्मृति अविकल्पका स्वभाव।
प्रत्यय अकस्मात् उत्पन्न दो स्मृति, उत्पत्ति विना साथमें एकरसके कारण।।

६. त्रिकाय, त्रिमुद्रा

६९. देस्.न. स्क्ये. दङ. स्क्ये.ब. ब्लो.लस्.ऽदस् ।।
ऽोद्.ग्सल्.स्तोङ. दङ. सुङ.दु. ऽजुग्. ल.सोग्स्. ।
म.ब्चोस्. म.ब्यस्. स्क्ये.मेद. रङ.सर्. ग्रोल् ।।
दे.ल. स्कु.ग्सुम्. छोस्.स्कु. लोङस्.स्कु. दङ ।

७०. स्न.छोग्स्. स्नङ.ब[४]. स्प्रुल्.स्कु. शेस्.सु. ब्शद् ।।
ग्ञ्युग्.म. ङो.बो.ञिद्.क्यि. स्कु. यिन्. ते ।
स्ञिङ.र्जे. स्तोङ. दङ. द्ब्येर्.मेद्. स्क्ये.ब.मेद् ।।
त्रस्.क्यि. फ्यग्.र्ग्य.ल. ब्र्तेन्. ञाम्स्.म्योङ. नि ।

७१. ब्चोस्.म.यिन्.फियर्. क्र्येन्.ग्यि. स्तोब्स्.लस्. ब्युङ ।।
ग्शन्.ल. ल्तोस्.फियर्. खो.न.ञिद्. म. यिन् ।
छोस्.क्यि. फ्यग्.र्ग्य. ब्चोस्[५]. म. म.यिन्. क्यङ ।।
ञाम्स्.सु.म्योङ.बस्. म.ग्रुब्. ञिद्. मि. म्थोङ ।

७२. फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. ञाम्स्.सु.म्योङ. ऽग्युर्. न ।।
द्रन्.प. स्न.छोग्स्. स्क्ये.ब.मेद्.पर्. शेस्. ।
द्ङोस्.पोर्.स्नङ.ब. ङो.बो.ञिद्.क्यिस्. स्तोङ ।।
सेम्स्.चन्. स्क्ये.ब.मेद्. दङ. द्ब्येर्.मेद्. दोन् ।

७३. स्ञिङ.र्जे. थब्स्.क्यिस्.[७] म्छोन्.ब्य. द्पे.यिस्. ब्स्तन् ।।
स्न.छोग्स्.स्नङ. यङ. ब्लो.ऽदस्. युल्. मि.ग्यो ।
ब्दग्.ञिद्. र्नल्.ऽब्योर्. दे.ञिद्. र्तग्.तु. ब्ल्त ।।
स्प्योद्.लम्. थम्स्.चद्. फ्यग्.र्ग्य.छे.ल. ग्नस् ।

७४. द्ङोस्.पोऽि. ग्नस्.लुग्स्. स्क्ये.मेद्. ङङ.दु. ग्शग् ।।
र्लुङ.गि. क्र्येन्.ब्चस्. र्ग्य.म्छो. दङ. बल्.ते. ।
द्बऽ.[७]र्लब्स्. छ.यि. ग्ञेर्.म. ग्लो.बुर्.स्क्ये ।।
दे.ञिद्. र्ग्य.म्छो.दग्. दङ. द्ब्येर्.मेद्. दो ।

७५. द्रन.पस्. क्र्येन्. ब्यस्. र्तोग्.प. गलो.बुर्. स्क्ये ।।
दे.ञिद्. स्ङर्.ग्यि. द्रन्.प.मेद्. दङ. नि ।

६ त्रिकाय, त्रिमुद्रा

६९. अतः उत्पन्न औ उत्पत्ति बुद्धि से परे (हैं),
आभास शून्य औ योगमें उतार इत्यादि।
अमथित अकृत अज स्व-भूमिमें मुंचै,
तहाँ त्रिकाय धर्मकाय औ संभोगकाय।।

७०. नाना भासित निर्माणकाय इति कहिये, निज स्वभाव ही का काय है।
करुणा शून्यता भिन्न उत्पन्न नहीं, कर्ममुद्राके आश्रय से अनुभव।।

७१. अमथित होने से प्रत्ययके बलसे हुई, दूसरेकी अपेक्षासे तत्त्व नहीं (है)।
धर्ममुद्रा अपक्व नहीं भी, अनुभवसे असिद्ध नहीं दीखै।।

७२. महामुद्रा अनुभूत हो तो, नाना स्मृति की उत्पत्ति का न होना जानै।
वस्तुके-प्रतिभास भावही से शून्य, प्राणी अनुत्पत्ति अभेदके अर्थ।

७३. करुणा उपायसे लखै दृष्टान्तसे दिखावै,
नाना प्रतिभास भी बुद्धिसे परे विषय अचल।
आत्मा ही योगी वही सदा देखै, सारा चर्यामार्ग महामुद्रामें रहे।।

७४. वस्तुकी व्यवस्था अज हंसमें थापै, पवनके प्रत्यय के साथ सागरस्वच्छ में।।
वेला पानीकी तरंग अकस्मात् जनमै, सोई शुद्धसे सागर भिन्न नहीं।।

७५. स्मृतिप्रत्यय कृत कल्पना अकस्मात् जनमै, औ सोई पूर्वकी स्मृति नहीं।

स्क्ये.मेद्. ब्लो.ऽदस्.दग्.गिस्. म्छर्. म्छुङस्.ते ।।
दे.ल्तर्. फ्यग्.ग्र्य.छे.ल. स्क्येस्.प. स्ङर्.मेद्. ब्शिन् ।

७६. पियस्. क्यङ[1]. कर्येन्.ग्यि. स्तोब्स्.क्यिस्. स्क्येस्.स्निद्. क्यङ ।।
स्क्ये.ब.मेद्.प. दे.दग्. द्ब्येर्.मेद्. दो ।
ग्सुग्स्.चन्. म.यिन्. कुन्.ल.ख्यब्.प. दङ ।।
मि.ऽग्युर्.ब. दङ. दुस्.गॅस्. थम्स्.चद्.पऽो ।

७७. नम्.म्खऽ.ल्त.बुर्. स्क्ये.ऽगग्.मेद्.प. दङ ।।
थग्.प. स्प्रुल्.ब्सुङ्. स्प्रुल्.ग्यि. स्तोङ. प. दङ[2] ।
छोस्.स्कु. स्प्रुल्.स्कु. लोङ्स्.स्कु. स्प्रुल्.स्कु. द्ब्येर्.मेद्. दे ।।
ङो.बो.ञिद्. नि. ब्लो.यि. युल्.लस्. ऽदस् ।

७८. फ्यग्.ग्र्य.छेन्.पो. स्कद्.चिग्. म्ङोन्. सङ्स्.ग्र्यस्. ।।
दे.ञिद्. सेम्स्.चन्. दोन्.दे. ग्सुग्स्.स्कुर्. ब्युङ ।
ग्र्यु.म्थुन्. ऽब्रस्.बु. र्नम्.स्मिन्. ऽब्रस्.बु. दङ ।।
द्रि.म.मेद्.पऽि. ऽब्रस्.बु. ग्शन्.दोन्[3] ब्येद् ।

७९. गो.ऽफङ. ख्यद्.पर्. ब्ज़ोद्.लस्.ऽदस्. पर्. ब्ज़ाद् ।।
क्ये.हो. म.ब्चोस्. फ्यग्.ग्र्य. ब्दे.ब.छे ।
द्रन्.मेद्. क्लोङ.दु. रङ.दु. रङ. शर्.ब ।।
स्क्ये.मेद्. नम्.म्खऽ.ल्त.बुर्. ख्यब् ।

८०. ब्लो.लस्.ऽदस्.पऽि. दङ. ल. ग्नस् ।।
स्नङ.ब. स्प्रोस्.ब्रल्. ब्दे.ब.छे ।
द्रन.मेद्. चिर्. यङ. नि. र्तोग्.प ।
द्रन्[4].प.स्न.छोग्स्. सेम्स्.सु. ग्सल्. ।।

७. सहज महासुख

८१. ब्र्तग्. चिङ. ब्चल्. न. द्मिग्स्.सु. मेद् ।
स्क्ये.ब.मेद्.प.ऽज़िन्.दङ.ब्रल् ।।
ज़िन्.दङ.ब्रल्.बऽि. ग्र्यु.ब. मेद् ।
द्रन्.प. स्ग्यु.म. रङ.रिग्. चम् ।।

अज शुद्ध बुद्धिसे परे आश्चर्य तुल्य,
ऐसे महामुद्रा से उत्पन्न पहिले न जिमि ।।

७६. बाहर भी प्रत्ययके बल जन्म भव भी,जन्म विना वे अभिन्न हैं ।
रूपी नहीं सर्वव्याप्त औ, अविकारी औ सर्व कालोंवाला ।।

७७. गगन जिमि जन्म विरोधी नहीं,
औ रज्जु (में) सर्प की धारणा सर्पकी शून्यता ।
धर्मकाय संभोगकाय निर्माणकाय अभिन्न, स्वभावतः बुद्धिके विषयसे परे ।।

७८. महामुद्रा क्षणिक पूर्व बुद्ध (है), सोई प्राणीके अर्थ रूप-कायमें होइ ।
कार्य शक्ति फल विपक्व फल औ, निर्मल फल परके अर्थ करै ।।

७९. कपाट विशेष वर्णनातीत कहिए, अहो अपक्व मुद्रा महासुख ।
विस्मृति वीचिमें स्वयं उगै, अजन्मा ख—सम जिमि व्यापी ।।

८०. बुद्धिसे परे साथमें रहै, प्रतिभास निष्प्रपंच महासुख ।
विस्मृति भी क्यों अविकल्प, नाना स्मृति चित्तमें प्रकाशै ।।

७. सहज महासुख

८१. परख कर ढूँढ़नेपर आलंबन नहीं, अनुत्पन्न धारणरहित ।
धारणरहित (जो सो) कारण नहीं, स्मृति माया स्वसंवेदन मात्र ।

८२. स्ग्यु.मेद्. थर्.मेद्. द्रन्. मेद्. ग्सल् ।
स्क्ये.मेद्.दोन्.दम्. कुन्.ग्सल्.बस् ॥
थम्स्.चद्. ब्लो.लस्. ऽदस्.पर्. स्नङ ।
खम्स्.ग्सुम्. ब्लो.ऽदस्. ये.शेस्. ञिद् ॥

८३. ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.प. दे.खो.न ।
द्रन.पऽि. चँ.ब. म.लुस्. थग्.ब्चद्. दो ॥
द्रन्.मेद्. स्क्ये.ब.मेद्.पऽि. द्ब्यिङस्.ल. द्गोङ ।
दे. ञिद्. म.ब्चोस्. ब्लो.यि. युल्.लस्.ऽदस् ॥

८४. द्रन्.रिग्.सेम्स्.क्यि. र्ङ.ऽबर्. ञिद्.दु. ग्सल्[६] ।
ग्सल्.बस्. र्नम्.र्तोग्. ऽखोर्.बऽि. ग्रोग्स्.सु. ऽग्युर् ॥
थर्.बऽि. लम्. नि. खो.न.ञिद्. शेस्.नस् ।
रङ.ऽब्युङ. जि.ब्शिन्. ब्सम्.(प.)ब्रल्.ल. ग्नस् ॥

८५. द्रन्.प. रङ.ग्सल्. द्ङोस्.पोर्. ग्रुब्.प. मेद् ।
ब्चोस्.मेद्. द्गोङ्स्.प. स्क्ये.मेद्. ब्दे.छेन्. ऽदि ॥
म्ङोन्.सुम्.स्नङ.बस्. दोस्[७].ग्सुङ. गङ.यङ. मेद् ।
दोन्.मेद्. युल्.दु. चिर्.यङ. म्थोङ.ब. मेद् ॥

८६. र्तेन्.(प.)दङ.ब्रल्. स्लोब्.प. गङ.यङ. मेद् ।
गङ्.ल. यिद्.ल. द्ब्येर्.मेद्. फ्यग्.ग्र्य.छे ॥
म्छन्.मऽि. द्रन्.स्न.छोग्स्. जि.स्नोद्.प. ।
दे. ञिद्. फ्यग्.ग्र्य.छे.ल. द्ब्ये.ब.मेद् ॥

८७. र्तोग्स्. दङ. भि.र्तोग्स्. ग्ञि.ग. सो.सो.[१] मिन्. ।
र्तग्.छद्. म्थऽ.ल. मि.ग्नस्. स्क्योन्.दङ.ब्रल् ॥
रङ.गि. दे.ञिद्. र्तोग्स्.न. ग्शन्.लस्. मिन्. ।
र्तेन्.ऽब्रेल्. म्य.ङन्.ऽदस्.लम्. ब्स्तन्.प.दङ. ॥

८. मुद्रा, महामुद्रा

८८. स्क्ये.ब.मेद्.पर्. र्तोग्स्.न. फ्यग्.ग्र्य.छे ।
दे.ञिद्. मि.शेस्. लस्.क्यि. फ्यग्.ग्र्य. दङ. ॥

८२. मायारहित मुक्तिरहित विस्मृति प्रकाशै, अनुत्पन्न सर्व परमार्थ प्रकाशनसे ।
सब बुद्धिसे परे हो भासै, त्रिधातु बुद्धिसे परे ज्ञान ही ।।

८३. सहज तत्त्व (है), स्मृति-मूल अशेष रज्जु काटै ।
स्मृतिरहित अजन्मा धातु में हँसै, सोई अपक्व बुद्धि-विषयसे परे ।।

८४. स्मृति वेदक चित्त स्वयं ज्वालाहीमें प्रकाशै,
प्रकाशनसे विकल्प संसार का सखा होवै ।
मोक्ष-मार्ग सोई जानि, स्वयंभू जिमि चिन्ता विना रहै ।।

८५, स्मृति स्वयंप्रकाशक वस्तु सिद्ध नहीं अपक्व आशय अज महासुख ।
प्रत्यक्ष प्रतिभाससे पार्श्व धरनेको कुछ भी नहीं,
अर्थहीन विषयमें कहीं भी देखनेको नहीं ।।

८६. आश्रयहीनसे सीखना कुछ भी नहीं, जहाँ मनमें अभेद महामुद्रा ।
निमित्तकी जितनी नाना स्मृति, सोई महामुद्रा में भेद नहीं ।

८७. कलपना अकलपना दोनों पृथक् नहीं,
नित्य औ उच्छेद अन्तमें न रहै निर्दोष ।
अपने सोई कल्पना करै तो अन्यसे नहीं, औ आश्रयसंबंधी निर्वाण-मार्ग
कहिये ।।

८. मुद्रा, महामुद्रा

८८. अनुत्पन्न समझै तो महामुद्रा, सोई न जानै (तो) कर्ममुद्रा ।

दम्.छिग्. छोस्.ल.सोग्स्.प. ब्चोंल्. ऽदोद्.[2]प ।
दे.ञिद्. म्छोन्.बऽि. द्पे.चम्. दोन्. मि.नुस् ॥

८९. ग्सुङ.ऽजिन्. ब्रल्.बऽि. फ्यग्.ग्यं.छे. ब्र्तेन्.प. ।
शेस्. प. रङ.लुग्स्.सो.म. ञिद्.ल. ब्युङ ॥
ऽदोद्.मेद्. रङ.ब्शन्. ग्ञुग्.मऽि. ङो.बोर्.ग्नस् ।
थ.म.ल्. स्नङ.बऽि. शेस्.प. ऽदि.ञिद्. ब्लो ॥

९०. यिन्.मिन्.द्रन्.पऽि. सेम्स्.ल. रङ[3].ग्शन्. यिन् ।
यिद्.छेस्. रिन्.छेन्. ग्दम्स्.ङग्. यिद्.ब्शिन्. ग्तेर् ॥
यिद्.ल. ब्य. दङ. मि.ब्य. मेद्.पर्. ग्शग् ।
रङ.रिग्. फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. ञिद्. यिन्.पस्. ॥

९१. फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो.ञिद्.ल. ञिद्.क्यिस्. ब्स्तन् ।
द्रन.प.स्न.छोग्स्.दोन्.ल. सेम्स्. म.ऽजुग् ॥
फ्यि.नङ.ब्रल्.बस्. चोंद्.मेद्. फ्यग्.ग्यं.[4]दङ ।
फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. स्तोग्.ल्दन्. ऽदोद्.प. मेद् ॥

९२. ऽदोद्.प. ब्युङ.न. दे.यङ. द्रन्.पऽि. ग्यु ।
रङ.(गि.)सेम्स्.(प.)फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. ल ॥
द्रन्. दङ. म.द्रन्. थ.दद्. स्क्ये.ब. मेद् ।
ख्रुल्. दङ. म.ऽख्रुल्. ब्लो.यि. युल्.लस्. ऽदस् ॥

९३. द्रन.पऽि. शेन्. तोंग्.ब्र्तस्.पस्. ऽखोर्.बऽि. ग्यु ।
ऽोद्.ग्सल्.[5] फ्यग्.ग्यं. ग्ञुग्.मऽि. ङो.बो. ञिद् ॥
गङ.यङ. ऽग्युर्.मेद्. ब्यङ.छुब्.सेम्स्. स.ग्चिग् ।
खो.न.ञिद्.ल. ग्सुङ.ऽजिन्. ङो.बो.ब्रल्. ॥

९४. स्नङ.ब्.दोन्.ल्दन्. ये.शेस्. ञिद्.दु. म्थोङ ।
बसम्.पस्. ब्र्तग्स्.पस्. द्रन्.पऽि. छोग्स्.सु. ग्युस् ॥
स्नङ.ब. स्क्ये.ब. लोग्.पऽि. स्तोब्स्.क्यिस्. म्थोङ[6] ।
द्रन.प. द्रन.मेद्. दङ.ल. शेस्.ऽजुग्. प ॥

सद्वचन धर्म इत्यादि अभ्यास की इच्छा,

सोई परखनेके दृष्टान्त मात्र के अर्थ असमर्थ ॥

८६. ग्रहण-धारण-रहित महामुद्रा-आश्रय, ज्ञान स्व-मर्यादा अभिनव ही में होवै।
इच्छा विना स्व-पर अपने ही भाव में रहै

मृदु प्रतिभासी ज्ञान(है)यही बुद्धि ।

६०. है—नहीं स्मृतिके चित्तमें स्व-पर है,

आस्था रत्न अववादवचन चिन्ता(मणि)कोश।
मनसिकार औ अमनसिकार अभाव में राखै, स्वसंवेद्य महामुद्रा ही होनेसे।

६१. महामुद्रा हीके समीप से आदेशै, नाना स्मृतिके अर्थ चित्त न प्रविशै।
बाहर भीतर विना निर्विवाद मुद्रा औ, महामुद्रा प्राणी (की) इच्छा नहीं ॥

६२. इच्छा हो तो सो भी स्मृति-हेतु, स्व-चित्त महामुद्रा में ॥
स्मृति औ विस्मृति का भेद उपजै नहीं,

भ्रम औ अभ्रम बुद्धिके विषयसे परे(है) ॥

६३. स्मृति आसक्ति कल्पना तर्कदर्पसे संसार-कारण,

आभास्वर मुद्रा(है)निज स्वभाव ही ॥
जो भी निर्विकार बोधिसत्त्वभूमि एक,

तत्त्व (है) धारण-ग्रहण (स्व) भाव-रहित ॥

६४. प्रतिभासी अर्थवाला ज्ञानहीमें दीखै,

चिन्तनसे परीक्षासे स्मृतिसमूहमें कारण ।
प्रतिभासना जन्म मिथ्याबलसे दीखै, स्मृति-विस्मृति के साथ ज्ञान प्रवेश ॥

९५. काय औ मनसे रत भी स्मृति-कारण नहीं,
अद्वैतमें संसार का स्वभाव नहीं (होता)।
नाना स्मृतिकारणका स्वभाव यह, नासाग्रकी मुद्राओं में आदिसे नहीं॥

९६. अतः महामुद्रा ध्यानहीन ग्रहण-त्याग थापें,
अहो भीतर गंभीर औ अ-गंभीर उत्पत्तिक्रम।
संसिद्ध (स्व) भाव औ श्वास संभूत, स्नायुपत्र कर्म औ धर्मकी मुद्रा॥

९७. योगपर्यवेक्षणका क्रम है, महामुद्रास्वभाव ही का क्रम।
सद्वचन मुद्रा संसिद्धिका क्रम, सर्वपरीक्षा संसिद्धिका कारण।

९८. कर्ममुद्रा इन्द्रि (य) का स्वभाव औ चउ आनन्दी उपाय का स्वभाववान्।
धर्ममुद्रा नाना प्रतिभास (है), चउ आनन्दका सहज ही॥

९९. अनुत्पन्न महामुद्रा में, धारण-ग्रहण स्मृति बुद्धि से परे।
निर्मल फल पूर्व बुद्ध, सद्वचन मुद्रा निमित्त योग (है)।

१००. फल देवमंडल संसारके अर्थ, भट्टारक माता पिता प्रज्ञा औ उपाय लखै।
चउ आनंदयुत सद्-वचन महामुद्रा, ऐसे उपाय प्रयोग सर्व विनय भी॥

१०१. गंभीर धर्ममुद्रा निर्णय, चित्त ही महामुद्रा अपनेको आदेशै।

द्गऽ.बस्. ग्सुङ.बऽि. द्रन्.प. ब्कर्.ब. दङ।
म्छोग्.दग्.स.ऽज़िन्.पऽि. द्रन्. फ्यग्. ग.तङ.ब. दङ॥
१०२. ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.दग्स्. द्रन्.प. ब्कर्.बस्. दङ।
द्गऽ.ब्रल्.स्नङ.ब. स्क्ये.मेद्. द्रन्.प.ग्सल्.॥
दे.ब्शिन्. सब्.मोऽि. छोस्.क्यि. फ्यग्.ग्र्य. ब्स्तन्.।
द्गऽ.ब्शि. ये.शेस्. गङ.दु. स्क्येस्.प. दङ॥
१०३. थ.मि.दद्. चिङ्. योङस्.सु. थिम्.पर्. ग्नस्।
र्तोग्.पऽि. ञ्नम्स्.म्योङ. दग्.ल. ग्नस्.प. दङ॥
यिद्.ल. म.द्रन्. र्तोग्.प. थ.मि.दद्.।
द्पे. दङ. लम्.स्ते. थ.स्ञद्. ऽदुल्.बर्. ब्स्तन्॥
१०४. सेम्स्.ञिद्. फ्यग्.ग्र्य.छेन्.पो. ऽछर्.ब. नि.।
स्क्ये.मेद्. स्क्ये.बऽि. छो.ऽफ्रुल्. चिर्. यङ. ऽछर्.॥
ब्लो.लस्.ऽदस्. प. ब्सम्.स्क्येस्. ङो.बोर्. ब्स्तन्।
म.स्क्येस्.प. दङ. स्क्येस्.पऽि. द्ङोस्.पो. ग्ञिस्॥
१०५. थ.दद्.मेद्. दे. ग्ञुग्.मऽि. ङो.बोर्. ग्शग्।
द्रन.प.स्न.छ्रोग्स्. गङ.ल. र्यु.ब. ऽदि॥
द्रन्.मेद्. ऽजुग्.पस्. र्तोग्.प. मि.ऽगग्.प।
शेस्.पर्. लेग्स्.ग्शग्. न. नि. ग्नस्.पर्. ऽग्युर्॥
१०६. स्नङ. दङ. स्तोङ. दङ. ग्ञिस्.ऽज़िन्. स्क्ये.बऽि. र्ग्यु।
थ.मि.दद्.पर्. गो. न. ब्दे.ब.छे॥
ञम्स्.म्योङ. शर्.बस्. मि.म्थुन्.ऽज़िन्.प.ब्रल्।
112a. द्रन्.प.मेद्. दे. ऽदि.द्रऽि. युल्. मेद्. प॥

६. शून्यता, महासुख

१०७. द्रन्.प.मेद्. दङ. स्नङ. स्तोङ. थ.मि.दद्।
म.क्येस्. म्छन्.म.मेद्.पऽि. र्नल्ऽब्योर्. ल॥
म्ञम्.ग्शग्. र्जेस्.थोब्.मेद्. दे. र्ग्युन्.ग्यि. र्नल्.ऽब्योर्. ल।
स्नङ. दङ. स्क्ये.ब. द्रन्.प. गङ. स्क्येस्. क्यङ॥

आनन्दसे गृहीत स्मृति कठिन औ,
उत्तम शुद्ध धारण स्मृति अर्ध (उन्मेष) देना ।

१०२. सहज शुद्ध कठिन स्मृति औ, निरानन्द प्रतिभास अज स्मृति प्रकाशै ।।
ऐसे गंभीर धर्ममुद्रा आदेशै, चउ-आनंद जानै औ कहीं जनमै ।।

१०३. अभिन्न विलीन रहै, औ कल्पना अनुभव में रहै ।
मनमें न स्मरै कल्पना अभिन्न, दृष्टान्त औ व्यवहार विनयन कहिए ।।

१०४. चित्त ही महामुद्रा उगै, अनुत्पन्न प्रातिहार्य कैसे उगै ।।
बुद्धिसे परे समाधिज भावमें बतावै, अज औ जात दो वस्तु ।।

१०५. अभिन्न वह निज (स्व)भावमें थापै, नाना स्मृति जिसका कारण यह ।
विस्मृतिप्रवेशसे कल्पना न निरोधै, ज्ञाने संस्थापित हो तो ठहरै ।।

१०६. प्रतिभास शून्यता-द्वैत धारणा उत्पत्ति-कारण, अभिन्न जानै तो महासुख ।
अनुभूतिके उदयसे विपक्ष धारणा हटै, सो विस्मृति ऐसे निर्विषय ।।

६. शून्यता, महासुख

१०७. विस्मृति औ प्रतिभासशून्यता भिन्न नहीं, अजात अ-निमित्त योगी को ।
समापत्ति उपलब्धि नहीं स्रोतके योगमें,
प्रतिभास औ अज स्मृति जो जनमै भी ।।

१०८. दे.ञिद्. स्तोङ.ब. द्रन्.प.मेद्. ग्नस्.पस् ।
द्रन्.प. यिद्.ल. ब्येर्.मेद्. स्नङ.[1] स्तोङ. द्ब्येर्.मि. फ्येद् ॥
दे.ञिद्. थुग्.फ़द्. स्क्ये.मेद्. ञाम्स्.म्योङ. ल ।
स्नङ.बऽि. ङो.बो. स्तोङ.ब. ब्दे.छेन्. शर् ॥

१०९. छब्.रोम्. छुर्.ब्शु. ब्तुङ.ङ्. ब्तुब्.ब्शिन्. दु ।
गङ. स्नङ.स्क्ये.मेद्. ब्दे.ब.छेन्.पोर्. छोर् ॥
ब्तङ.स्ञोम्स्. द्रन्.प.मेद्. दे. र्तोग्.प. म.ब्कग्. क्यङ ।
ब्लो.लस्.ऽदस्.पस्[2]. मोङस्.प. स्गोम्.दङ.ब्रल् ॥

११०. दि.ल. ग्नस्.न. ब्दे.छेन्. ञाम्स्.ऽब्युङ. स्ते ।
दङ.पोर्. स्नङ.ब. स्तोङ.पऽि. ञाम्स्.म्योङ. ऽब्युङ ॥
छब्.रोम्. स्नङ. यङ. छु. ङो.शेस्.ब्शिन्.दु ।
ग्ञिस्.प. द्रन्.पऽि. स्नङ.ब. म.ऽगग्. पर् ॥

१११. स्तोङ.प. ब्दे. दङ. थ.मि.दद्.पर्. ऽब्युङ ।
छुब्.रोम्. छु[3].रु. ब्शु.बऽि. ग्नस्.स्कब्स्.ब्शिन् ॥
द्रन्.प. द्रन्.मेद्. स्क्ये.ब.मेद्.ल. थिम् ।
थम्स्.चद्. थ.मि.दद्.पस्. ब्दे.ब.छेन्.पोर्. ग्चिग् ॥

११२. दे.ञिद् छब्.रोम्. छु.रु. ब्शु.ब.ब्शिन् ।
थम्स्.चद्. रङ.ब्शिन्. थुग्स्.फ़द्. शेस्. ग्युर्. न ॥
ब्चिङ. ब्क्रोल् दग्.गिस्. म. ब्सुङ. द्रन्.पऽि. र्जेस्.म[4]. ऽब्रङ ।
ऽजुर्.बुस्. ब्चिङस्.प. ब्शिन्.दु. सेम्स्. मि. स्ग्रिब् ॥

११३. ऽजुर्.बु. ग्लोद्. न. ग्रेल्.शिङ. सेम्स्.ञिद्. गर्.द्गर्. ब्तङ ।
ल्दोग्.पस्. ग्सिङस्.ल. ऽफ़ुर्.बऽि. ब्य.रोग्. ब्शिन् ॥
दे.ञिद्. स्. शेन्. स्नङ.ब. लोङस्.स्प्योद्. यिन् ।
ल्चग्स्.क्युस्. ब्तब्.पस्. ग्लङ.छेन्. थिम्.प.ब्शिन्[5] ॥

११४. ब्य.ब्रल्. ब्शग्.पस्. ग्लङ.छेन्. लोम्.ब.ब्शिन ।
द्रन्.प. द्रन्.मेद्. ङो.शेस्. ग्नोद्.प.मेद् ॥

१०८. सोई शून्य विस्मृति ठहरै तो,
स्मृति मन में अभिन्न प्रतिभासशून्य भिन्न न उन्मेषै।
सोई चित्तसंसर्ग अज अनुभव में,
प्रतिभास (स्व)भाव शून्यता महासुख उदित होइ ।।

१०९. ओलेके पिघले पानीके पीने के विच्छेद-सा
जो प्रतिभास अज महासुखकी वेदना करै।
उपेक्षा विस्मृति सो कल्पना अनिरुद्ध भी,
बुद्धिसे परे से मूढ भावना रहित ।।

११०. यहाँ बसै तो महासुख संभवै, प्रथम प्रतिभास-शून्यता अनुभव होइ।
ओला प्रतिभासै तो पानी की पहिचान जिमि,
द्वितीय स्मृति-प्रतिभास न निरोधै ।।

१११. शून्यता सुख औ अभिन्न होइ, ओलेके पानी में पिघली अवस्थिति जिमि।
स्मृति-विस्मृति अजमें विलीन, सब अभिन्न(ता) से महासुखमें एक ।।

११२. सोई ओलेके पानीमें पिघलने सा, सब स्वभाव चित्त संसर्ग जानै तो।
ग्रंथिमोचन से अगृहीत स्मृति, ना अनुसरै,
कुदालसे बँधा जिमि चित्त न ढाँकै।

११३. कुदाल खोदे मुक्तचित्त ही नाचै उचाटै, निवृत्तिसे संक्रममें कौए-सा।
सोई जानै तो प्रतिभास संभोग है, अंकुश देनेसे गजके निमग्न होने-सा।

११४. निष्क्रिय रखने से गज मस्त-सा, स्मृति विस्मृति ज्ञानको ना बाँधे।

स्नङ. दङ. स्तोङ.प. शेस्.पस्. तोंग्.दङ.ब्रल् ।
स्क्ये.बर्. ग्नस्.पस्. द्ब्येर्.मेद्. द्रन्.मि.ग्यु ॥

११५. दे.ञिद्. ख्यब्.ब्दग्. द्ग्र. कुन्.ङो.शेस्.ब्शिन् ।
स्नङ.ब. स्तोङ.पर्. थिम्.पस्. लन्. छ्व.छुर्.थिम्.[६] ब्शिन् ॥
द्रन्.प. द्रन्.मेद्. थिम्.प. दे.खो.न ।
स्क्ये.ब. नेंम्.प. ग्ञिस्.ल. स्क्ये.ग्यु. मेद् ॥

११६. थुग्.फ्रद्. स्क्ये. मेद्. ये.शेस्. शर्.बस्. न ।
द्रन्.प. ब्लो.यि. युल्.मेद्. फ्योग्स्.मेद्. ये.शेस्. ऽछर् ॥
स्प्र.ब. मे. म्छेद्. रङ. ऽबर्.मे.ब्शिन्.दु ।
112b ञाम्स्.ग्योङ.स्म्रर्. मि.ब्तुब्.प. ग्शोन्. नुऽि. ब्दे. ब. ब्शिन् ।'

११७. स्न.छोग्स्.स्नङ. यङ. द्रन्.पर्. मि.ऽग्युर्. ब ।
दल्.बऽि. बब्.छु. स. द्पऽ.लेंब्स्. मि.ऽग्युर्.पस् ॥
रङ.गि. ङो.बो. ग्सल्.बस्. मर्.मे द्रन्. ।
दे.ल्तर. फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. गङ.ल. मि.ब्स्तन्.पस् ॥

११८. ब्य.सर्. को.ने. म्खऽ.ल. ग्नस्. ब्शिन्.दु ।
तोंग्स्.पऽि. स्प्योद्.पस्. ब्लङ.दोर्. मि[१].ब्येद्. प ॥
स्नोग्.छ्गस्. प.त.रि.ब्शिन्. शे. छगस्.मेद् ।
ब्लो.ऽदस्. ऽब्रस्.बु. ऽदोद्.न. मेद्.ग्रुब्.प ॥

११९. स्मन्. म्. छोग्. (प.) न. पे. त. जि.ब्शिन्. ञिद् ।
क्ये.हो. दे.ल्तर्. म्खस्.प. थब्स्.सिन्.गिस्. (न.) नि ॥
द्रन.प.मेद्.ल. स्क्ये.मेद्. ग्यंस्. ब्तब्. स्ते ।
द्रन्.प.मेद्.पस्. द्रन्.मेद्. ग्यं.यिस्[२] ब्तब् ॥

१२०. स्नङ.बस्. स्तोङ. प. ल. ग्यंस्. ग्दब् ।
स्तोङ.पस्. स्नङ.ब.ल. ग्यंस्. ग्दब् ॥
द्रन. दङ. स्नङ.ब. ब्दे.बऽि. रोर्. शर्. न ।
स्तोङ. दङ. द्रन्.मेद्. ग्यं.यिस्. थेब्स्.प. यिन् ॥

प्रतिभास औ शून्यता ज्ञानसे निर्विकल्प, योनि से अभिन्न स्मृति अकारण ।।

११५. सोई विभूति सर्व शत्रु की पहिचानसी,
प्रतिभास-शून्यता में विलयन से लवण (सी) पानी में लीन ।
स्मृति विस्मृति विलय सोई, द्विविध उत्पत्तिमें उत्पत्ति-कारण नहीं ।।

११६. चित्त संसर्ग उपजै नहीं ज्ञान उदय से यदि,
स्मृति बुद्धि का विषय नहीं विना पक्षज्ञान उगै ।
तृण दहै स्वयं ज्वलित अग्नि जिमि, अनुभवकथनमें अस्फुट शिशु सुख-सा ।।

११७. नाना प्रतिभासन भी स्मृतिमें विकार नहीं, मन्द नदी भमि भंग अविकार ।
अपने (स्व) भाव प्रकाशनसे दीपक स्मृति, तैसे महामुद्रा जिसे नहीं बतावै ।।

११८. सरकोन पक्षी आकाशमें वसै जैसे, अवबोध-चर्यासे लेना-छोड़ना नहीं करै ।
प्राणी पत्ररी जिमि संसर्ग राग नहीं,
बुद्धिसे परे फल चाहे तो अभाव सिद्धि ।।

११६. उत्तम औषध हो तो पेत जिमि, अहो तैसे उपाय बद्ध पंडित लोग ।
विस्मृतिमें अज विस्तार अर्पित करै,
स्मृतिके विना विस्मृति संतानसे अर्पणा ।

१२०. प्रतिभास-शून्यताका विस्तार रोपना,
शून्यतासे प्रतिभासको विस्तार देना ।
स्मृति औ प्रतिभास सुखके रसमें उदय हो तो,
शून्यता औ विस्मृति विस्तर से ग्रस्त है ।।

१२१. स्नङ. दङ. द्रन्.प. स्तोङ.पऽि. ग्यें. दङ. नि ।
द्रन्.मेद्. ग्नस्.प.दग्.गिस्. ग्येंस्.ग्दब्. न ॥
स्नङ. दङ. द्रन्.प. ब्दें[३].बऽि. रोर्. शर्.नस् ।
म्छन्.मऽि. ब्स्गोम्.पस्. म.द्फ्यद्. म्छन्.मऽि. ब्लो.लस्.ऽदस् ॥

१२२. द्रन. दङ. स्नङ.ब.दग्.ल. स्क्ये.मेद्. ग्येंस्. बतब्. प ।
स्क्ये.मेद्.दग्.ल. ब्लो.ऽदस्. ग्यें.यिस्. थेब्स् ॥
द्रन.फ्स्. द्रन्.मेद्. ब्दे.बऽि. ग्येंस्. थ्ब्स्.पस् ।
स्तोङ.पर्. म.सोङ. छद्.पऽि. म्थर्. म. ल्हुङ[४] ॥

१२३. ग्नस्.प. स्क्ये.प.दग्.ल. ग्येंस्. थेब्स्.पस् ।
द्ङोस्.पोर्. म. सोङ. तंग्.पऽि. म्थर्. म. ल्हुङ ॥
थम्स्.चद्. ब्लो.लस्.ऽदस्. शिङ. स्क्ये.ब. मेद् ।
थम्स्.चद्. ब्दे.ब.छेन्.पोऽि. ग्यु.दङ.ल्दन्. ॥

१२४. दे.ल्तर्. शेस्.पस्. ब्तङ. स्ञोम्स्. म्थर्. म. ल्हुङ ।
द्रन.प. ऽखोर्.बऽि. द्ङोस्.पो. दङ[५].द्रन्. प. मेद.पऽि. र्तोग्स्.प. ल. ॥
ब्तङ.स्ञोम्स्. लम्.दु. ख्येर्.बर्. ब्येद्. प. दङ ।
रिग्.पस्. ग्शिग्स्.नस्. स्तोङ.प. ब्तङ.स्ञोम्स्. दङ ॥

१२५. ग्सुङ.ऽजिन्. ब्रल्.बऽि. रङ.रिग्. ब्तङ.स्ञोम्स्.पस् ।
ब्देन्.प.ग्ञिस्.ब्रल्. गञिस्.मेद्. ब्तङ.स्ञोम्स्. बस्गोम्. ॥
गङ.दु. म.द्रन्[६]. ब्सम्.ग्तन्. ब्तङ.स्ञोम्स्. म्छोग् ।
लुङ.दु. म.ब्स्तन्. ब्तङ.स्ञोम्स्. म. यिन्.ते ॥

१२६. शेस्.प. सोर्. ग्शग्. द्रन्.मेद्. ञम्स्.ऽफो.ब ।
द्रन्.पऽि. म्छन्.म. द्रन्. मेद.लम्.दु. ख्येर् ॥
ब्दे.ब.ल. म.ख्येर्. ब्लो.ऽदस्. म.द्मिग्स्.प ।
113a. ग्ञिस्.ल. मि.र्तोग्. ब्दे.ब. ग्यु. म. छद्[७] ॥

१२७. क्ये.हो. ञम्स्. दङ. ब्रल्. बस्. ग्सुङ.ऽजिन्. ग्ञिस्.लस्. ग्रोल् ।
दे.ञिद्. फ्यग्.ग्यें.छेन्.पोऽि. दोन्. म्थोङ्.ग्युर् ॥

१२१. प्रतिभास औ स्मृति शून्यताका विस्तार,
स्मृति विना रहनेवालोंसे विस्तृत हो तो।
प्रतिभास औ स्मृति सुखके रसमें उदयसे,
तो निमित्त भावनासे अभेद्य निमित्त बुद्धि से परे ।।

१२२. स्मृति और प्रतिभासमें अज विस्तार पड़ै,
अज शुद्धमें बुद्धिसे परे विस्तारसे ग्रस्त।
स्मृतिसे विस्मृति सुखका विस्तृत-ग्रस्त करनेसे,
शून्यतामें न जा उच्छेद अन्तमें ना चुवै ।।

१२३. विहार उत्पत्तिमें विस्तार ग्रस्त होनेसे, वस्तु में न जावै (तो) शाश्वत अन्त ना ग्रसै।
सारे बुद्धिसे परे होकर उपजें नहीं, सारे महासुखके कारण वाले ।।

१२४. ऐसे जाननेसे उपेक्षा अन्त न पावै,
स्मृति संसार-वस्तु औ विस्मृतिके अवबोधमें।
उपेक्षा-मार्गमें ले जाना औ, विद्या से विचार कर शून्यता औ उपेक्षा ।।

१२५. ग्रहण-धारण विना स्व(सं)वेद्य उपेक्षासे
सत्य-द्वय रहित अद्वय उपेक्षा भावना।
जहाँ विस्मृति ध्यान उत्तम उपेक्षा अव्याकृत उपेक्षा भावना नहीं ।।

१२६. ज्ञान अंगुलीपर रखा विस्मृति संस्फुट,
स्मृति-निमित्त विस्मृति मार्गमें ले जावै।
सुखमें मत ले जा बुद्धिसे परे निरालंबना, द्वैतमें कल्पना हीनसुख कारण ना उच्छिन्न हो ।।

१२७. अहो ध्वंस-रहित ग्रहण-धारण दोनोंसे मुक्त, सोई महामुद्राका अर्थ देखै ।

ऽब्रस्.बु. म्थर्.थुग्. रिन्.छेन्.ग्तेर्.छेन्.ल ।
फ्यग्.ग्यं.छेन्.ल. ग्नस्. ऽदोद्. गङ ।।
द्रि.मेद्. ऽब्रस्.बु. तोंग्स्.पर्. शोग् ।

स.र.हऽि. शल्.स्ङ.नस्. ग्सुङ्स्.प. स्कुऽि.म्ज़ोद्. ऽछि.मेद्. दों.जेंऽि. ग्लु. श.स्.
ब्य.ब. ज़ोग्स्.सो ।

अन्त्यावस्थ फल महारत्नकोशमें, महामुद्रा में बिहारका इच्छुक जो
निर्मल फल का (उसे) अवबोध हो ।।

(इति) सरह श्रीमुखसे कथित कायकोश 'अमृतवज्रगीति' समाप्त ।

---

६. वाक्कोश मंजुघोष वज्रगीति

(भोट, हिन्दी)

६. गसुङ.गि. म्ज़ोद्. 'ऽजम्.दब्यङ्स. दो.जेंऽि. ग्लु'*

(भोट)

ऽजम्.द्पल्. ग्शोन्.नु. ग्युर्.ब.ल. फ्यग्.ऽछल्.लो ।

१. क्ये.हो[2].तिङ.ङे.ऽजिन्.चें.ग्चिग्.रो.स्ञोम्स्.स्प्योद्. प.ख्यद्.पर्.चन् ।
दङोस्.दङ.दङोस्.मेद्.यिद्.तोंग्स्.ऽखोर्.बर्.ग्यु.बस् ब्तङ.बर्.ब्य ॥
स्नङ. दङ. स्तोङ.ब. सुङ.दु. ऽजुग्.प. द्ब्येर्.मेद्. दे.खो.न ।
छोस्.क्यि.द्ब्यिङस्.क्यि.रङ.ब्शिन्.थम्स्.चद्.ऽब्युङ.शिङ.थिम्.पर्.ग्नस् ॥

२. ब्दग्. दङ.[3] ग्शन्.दोन्. ग्ञिस्.मेद्. द्रन्.मेद्. ग्सल्.बऽि.दङ ।
फ्यग्.ग्यं.छेन्. पोऽि. नंम्.ग्रङ्स्. द्पग्.मेद्. ब्जोंद्.लस्. ऽदस् ॥
दङोस्. दङ. दङोस्.मेद्. योङस्.सु. ब्तङ. न. ऽखोर्.ऽदस्. मेद् ।
जिङ्.बु. ग्लग्.ब. मेद्. न. फ्योग्स्.ब्शिर्.ऽखोर्.लो. स्पङस् ॥

३. ब्यिस्.प. म. शेस्. तेंन्.ऽब्रेल्[4] ऽखोर्.बर्. ऽजुग्.पऽि. ग्यु ।
शेस्.रब्.शन्.पस्. दङोस्.ऽजिन्. ब्दग्.ग्शन्.दोन् मि.ग्रुब् ॥
मर्.मे. स्पर्. यङ. द्मुस्. लोङ.दग्.ल. स्नङ. मि. स्रिद् ।
ब्दग्.ग्शन्.दोन्.ऽदोद्. दङोस्.ऽज़िन्. रङ.गिस्. रङ.ल.ऽजिन ।

४. तोंग्.प. यिन्.फ्यिर्. ब्तङ. मि.ब्तङ.ल. ब्तंग्.पर्. ब्य ।
स्नङ.[5]मेद्. रङ.रिग्. तोंग्.पऽि. थ.स्ञाद्. कुन्.दङ.ब्रल् ।
थब्स्.दङ.ब्रल्.फ्यिर्. ब्दग्.दोन्. मि.ऽग्रुब्. म्छन्.मर्. ऽग्युर् ।
द्ब्येर्.मेद्. दोन्.ल. ग्नस्.पस्. दे.ञिद्. स्तोन्.प. दङ ॥

५. छोस्.क्यि. द्ब्यिङस्.ल. ऽजुग्.पऽि. म्छन्.ञिद्. ब्स्तन्.पऽो ।
ब्ल.म.लस्. ब्स्तन्. लुङ. ऽब्रेल्. ग्दम्स्.ङग्.[6] जेंस्.सु. स्तोन् ॥

---

* स्तन्. ऽग्युर्., ग्युंद्.शि, पृष्ठ ११३ क २–११५ ४

६. वाक्कोश 'मंजुघोषगीति'

(हिन्दी)

नमो मंजूश्रियै कुमारभूताय

१. अहो समाधि एकशिखर रस अलस-चर्या विशेषी,
वस्तु औ अ-वस्तु मन-कल्पना संसार के कारणमें छोड़िए ।
प्रतिभास-शून्यता[1] युगमें प्रविष्ट भेदरहित तत्त्व,
धर्मधातु स्वभाव सारा होकर रहै विलीन ।।

२. स्व-पर-अर्थ दो नहीं औ विस्मृतिप्रकाशन,
महामुद्रा पर्याय अमित कथनातीत ।
वस्तु औ अ-वस्तु परित्यागै तो संसार से परे न (होइ),
वापी उरुगुप्त ना तो चउदिसि चक्र फेंक ।

३. बाल अजान आश्रय संसारमें उतरने का कारण,
मन्दप्रज्ञ स्वभाव स्व-पर-अर्थ ना साधै ।
दीप जलता भी जन्मांधको प्रभासै ना,
स्व-पर-अर्थ इच्छा साधक अपनेहि अपने धारै ।।

४. अवबोध होनेसे त्याग-अत्यागको सदा करै,
प्रतिभास विना स्वसंवेद्य अवबोध सर्व-व्यवहार-रहित ।
उपायरहित होनेसे स्व-अर्थ-असिद्ध अ.निमित्त होइ,
औ अभिन्न अर्थ में स्थितिसे सोई शिक्षा ।।

५ धर्मधातुमें प्रविष्ट का लक्षण कहैं ।
गुरु-देशना व्याकरण[2] संबंध अववादवचन अनुशासै ।

---

१. भावना । २. उपदेश ।

लुङ. दङ. रिग्स्.पस्. रङ.गि. म्छन्.ञिद्. तोंग्स्.ऽदोद्.प।
ब्ल.म.ल. ब्र्तेन्. ग्दम्स्.ङग्.ल्दन्.प.दग्.लस्. ञेद् ॥

६. ब्स्ञेन्. ब्कुर्. ब्ग्स्. न.ल्हन्. चिग्. ब्दे.ब.म्छोग्. थोब्. ऽग्युर्।
द्रि.म.दङ.ब्रल्.ब्य.फियर्. ब्ल.मऽि. शब्स्.ल. ऽदुद् ॥
113b म्छोद्.न. ब्यिन्.र्लंब्स्.छेन्[५]पो. ऽब्युङ.बर्. ग्यंल्.बस्. ब्शद्।
क्ये.हो. ग्रोङ.ख्येर्.चम्.ग्र.ग्रो.ङन्.कुस्.नम्.म्खऽर्. सोङ. ब्शिन्.दु ॥

७. थर्.बस्.ऽबद्. न. ग्यंल्.बऽि. स.ल. ग्दोन्. मि. स.।
ब्र्जोद्.ब्य.र्जोद्.द्बङ.स्कुर्.ब्यिन्.र्लंब्स्.स्क्ये.शिङ.ऽफेल्. बऽि.ग्नस् ॥
स्ङोन्.दु. स्लोब्.मस्. ब्य दङ. स्लोब्.द्पोन्.ब्य.बऽि. रिम्.प.[१] दङ।
र्जेस्.सु. स्लोब्.मस्. ब्य. दङ. सब्.मो. द्बङ.ब्स्कुर् ब ॥

८. फ्यग्.र्ग्य. म्छोद्. दङ. ब्स्तोङ.प.दग्.गिस्. ग्सोल्.ब.ग्दब्।
स्ञन्.पऽि. छिग्.गिस्. ग्सोल्.गदब्. रिग्.प. चंल्. द्पङ. दङ ॥
फ्यग्.र्ग्य.ल. ब्र्तन्. ग्सङ.बऽि. द्बङ.ब्स्कुर्. स्दोम्.स्ब्यिन्.दङ।
ग्नङ.ब. स्ब्यिन्. दङ. र्जेस्[२].सु. स्प्रो.ब. ब्स्तन्.प. स्ते ॥

९. स्लोब्.मस्. जस्. द्बुल्. सब्.मोऽि. द्बङ.ब्स्कुर्. दम्. ब्चऽ. दङ।
ब्स्क्येद्.पऽि. रिम्.प.ल.सोग्स्. ब्स्तन्.प. नि ॥
ङो.बो.ञिद्.क्यि. रिम्.प. ब्स्तन्.प. दङ।
ञम्स्.म्योङ. ब्स्गोम्.पर्.ब्य.बऽि. ब्र्जोद्.ब्य.ल.सोग्स्. कुन्।

१०. गङ.ल. मि. ग्नस्.ब्य. सर्.को. नि[३]. गङ.ल. र्तेन्मि.ऽछऽ।
ऽदोद्.प. मेद्.पऽि. ब्दे.ब.दग्.ल. मि.ग्नस्. ते ॥
म.सुङ.मेद्.फियर्. गङ.ल. र्तेन्. दङ. र्तेन्.ब्येद्.ब्रल्।
ग्ञिस्.मेद्. र्नल्.ऽब्योर्. रङ.ल. ऽछर्.बऽि. ञम्स्.म्योङ. ब्दे ॥

११. ब्दग्.तु.र्तोग्.पऽि.द्ङोस्.पो.ब.तङ.न.नम्.म्खऽि.म्थऽ. ल्तर्.यङस्.[४]।
म्य.ङन्.ऽदस्.पऽि. ग्रोङ.ख्येर्.दग्.तु. ऽजुग्.ऽदोद्. न ॥

व्याकरण औ विद्यासे स्व-लक्षण जानने की इच्छा,
गुरु आश्रय अववादवचन वालोंसे लहै ॥

६. उपासना करि सहजे वरसुख पावै,
मलरहित करनेसे गुरुचरण में लगै ।
पूजि के महा अधिष्ठान संभूत जिनने कहा,
पूजि के महा अधिष्ठान संभूत जिनने कहा,
अहो नगर चउ अंकुश आकाश गमन जिमि ॥

७. मोक्ष से निरत हो तो जिनकी भूमि में अवश्य,
वाच्य-वाचक अभिषेक अधिष्ठान उपजै वृद्धि का स्थान ।
पहिले शिष्य का करै गुरु क्रिया-क्रम,
पीछे शिष्य का करना औ गंभीर अभिषेक ॥

८. मुद्रा पूजा औ स्तोत्रसे आरोचना,
कल-वचन से आरोचना क्रम विद्या क्रमसाक्षी औ,
मुद्रामें दृढ़ गुह्य अभिषेक संवर-दान,
उपहारदान औ अनुकम्पा शासन ॥

९. शिष्य द्रव्य निवेदै गंभीर अभिषेक प्रतिज्ञा औ,
आरोह-क्रम इत्यादि शासन ।
स्वभाव-क्रम बताना औ,
अनुभवभावना कथनीय इत्यादि सब ॥

१०. जहाँ न बसै सर्.को[१] जहाँ निःश्रय ना चाहै,
निष्काम शुद्ध सुख में ना रहै ।
अचरज विना जहाँ आश्रय औ आश्रयी नहीं,
अद्वय योगी अपने उदित अनुभव सुख ॥

११. अपने अवबुद्ध वस्तु छाडै तो गगन के अन्त-सा विशाल,
शुद्ध निर्वाणनगर में प्रवेश की इच्छा हो तो,

---

१. एक पक्षी ।

छ्रोग्स्.द्रुग्. फ्रद्. छर्.प. ग्र्युन्.ग्यि. नंल्.ऽब्योर्.छे।
स्नङ.स्तोङ्.प. स्क्ये.मेद्. थुग्.फ्रद्. क्र्येन्.ल. रग्. म.लुस्॥

१२. ग्ञिस्.मेद्. गोम्स्.पस्. लम्.म्युर्. खुङ.दु. ऽजुग्.मि.ल्दोग्।
सेम्स्.चन्.सङस्.ग्र्यस्.रङ.ब्शिन्.यिन्[५].पर्.शेस्.न. चोंल्.ब.मेद्॥
गङ.गि.रो.स्ञोम्स्. स्प्योद्.प.ल. ब्र्तेन्.नस्. ऽब्रस्.बु.थोब्।
स्प्योद्.प.ब्यस्.न.ऽग्रो.ब.ऽखोर्.ब.दग्.लस्.थर्.बर्. थे.छोम्.मेद्॥

१३. ब्दुद्. दङ. मि.म्थुन्.फ्योगस्.लस्. नंम्.पर्. ग्र्यंल्.बर्. ऽग्युर्।
म्छन्.मऽि.नंल्.ऽब्योर्.मि.ब्य.ब्तङ.स्ञोम्स्.[७]नंल्. ऽब्योर्.मिन्॥
म्खस्.पऽि. ये.शेस्. म्युर्.दु. थोब्.चिङ. स्ग्रिब्.प. सद्।
म्छन्. मऽि. स्प्योद्.पस्. द्रङ.दोन्. म्खस्. क्यङ. मोंङस्.नंम्स्. ऽछिङ॥

१४. रो.स्ञोम्स्. फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो.ल. ब्र्तेन्. नम्.म्खर्. ऽग्रो।
ग्ञिस्.मेद्. स्प्योद्.लम्. ग्र्युन्.दु. ब्स्तन्.न. छे. ऽदिर्. थोब्॥

114a स्नङ.ब[७]. स्ग्यु.मऽि. युल्.ल. मि.ग्नस्. तोंग्.युल्.मेद्।
ऽजिग्.तेंन्. छोस्. ब्ग्र्यंद्.ऽछिङ.बर्. मि.नुस्.ब्र्तुल्.शुग्स्. म्छोग्॥

१५. स्ञिङ.जे. यब्स्. थिन्. स्प्योद्.प. छगस्.मेद्. म्खऽ.ल्तर्. यङस्।
फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. यन्.लग्.ब्शि.ल्दन्. थब्स्.क्यि. म्छोग्॥
ब्शिर.ल्दन्[३]. फ्यग्.र्ग्य. ग्चिग्.गि. छो. ऽफ्रुल्.ग्चिग्.गि. दङ।
ग्ञिस्.मेद्. दङ. ल. फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. ग्लोद्. दे. ग्शग्॥

१६. ब्यङ.छुब्.सेम्स्.ल्दन्. ब्तङ.शग्.मेद्. न. ग्लङ.छेन्.ऽद्र।
तोंग्.पऽि. ङो.बोस्. मो.तं.ल्तर्. स्नङ. ऽदोद्. न॥
तोंग्.मेद्. स्नङ.मेद्. दोन्.ल. ऽबद्.दे. नंल्.ऽब्योर्.ब्य।
स्कु.ब्शि[२] म्थर्.फ्यिन्. ऽब्रस्.बु. ब्दे.ब. छेन्.पोऽि. दङ॥

१७. स्क्ये.बर्. स्नङ.ब. लम्.ग्यि. लुस्.नंम्स्. नि।
स्कु.गुसुम्.मथुर्.ल्दन्. तोंग्.प. नंम्.पर्.ब्रल्॥
शेस्. दङ. शेस्.ब्यर्. ग्र्युद्.पऽि. युल्।
द्ङोस्.पोऽि. रङ.ब्शिन्. स्क्ये.बऽि. क्र्येन्.स्नङ. यङ॥

छ परिषद् संसर्ग वृष्टिस्रोतका महायोगी,
प्रतिभास-शून्यता अज चित्तसंसर्ग प्रत्ययमें ना स्पर्शैं ।।

१२. अद्वय-भावना से मार्ग शीघ्र पकड़में आवै निस्सन्देह,
प्राणी बुद्ध स्वभाव है (यह) जानै तो अनायास ।
जिसमें रस-समचर्या के आश्रयसे फल पावै,
चर्या करै तो जग-संसार से मुक्ति निस्सन्देह ।।

१३. मार औ प्रतिपक्षसे विजय (पूरा) हो जावे,
निमित्त योगी निष्क्रिय उपेक्षा योगी नहीं ।
पंडितका ज्ञान जल्दी पा कर आवरण नाशैं,
निमित्त चर्या से स्मृति-अर्थ चतुर भी मूढ़ बंधैं ।।

१४. समरस महामुद्रा आश्रय ले आकाश में जा,
अद्वयचर्या मार्ग-स्रोतमें कहै तो इस समय पावै ।
प्रतिभास माया के विषयमें ना रहै कल्पना-विषय नहीं,
आठ लोकधर्म बाँध न सकै उत्तम व्रत ।

१५. करुणा उपाय लीन ? चर्या रागरहित ख-सम विशाल,
महामुद्रा चतुरंगी उत्तम उपाय ।
चार एक मुद्रा औ एक प्रतिहार्यका,
अद्वय प्रसन्न महामुद्रा पुनः थापै ।।

१६. बोधिचित्ती छोड़ना नहीं गज जिमि,
अवबोध-वस्तु से गो-अश्व जिमि प्रतिभास चाहे तो ।
निर्विकल्प निष्प्रतिभास अर्थमें निरत सो योग करै,
औ चउ काय (के) अन्त (पर) पहुँचै फल महासुखमें ।।

१७. जन्म प्रतिभास मार्ग के शरीर,
त्रिकाय शक्तिसहित कल्पना-विरहित ।
ज्ञान औ ज्ञेय में सन्तानों का विषय,
वस्तु-स्वभाव उत्पत्ति-प्रत्यय प्रतिभास भी (है) ।

१८. म.स्क्येस्.प.यि. युल्.लस्.ऽदस्[3]. म.म्योङ ।
द्ङोस्.पो. दङोस्.मेद्. ब्तङ.स्ञोम्स्. ल.सोग्स्. कुन् ।
ऽप्येद्.प.मेद्. दे.द्रन्.मेद्. स्क्ये.मेद्. युल् ।
फ्यग्.र्ग्य.छे.ल. तंग्.तु. म्छन्.ञिद्.ब्रल् ।।

१९. फुङ.पो. दग्.पऽि. ग्सङ.बऽि. युल्.लस्.ऽदस् ।
द्गऽ.ब.ब्शि.यि. म्छन्.ञिद्. फ्यग्.र्ग्यऽि. युल् ।।
रङ.र्ग्युद्. म.यिन्. शेस्[4]रब्. थब्स्.दङ.ब्रल् ।
स्त.र्चे. ल.सोग्स्. दे.ञिद्. म.सिन्. न ।।

२०. दे.ञिद्.दग्.ल. स्ब्योर्. यङ. दोन्.दम्. मिन् ।
रङ.रिग्. र्दो. जे.ग्नस्. ते. सेम्स्.द्पऽि. नंल्.ऽब्योर्. नि ।।
थम्स्.चद्.म्ख्येन्. पऽि. ङो.बो. ऽदि.द्र. मेद् ।
र्ग्य.म्छोऽि. द्बऽ.लंब्स्. ब्रग्.चऽि. ङो.बोर्.म्छुङस् ।।

२१. ग्रङस्.चम्.ञिद्. न. गङ.दु.ऽङ. स्लेब्.प.मेद् ।
दम्.छिग्. ब्स्ग्रुब्. दङ. ऽब्रस्.नंम्. स्ब्यर्.ब ।।
म्छोन्.ब्य. म्छोन्.ब्येद्. छिग्.गि. थ.स्ञाद्. लम् ।
दम्.छिग्. ञम्स्.न. थब्स्.सोग्स. ञम्स्. गङ. न ।।

२२. ब्लो.लस्.ऽदस्.पऽि. युल्.दु. स्लोब्.प. मेद् ।
बर्तुल्.शुग्स्. स्प्योद्.पस्. फ्यि. दङ. नङ.ऽब्युङ. ब[6] ।।
खो.न.ञिद्.दङ.ल्दन्. न. ख्यद्.पर्.चन् ।
दे.ञिद्. मि.ल्दन्. दुद्.ऽग्रो.दग्. दङ. म्छुङस् ।।

२३. दे.ञिद्. स्पङस्.पस्. ल्हन्.चिग्.स्यक्येस्. ब्स्गोम्स्. प ।
थब्स्.ब्रल्. दम्.छिग्. ऽगल्. यङ. ञेस्.प. मेद् ।।
ऽदि. दङ. फ.रोल्. ग्रङस्.ल. मि.ल्तोस्. पर् ।
द.ल्त.ञिद्.दु. म्ङोन्.ग्युर्. फ्यग्.र्ग्य.छे ।।

114b २४. दे.ञिद्. स्पङस.[7]न. नम्.यङ. फ्रद्. मि.ग्युर् ।
फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. स्कद्.चिग्. थोस्.पस्. क्यङ ।।

१८. अजातके विषयसे परे न भोगै,
वस्तु-अवस्तु उपेक्षा इत्यादि सब ।
सो ईर्या[*] नहीं अ-स्मृति अ-जात विषय,
महामुद्राका सदा लक्षण नहीं ।

१९. शुद्ध स्कन्धके गुह्य-विषयसे परे,
चउ-आनंदका लक्षण मुद्राका विषय ।
स्व-सन्तान नहीं है प्रज्ञा-उपाय-रहित,
नासिकाग्र इत्यादि सोई न गहै तो ।।

२०. सोई शुद्धमें युक्त भी परमार्थ नहीं,
स्वसंवेद्य वज्र (में) रहै चित्त-योगी ।
सर्वज्ञ (स्व)भाव ऐसा नहीं,
सागर-तरंग की प्रतिध्वनि के स्वभाव तुल्य ।।

२१. गिनने मात्र ही से कहीं भी पहुँचना नहीं,
सद्वचन प्रतिपादन औ फल विनियोग ।
लक्ष्य-लक्षण (है) शब्दके व्यवहार का मार्ग,
सद्-वचन ध्वस्त हो तो उपाय इत्यादि ध्वस्त जो ।।

२२. बुद्धिसे परेके विषयमें सीखै नहीं,
व्रतचर्यासे बाहर भीतर होइ ।
तत्त्ववान् हो तो विशेषवान्,
सोई वियुक्त तिर्यक् (पशु)-तुल्य ।।

२३. सोई त्यागनेसे सहज भावना,
उपायरहित सद्वचन विरुद्ध भी दोष नहीं ।
यह भी परे गिननेमें न अपेक्षासे
अभी ही आविर्भूत (हुई) महामुद्रा ।।

२४. सोई छाड़ै तो कभी संसर्ग ना होई,
महामुद्रा क्षण (भर) सुननेसे भी ।

---

*ईर्यापथ, साधारण शारीरिक आचरण ।

ग्नोद्.दङ.ल्दन्. मि.ल्दन्.ल. मि. ल्तोस्.पर्।
ब्स्तन्.प.ञम्.ग्यिस्. च्ॅ.ग्चिग्. ऽदि.यिस्. थोब्॥

२५. गङ.शिग्. द्रेन्.प.दग्.ल. स. येङस्.पऽि.।
ल्हन्.चिग्.स्क्येस्. ङोन्. ब्स्गोम्.दङ.ल्दन्.पस्. थोब्॥
दे.ञिद्. रङ[1]यिन्. ग्शन्.ग्यि. छोस्. मि.छोल्।
दुर्.ख्रोद्. व.सोग्स्. छोल्.फियर्. ऽब्रङस्. ते. फुङ्॥

२६. क्ये.हो.ब्रम्.से. रिग्स्.ङन्.ख्यिम्.ऽद्रोस्.ऽछोल्.स्लोङ.ब्शिन्॥
सङ.ङन्. द्रेस्.प.ग्चिग्.ल. ग्चिग्. ग्नोद्. दे॥
म्छन्.मऽि. र्नल्.ऽब्योर्. म्छन्.मेद्. दोन्.मि.रिग्।
म्छन्.म.मेद्.ल. ब्ल्तब्स्.प. नम्[2].यङ. मेद्॥

२७. म्छन्.म.दुस्. दङ. ग्रङस्.ल. ल्तोस्.पर्. ऽग्युर्।
ब्स्क्येद्. दङ. र्जोग्स्.पऽि. रिम्.प. ख्यद्.पर्.ब्सम्. मि.ब्य॥
ग्ञिस्.मेद्. ऽदुस्.प. र्नल्.ऽब्योर्. म्छोग्.ल्दन्. गङ।
गङ. यङ. म. शेस्. द्रन्. मेद्. योङस्. पऽि. युल्॥

२८. द्रन.पऽि. र्ग्युद. स्पङस्. दे.ल. गोम्स्.पर्. ब्य[1]॥
थुन्.मोङ. म. यिन्. ग्सङ.स्ङग्स्. ख्यद्.पर्.चन्॥
थोग्.म.ञिद्.नस्. ब्देन. पऽि. ङो.बो. रे. ग्नस्।
द्ङोस्.ऽग्रुब्. ब्स्दुस्.पस्. ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.ल. थुग्॥

२९. दे.ञिद्. ख्यद्.पर्. रङ.रिग्. युल्.लस्.ऽदस्।
दे.ञिद्. ब्दे.बऽि. ग्नस्. दङ. द्ङोस्.पो. स्तोङ॥
छोस्.र्नम्स्. दग्.पस्. रङ.ब्शिन्[4]. ब्दे.बऽि. दोन्।
गङ.ल. मि.ग्नस्. ब्लो.यि. युल्.लस्.ऽदस्॥

३०. युल्.मेद्. ग्नस्.मेद्. र्तेन्.दङ.ब्रल्.बस्. स्तोङ।
ए. व. द्ङोस्.ग्रुब्. ङो.बो.ञिद्.क्यि. ग्यु॥
दो.र्जे.ऽछङ. दङ. रङ.रिग्. ब्ल.मऽि. ब्कऽ।
ऽदुस्.पऽि. र्ग्युद्.दु. द्रि.मेद्. फ्यग्.र्ग्य.छे॥

पात्रसहित रहित को न देखनेमें,
बताने मात्रसे एकाग्र इससे पावै ॥

२५. जो शुद्ध स्मृति में न उद्धत,
सहज सम्मुखे भावनावान्से पावै ।
सोई स्वयं है अन्यका धर्म ना ढूँढै,
श्मशान मृग इत्यादि ढूँढ़ने के लिए अनर्थ ॥

२६. अहो ब्राह्मण हीन-जाति गृह (संकीर्ण गवेषणा-याचना जिमि,
हीन आमिष संकीर्ण एक को एक बाँधैं ।
निमित्त योगी निमित्त विना अर्थ ना संवेदैं,
अनिमित्तमें ईक्षण कभी नहीं ॥

२७. निमित्त काल औ संख्यामें दीखै,
उत्पत्ति औ क्षय का क्रम ना विशेषतः चिन्तै ।
अद्वय कालिक उत्तम योगवान् जो,
कुछ भी न जानै विस्मृति व्यसनका विषय ॥

२८. स्मृति सन्तान छाडि वहाँ भावना कीजिए,
साधारण नहीं है मंत्र विशिष्ट ।
मूल-आपत्ति से सत्यस्वभाव में रहै,
सिद्धिसंचय से सहज में चित्त ॥

२९. सोई विशेष स्ववेद्य विषय से परे,
सोई सुखका स्थान वस्तु-शून्य ।
शुद्ध धर्मों से स्वभाव सुख का अर्थ,
जहाँ न रहै बुद्धि के विषय से परे ॥

३०. विषय नहीं वास नहीं आश्रय-वियोग से शून्य,
एक सिद्धि स्वभावही का कारण ।
वज्रधर औ स्वसंवेदन गुरु-आदेश,
समाज-तंत्र में निर्मल महामुद्रा ॥

३१. कुन्.जोंब्.लस्.क्यि. फ्यग्.ग्यं.ल.सोग्स्. कुन्[५] ।
ऽखोर्.लोस्. स्ग्युर्. ग्यं.ल्.द्मङस्.क्यि. दङ. मछ्ङस् ।।
फ्यि.नस. सब्.मो. ब्स्क्येद्.पऽि. रिम्.प. कुन् ।
जोंग्स्.पऽि. फ्यग्.ग्यं. ञि. स्लऽि. स्कर्.फ्न्.ब्शिन् ।।

३२. द्गऽ.ब्रल्. द्गऽ.ब.म्छोग्.तु. द्गऽ. ल.सोग्स्. ।
ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.द्गऽ. ऽखोर्.लोऽि. चं.ब. ञिद् ।।
द्रि.म.मेद्.पर्. दग्.ब्येद्[६]. दे.यि. द्गोङस्.पर्. ग्सल् ।
दे.ञिद्.ल्दन्.पस्. तंग्.तु. ये.शेस्. म्योङ ।।

३३. द्फ्येर्.मेद्. थुग्स्.क्यि. स्तोङ.ञिद्. गो.ऽफङ. यङस् ।
लुस्. दङ. थब्स्.ल्दन्. थब्स्.ल.ब्तेंन्. ब्स्गोम्.प ।।
द्रन्.प.स्क्येद्.ब्येद्.ग्यु.क्येंन्. ऽब्रस्.बु. स्मिन् ।
लस्.चन्.द्रङ.फ्यिर्. ग्रोल्.बऽि. थब्स्.सु. स्ब्योर्.[७] ।।

115a ३४. लस्.क्यि. फ्यग्.ग्यं. ञाम्स्.म्योङ. ब्रोद्.ब. स्क्येद् ।
दे.ञिद्.ल्दन्. गोम्स्. म्योङ. ग्रोल्.बऽि. लम् ।।
पद्.म. दोंर्जेर्. स्ब्योर्.ब. म्थोङ.ऽदोद्. दङ ।
छग्स्.चन्. लम्.ग्यिस्. दे.ञिद्. ग्रोल्. मि. ऽग्युर् ।।

३५. ग्शन्. यङ.,लस्.क्यि. फ्यग्.ग्यं. ञाम्स्.म्योङ. दग्. ब्तेंन्. ल ।
थ[१].मल्. रङ.लुस्. फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. स्बर् ।।
फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. कुन्.दु.ख्यब्.पऽि. द्पे ।
रिन्.पो.छे. दङ. नम्.म्खऽ.ल्त.बुर्.म्छङस् ।।

३६. फुङ.पो.ल्ङ.सोग्स्. ग्सङ.ब. म्छोग्.तु. ऽग्युर् ।
ऽजिग्.तेंन्. ऽजिग्.तेंन्.ऽदस्.प. ल्हन्.चिग्.ग्नस् ।।
खो.न.ञिद्. नि. ब्ल.मऽि.ब्कऽ.द्रिन्.ग्यिस्[२] ।
म्छोन्.चिङ. ब्स्ग्रुब्. मि. द्गोस्.पर्. रङ.ल. ञोंद् ।।

३७. फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. म्छोग्.ञिद्. द्रि.म.ब्रल् ।
गो.ऽफङ. थोब्.पर्.ब्य.फ्यिर्. स्प्यद्.पर्. ब्य ।।

३१. संवृति कर्ममुद्रा इत्यादि सब,
चक्र से परिणत क्षत्रिय शूद्र के तुल्य ।
बाहर भीतर गंभीर जन्म का सारा क्रम,
निष्पन्न मुद्रा रवि-शशि क्षुद्रतारा जिमि ।।

३२. निरानन्द उत्तम आनंद में आनन्द इत्यादि,
सहज आनंद चक्र का मूल ही ।
निर्मल शोधक सोई आशय में प्रकाशै,
सोई संयोग से सदा ज्ञान अनुभवै ।।

३३. अनुद्घाटित चित्त का शून्यता विशाल कपाट,
शरीर वाक् उपायवान् उपाय में दृढ भावै
स्मृति-उत्पादक कारण प्रत्यय पक्व फल,
कर्मवान् आकर्षण के (कारण) मोक्ष-उपायमें जुडै ।।

३४. कर्ममुद्रा अनुभव लास्य उपजै,
सोई सहित भावना अनुभव मोक्षका मार्ग ।
पद्म-वज्र-संयोग देखनेकी इच्छा औ,
सकाम मार्ग से सोई मुक्त न होइ ।।

३५. अपि तु कर्ममुद्रा शुद्ध अनुभवके आश्रयमें,
नश्वर स्व-शरीर (में) महामुद्रा ज्वालै ।
महामुद्रा सर्वव्यापन का दृष्टान्त,
रत्न औ गगन सदृश तुल्य ।।

३६. पंच स्कन्ध इत्यादि गुह्य उत्तम हुआ,
लोक लोकातीत साथ रहैं ।
सोई गुरु दया द्वारा,
लखि, साधन ना चाहिए स्वयं लहै ।।

३७. महामुद्रा उत्तम निर्मल ही (है),
कपाट प्राप्त करने के लिए चर्या करै ।

र्तग्.छद्. ग्ञिस्.मेद्. म्ञम्.स्ब्योर्. ग्चिग्. ञिद्. ग्शग् ।।
लुङ. दङ. मन्.ङग्. रिग्.पस्. शेस्.पर्.ब्य ।।

३८. खो.न.ञिद्. नि. ब्स्ग्रुब्स्. न. ग्दोन्. मि.[3] स् ।
फ्यग्.ग्र्य.छेन्.पो. ग्सल्. ते. शेस्. गोम्स्. न ।।
खो.न.ञिद्. नि. र्तोग्स्.पर्. थे.छोम्.मेद् ।।
दे.ञिद्. शेस्.न. गोम्स्.पऽि. स्तोब्स्.क्यिस्. स्प्योद् ।।

३९. दे.ञिद्. म.शेस्. स्तोङ. स्गो.ऽोग्स्गो. दङ ।
रिग्.म.ल. ब्र्तेन्. ग्सुम्.पो. ग्चोर्.ब्येद्. दङ ।।
छु.ब्य.ल.सोग्स्. दङ. दुद्.ऽग्रोर्. म्छुङ्स्[4] ।
रङ्.रिग्. ग्र्युद्.ल. थ.स्ञद्. ऽजल्.ब्येद्. दङ ।।

४०. फ्यि.नङ. ग्शिग्स्.नस्. रङ.ब्शिन्.मेद्. ऽदोद्. न ।
ऽजिग्.र्तेन्. च.चो. यिन्. मेद्. ख्यद्. मेद्. म्छुङ्स् ।।
ब्देन्. दङ. र्तेन्.ब्रेल्. स्गो.नस्. थर्.ऽदोद्. दङ ।
द्बङ.पो. ब्स्ङम्स्. पस्. थर्.लम्. ऽद्रेन्.ऽदोद्. दङ ।।

४१. ब्यिस्.प. छङ.प. स्तोङ[5].पस्. ऽब्रिद्.द्गऽ. स्ते ।
देस्.न. ब्य.ब. ब्येद्. ऽदोद्. थर्.मेद्. ब्र्जुन्.ग्यिस्. ब्स्ल्स् ।।
ग्रङ्स्.चन्.रिग्स्.सोग्स्. ग्चेर्.बु. ब्ये.ऽब्रग्. ऽदोद् ।
ब्येद्. दङ. ग्युर्.ल्त.ल.सोग्स्.ग्यि. न. ऽख्यम् ।।

४२. क्ये.हो. दे.नस्. ऽखोर्.ब. जि.ल्तर्. ग्तङ.बर्. ऽग्युर् ।
ग्र्यु.क्र्येन्.मेद्.पस्. र्तोग्स्.युल्. म.यिन्.[6]पऽि ।
सेम्स्.क्यि. दे.ञिद्. फ्यग्.ग्र्य.छे.ल. ग्नस् ।
दे.ञिद्. स्तोब्स्.क्यि. म्छन्.म.दङ.ब्रल्.शिङ ।

४३. छो.ग्चिग्. फ्यग्.ग्र्य.छेन्.पो. थोब्.पर्. ऽग्युर् ।
क्ये.हो. ङो.म्छर्. ग्सल्.बऽि. स्प्योद्.युल्. ऽदि ।।
स्मन्.पऽि. ग्र्यल्.पो. र्तोग्स्.लस्. स्क्ये.मेद्. ऽछर् ।
115b ये.शेस्. ल्ङ.सोग्स्. म्छन्.ञिद्. रङ.[7]ल.ल्दन् ।।

नित्य उच्छिन्न अद्वय समयोग एक ही थापै,
व्याकरण औ उपदेश विद्यासे जानै ।।

३८. तत्त्व साधै तो अवश्य,
महामुद्रा प्रकाशै ज्ञान भावै जो ।
तत्व ही लखै निस्सन्देह,
सोई जानै तो भावना-बलसे आचरै ।।

३९. सोई ना जानै उपरि औ निम्न द्वार,
औ विद्या को आलंबै त्रयी प्रधान कारी
जलपक्षी इत्यादि मत्स्य औ तिर्यक् तुल्य,
स्वसंवेद्य सन्तानमें व्यवहार औ याप्य ।।

४०. बाहर भीतर कल्पना करके अस्वभाव इच्छा हो तो,
लोक कोलाहल है किन्तु अविशेष तुल्य ।
इच्छा सत्यआश्रय द्वारसे मोक्ष,
औ इन्द्रियसंवरसे मोक्ष-मार्ग (में) खींचने की इच्छा ।।

४१. बालक मद्य शून्यता से वंचित आनन्दित,
ततः क्रिया करनेकी इच्छाकर मोक्ष नहीं मिथ्यासे डालै ।।
सांख्य जाति आदि नग्न विभाषा चाहै,
कर्ता औ हेतु दृष्टि इत्यादि का घूमना ।।

४२. अहो उससे संसार त्यक्त होइ जिमि,
हेतु-प्रत्यय रहितसे कल्पना-विषय ना होये ।
चित्त सोई महामुद्रामें रहै,
सोई बलके निमित्त-रहित ।

४३. एकदा महामुद्रा प्राप्त होइ,
अहो अद्भुत प्रकट चर्या विषय यह ।
वैद्यराज कल्पनासे अजात उगै,
पंच ज्ञान इत्यादि लक्षण अपने साथ ।।

४४. दङ.पोऽि. लस्.चन्. रिग्स्.क्यिस्. खो.न. म्थोङ।
म्छन्.म.ल. ब्र्तेन्. द्रन्.पस्. ग्येङ.बऽि. ग्र्यु ।।
खो.न.ञिद्.ल. फ्यि.रोल्. म.द्मिग्स्. न।
म्छन्मऽि. स्प्योद्.युल्. द्रन्.मेद्. दङ. ल. थिम् ।।

४५. म्छन्.मऽि. र्नल्.ऽब्योर्. खम्स्.गसुम्. ऽखोर्.बऽि. लम् ।
म्छन्.[1]मऽि. द्ङोस्.पो. बग्.मेद्. स.बोन्. ब्चस् ।।
द्रन्मेद्. र्नल्.ऽब्योर्. नम्.म्खऽि. द्क्यिल्. दङ. म्छुङस् ।
सो.सोर्.मेद्.न. ङो.बो. म.स्क्येस्.फ्यिर् ।।

४६. स्क्ये.बो.ग्शन्.ग्यि. ब्लो.यि. स्प्योद्.युल्. मिन् ।
दे.ञिद्.ल्त.ल. म्खस्.पस्. स्प्यद्.ब्यर्. ऽब्युङ ।
द्रन्.प. र्नम्.र्तोग्. ग्सुग्स्.सु. ग्नस्. प.[2] दङ ।
द्रन्.मेद्. खम्स्. ग्सुम्. दग्.पऽि. ग्नस्.सु. स्पङस् ।।

४७. दे.ञिद्. म.स्क्येस्. द्ङोस्.ग्रुब्. कुन्.ग्यि. ग्नस् ।
फ्यि. दङ. नङ.रोल्. म.द्मिग्स्. थम्स्.चद्. ग्रुब् ।।
क्ये.हो. फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. योन्.तन्.म्छोग्.ल्दन्. गङ ।
ब्ल.म. म्ञेस्.पर्.ब्य.फ्यिर्. द्ङोस्.ग्रुब्. कुन्.ग्य. ग्शिङ ।।

४८. ब्ल.म.[3] द्कोन्.म्छोग्. मि.स्पोङ. योन्.तन्. ऽब्युङ ;
गङ.शिग्. दद्.पऽि. सेम्स्.ल्दन्. ब्र्ग्य.लम्. न ।।
र्नल्.ब्योर्.र्नम्स्.क्यिस्. ग्शुङ. ऽदि. र्तोग्स्.पर्. शोग् ।

ग्सुङ. गि. म्जोद्. ऽजम्. द्ब्यङ्स्. दो. र्जेऽि. ग्लु. स. र. हस्. ग्सुङ्स्. प. र्जोग्स् सो ।।

---

४४. प्रथम कर्मी जातिसे सो देखै,
निमित्त का आश्रय ले स्मृतिसे उद्धत कारण ।
तत्त्वमें बाह्य उपलंभ न हो तो,
निमित्त चर्या विषय विस्मृति के साथ निमग्न ।।
४५. निमित्त योगी त्रिभुवन संसार मार्ग,
निमित्त-वस्तु प्रसाद बीज-सहित ।
स्मृति विना योगी गगनमंडल तुल्य
पृथक् नहीं तो (स्व)भाव न उत्पन्न होइ ।।
४६. अन्य पुरुषकी बुद्धि के गोचर नहीं,
सोई देखने में पंडित चर्या क्रिया में होइ ।
स्मृति विकल्प रूपमें रहता औ,
स्मृति विना त्रिभुवन शुद्ध-आवास में त्यक्त ।।
४७. सोई अ-जात सर्वसिद्धि का स्थान,
बाह्य औ अन्तर अलब्ध सर्वसिद्ध ।
अहो महामुद्रा वरगुणवती जो,
गुरु प्रमोद क्रिया-हेतु लिये सर्वसिद्धि-मूल ।।
४८. गुरु रत्न न छाड गुण संभूत,
जो श्रद्धालु चित्त विशद मार्गमें ।
योगियों को इस ग्रंथ का अवबोध हो,

इति सरह-कथित ग्रन्थ-कोश "मंजुघोषवज्रगीति" समाप्त ।।

७. चित्तकोश 'अजवज्रगीति'

(भोट, हिन्दी)

७. थुग्स् क्यि. म्ज़ोद्. 'स्क्ये. मेद्.दौं.जेंऽ ग्लु'*

(भोट)

ऽजम्.द्पल्. ग्श़ोन्.नुर्.ग्युर्.ब.ल. फ्यग्.ऽछल्.लो ।

१. स्क्ये.बो. ल्हन्.चिग्. स्क्येस्.पऽि. ये.शेस्. नि ।
रङ.गि. ञमस्.सु. म्योङ.व. दे.खो.न ।
रिग्. दङ्. म.रिग्. रङ.रिग्. ग्सल्.ब. दे.खो न ।
मर्.मे. मुन्.ग्सल्.[५] रङ.गि. रङ.ग्सल्. रङ.ल. सद् ।।

२. ऽम्.ग्यि. पद्.म. ऽदम्.ल. म.शेन्. ख.दोग्. लेग्स् ।
ग्सुङ.ऽजिन्. द्रि.म. म. स्पङ्स्. स्ञिङ.पो. ग्सल्.ब ।
नग्स्.ख्रोद्. ग्नस्.पऽि. रि.दग्स्. गचिग्.पुर्. ग्युं ।
ग्युं.ल. म.शेन्. ऽब्रस्.बु. दे.खो.न ।।

३. स्नङ. दङ. मि. स्नङ. युल्. मेद्. शेन्.मेद्. ग्सल्[६] ।
द्ङोस्. स्तोङ. म.द्रन्. द्रन्.मेद्. ब्र्जेद्.प. मेद् ।।
ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.प. ञम्.ग्सुम्. ञमस्.सु. ब्दे ।
शेन्.प.मेद्.फ्यिर्. र्तोग्.गि. युल्.लस्.ऽदस् ।।

४. स्न.छोग्स्. द्रन्.पियर्. जेंस्.सु. ऽब्रङ.ब. मेद् ।
ग्सल्. दङ. मि. म्ञम्. ये.शेस्. स्ञिङ.पो. ञिद् ।।
116 मुन्.सेल्. ञि. न. स्ग्रोन्.मेऽि. ख.दोग्[७].ल्तर्
रङ.रिग्. रङ.ल. ऽबर्. न. ऽज़िन् र्तोग्.सद् ।।

५. स्ग्रिब्.प. सद्.फ्यिर्. द्रन.मेद्. येङ्स्.प.मेद् ।
ग्ञिस्. दङ. योद्.मेद्. थ.स्ञद्. म.स्क्येद्. चिग् ।।
फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. ब्सम्.मेद्. ब्लो.लस्.ऽदस् ।
रङ.रिग्. दौं.जें.ऽजिन्.प. ञंल्.ऽब्योर्.प ।।

---

*स्तन्. ऽग्युर. ग्युंद्.शि पृष्ठ ११५ ख ४–११८ क २.

७. चित्तकोश 'अजवज्रगीति'

(हिन्दी)

नमो मंजुश्रियै कुमारभूताय ।

१. सहज पुरुषका ज्ञान, अपने अनुभव का तत्त्व ।
विद्या औ अविद्या स्वसंवेद्य प्रकाश तत्व,
तिमिरनाशक दीप स्वयंप्रकाश अपनेको नाशै ।।

२ पंकका पद्म पंकमें अलिप्त सुवर्ण, गहै-धारै मल न छाड सार प्रकटै ।
वनखंड-वासी मृग अकेला कारण, कारणमें न लिप्त हो फल तत्त्व ।।

३. प्रतिभास औ अ-प्रतिभास निर्विषय निर्लेप प्रकाशै,
वस्तु शून्य ना स्मृति ले विस्मृति कहै नहीं ।
सहज त्रिविधसम सुख निर्लेप होनेसे कल्पना-विषय-अतीत ।।

४. नाना स्मृति के कारण अनुसरै नहीं, प्रकट औ असम ज्ञान सार ही ।
तिमिरनाशक सूर्य दीपक वर्ण जिमि,
स्वसंवेद्य अपने में जलकर ग्रहण कल्पना मारै ।।

५. नीवरण नाशनसे विस्मृति उद्धत नहीं,
द्वैत औ अ-भाव व्यवहार न उपजावै ।
महामुद्रा अचिन्त्(य) बुद्धि-अतीत स्ववेद्य वज्रधर योगी ।।

६. ऽदऽ.द्गऽ. ल्हन्[1] चिग्.स्क्येस्.पऽि. मर्.मे. नि ।
थब्स्. दङ. शेस्.रब्. सुङ.दु. ऽजुग्.पऽि. दोन्. ॥
स्क्ये.मेद्. स्तोङ.ऽोद्.ग्सल्. रिस्.दङ.ब्रल् ।
ख्यद्.पर्.चन्.ग्यि. ये.शेस्. खो.न.ञिद् ॥

७. ग्ञिस्.ल. मि. ल्तोस्. ब्दे.ब. र्ग्युन्. मि. ऽछद्. ।
रङ.ब्युङ. र्तोग्.मेद्. बग्.छग्स्. चॆद्.नस्. ग्चोद् ॥
सेम्स्.चन्[2]. सङ्स्.र्ग्यस्. ख्यद्.पर्. ब्सम्.यस्. क्यङ ।
स्प्योद्.लम्.दग्.न. र्ग्युन्.ग्यि. नॆल्.ऽब्योर्.छे ॥

८. द्रन.पऽि. रङ.ब्शिन्. ब्सम.ग्यिस्. मि.ख्यब्. क्यङ. ।
ग्दोद्.नस्. दग्.पस्. द्रन्.मेद्. द्ब्यिङ्स्.ल. थिम् ॥
रङ.दोन्. स्क्ये.मेद्. ग्ञिस्.ब्रल्. र्तोग्स्.पऽि. दोन् ।
ऽब्रस्.बु. दग्.पस्. ब्लो.ऽद्स्.युल्.मेद्.[3] ब्रल् ॥

९. र्तोग्स्.पऽि. थब्स्.र्ग्युन्. रङ.ब्शिन्. कुन्.ल.ख्यब् ।
थब्स्.क्यि. ऽग्रो.दोन्. स्ञिङ.र्जे. ब्सम्.यस्. क्यङ ॥
ये.शेस्. रङ.ब्शिन्. स्क्ये.ऽगग्.मेद्.पर्. र्तोग्स्. ।
थब्स्.क्यि. ब्दे.ब. स्क्येस्. क्यङ. दे.मेद्. म.सिन् ऽछिङ ॥

१०. ग्रोल्.बऽि. ये.शेस्. रङ.ल. ल्हन्.चिग्. ऽब्युङ ।
ब्स्गोम्.ब्य. स्गोम्[4].ब्येद्. द्मिग्स्.पऽि. ब्लो.लस्.ऽदस् ॥
सङ्स्.र्ग्यस्. सेम्स्.चन्. ब्सम्.ग्यिस्. मि.ख्यब्प ।
स्क्ये.मेद्. र्तोग्स्.पऽि. युल्.न. ब्लोर्. मि. स्नङ ॥

११. दे.ञिद्. सद.पस्. ब्दे.ब. स्तोङ.पस्. म्छोन् ।
ब्स्गोम्.ब्यऽि. ङो.बो. स्नङ.बऽि. र्क्येन्.लस्. ऽब्युङ ॥
मि.र्तोग् र्तोग्स्.पस्. कुन्.र्जोब्. थ.स्ञद्. ग्रुब्[5] ।
ग्ञिस्.सु.मेद्.पऽि. स्नङ.बऽि. र्क्येन्.मेद्.ल ॥

१२. रङ.ब्शिन्. दग्.प. स्क्ये.बऽि. र्नम्.ऽफ्रुल्. शर्. ।
ब्रल्. दङ. म.ब्रल्. मि.र्तोग्. ब्लो.लस्.ऽदस् ॥

६. अतीत(?) आनंद सहज दीप, प्रज्ञा-उपाय कल्प प्रवेश के अर्थ।
अज शून्य आभास निकाय-रहित, विशिष्ट ज्ञान तत्त्व ।।

७. द्वैत देखे विना सुख-स्रोत न निरुद्धै, स्वयंभू निर्विकल्प वासना मूलसे कटै।
प्राणी बुद्ध विशेष अनंताशय भी, शुद्धचर्या मार्गमें स्रोत का महायोग ।।

८. स्मृति-स्वभाव अचिन्त्य भी, प्रथम से शुद्ध विस्मृति धातुमें लीन।
स्वार्थ अज अद्वैत कल्पना-अर्थ,
शुद्ध फल से बुद्धि-अतीत निर्विषय वियोग ।।

९. कल्पनाके उपाय का स्रोत स्वभाव सर्वव्याप्त,
उपायकी गतिके लिये करुणा अचिन्त्य भी।
ज्ञान स्वभाव जन्मविरोधी नहीं लखि,
उपायका सुख उत्पन्न हो भी उसके विना ना बंधै ।।

१०. मोक्ष-ज्ञान अपनेमें सह संभवै, ध्येय धारण उपलब्धि बुद्धि-अतीत।
बुद्ध प्राणी अचिन्त्य अज कल्पना, विषयमें बुद्धिमें न भासै ।।

११. सोई विबोध-सुख शून्यतासे लखै,
ध्येय क्रिया का स्वभाव प्रतिभासकी प्रत्ययसे होवै।
अवितर्क कल्पनासे संवृति व्यवहारसिद्ध,
अद्वय प्रतिभास के प्रत्यय के अभावमें ।।

१२. शुद्ध स्वभाव उत्पन्न ऋद्धि उगै, वियोग औ संयोग (है),
निर्विकल्प बुद्धि से परे।

ग्ञिस्.मेद्. र्तोग्स्.ब्यर्. स्क्ये.मेद्. युल्.दु. ऽग्युर् ।
स्तोङ.पर्. स्म्र.बस्. दे.ञिद्. र्तोग्स्. मि. ऽग्युर् ।

१३. ब्लो.लस्.ऽदस्. म्नो.ब्सम्. युल्. म. यिन्[६] म्थऽ ।
ग्सुम्.तंग्.ऽदोद्.दग्.गिस्. ञोंद्.प्रर्. द्गऽ ।।
द्गऽ.ब्शि. द्रग्.ल. द्मिग्स्. क्यङ. दे.ञिद्. द्कऽ ।
छोग्स्.द्रुग्. रङ.छस्. ये.शेस्. म्छोग्.ल्दन्.पस् ।।

१४. ग्ञिस्.मेद्. ब्चुद्.क्यि. स्नङ.ब. रङ.ल. ऽछद् ।
क्ये.हो. फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. र्तोग्स्.ब्रल्. कुन्.ग्यि. ग्शि ।।
116b द्ङोस्.ग्रुब्. ऽब्युङ.[७]बस्. ङो.म्छर्. मेंद्.दु. छे ।
ग्ञिस्.मेद्. बग्.छग्स्. सद्.नस्. रङ.रिग्. ब्रल् ।।

१५. ग्सुङ.ऽजिन्. ब्रल्.बऽि. फ्यग्.ग्यं.छेन्.पो. नि ।
म्छन्.ञिद्. ब्स्तन्.पस्. ञन्.थोस्. ल.सोग्स्. स्कग् ।।
चें.ग्चिग्. ब्ल्तस्. न. योन्.तन्. म्थर्.थुग्.ल्दन् ।
चें.ग्चिग्. ङ्यस्. क्यङ. चुङ.सद्. ब्स्गोम्.दु. मेद् ।।

१६. नम्.र्तोग्. रङ.ऽबर्. द्रन्. मेद्. ग्सोस्.सु. नि. ।
द्रन्.मेद्. स्नङ.मेद्. मे.लोङ. ग्सुग्स्. ब्र्ञन्.ऽद्र ।।
थ.स्ञद्.ब्रल्.बस्. स्क्ये.मेद्. ब्लो.ऽदस्. लम् ।
म्छन्. म.ञि. द्रन्. द्रि. मेद्. बग्. छग्स्. ब्स्तन् ।।

१७. थोग्.म्थऽ.ब्रल्.शिङ. स्ङ.फ्यिऽि. दुस्. मि.द्मिग्स् ।
क्ये.हो. फ्यिर्. द्ङोस्.मेद्. ये[१] शेस्. र्तोग्स्.पऽि. लम्
जि.ल्तर्. ब्ग्.छग्स्.ब्रल्.बऽि. छुल्. शे. न ।
ग्ञिस्.सु. म. ग्सुङ. ग्दोद्.म्थऽ.ब्रन्.बस्. शि. ।।

१८. बग्.छग्स्.ब्रल्.बस्. फ्योग्स्.मेद्. र्ग्यु.ब. स्तोङ ।
सुङ्.दु. ऽजुग्.प. सङस्.ग्र्यस्. ङो.बो. ञिद् ।
शेस्.रब्. नम्.ग्सुम्. युल्. दङ. थब्स्.सु. ग्सुङस् ।
द्पे[१].दङ.ब्रल्.बस्. म्छोन्.पऽि. युल्.लस्.ऽदस् ।।

अद्वय कल्पनीय अज विषय में होइ, शून्यता वादी सोई लखा न होइ ।।

१३. बुद्धि-अतीत से समाधिचित्त-विषय का नहीं है अन्त,
तीन नित्यकामनाओं से लहै आनंद ।
चारो आनन्दों में उपलंभ भी सोई कठिन,
छ परिषद् स्व-भाग से वरज्ञानवानों को ।।

१४. अद्वयरस का प्रतिभास अपने में विच्छिन्न,
अहो महामुद्रा निर्विकल्प सबका अधिकरण ।
सिद्धि होनेसे से आश्चर्य महा, अद्वयवासना नाशै स्वसंवेदन-रहित ।।

१५. ग्रहण-धारणरहित महामुद्रा, लक्षण बतानेसे श्रावक आदि डरैं।
एकाग्र देखे तो गुण अंतावस्था का,
एकाग्र करके भावना में कुछ भी नहीं ।

१६. विकल्प स्वयं-ज्वलित विस्मृति प्रत्यय (भैषज्य),
विस्मृति प्रतिभासै नहीं दर्पण में रूप-प्रतिबिंब सी ।
निर्व्यवहार से अज बुद्धि से परे मार्ग, निमित्त-स्मृति निर्गंध वासना कहिए ।।

१७. आदि-अन्त-रहित (जहाँ), पूर्व-पर काल न उपलभै,
अहो अपर वस्तु नहीं ज्ञान अवबोध-मार्ग ।
जिमि वासना रहित शील आसक्त,
द्वैत ना गहै प्रथम अनन्त से शान्त होइ ।।

१८. वासनारहित से निष्पक्ष कारण शून्य, कल्प?—प्रवेश करना है बुद्धत्व ही ।
त्रिविध प्रज्ञा विषय औ उपाय में गहै, उपमा रहित लक्षण-विषय से परे ।।

१९. इस उत्पत्तिमें अच्छा सार नहीं,
उपाय के योगसे छ सामग्री? स्वभूमि में शान्त।
पंच स्कन्ध आदि शुद्ध गुण का क्षेत्र,
सर्वज्ञ अद्वय प्रतिभास विषय आसक्ति-रहित।।

२०. परमार्थवाद नहीं संवृति[1] तर्क मात्र (है),
निर्वाणमार्ग (है) संसार का प्रतिभास भी।
सद्गुरु आशय चित्त-संसर्गमें, लाभ से संसार-मार्गसे मुक्त होइ।।

२१. योगी आशय अनुलाभ? कर संबुद्ध,
अविपरीत मार्गमें सह(ज) सोई है।
अहो अद्वय अर्थ में मंत्र संकेत से रोकना?,
गुण न नाशै सागरमणि तुल्य।।

२२. वर-उपाय गहि चौदह भुवनमें बसै, जहाँ बसि भी ज्ञान स्वयं लहै।
कोश लहै आत्म-पर दोनोंके अर्थ मूढ़, सारके संतुष्ट कमल-पुष्प के अन्दर।।

२३. उपायवान् उस योग से सरम्भ, चक्र-पक्षका मूल-स्थान जहाँ भी।
इच्छा न रहनेसे राग विना आकाशमें,
ऊपर-नीचे कर्षण औ चक्रपरिवर्तन भी।

२४. उपाय के कर्षण से शीलके अर्थ की थाह न लहे,
धारण औ क्षेपण जोड़ना औ जलना भी।
मूढ़ श्वासरोग औ अविशेष तुल्य, अवबोध इच्छासे सोई सदा देखै।।

२५. सत्कार औ प्रसन्नता पूर्वक गुरु-रत्न का आश्रय ले,
गुह्य गुण वरगुरुसे उपजै।

---

१. व्यवहार।

दोन्.ल्दन्. म्छन्.ञिद्. ऽोन्.मोंङस्[1] ग्युल्. लस्.ग्यॅल् ।
ग्सङ.बऽि. दोन्. ञिद्. दोन्. दङ. रब्.ल्दन्.पऽि ।।

२६. ब्ल.म. स्लोब्.द्पोन्. लुङ. दङ. रब्.ल्दन्.नस् ।
मि. गि्स्. स्गो.नस्. ऽग्रो.ब. ग्रोल्.ऽग्युर्. शोग् ।।

थुग्स्.ख्यि. म्जोद्. स्कॅये.मेद्. दों.जॅऽि. ग्लु. स्ञिङ.पो. ग्सङ्.बऽि दोन् ।
द्पल् स. र. ह. ऽि. शल्. स्ङ्. नस्. ग्सुङ्स्.प. जोंग्स्. सो.[2] ।।

इच्छुकके लक्षण (हैं) क्लेश-युद्धमें विजयी, गुह्य अर्थ ही अर्थ औ उत्तम ।।

२६. गुरु आचार्य आगम औ प्रकर्ष से, दो मनुष्य द्वारों जगत् मुक्त हो ।

इति चित्तकोश 'अजवज्रगीति' गुह्यसारार्थ श्रीसरह के श्रीमुख से भाषित समाप्त ।।

---

८. काय-वाक्-चित्त अमनसिकार

(भोट हिन्दी)

८. स्कु.ग्सुङ्.थुग्स्.यिद्.ल.मि.ब्येद्.प*

(भोट)

म्छन्.म. रब्.तु.मि.ग्नस्.प.ल. फ्यग्.ऽछल्.लो ।
दों.र्जे.ऽजिन्.प.ल. फ्यग्.ऽछल्.लो ।

१. गङ.शिग्.स्कु.यि.ख्यद्.पर्.ब्दुद्.ब्शि.रब्.तु.ऽजोम्स्[३] म्सद्.चिङ ।
र्नल्. ऽब्योर्. र्नम्. पर्. ग्रे ल्. पस्. म्ज़द्. प. गङ.गिस्. नि ।।
ऽदोद्.पऽि. दोन्. नि. यङ.दग्.स्व्यिन्. पर्. गङ. ऽग्युर्. ब ।
ग्रोल. ब्यम्स्.पऽि. छु. लुग्स्. म्छोग्. मि. दोन्.स्तोन्.प ।।

२. दोन्.दम्. रब्.तु.मि.ग्नस्. द्गोङस्.प. र्ग्यल्. बऽि. थुग्स् ।
गङ. गि. सेम्स्. ल. ऽदि. क्रुन्. ब्सम्. दु. मेद्.दो. क्ये ।।
ख्योद्. फ्रिन्.लस्. यन्.लग्. मङ.पो. स्तोन्. म्ज़द्. चिङ ।
द्ग्येस्. शिङ. नम्.म्खऽि. खम्स्. कुन्. थम्स्.चद्. ऽगेङस् पर्. ब्येद् ।।

३. ग्सुङः म्छोग्. यन्.लग्.द्रुग्. चुस्. स्ग्र. स्कद्. स्न.छोग्स्. स्ग्रोग्स् ।
थुग्स्.क्यि. ख्यद्. पर्. द्गोङस्. प. द्ब्यिङस्. लस्. मि. ब्स्क्योद्.क्यङ[५] ।।
थम्स्.चद्. छिम्. शिङ. म्गु.नस्. रब्.तु. ब्स्तोद्.पर्. ब्येद् ।
ब्यम्स्.दङ.स्ञिङ.र्जेऽि. ग्दुग्स्.क्यि. द्क्यिल्.ऽखोर्. ग्सल्.बर्.स्तोन् ।।

४. म.हा.दे.व. उ.म.दे.व. रब्.तु.ऽजोम्स्.पर्. ब्येद् ।
फ्योग्स्.बचु. दुस्.ग्सुम्. सङस्.र्ग्यस्. कुन्.ग्यि. ब्दग्.ञिद्.दे ।।
थर्.पऽि. स्गो. नि. र्नल्.ऽब्योर्.र्नम्स्.क्यि.[६] लम्. ऽदि. ञिद् ।
गङ.यङ.ग्.चो.म्छोग्.ल्दन्.पऽि. स्ब्योर्.ब.दग्.गिस्.रब्. तु.मि.द्ब्ये.बर् ।।

---

* स्तन्. ऽग्युर. र्ग्युद्. शि. पृष्ठ ११७ क ३–१२२ क ३

८(ख) कायवाक्चित्त अमनसिकार

(हिन्दी)

नमो ऽप्रतिष्ठितनिमित्ताय । नमो वज्रधराय ।

१. जो काय-विशिष्ट चार मारों का प्रमर्दक,
विमुक्त योग किया कृत जिसमें ही ।
इच्छित अर्थ को सम्यक् देवै जो,
जगत मैत्री वर वेष का अर्थ बतावै ।।

२. परमार्थ अप्रतिष्ठित-आशय जिसकी करुणा,
जिसके चित्त में यह सब भाव नहीं रे ।
तूने समुदाचार अंग बहुत बखाने,
मुदित सब आकाशधातु सर्व-विजयकारी ।।

३. वर वचन के साठ अंग से नाना शब्द भाषा घोष,
करुणा-विशिष्ट आशय धातुतः अचल भी ।
सब अतृप्त आह्लाद से संस्तुति करै,
मैत्री औ करुणा प्रकट छत्रमंडल बतावै ।।

४. महादेव उमादेवी प्रमर्दन करै,
दश दिशि तीन काल सर्व बुद्धात्मा वह ।
मोक्षद्वार योगियों का यही मार्ग
जो भी सर्वस्व (?मुख्यवर) या प्रयोगों से प्रभिन्न नहीं ।।

५. नॅल्.ऽब्योर्.छेन्.पो. थ.मि.दद्.प. यिन् ।
गङ.गिस्. दे. नि. मि. शेस् पऽि ।
द्रि.मऽि. छुल्.ग्यिस्. गङ. यङ. म्थोङ.ब. मेद् ।
गङ.गिस्. दे.कुन्.ऽछङ.बर्. ब्येद्.प. दे.यिस्. नि ।।

६. ग्ञिस्. म्दङस्.[9] ग्ञिस्.लस्. ब्र्तेन्. ते. लस्. कुन्. स्तोन्.पर्. ब्येद् ।
ब्दग्.मेद्. रो. ग्चिग्. ख्यब्.पर्. ब्येद्.पऽि. ग्सुग्स्.ल्दन्. नि ।।
ऽदि. न. मि. ग्नस्. कुन्. क्यङ. ऽग्रो.बर्. ब्येद् ।
स्ङग्स्. दङ. म्दो.स्दे. कुन्.ग्यि. ग्येल्.पोर्. द्बङ.ब्स्कुर्.बस् ।।

७. ऽदि.दग्. कुन्.ग्यि. चॅ. ब. यिद्. ल. मि. ब्येद्.पर् ।
ख्येद्.क्यिस्.[1] ग्चिग्. दङ. ग्ञिस्.ल. म. सेम्. स्.क्ये ।।
कुन्. ज़ौब्. द्रन्.पऽि. छो. ऽफ्रुल्. स्न.छोग्स्.पर्. स्तोन्.प. ।
दोन्.दम्. मि.द्मिग्स्.प.यि. द्ब्यिङस्.सु. रो. ग्चिग्. ञिद् ।।

८. दुग्. ल्ङ. ल.सोग्स्. नद्.क्यिस् ञेन्.पऽि. मुन्.प.सेल् ।
थोग्.मऽि. म्थऽ. दङ. थ. मऽि. द्ङोस्. ग्शि. म. म्थोङ.बर् ।।
दुस्.[2] म. ब्यस्.ल. यिद्.क्यि. द्मिग्स्.सु. मेद्.दो. क्ये ।
गसुङ.ऽज़िन्. ग्ञिस्.क्यि. बर्. न. मिङ. दङ.ब्रल्. ऽदुग्.प ।।

९. यन्.लग्. लोग्. न. ग्चिग्.गि. ङो.बो. ञिद् ।
शेस्.पर्.ब्य. दङ. ब्यऽो. चिग्.गि. थ.स्ञद्. कुन् ।
ऽदि.लस्. गशन्. दु. ल्त.ब. म्.छन्.मस्. म्योंङ.बर्. ग्युर् ।
स्य.चन्.सिन्.ग्यिस्. स्.ल[3]. ब्सोस्.प. जि. ब्शिन् ते ।।

१०. म. म्थोङ.ब. ञिद्. ब्यिस्. दङ. बर्.नस्. शोर्.बर्. ऽग्युर् ।
येङस्. दङ. ग्नस्.पऽि. बर्.न. ङो.बो. ऽदि. शेस्. मेद् ।।
ग्र्यु.मेद्. क्र्येन्.ब्रल्. स्क्ये.ब.मेद्.प. ग्ञिस्.पर्. न ।
लोग्.पर्. ल्त.बऽि. छोग्स्.क्यिस्. ऽदि. ल. ग्शोल्. दु. मेद् ।।

११. गि.बङ. गुर्.गुम्. चन्दन्. थिग्.ले.[4] ब्रिस्.प. ब्शिन्. ते ।
स्.ल.ब. ब्सुङ.पो. ग्र्यु.स्कर.ऽोद्.क्यिस्. ऽगेब्स्.प. ञिद् ।।

५. महायोगी अभिन्न है, सो न जानै,
मलस्वरूप द्वारा जो भी दीखै नहीं,
जो सो सब धारै (वह) सोई ।।

६. तेज कान्ति दोनों के आश्रय सब कार्य आदेशै,
अनात्मा एकरस व्यापक रूपवाला ।
इसमें न बसि सभी गमन करे,
सब मंत्र औ सूत्र-राज में अभिषेक से ।।

७. इस सबका मूल अमनसिकार है,
तू एक औ दो को ना चिन्तै रे ।
संवृति स्मृति का नाना प्रातिहार्य कहै,
परमार्थ अनुपलब्ध धातु में एक रस ही ।।

८. पंचविष इत्यादि रोग से दोषतम नाशै,
आदि के अन्त औ अपर वस्तु-अधिकरण न देखै ।
असंस्कृत में मनका आलंबन नहीं रे,
धारणग्रहण दोनों के बीच नामरहित रहै ।।

९. मिथ्या-अंग में एकका ही स्वभाव,
ज्ञेय औ कर्तव्य का सर्व व्यवहार ।
इससे अन्यत्र दृष्टि-निमित्त से अनुभव होइ,
जिमि राहु चन्द्र को ग्रसै ।।

१०. न देखे ही बालक औ बीच से गिरै,
उठने औ बसनें के बीच यह वस्तु ना जानै ।
अकारण अप्रत्यय अज दूसरा (हो) तो,
मिथ्या-दृष्टि समाज यहाँ निम्न होवै नहीं ।।

११. गोरोचन-कुंकुम, चन्दनकेतिलक का लेप जिमि,
भद्र चन्द्र नक्षत्र का किरणों से ढंकना हीँ ।

स्ञिङ.पोऽि. ऽोद्.क्यिस्. यन्. लग्. सिल्.ग्यिस्. ग्नोन्.पर्. ग्युर् ।
ऽदि.नस्. ऽदि.रु. सद्. चेस्. ऽदि. ब्यु.ङ. ब्तंग्. द्कङ. ञिद्. ।।

१२. गङ.गिस्. नम्.म्खऽ. दग्. ल. लोङस्. स्प्योद्.पऽि ।
ऽदोद्.पऽि. योन्.तन्. ऽदि.ल.[५] ऽफेल्.ऽग्रिब्. मेद्.पर्. ब्युङ.
गङ.शिग्. नोर्.बु. द्रि.म.मेद्.प. ऽछङ.ब.यि ।
सेम्स्.क्यि. योन्.तन्. अग्तेर्.छेन्. ऽदि.लस्. ब्युङ ग्युर. ते ।।

१३. म्थोङ.ब.मेद्पऽि. छुल्.ग्यिस्. तंग्.तु. ब्ल्त.ब. ञिद् ।
छोस्.ञिद्. म्छोन्.पऽि. ङो.बो. ऽदि.ब्शंस्. ऽदस्.ऽग्युर्.ब ।।
ब्लो.म्छोग्. नंम्स् क्यिस्[६]. क्यङ. नि. फिग्स्.पर्. नुस्. म. यिन् ।
ग्ञिस्.मेद्.छुल्.ग्यिस्. दे.ब्शिन्. ग्शे.ग्स्.ग्ङ.ञिद्. ।।

१४. दि.नस्. सोङ.ब. गङ. यङ. मेद्पर्. शेस्.प. दे ।
ऽदि. नि. मि. ग्नस्. गङ. नऽङ. ग्नस्.प. मेद् ।।
युल्.मेद्. ऽदि.ल. तंग्.तु. ल्त.ब. दङ.ब्रल्. ञिद्
ऽदि.नस्. गङ.दु. ऽग्रो.बऽि. फ्योग्स्. म्छम्स्[७]. दे. कुन्.न ।।

१५. ऽजिग्स्.पर्. ब्येद्.पऽि. स्ग्र.यिस्. म. ख्येर्.बर्. ।
चि. ब्दे. दङ. ल्हन्.चिग्. दग्.तु. ब्योस्. ।।
क्ये.हो. ग्रोग्स्.दग्. ऽदि.ल. सेम्स्.ग्ञिस्. योद्. दे. मेद्.
क्यि. ब्तंग्. प. कुन्. ।
नंम्.तोंग्. लुंङ.गिस्. ब्स्म्योन्.पऽि. छिग्.तु. ऽग्युर् ।।

१६. स्म्यो.बर्. ग्युर्.नस्. ग्यं.म्छोर्. ल्हुङ.ब. ञिद् ।
छ्ङस्.प. ङुल्. दङ. म्छन्.मऽि. मुन्.प.दग्. दङ. म. ब्रल्.ब ।।
दे. ञिद्. ग्ञिस्.ब्रल्. तोंग्स्.पर्. ऽदोद्.प. दङ ।
ग्यं.म्छो. स. दङ. ग्शग्.मर्. नोर्.बु. ग्युर्. म्थोङ. ञिद् ।।

१७. ब्तुल्.शुग्स्. म्य.ङन्.ऽदऽ.बऽि. स्प्योद्.प. गङ. ब्येद्.प ।
ऽदि. नि. मि.शेस्. दे.ऽद्रर्. स्तोन्.पर्[२] ब्येद् ।।
ब्देन्.प.ग्ञिस्.ब्रल्. स्ग्रो.स्कुङ.मेद्. पऽि. ग्ञुग्.म. गङ ।
गङ.दु. म्थोङ.ब.मेद्.प. दे. यिन्. ते ।।

सारकी प्रभा से अंग लीपै,
इससे यहाँ नाशै यह होना दुष्परीक्ष्य ही ।।

१२. क्योंकि शुद्ध-आकाश में भोग्यकी,
कामना का, गुण की बृद्धि-क्षय का यहां अभाव होइ ।
जो निर्मल मणिधारी,
चित्त के इस गुणमहाकोश से उपजा ।।

१३. अदृष्ट स्वरूप से ही सदा देखै,
लखेकी वस्तु यह धर्मता ज्ञानातीत हुई ।
वरबुधि भी बेधन ना कर सकें,
जो ही अद्वय स्वरूप सो तथागत है ।।

१४. यहां से गमन कहीं नहीं, सो ज्ञान (है),
यहां न वसै तो कहीं भी रहै नहीं ।
निर्विषय यहां (है) सदा दृष्टि-रहित ही,
यहां से कहीं गमनकी दिशा, सो सब सीमा में ।।

१५. भयंकर शब्द ना ले जावै,
क्या है सुख औ सह(ज) शोधो (सो) ।
अहो साथियो यहां दो चित्त के अभाव नहीं की सारी परीक्षा,
विकल्प पवन ने उन्मत्त शब्द किया ।।

१६. उन्माद होनेसे सागरमें गिरै ही,
ब्रह्म-रज औ निमित्त-तिमिर शुद्ध औ अन्तरहित ।
सौई अ-द्वैत अवबोध की इच्छा औ,
सागर-भूमि में रखी मणि हुई देखते ही ।।

१७. ब्रत निर्वाणी की चर्या जो करै,
यह ना जानि वैसी देशना करै ।
सत्यद्वय विना गुप्त फलक-रहित जो निज,
जहां नहीं दीखै (वह) सो है ।।

१८. ङेस्.पर्. ग्रुब्.चिङ. ऽदि.ल. रङ.ब्शिन्. मेद्.पर्. ग्युर् ।।
गङ. गिस्. म. म्थोङ. ब. लस्. दे. नि. ग्यॅल्. पर्. ऽग्युर् ।।
थेग्.प.ग्सुम्.ग्यिस्. म्य.ङन्.ऽदस्. स्तोन्प ।
ऽदि.रु. म. शेस्. [२] दे. ञिद्. म्थोङ.ब. मेद् ।।

१९. नॅम्.ग्रोल्.लम्. स्तोन्. ब्ये.ब्रग्. गङ. दुऽङ. फ्ये.ब. मेद्.
ब्यिस्.प.नॅम्स्.क्यिस्. शेस्.पर्. ऽग्युर्. म.यिन् ।।
गङ.शिग्. ऽदोद्.छग्स्.ब्रल्ब. तॉग्स्.पर्. ऽदोद्.प. दे ।
स्दुग्.स्ङल्.ग्सुम्. मम्.ब्र्ग्यॅुद्. ल.सोग्स्.प. कुन्.स्पङस्. ञिद् ।।

२०. ब्देन्.प.ग्ञिस्. [४८] लस्. मि. ऽदऽ. थब्स्. छुल्. स्न.छोग्स्.क्यिस् ।
ग्रो.बऽि. दोन्. म्जद्. ऽोद्.सेर्.ग्यस्. ग्योन्. रब्.तु. ऽग्येद् ।।
बुम्.रिल्. ख.स्बुब्. म.दग्.प. ञिद्. दग्. स्तोन्. प ।
छुङ. छिङ. ऽब्रेल्बऽि. युल्.द्रुग्.ल.सोग्स्. रब्. तु. ऽजोम्स्. ।।

२१. थमस्.चद्.म्ख्येन्.ल्दन्. सुस्. क्यङ. म्थोङ.ब.मेद्. प [५]दे ।
ग्रग्स्.प.ल.सोग्स्. कुन्.ग्यिस्. ब्स्तोङ. दङ. ब्स्क्य.ऽोद्. प. मेद् ।।
क्ये.हो. ऽदि.ल्तर. ग्नस्.न. कुन्.ग्यिस्. शेस्.ऽग्युर्. ते ।
थोग्.म्थऽ.मेद्.नस्. स्त्रिद्.पऽि. ग्'यग्म्छो. ग्येङस्.ग्युर्. ब ।

२२. स्दुग्.स्डल्.ञिद्.क्यि. चॅ. ब. ऽदि.रु. ब्यस् ।
ऽदि. ल. शेस्. ञोन्.मोङस्. ल.सोग्स् .पऽि ।
ढ्रि.मस्. म्गोस्.ऽदम्. ग्यि,. पद्.म. ब्शिन् ।
श. ऽद्रस्. युल्. ल. सो. सोर. स्नङ ।।

२३. स्यु.मर्. तोग्स्. चम्. गर्.म्खन्. मिग्.ऽफ्र्ल्. ब्शिन् ।
ऽदु.ब्येद्. स्न्.छोग्स्. गङ.ल. ब्सग्स्.प. दे. ।।

१८. नियत सिद्ध इसका स्वभाव नहीं होइ,
जिससे अ-दृष्ट कर्म सोई जिन होइ ।
तीनों यान निर्वाण बतावै,
यहां अज्ञात सोई अ-दृष्ट ॥

१९. विमुक्ति-मार्ग देशना-व्युत्पत्ति जहां भी अभिन्न,
सोई बालोंको ज्ञात नहीं होइ ।
जो बीतराग बोध के इच्छुक, सो
तीनों दुःख या आठ इत्यादि सब छोड़ै ॥

२०. सत्यद्वय सें न परे नाना उपायस्वरूप
जगतके अर्थ करै दाहिने बायें बहु संग्राम ।
घट करक चुक्कड़ अशुद्धही, को शुद्ध बतलावै,
इन्द्रिय-अनुबंधी छ विषय इत्यादि भूलै ॥

२१. किसी सर्वज्ञ ने भी उसे न देखा,
कीर्ति इत्यादि सबके द्वारा स्तुति औ निन्दा नहीं ।
अहो ऐसे रहै तो सब जानै,
आदि-अन्त के अभाव से भवसागर मत्त होइ ॥

२२. दुःख ही का मूल यहां बनाया, इसे जान औ क्लेश इत्यादि को ।
मैले शिर से पंके पद्म जिमि, रंग न खींचै विषय में पृथक् प्रतिभा से ॥

२३. माया कल्पना मात्र नट के इन्द्रजाल जिमि नाना संस्कार, जहां से,

ऽदि. गोम्स्. गङ.यङ. शेस्.पर. मि.ऽग्युर्. ते ॥
ग्लो.वुर्.तेन्. ऽब्रेल्.दग्.लस्. गोम्स्पऽि. स्तोब्स् ॥

२४. म.गोम्स्.पस्.न. थम्स्.चद्. शेस्.पर्. ऽग्युर् ।
ऽद्रस्.पऽि. छोस्. नि. ग.ङयङ. ग्नस्.पर्. मि. ब्येद्. दो ॥
स्कु.ग्सुम्. थुग्स्. दङ. फ्यग्.ग्यें.ल.सोगस्. रिम्.प. कुन् ।
ऽदि·ल. स्कद्.चिग्. चम्. दु. तोग्स्.पर. म.ब्येद्. चिग् ॥

२५. ऽजिग्.तन्. ब्स्तन्.ब्चोस्.दग्. दङ. ग्लगस्.बम्.ग्यिस् ।
ग्सुङ.गि. ब्दग्. ञिद्. ब्र्जोद्.पर्. ब्य्.ब. मिन्. ञि. म. स.ल ।
ञि.म.ग्ल् ब.ग्ञिस्.सु.ग्नस्.ऽग्युर्.ब ।
दे. दङ. ग्चिग्.तु. ऽद्रस्.पर ग्युर्.नस्. नि ॥

२६. गङ..गिस्. गङ. स्प्योद्. दे.यिस्. रब्.तु.ब्र्ग्यन् ।
स्क्ये.ब. मेद्.पऽि. नॅम्.पर्.ङेस्.ब्जोद्.पऽि ॥
द्बुस्.सु. ब्ज्ोद्.पस्. म्थऽ.नॅम्स्. रब्.तु. स्पङस् ।
जिल्तर्. ब्स्तन्.पस्. गो. पर्. मि. ऽग्युर्. बऽि ॥

२७. ऽजिग्.तॅन्. खम्स्. सु. ग्तन्. ऽख्यम्स्.रिग्स्. छद्. दे ।
बग्.छग्स्.लस्.क्यिस्. म्नर्.ब. म्छ्ोर्. बस् ।
छोस्.ञिद्. द्रि.म.मेद्.पऽि. दोन्. मि. म्थोङ ।
गङ. यङ. ऽदि. दङ. ब्रल्. ब. मेद्. प. दे ॥

२८. द्रन्.ऽजिन्. लुस् लस्. म्युर्.दु. स्कद्.चिग्. ग्रोल् ।
दों.जेंऽि.सेम्स्. नि. योङस्.सु.ब्तॅग्. द्कऽ.ब. ॥
सेम्स्.ल. सेम्स्.सु. म्थोङ. रो. स्ञोम्स्. स्ञोम्स्.नस् ।
फ्यि. नङ. ब्सम्.ग्तन्. चॅ.मोस्. ब्तॅग्स्.पस्. स्तोङ ॥

२९. नॅल्.मऽि. दोन्.ल. ग्नस्.पऽि. नॅल्.ऽब्योर्. नि ।
ये.शेस्. शेस्.रब्. ग्सङ.बऽि. द्ब्यिङस्.ल. ज्ोग्स् ॥
रङ. गिस्. म.म्थोङ. म्छन्.ञिद्. कुन्. ल्दन् प ।
श्स्. नि. ब्स्ङग्स्.प. ब्ज्ोद्.पर्.ऽग्युर्.बऽि ॥

अकस्मात् शुद्ध आश्रय से भावना-बल, यह भावना कोई भी ना जानै ।।

२४. भावना न हो तो सब ज्ञात होइ, संकीर्ण धर्म जो भी न स्थापित करै ।
काय-वाक्-चित्त मुद्रा इत्यादि सब क्रम, इसकी क्षण-मात्र कल्पना न करै ।।

२५. लौकिक शास्त्र औ वाचन-ग्रंथ से वाणी आत्मा कहा न जाइ ।
रवि-शशि दोनों में बसि, उसके साथ एकत्र मिश्रित होने से ।।

२६. जिससे जो आचरै उससे बहु-भूषित, अज के विनिश्चय कहनेके ।
मध्यमें कहने के अन्तों को खूब छाड, जिमि शासनसे जाननै नहीं ।।

२७. लोकधातुमें सदा भ्रमण जाति उच्छीजै, वासना कर्म से पीडा सहै ।
निर्मल-अर्थ धर्म ही न देखै, जो भी इसके विना सो नहीं ।।

२८. स्मृतिधर शरीरसे तुरंत क्षण-मुक्त, वज्रसत्त्व की परीक्षा कठिन ।
चित्तको चित्तमें देख समरस, बाहर-भीतर समाधिशिखर से परीक्षा-शून्य ।।

२९. समाप्ति अर्थमें बिहरै योगी, ज्ञान प्रज्ञा गुह्य-धातु में समापै ।
स्वयं अ-देख सर्वलक्षण, इति[1] मंत्र वर्णित ।।

---

१ शल्

३०. द्रन्.मेद्. स्ञाम्. पऽि. द्ब्यिङस्. ल. स्कुर्. ग्सल्. मोस्.प.
मेद्. पर्. स्प्योद् ।
थुग्स्. जेस्. मि.ग्सिग्स्. स्कु. ग्सुङ. थुग्स्.क्यिस्. म. गोस्. प ॥
ग्ञिस्. सु. म.म्थोङ. ग्सुम्.ग्यि. द्रि.म.ब्रल् ।
स्न.छोग्स्. पर्. स्नङगङ. ल. ङोस्.ग्सुङ.मेद्.प. स्ते ॥

३१. लुस्. ङग्. यिद्. ग्सुम्. ऽबद्. पऽि.चर्.ोल्. बस्. गदुङ. बर्. म. ब्येद्. चिग् ।
ङस्. नि. दोर्.जेऽि. ग्लु. दङ. लोङ. ग्तम्. ग्योब्. सोद्. दङ ॥
ऽग्रो.ब. कुन्.ग्यिस्. शेस्.प. दग्. दङ.गर्. ब्देर्. स्प्योद्
मि.स्ग्रिम्. मि.ल्त. मि.स्प्योद्. ऽदि. दङ.ऽब्रल्. म. म्योङ ।

३२. ये.नस् म. ब्चोस्. थम्स्.चद्. ऽब्युङ. ऽजुग्. गो. ऽफ़ङ. यङ ।
क्ये. हो. स्न. छोग्स्. गङ. यङ. रुङ.ब. ऽदि. ल. ब्सम्. पऽि.
सेम्स्. ब्रल्. बस् ॥
यिद्. क्यि. र्तोग्. प. स्न.छोग्स्. ऽदि. नि. ङन्. पऽि. सेम्स्. यिन्. ते ।
गङ. यङ. ग्सुग्स्. दर्चे. ङ. ब. मेद्. प. दग्. लस्. स्क्येस्. प. यिन् ॥

३३. थ.मल्. शेस्. प. म. ब्सङ. ब्दे.छेन्. ग्यंल्.पो.[१] ञिद् ।
119a म्छन्. ञिद्. चिर. यङ. म. म्थोङ. पयोग्स्. छ. कुन्. दङ. ब्रल् ॥
ख्रुल्.पस्. ब्र्तग्स्.पऽि. ब्जोद्. ऽदि. नि. ग्लो.बुर्. ते ।
ब्लो. लस्. ब्युङ. फ्यिर. ब्लो.यिस्. ब्स्गोम्. दु. ग. ल. योङ ॥

३४. गङ. ल. यन्.लग्.मेद्.प. दे. ञिद्. कुन्.ग्यि.ख्यिम्. दु. ल्हुङ.बर्.ऽग्युर्. ।
गो.बऽि. छे. न. चि. यङ. मद् प. स्ते. ।
द्ङोस्. कुन् चि. यङ. ग्सल्. म्थोङ. ब. मेद्. ।
गड्.ल. म्य.ङन्.ऽदस्. दङ. स्रिद्.प. ख.स्ब्यर्. ब. ॥

३५. ग्ञिस्.सु. स्नङ. ब. ख्योद्. ल. तेन् दङ. ऽब्युङ. बर्. ऽग्युर्.ब. यिन्. ।
ग्यंल्. ब. ल. सोग्स्. कुन्.दु. स्ग्रुल्. प. स्न. छोग्स्. स्तोन्. म्जद्. प. ।
दग्.पऽि. रिग्स्.र्नम्स्. कुन्.ल. ख्योद्.क्यिस्. स्प्योद्. ।
मि.ब्सम्. थुग्स्.जे. रङ. ऽब्युङ. स्प्रल्.प. नि.

३०. विस्मृति समधातु में अम्ल प्रकट[२] अभिलाषा विना चरै,
करुणा से ना निध्यावे काय-वाक्-चित्त से अनपेक्षित।
द्वैत ना देखै तीन मलहित, नाना प्रतिभास जहाँ संधारै नहीं ॥

३१. शरीर वाणी चित्त तीनों यत्न-व्यायाम से ना जलावै,
अहंसे वज्रगीति अन्धकथा औ तारण-मारण[३]।
सब जग जानै शुद्ध नृत्य सुख आचरै,
न यतन करै न देखै न आचरै इसके विना न अनुभवै ॥

३२. प्रथमतः[४] ना खोले सर्व-भव-प्रवेश का कपाट भी,
अहो नाना जो भी विहित यहां आशयके अचित्तसे।
मनकी नाना कल्पना है यह दुष्ट चित्त,
जो भी रूप औ अमूल से उपजै ॥

३३. प्राकृत ज्ञान ना गहै महासुख-राज ही,
लक्षण क्यों ना देखै सर्व दिशांशसे रहित।
भ्रान्तिसे परीक्षा बचन यह उलटी,
बुद्धिसे संभव होनेसे बुद्धिद्वारा भावनामें कहाँ आवै ॥

३४. जिसका अंग नहीं सोई सबके घरमें गिरै,
समझने के समय कुछ भी नहीं,
सारी वस्तु कुछ भी स्पष्ट दीखै नहीं,
जहां निर्वाण औ भव मुंह जोड़े(हैं)।

३५. द्वैत-प्रतिभास तुझे आधारके साथ उत्पन्न हुआ,
जिन इत्यादि सर्वत्र नाना निर्मित करैं।
सब शुद्ध न्यायसर्वत्र तू आचरै,
अचिन्त्य स्वयंभू करुणा निर्मित[५] ॥

---

२ स्कुर् गुसल् ३ ग्योंब् सोद् ४ थे-नस् ५. ऋद्धि-निर्मित पुरुष।

३६. नोर्.बु.रिन्.छेन्. ल्त.बुर्. ऽफेल्. ऽग्रिब्. मेद्.पर्.ब्युङ्. ।।
दङोस्.पो.मेद्.पस्. नम्स्. क्यङ. तोंग्स्.मिन्.पस्. ।
ब्तङ. ग्शन्. मेद्. चिङ. रङ. ब्शिन्. नंम्.पर्.ग्रोल्. ।
ऽजिन्.मेद्. यिद्.ल. ब्य.मेद्. नंल्.ऽब्योर्.बस्. ग्तन्. ञिद्. ।।

३७. गङ.ल. मि. ब्स्गोम्. गङ.दुऽङ. ब्चल्.ब.मेद्.प. दे. ।
ब्सम्.दु. मेद्.पस्. यिद्.ल. मि.ब्येद्. रो.स्ञोम्स्. क्ये. ।
ये. ब्तङ. रङ. यन्. छोग्स्. द्रुग्. ल्हग्.पऽि. स्प्योद्. प. ऽदि. ।.
छोग्स्. द्रुग्. जेंस्.सु.स्प्योर्.बऽि. म्खस्. पस्. ब्त्ङ. ग्शग्. मेद्. ।।

३८. खो. न. ञिद्. क्यि.नंल्. ऽब्योर्. ल्हग्. ब्सम्. ब्रल्. बस्.
दे. ब्शिन्. ञिद्. ल. मि. ग्नस्. गङ. ल. रङ. ब्शिन्. मेद्.पर्.ग्रोल्. ।
ऽोद्. ग्सल्. जोंग्स्. दङ. थिम्. दङ. ऽगग्स्. पर्. ऽग्युर्. ब. गङ. ।
जि. ल्तर्. ब्स्गोम्स्. दङ. छग्स्. पर्. ऽग्युर्. प. म्छन्. म. स्ते. ।।

३९. फुङ.पो. खम्स्. दङ. स्क्ये. म्छेद्. यन्.लग्. थम्स्.चद्. कुन्. ।
ग्चिग्.गि. द्ब्यिङस्. न. मि. म्ङोन्. फ्र.बऽि. छुल्.दु. ग्नस्. ।
गं्य. म्छोऽि. द्ब्यिङस्. नस्. नोर्. बु. रिन्. छेन्. ञोंद्. ऽम्युर्. ब ।
छु.स्रिन्. द्रुङ. दङ. गदुग्.प.चन्. ग्यिस्. म्थोङ. मि. ऽग्युर् ।।

४०. फग्. दोग्. स्रिद्.पऽि. ऽोन्. मोङस्. ल.सोग्स्.पऽि. ।
म्छन्.मऽि. द्ब्यिङस्.नस्. ङोस्. व्सुङ. मेद्.पर्. म्थोङ. ।।
ग्सुम्.ल.सोग्स्.पऽि. स्गो.नस्. ऽजुग्.पर्. ब्येद्.प. नि. ।
नंम्.रिग्. ब्देन्.प. ग्ञिस्. क्यि. स्गो.नस्. चोंल्.बर्.ब्येद्. ।

४१. जि. ल्तर्. स्नङ. ब्शिन्. ऽजिग्.तेंन. थ.स्ञद्. लम् ।
नंम्. थर्. स्गो. ग्सुम्. ब्स्लब्. प. नंम्.प. ग्सुम्. ।
म्छन्. मऽि. यिद्. ल. ब्येद्. पऽि. नंल. ऽब्योर्. ते ।
नंल्. ऽब्योर. छेन्. पो. ऽदि. ल. गग्स्. मि. ब्येद्. ।।

४२. गङ. शिग्. शेल्. स्गोङ. दग्.प. ल्त. बुर्. नि ।
रिन्. पो. छे. ल्तर् द्गोस्. ऽदोद्. थम्स्.चद्. ऽब्युङ ।।

३६. जिमि बृद्धि-क्षय विनु, मणि-रत्न संभवै वस्तुविना भी निर्विकल्प।
अनन्य त्याग विमुक्त-स्वभाव अधार क मनमें निष्क्रिय योगी ध्यावै ।।

३७. जहां न भावना विक्रम भी जहां नहीं
सो आशय अभावसे अमनसिकार समरस रे।
प्रथम छाड स्व अंग छ समाज मुक्त चर्या यह,
अनुयोग-चतुर छाडै नहीं।
खसम ज्ञान भावना विनु अमथित सारार्थ।
यहां बुद्धि से आवै बोलै नहीं रे ।।

३८. तत्त्व-योग अध्याशय विना, तैसे ही में
न बसै, जहां स्वभाव अभाव होइ।
प्रभा समाप्ति औ लय औ निरोध जो,
जैसे भावना से राग होना निमित्त है।

३९. स्कन्ध धातु औ आयतन सर्वांग सारे,
एक धातुमें प्रकट सूक्ष्म स्वरूपमें रहैं ।।
सागर धातु से मणिरत्न लाभ होइ, मकरशंख औ विषधर देखैं नहीं ।।

४०. ईर्ष्या भव-क्लेश इत्यादिके निमित्त धातुसे वस्तुग्रहण नहीं दीखै ।।
त्र्यादि द्वारसे प्रवेश करै, दो विज्ञप्ति सत्य द्वारसे यतन करै ।।

४१. यथा सदृश लोकव्यवहार-मार्ग, तीन विमुक्ति द्वार शिक्षा तीन प्रकार।
निमित्त के मन में करने का योग, महायोगी यहां वास नहीं करै।

४२. शुद्ध काच कोश जिमि कोई, रत्न जिमि प्रयोजन इच्छा सब संभवै।

योङस्.सु. सद्. प. सद्. फ्यिर्. म्छन्. ञिद् ।
द्ङोस्. मेद्. ब्देन्. प. ग्ञिस्. ब्रल्. ग्चिग्. गि. द्ङो. स्स. पो. सतोङ

४३. म्छन्. म.थम्स्.चद्. ये. नस्. मेद्. पऽि. फ्यिर् ।
म्थोङ.थोस्. ल.सोग्स् म्थऽ.यि. र्तोग् प. मेद् ॥
मेद्. ल. मेद्. पर्. ऽजिन्.प. थ.स्ञद्. दे ।
ऽदि. नि. छोर्. बर् नुस्.प. म. यिन्. दो ॥

४४. ऽदि. नि. चँ. ब. कुन्. ग्यि. र्जेस्. सु. र्तोग्. पर्. म. ब्येद्. चिग् ।
ऽदि. ल. गङ. छे. र्तोग्. पर्. ब्येद्.प. दङ ।
ब्स्कल्. पर्. ब्ग्रङस्. क्यङ. दे. ञिद्. ञेंद्. प. मिन्.
म्गल्. मे. गचुब्. शिङ. ल्त. बुर्. म्छेद्.ऽबर्.ब. ब्शिन् ।

४५. ऽदि. कुन्. म्छेद्.नस्. थम्स्. चद्. स्ग्रेग्. पर्. ब्येद् ।
क्ये. हो. ग्रोग्स्. दग्. ग्यें. म्छो. नोर्. बु. ल्त. बुऽि. सेम्स्. नि.ऽदि.
ञिद्. यिन्. ते. क्ये ॥
म. हे. वं. रुर्. सेङ. गेऽि. ऽो. म. गङ्ग. ब्लुग्स्. प ।
नोर्. बु. रिन्. छेन्. ऽबर्. ब. दे. यिस्. थोब्. पर्. ग्युर् ॥

४६. ञोन्. मोङस्. प. मस्. रब्. तु. स्कम्स्. पऽि. ऽोद्. सेर्. ऽदि ।
ङन्.ऽग्रो. ल.सोग्स्. लोग्.पर्. ल्त.बस्. ऽजिग्स्.प. मेद्. प. दे ॥
गङ. दग्. ञेंद्. प. दे.दग्. ग्शल्.ग्यिस्. मि. लङ. ङो ।
जि. ल्तर्. छोस्. क्यि्. द्ब्यिङस्. सु. स्नङ. ब्दे. सिद्. दु ॥

४७. सग्. प. मेद्. गङ. थमस्.चद्. दे. यिस्. स्प्यद्. प. यिन् ।
दुग्. स्ब्रुल्. फग्. र्गोद्. ग्लङ. छेन्. सेङ्गेस्. सोस्. प. ब्शिन् ॥
दे. ब्शिन्. ञिद्. दङ. म्यङन्.ऽदस्.प. ख्युर्. मि. ऽदस् ।
ब्स्कल्. प. ब्र्जोद्. दु. मेद्.पर्. ब्र्ग्यं. स्तोङ. दु. म. रु ॥

४८. ञोन्. मोङस्. ल. सोग्स्. ब्सग्स्.पऽि. स. बोन्. नि ।
सेम्स्. ग्चिग्-स्नङ. बर्. ऽग्युर्. बस्.ऽब्रस्. बु.ग्चिग्. तु. लोग्. पर्. ऽग्युर्

परिक्षय क्षय होनेसे लक्षण, नहीं
अवस्तु सत्यद्वय-रहित क शून्य-वस्तु ।।

४३. सर्व निमित्त प्रथमतः न होनेसे,
देखना सुनना इत्यादि अन्तकी कल्पना नहीं ।
अभाव में अभाव धारै सो व्यवहार, यह वेदना शक्ति नहीं है ।।

४४. यह सबका मूल के अनु (वि)तर्क न करै, औ जब यहां तर्क करै ।
कल्प (भर) गिन भी सो लहै नहीं,
अलात-अरणी जिमि अग्नि जिमि जलना ।।

४५. यह सब दहै सब जलावै, अहो साथियो सागररत्न जिमि चित्त यही है रे ।।
भैंस की सींगमें सिंही का क्षीर गिरै जो, मणिरत्न ज्वाला सोई पावै ।।

४६. मूढ़ोंकी प्रतापक किरण यह
दुर्गति इत्यादि मिथ्यादृष्टिसे भय नहीं सो ।
जो लहै सो अमित (है), जिमि धर्मधातु-प्रतिभासी सुख भवमें ।।

४७. जो सब अनास्रव सो आचरित,
विषसर्प शूकर मत्त-गज सिंह द्वारा खाया जिमि ।।
तिमि भव औ निर्वाण गोष्ठीसे परे नहीं, अनेक शतसहस्र
अवचनीय कल्पमें ।

४८. क्लेश (मल) इत्यादि संचित बीज,
एक चित्त प्रतिभाससे एक फलमें परिवर्तित ।।

स्ग्रोन्. मे. खङ. बुर्. नोर्.बु. ग्नस्. ग्युर्. पऽि ।
ऽो द्.क्यिस्. थम्स.चद्. सिल्. ग्यिस्. म्नन्. पर्. ऽग्युर् ।।

४९. द्मन्. पऽि. ल्त. स्प्योद्. ञान्. थोस्. ल्.सोग्स्. पऽि ।
सेम्स्. दे. यङ. दग्. ब्लङस्. नस्. ऽजुग्. पर्. ग्युर्
ऽदि. ल. गङ. न. ब्यङ. छुब्. सेम्स्. द्पर्. ग्युर्. प. दे ।
ज्ऽोग्स्. पऽि. सङस्. ग्र्यंस्. दकऽ. बर्. ग्युर्. ब. म. यिन्. नो ।।

५०. सेम्स्. क्यि. स्कद्. चिग्.ऽदि. ल. म्थऽ.यस्. मु. मेद्. दे ।
यन्. लग्. थम्स्. चद्. स्कद्. चिग्. ऽदि. ल.लोग्. पर्. ऽग्यु.
छोस्. नम्स्. थम्स्.चद्. खो. न. ञिद्. ल. जोग्स्. पर्. ग्युर्. ब. यि.
ग्शन्.मेद्. गङ. शिग्. गङ.नस्.ऽो ङस्. पर्.ऽग्युर्.प.म. यिन्.नो।।

५१. र.ल.बऽि. स्ञिङ. पो. मुन्.पऽि. ग्युल्. लस्. ग्र्यल्. बर्.ऽग्युर्. ब. गङ।
ऽजिग्. तेन्. मि. लम्. ल्त.बु. ऽदि. ल. यङ. दग्. ञ्ऽोद्. पर्. ऽग्युर् ।।
120a ब्र्जुन्. प.गङ . यिन्. ऽदि. ल.यङ . दग्. सुस्. म्थोङ . ब ।
ऽब्ल्तर्. मेद्. दे. ल. ग्स्.ग्स्. सु.म्थोङ. बर्. ग.ल. ऽग्युर् ।।

५२. दोन्.दम्.पर्. नि. गङ. यङ. योद्. पर्. ऽग्युर्. ब. म. यिन्. न ।
फ.रोल्. ग्शन्. दु. म्थोङ. नस्. ऽग्रो. बर्. ऽवोद्. पऽि. गङ. सग्. दे ।
ऽदि. लस्. ग्शन्. दु. ऽग्रो. बऽि. ख्यद्. प र. स. द्रि. चन्. ब्शिन्. नो ।
ऽदि. नि. फ.रोल्. ब्र्तोल.बस्. गङ. दु. म. बोर्. बर् ।।

५३. ग्चिग्. क्यङ . फियन्.प. मेद्.पर्. ऽदिस्. ब्र्तोल्. लो ।
क्ये. हो. गङ. ऽदि. थ.स्ञाद्. लम्.ऽदिस्. ब्चल्. म.यिन् ।
थर्. प. र्तग्.तु. प्यि.ल. ल्त. बुऽि. म्छोङस्. पस्. नग्स्. सु. ल्तुङ.
बर्. ऽग्युर् ।।
गल्. ते. स्तग्. दङ. व्. मो. ल्त. बुऽि. स्तोब्स्. नि. गो. ब्स्लोग्. न ।।

५४. दे.ञिद्. योद्.पस्. दे.ल. चि. शिग्.फन्. पर्. मि. ऽग्युर्.रो ।
दे.ञिद्. शेस्. न. मि. ब्सम्. मि. र्तोग्. पर्. ।

दीप कोठरी में स्थापित मणि-प्रभासे सर्व (तम) पराभूत होइ ।।

४९. श्रावक इत्यादिकी हीनदृष्टि चर्या, सो चित्त ठीकसे लेकर प्रविशै ।
यहां जहां बोधिसत्व हो, सो, संबुद्ध होवै दुष्कर नहीं ।।

५०. चित्तका क्षणिक (होना) यहां अनंत अपर्यन्त,
सब अंग क्षणिक यहां मिथ्या होइ ।
तत्वमें सब धर्म समाप्त, अन्य नहीं जो जिससे आया नहीं ।

५१. चन्द्रगर्भ तम-युद्धमें जो विजयी हुआ,
लोक स्वप्न जिमि यहां सुलाभ हुआ ।
जो झूठा है उसमें ठीक किसने देखा,
उस असदृशमें रूप देखना कहां हुआ ।।

५२. परमार्थमें जो सद्भूत नहीं है,
परे अन्यत्र देखि जानेका इच्छुक पुद्गल सो ।।
यहां से अन्यत्र छेदन दुर्गन्ध जिमि, यह परे ले जानेसे कहां न छाडै ।

५३. एक भी पहुंचा नहीं इसका ले गया,
अहो, जो यह व्यवहार-मार्ग (है) इससे ना ढूँढै ।
मोक्ष सदा विडाल जिमि लांघके वनमें पीवै,
यदि वाघ औ श्वापद सदृश बल बायें ।।

५४. सोई होनेसे उसको क्या अहित होइ,
सोई जाने तो ना ध्यावै ना तर्क करै ।

ग्सुग्स्. म्थोङ. चिर.्यङ. स्नङ. बऽि. युल्. नि. दे. रु. स्तोङ. पर्. ऽग्युर्.।
ऽदि. ल. यॆङस्. नस्. दे. ल. ग्नस्.पर्.ग्युर्.ब.म्छोर्.रो ।।

५५. द्रन्. दङ. शेस्.ब्शिन्. ग्ञिस्.नि. बर्.ग्यि. दे. ल. गङ.यङ. म. म्थोङ. स्ते ।
छोस्. कुन्. स्तोर्.न. ऽदि.यि. खोङ. नस्. ग्नस्. पर् ऽग्युर्. ब. यिन् ।
दि. ल. द्ङो.पो. मेद्. चिङ. ब्सम्. दु. मेद्. प. दे. ।
ख्योद्. क्यिस्. र्चे.व. म्छोग्. चम्. दु. ग्ञिस्. क. मेद्. पर्. ब्योस् ।।

५६. क्ये.हो.सङस्.र्गे.यस्.कुन्.ग्यि. यन्.लग्.ब्शि. यि. ऽदि. कुन्.ग्सुम्. दु. स्तोन्.पर्. नि ।
ख्योद्. क्यिस्.यङ.नस्. यङ.दु. ब्सम्.पस्.म्थोङ ब.गङ मेद्.मोद्.क्ये
ऽखोर्. बऽि. द्रन्. पस्. र्तेन्. ऽब्रल्. दग्. लस्. ऽब्युङ. ब. नि ।
स्न. छोग्स्. बर्. स्नङ. रङ. गि. ङो. बो. म. स्वयेस्. फ्यिर् ।।

५७. मि.ऽग्युर्. ब्दे. ब. छेन्. पोऽि. रङ. ब्शिन्. दग्. दङ ल्हन्. चिग्. स्क्येस् ।
सेम्स्.क्यि. दोन्. दङ. दे. ब्शिन्. ग्शेग्स्. प. थम्स्.चद्.क्यि ।
रङ.ब्शिन्. र्नम्.पर्. दग्.पऽि. योन्.तन्. ञिद् ।
छोस्.र्नम्स्. थम्स्.चद्. ग्ञिस्.सु. ग्दोद्. नस्.म. ब्युङ. स्ते ।।

५८. ग्ञिस्. दङ. ग्चिग्.गि. द्रन्. पस्. ङु. म. दङ. ब्रल्. बर्. ऽग्युर् ।
गङ.यङ.ब्र्जोद्.पर्. ब्य.बऽि.द्ङोस्.पो.गङ.शिग्. रङ.गिस्. स्तोङ.प.स्ते
ब्लो. लस्. ऽदस्.फ्यिर्. म्छन्. म. रब्.तु.ऽजोम्स् ।
दे. मेद्.प. दे. गङ. न. ग्नस्.पर्. मि.ऽग्युर्.रो ।।

५९. र्ग्युन्. मि. ऽछद्. पऽि.ब्सम्.ग्तन्. गङ. छे. थोब्. पर्. ऽग्युर्. ब.ल ।
ब्रल्.बस्. ऽदि.लस्. ग्शन्.दु. सो.ङ बस्. म. म्थोङ. ङो. ।।
ग्सङ. स्प्रग्स्. ऽदि.कुन्. र्चे. ब. दे.लस्. ब्स्क्येद्. पर्. नि ।
दे . मेद्. प. लस्. ऽब्युङ. बर्. ऽगयुर्. ब. गङ. यङ. योद्. प. म. यिन्. क्यं ।।

६०. सु.शग्. ऽदि.ल.ॱ र्तोग्. पर्. ब्येद्.पऽि. ब्लुन्.पो. दे ।
120b ब्स्कल्.प. ब्र्ग्युर्. यङ. म्छोग्.गि. दोन्. मि. म्थोङ ।।

रूपदेखे क्यों प्रतिभास-विषय वहां शून्य होइ,
यहां उद्धतिसे वहां वास छोडै ॥

५५. स्मृति औ ज्ञान जिमि दो ही बीचमें वहां कुछ भी ना देखै,
सर्व धर्म भ्रमि इसके अन्धसे वास होइ।
यहां(जो) वस्तु अभाव आशयमें अभाव सो,
तू उत्तम मूल मात्रमें दोनों अभाव करे ॥

५६. अहो सर्व बुद्धका चतुरंग यह सब तीनमें आदेश,
पुनःपुनः आशय दर्शन किंतु कुछ भी नहीं रे।
संसार-स्मृतिद्वारा आश्रयसे संभूत,
नाना अन्तर् प्रतिभास स्वभाव अनुत्पत्ति से ॥

५७. निर्विकार महासुख का स्वभाव शुद्ध औ सहज (है),
चित्तका अर्थ औ सर्व तथागतका।
स्वभाव विशुद्ध गुण ही, द्वैतमें सर्व धर्म प्रथमसे नहीं संभूत ॥

५८. दो औ एककी स्मृतिसे अनेक रहित होइ,
जो भी वाच्य वस्तु सो स्वयं शून्य (है)।
बुद्धिसे परे अतः निमित्त प्रमर्दित, उसके विना वह कहीं न रहै ॥

५९. अविच्छिन्न सन्तान ध्यान जब पावै,
तो इस वियोग से अन्यत्र गमन न दीखै।
यह सब मंत्र उस मूलसे उत्प ,
उसके विना संभव जो सत्ता नहीं है, रे ॥

६०. जो यहां तर्क करै मूढ सो, कल्प सौ में भी उत्तम अर्थ ना देखै।

गङ. शिग्. यिद्.ल. ब्येद्.पऽि. म्छन्.मस्. ब्ग्यल्. ब. कुन् ।
ब्तङ.ग्शग्. ब्रल्. दङ. थोब्. पर्. मि ऽग्युर्. ग्यंल्. स्रिद्. वशिन् ॥

६१. चुङ. सद्. द्रोद्. थोब्. ब्यङ.छुब्. सेम्स्. द्पऽ. दग्.
गङ. दु. ग्योब् प. मेद्.प. म्छोर्. रो ।
र्नम्. पर्. तोंग्. चन्. लम्. दु. शुग्स्. पऽि. फ़्यिर् ।
ब्यङ.छुब्. सेम्स्. क्यि. थिग्.ले. लँङ. ल. गङ. ब्स्क्योन्. प ॥

६२. स.बोन्. देस्.नि. ऽखोर्.ब. ऽदि. रु. सग्स्. पर्. ऽग्युर् ।
यङ.दग्.प.यि. दे.ञिद्. थोब्.पर् . मि.ऽग्युर्. शिङ ।
छिङ . छिङ. द्र.बऽि. ग्सेब्.तु. ऽबेल्.बर्. ऽग्युर् ।
शेस्.रब्. मिग्.गिस्. लोग्.पर्. छर्.ब्चद्. न ॥

६३. ग्शन्.ग्यि. लोग्.पर्. ल्त.ब. रङ.गि. दे.रु. ग्रोल् ।
द्कऽ.थुब्. ल.सोग्स्. ग्शन्.दु. ऽबद्.प. मेद् ॥
ब्दग्. मेद्. पर्. नि. रङ. ब्युङ. यङ. र्नम्. प. स्न. छोग्स्. ञिद् ।
ग्यु.ग्येन्.ल.सोग्स्. ऽब्रेल्.प. ऽदि.रु. स्तोङ.पर्. ब्योस् ॥

६४. र्नल्.ऽब्योर्. ऽदि.ल. ब्दग्.गि. ग्नस्.सु. ऽदुग्.प.म. म्थोङ.ङो ।
स. दङ. फ. रोल्.फ्यिन्.पऽि. लोङ.ब. गङ. ऽछल्. ऽदिस् ।
स्रिद्.पऽि. द्र.ब. खुङ.नस्. ग्यं.म्छोर्. म्छोङ.बर्.ब्येद् ।
दे.ल. ग्रु. मेद्. गं्य.म्छोऽि. सब्स्.सु. सग्.पर्. ऽग्युर् ॥

६५. थोग्.म्थऽ.मेद्.पऽि. फ्यग्.ग्यं. छेन्.पो. ऽदि ।
स्रिद्. दङ. म्य. ङन्. ऽदस्. ग्रोल्. ञोन्.मोङस्ग्.यं. म्छो.स्केम्स्. पर्.
ऽग्युर्. ।
दे. ल. सेम्स्. ग्युन्. ऽछद्. दो. स्ञम्. दु. सेम्स्. शिङ. स्तोङ. पर्. यिद्.
ल. म.ब्येद्. चिग् ।
गङ. ल. दोन्. ग्यि. ब्र्तुल्. शुग्स्. छन्. पो. ऽदि. ञिद्. म. थोब्. पर् ॥

जो मनसिकार-निमित्त से सब जीते,

त्याग-रूप बिना औ अप्राप्त राज्य जिमि ।।

६१. किंचिद् उष्म पाई बोधिसत्व, जहां अकंपित अवतरै ।
विकल्पमार्ग अवगाहन के लिये, बोधिसत्व-तिलक जो पवनमें दोष ।।

६२. उस बीजसे इस संसारमें च्युत, सम्यक् (तत्व) सोई न पावे ।।
लतासदृश बीच में बद्ध, प्रज्ञा नेत्रसे मिथ्या नाश करै तो ।।

६३. अन्यकी मिथ्यादृष्टि स्वयं यहां छूटै, तप इत्यादिक अन्यमें न यत्न करै ।
अनात्मा स्वयंभू जो नाना विध,

हेतु-प्रत्यय इत्यादि संबंध यहां शून्य करै ।।

६४. इस योगी को अपने स्थान में बैठा न देखै

भूमि औ पारमिता अन्ध इस वनसे ।

भवजालछिद्रसे सागरमें छलांग मारै,

वहां नाव विना सागरकी गहराइमें जा लगै ।।

६५. आदि-अन्त-रहित यह महामुद्रा,

भव औ निर्वाण मुक्त, क्लेशसागर सूख ।

वहां चित्तस्रोत टूटा औ चित्तवृक्ष शून्य मनमें ना करै,

यहां अर्थमहाव्रत सोई ना पावै ।।

६६. बृतुल्. शुग्स्. स्प्योद्. पऽि. द्बङ्स्. गिस्. दे. ल. म. रेग्. क्ये ।
ब्यिन्. ग्यिस्. ब्र्लब्स्. दङ. ब्र्लब्. ब्य. मेद्.पस्. ङो.म्छर्. छे.ब.
ञिद्. ।
ग्ञिस्. मेद्. स्ग्रो.स्कुर्. ब्रल्. ब. ऽदि. ल. ग्नस्. प. गङ ।
र्तेन्. दङ. ब्रल्.बऽि. छुल्.ग्यिस्. ग्नस्.पर्. ऽग्युर् ।।

६७. ऽग्रो. ब.कुन्.ग्यिस्. दे.ल्तर्. शेस्.पर्. ऽग्युर्. गङ. नि ।
स्रिद्. दङ .म्य. ङन्. ऽदस्. पऽि. छोस्. नॆम्स्. रङ. गि. सेम्स्. यिन्.
पर् ।
ग्शन्. दु. ब्ल्त. ब. मेद्. पर्. थग्.छोद्. ब्सम्. मेद्. ब्लो.ऽदस्.
ञिद्. ।।

६८. दे. ल. ब्स्गोम्स्. दङ. म.ब्स्गोम्स्. नॆम्. पर्.र्तोग्.प.दङ ।
म्छन्.म.दग्स्. दङ.स्पङ. बर्. ब्य. ब. मि. द्गोस्.ते ।
दे. ल. चि. ब्य. गङ. यङ. म. ब्यस्. दे. ञिद्. ग्सल्. बर्. ऽग्युर् ।
जि.ल्तर्. नॆम्.र्तोग्. म. ब्कग्. म.स्पङ्स्.पर् ।।

६९. ग्शन्.दु. म.म्थोङ. दे.ञिद्. ग्सल्.ऽग्युर्. न ।
121a दे. नि. गङ.ल. ग्नस्. क्यङ.ग्शन्.दु. म्थोङ. बर्. ऽग्युर्. ब.
म. यिन्. नो ।
म. ब्स्गोम्स्. छेद्. दु. ब्यस्. ऽब्रल्. ब. मेद्. पऽि. रङ्. ब्शिन्. ते ।
दुस्. नॆम्स्. कुन्. दु. ऽदि. दोन्. शेस्. पऽि. म्छन्. म. ऽदि. ल. र्तोग्. पर्.
म. ब्येद्. चिग् ।।

७०. ल्हन्. चिग्. ग्सल्. बऽि. स्नङ . स्रिद्. ऽदि. ल. र्तोग्. मेद्. चिङ ।
दे. लस्. ग्शन्. दु. र्तोग्स्. पऽि. ब्लो. चन्, ऽदिस्. नि. ग्यं. म्.छो. नङ.
गि. नोर्. बु. मेद्. मि. ऽग्युर् ।
गङ. नस्. ब्युङ. शिङ. गङ. दु. ग्नस्. पऽि. ऽजिन्. प. ऽदि. नि. स्क्ये. ब.
मेद्. ऽग्युर्. न ।
ग्युन्.दु.ऽगग्.प.मेद्. पस्.ग्सुङ.ऽजिन्.दे. म. स्क्येस्. पस्. ये. शेस्. ञिद्. ।

६६. व्रतचर्या के वश वहां ना लग रे,
अधिष्ठान औ शिक्षा विना महा अद्भुत।
अद्वय गमन विनु यहां जो बैठा, निराश्रय स्वरूपसे बैठ गया॥

६७. सर्व जगत ऐसे जो जान गया,
भव-निर्वाण सबका अर्थ (सो) जान गया।
भव-निर्वाणका धर्म अपना चित्त है तो,
अन्यत्र देखे विना समाप्त अचिन्त्य बुद्धि से परे॥

६८. वहां भावना औ अभावना विकल्प,
और निमित्तका प्रवारण करना ना चाहिये।
वहां क्या करना, जोई अकृत सोई प्रकटा,
जैसे विकल्प अ-वारित अ-त्यक्त॥

६९. अन्यत्र ना देखा सोई प्रकटै तो, कहीं बैठ भी अन्यत्र देखै नहीं।
अभावना नाशे अकृत अभावस्वभाव (है),
सब कालों इस अर्थज्ञके निमित्त पर तर्क ना कर।

७०. सहज प्रकाश प्रतिभास इस भावमें अतर्क्य,
उससे अन्यत्र कल्पनाबुद्धि सागर में मणि ना पावै।
जहांसे उत्पन्न जहां का यह वासी अजन्मा हो जो,
संकेतमें अनिरोध से धारण-ग्रहण अजन्मा से ज्ञान ही॥

७१. ङो.बो. दे. ल. द्रि.म. म.स्पङ्स्. दे. ञिद्. म. ब्स्गोम्स्. पर् ।
नग्स्. ख्रोद्.दग्.न. ग्नस्.पऽि. ग्लङ.पो. यन्. पर्. ख्ये ।
म्छन्.मऽि. युल्. ग्यि. र्नम्. ग्येङ. र्तोग्. प. ब्सम्. ग्यिस्. मि.ख्यब्. पस् ।
ग्नोद्. चिङ. दे. ल. ग्येङ. बर्. मि. ग्युर्.ते ।।

७२. म्छोन्. छ. ब्रल्. बऽि. छोम्. र्कुन्. दग्. गिस्. ग्सद्. ब्चद्. म. यिन्. नो ।
म्छन्.म. दे.ञिद्. स्ञिङ. पो. मेद्. ऽग्युर्. ब ।।
स्गयु.मऽि. द्पे. ब्र्ग्यद्. ल्त. बुर्. रङ. ब्शिन्. मेद्. पर्. ब्योस् ।
गङ्. म्थोङ. सेम्स्. यिन्. दे ल. द्ङोस्. पो. मेद्. ऽग्युर्.पस् ।।

७३. द्रन्.मेद्. ब्लो.ल. मि.ग्नस्. छोस्.र्नम्स्. थम्स्.चद्.नि ।
दे. लस्. ब्युङ. शिङ . दे. रु. स्नङ . नस्. दे. ञिद्. ऽदस्. ऽग्युर्. बस् ।।
ऽदि. लस् . ग्शन्.दु. ग्यो.ब. गङ्. यङ. मेद्.प. ञिद् ।
दे. ल. दे. ञिद्. चे्म्. दु. म्ख्येन्. ग्यिस्. यिद्.ल. म. ब्येद्. क्ये ।।

७४. क्ये.हो. ग्रोग्स्.दग्. ब्लो.ल. चि. स्क्येस्. सेम्स्. दे. नि ।
दुङ्. र्नम्स्. कुन्.दु. ग्सल्.ब. म. यिन्. नो ।।
दे.ल.ग्सल्. ग्र्यु.चि. यङ. मेद्.प.स्ते. ।
ब्र्चेद्.प. कुन्. दङ. ब्रल्. बर्. नि ।।

७५. रङ्. ग्नस्. पस्. नि. ग्रोल्. बर्. ऽग्युर्. जि. ल्तर्. ।
छुल्. छोस्. ब्यस्. पऽि. सङस्. र्गं.यस्. ऽदि. कुन्. नि ।।
द्गे. स्लोङ्. म. यिन्. र्ग्यं.म्छोऽि. नङ्. दु. ल्तुङ ।
दि.ञिद्. लस्. नि. ग्शन्. दग्. तु ।।

७६. ग्चिग्. क्यङ. ल्त. बर्. मि. ब्येद्. प ।
देस्. नि. थम्स्. चद्. म्थोङ. बऽि. द्गे.स्लोङ. यिन् ।।
गङ्. शिग्. ब्र्जुन्. ल. गोम्स्.पऽि. ग्नस्.ब्र्तन्. देस् ।
स्रिद्.प. ञाम्.थग्. ऽदि.लस्. ऽब्युङ. बर्. नुस्. म. यिन् ।।

७७. गङ. गिस्. स्रिद्. पऽि. छु. बो. ऽदि . ब्र्जुन्. पर् ।
शेस्. प. दे. नि. ग्नस्. ब्र्तन्. म्छोग्. थोव्. ऽग्युर् ।।

७१. उस वस्तुमें मल ना छाडे ना सोई भावै,
बनप्रस्थोंमें बसा गज स्वानन्द सुत ।
निमित्त-विषय का विपक्ष तर्क से चित्तसे अव्याप्त,
उस बाधा में उद्धत ना होइ ।।

७२. शस्त्ररहित दस्युओं द्वारा मारण-छेदन नहीं, सोई निमित्त निस्सार होइ ।
जिमि माया के आठ दृष्टांत निःस्वभाव कर,
जो दर्शक चित्त, वहाँ वस्तु का अभाव हुआ ।।

७३. स्मृति बुद्धिमें धर्म सारे न स्थित,
उससे संभूत वहां प्रतिभासनसे सोई अतीत ।
इससे अन्यत्र चंचल कोई(वस्तु) नहीं,वहां सो मात्र जान मनमें ना कर रे ।।

७४. अहो साथियो, बुद्धि में जो उपजै सोई चित्त, धूयें ना सर्वत्र प्रकट।
वहां प्रकाशहेतु कुछ भी नहीं, (जो) सर्व वाद से हीन ।।

७५. स्वयं स्थिति से मुक्त होइ जिमि, शीलधर्म किया यह सब बुद्ध ।
भिक्षु नहीं है सागरके भीतर गिरा, इसीसे अन्यों में ।।

७६. एक भी दृष्टिमें ना करै, तिससे: (सो) सर्वदर्शी भिक्षु है ।।
जो झूमे ध्यानी स्थविर, अतः इस बेचारे भव से संभ ना हो सकै ।।

७७. जिसने इस भवसरिता को झूठजाना, उसने उत्तम दृढ स्थान पाया ।

नॅल्. ऽब्योर्. दे.यि.स्प्योद्. युल्. नि ।
ल्ह.दङ्.स्ङग्स्.दङ्. फ्यग्. ग्र्यॅऽि. यन्. लग्.कुन् ।।

७८. दि. कुन्. शेस्.न. द्बब्.तु. योद्.प. म. यिन्. नो ।
दे.ञिद्. शेस्.प. दे.ल. दे. कुन्. म्थोङ. ब. मेद् ।।
दे.ल्तर्.ऽदि.लस्.म.र्तोग्स्.पऽि. ।
ऽदु.शेस्.युल्.ग्शन्.दग्.लस्.नि ।

121b७९. स्क्ये.बर्.ऽग्युर्.ब.योद्.म.यिन् । युल्.चन्.गङ.गि. फ्योग्स.दग्.तु ।।
ग्ञिस्.सु. म्थोङ्.ब. मेद्.पर्. ग्युर्.ब. दे ।
नॅम्.प. स्न. छोग्स्. दे. ञिद्. ग्रोल्.ब. यिन् ।।

८०. गङ्. शिग्. फ्योग्स्.सु. ल्त.बर्. ग्युर्.प. दे ।
म्छन्.मऽि. द्रन्. रिग्. फ्र. रग्स्. गोम्स. मिन् ।।
गङ.शिग्.ऽदि.लस्.गोम्स्.ऽग्युर्.पस्. ।
स्प्योद्.प.जि.स्तर्.ब्यस्.प. कुन् ।।

८१. दोन्.दङ.ल्दन्.पर्. ऽग्युर्.ब. म.यिन्.ते ।
ञम्.थग्. म्छन्.मस्. म्युर्.दु. ऽछिङ. पर्. ऽग्युर् ।।
गङ.शिग्.ऽदि.दङ. फ्योग्स्. सु.नि । ग्तङ. ल.गोम्स्.सु.योद्. म.यिन्।।

८२. ब्सम्.मेद्. यिद्.ल. गोम्स्.सु. मेद् ।
क्ये.हो. ग्रोग्स्.दग्. रिग्.पऽि. ये.शेस्. ग्ञिस्.सु. मेद्.प. नि ।।
ये. शेस्. ब्ल.न.मेद्.पऽि. द्बङ. ब्स्कुर्. छेन्.पो. स्ते ।
ज्ॅगिस्.ल्दन्. द्पल्. ल्दन्. ब्ल.म.दग्.गिस्. नि ।।

८३. ब्स्कुर्. दु. मेद्. पऽि. छुल्.ग्यिस्. थोब्.पर्. ब्येद् छ्.प. नि ।
म्छोग्.गि. नॅल्.ऽब्योर्.नॅम्स्.क्यिस्. द्बङ.ब्स्कुर्. ते ।।
थोब्.ब्य.मेद्.पऽि. छुल्.ग्यि. थम्स्.चद्. ज्ॅगिस् ।
दे.ञिद्. म.शेस्. लोग्. स्रेद्.चन्.ग्यि. द्बङ. नॅम्स्. नि ।।

८४. म्छन्.मऽि. र्तोग्.प.दग्.गिस्. ग्सुम्.दु. सग्.पर्. ऽग्युर् ।
ऽदि.ल. ञोन्.मोङस्. शेस्. ब्यऽि. स्प्रिब्.प.लस्. ब्सग्स्. कुन् ।।

उस योगी के गोचर(हैं), देव, मंत्र औ मुद्रा के सारे अंग ।।

७८. यह सब जानि पतन होवै नहीं, सोई जाने (जो) उसे सो सब देखना नहीं।
तथा इससे निर्विकल्प, अन्य संज्ञा-विषयोंसे ।।

७९. उपजा हुआ है नहीं, जिस विषयी की दिशाओंमें ।
द्वैत देखना सो लुप्त हुआ, नाना विध सोई मोक्ष है ।।

८०. जो दिशाओं में दीखै सो, निमित्त की स्मृति-विद्या सूक्ष्म स्पर्श ध्यान है ।।
जो इससे ध्यावै, (उसने) चर्या अनुरूप सब किया ।।

८१. अर्थसहित होवै नहीं, बेचारे निमित्त से तुरत बद्ध होइ ।
जो इसके साथ दिशा में, त्याग ध्यान में नहीं ।।

८२. ध्यान-रहित मनमें भावना नहीं,
अहो साथियो, विद्या का ज्ञान अद्वय (है)।
अनुत्तर ज्ञान का अभिषेक महान्, निष्पन्न (हो) श्रीगुरुओं से ।।

८३. व्याख्यान-रहित शीलसे पावै, उत्तम योगियों द्वारा अभिषिक्त ।
अप्राप्य (कुछ) शीलका सब समाप्त,
सोई ना जान मिथ्यालोभी अधिकारी [१]।

८४. निमित्तकी कल्पनाओंसे तीनमें आसक्त होइ,
यहां ज्ञेयके आवरण क्लेश से सब ढंका ।।

---

* यन्.पर्.स्बे

शेस्.रब्. तिङ. ऽजिन्. मि.द्गोस् .नंम्.पर्.ग्रोल्.बर्.ऽग्युर् ।
ख्रो. ग्ञेर्.मेद्.पस्. सुग्. दुं. थम्स्. चद्. ऽजोम्स्. पर्. नि ॥

८५. म. स्क्येस्.प.यि. छुल्.ग्यिस्. ऽजिन्. पर्. मि. ब्येद्. दो ।
स्नङ.ब.ऽगग्. प.ऽदि.ल.ग्सल्. बऽि. तोंग्. पस्. यिद्.लम्. ब्येद्. चिग् ।
फ्यिन्. चि. लोग्. दङ . नंम्.पर्.तोंग्.प. थमस्.चद्. नि ।
ञोन्. मोङस्. ल्ङ .यि. ग्नस्.सु. थमस्.चद्. पर्. ऽग्युर्. ब. यिन् ॥

८६. ग्शन्. दग्. ऽदि.ञिद्. शेस्. पस्. ऽखोर्. बऽि. द्र. ब. दग्. गिस्.स्तोङ .प. ञिद् ॥

उ.दुम्.ब.रऽि. ल्त. बुर्. द्कोन्. ऽग्युर्.बऽि ।
मोंङस्.पऽि. मुन्.सेल्. स्ञिङ .पो. ग्सङ .बऽि. दोन् ।
सुस्.क्यङ. शेस्.प.मेद्.पर्. कुन्.ल. ग्सल्.ऽग्युर्.ब ॥

८७. स्ञिङ. गर्. ग्नस्.पऽि. दोन्.ल. द्रि.म.मेद्. ऽग्युर्. तें ।
बर्तुल्.शुग्स्. स्प्योद्.पस्. गङ . दे. म्थोङ .ब. म.यिन्. नो ॥
ऽदि.नंम्स्. ज्ञोंग्स्.ल. स्ब्योर्.बर्. नुस्.प. दे ।
यन्.लग्.थिम्.नस्. स्तोङ .प.ञिद्.दु. ग्नस् ॥

८८. क्ये. हो. ग्रोग्स्.दग्. ग्यद्. दङ . जे. रिग्स्. जि.ब्शिन्. दु ॥
गङ .गिस्. खेङस्.पर्. म्युर्.दु. थोब्. पर्.ऽग्युर् ॥
रिम्. पर्. स्ब्यद्. प. गङ . यङ . योद्.प. म.यि.न्. नो ।
छोस्. नंम्स्. थम्स्. चद्. स्तोङ . प. ञिद्. दु. रो. ग्चिग्. दङ ॥

८९. ख्योद्. क्यिस्. ज्ञोंग्स्. पर्. ऽग्युर्. बस्. थोब्. प. म. यिन्. नो ।
122a गङ. छ्. ऽदि. ल. चं ब. मेद्.पर्. तोंग्स्. प. नि ॥
द. ल्त. ञिद्. दु. ग्ञिस्. मेद्. ङेस्. पर्. ऽग्युर्.ब. यिन् ।
जि.ल्तर्. स्रिन्.बु. स्प्योद्. पस्. ब्चिङस्. पर्. गङ. ऽग्युर्. ब ॥

९०. ऽदि. नंम्स्. रो. ल. छग्स्. पस्ऽ छिङ . बर्. ऽग्युर्. प. स्ते ।
छ्ङ . छिङ. ऽदि. ल. स्. बर्. नुस्. प. गङ. गिस्. नि ॥

प्रज्ञा समाधि न चाहिये मुक्त होइ, उर्मि विना सारी पीड़ा नशै ।

८५. अजात रूपसे ग्रहण ना करै
इस प्रतिभास-निरोधमें स्फुट कल्पनासे मानस-मार्ग बनावै ।
बाहर जो मिथ्या सब ही विकल्प, पंच क्लेश के स्थानमें सब गिरा ।

८६. दूसरे यही जानि संसारजालोंसे शून्यता, उदुंवर(पुष्प) जिमि दुर्लभ ।
मोहतमनाशक गुह्य सार अर्थ को, कोई भी न जाने (सो) सब प्रकाशै ।।

८७. दोनों स्थानके अर्थ में निर्मल होइ, व्रतचर्या से जो उसे देखै नहीं ।
इनकी समाप्तिमें जोड़ सकै, सो अंग के लय से शून्यतामें वसै ।।

८८. अहो साथियो, विक्रमी वैश्य जिमि, जिसने अति शीघ्र पाया ।।
क्रमसे धोने (से)कुछ भी होवै नहीं, सारे धर्म शून्यता में एकरस (हैं) ।

८९. तू समाप्ति से पावै नहीं, जब इसमें निर्मूल कल्पना ।
अभी अद्वय निश्चित होई, जिमि कृमि जो चर्यासे वेष्ठित हुआ ।।

९०. ये रसके रागसे बंधे, इस लतामें जो खा सकै ।

ऽखोर्.लो. थम्स्.चद्. ग्र्युन्.दु. ब्स्कोर्. बर्.ऽग्युर् ब. यिन् ।
सङस्. ग्र्यम्स्. नंम्स्. क्यि. स्कु ग्सुङ. थुग्स्. ग्सल्. ब ॥

६१. ऽदि. कुन्. गङ. गिस्. यिद्. ल. म. ब्यस्. पर् ।
स्तोन्. पऽि. ब्ल. म. दों. जें. ऽजिन्. ल. ऽदुद् ॥

॥ स्कु. ग्सुङ. थुग्स्.यिद्. ल. मि. ब्यद्. पऽि. फ्यग र्ग्य.छेन्.पो. श्ऽस्. ब्य. ब. सङस्. र्ग्यस्. गञिस्. प. ल्तर्. ग्रग्स्. प. र्नल्.ऽब्योर्. गिय. द्वङ. फ्युग्. छेन्. पो. दपल्. स. र. ह. पऽि. श्ल्. स्ङ. नस्. ग्सुङ. प. ज्ऽोग्स्. सो ॥

॥ब्ल्. म. नग्. पोस्. रङ.ऽग्युर्. दु. नङ. गबऽो । गु.य.स.म.प.त.मि.थि ॥

सर्व (संसार) चक्र स्रोतमें घूमा है,

बुद्धोंके काय-वाक्-चित्त (का) प्राकट्य ।।

६१. यह सब जिसने मनमें न किया, (उस) शास्ता-गुरु वज्रधर को नमः ।।

।। इति कायवाक्चितअमनसिकार महामुद्रा (उपदेश) द्वितीयबुद्ध जिमि प्रसिद्ध महायोगीश्वर श्री सरह के श्रीमुख से भाषित समाप्त ।।

गुरु कृष्ण ने स्वयं अनुवादित किया। गु(ह्)यसमाप्तमिति ।।

---

६. दोहाकोश महामुद्रोपदेश

(भोट, हिन्दी)

६. (क) दो.ह. मज़ोद्. फ्यग्.ग्यँ. छेन्.पोऽि. मन्.ङग्*

(भोट)

122a द्पल्. दों. जें. नँल्. ऽब्योर्.म.ल.फ्यग्. ऽछल्. लो । ल्हन्. चिग्. स्क्येस् पऽि. ये. शेस्. छोस्. क्यि. स्कु. ब्दे. ब. छेन्. पो. ल. फ्यग्. ऽछल्. लो ।

१. जि. ल्तर्. द्ङोस्. दङ. द्ङोस्. मेद्. स्नङ. स्तोङ. दङ ।
ग्यु. दङ. मि. ग्यु. ग्यो. दङ. मि.ग्यो. ब ।।
थम्स्.चद्. म. लुस्. नम्.म्खऽि. रङ. ब्शिन्. लस् ।
दुस्.नँम्स्. कुन्.दु. नम्.यङ. ग्यो. ब. मेद् ।।

२. नम्.मखऽ. नम्.म्खऽ. शेस्. नि. रब्. ब्जोंद्. क्यङ ।
नम्. म्खऽि. ङो.बो. चिर्. यङ. ग्रुब्.प.मेद् ।।
योद्. दङ. मेद्. दङ. योद्.मिन्. मेद्.मिन्. दङ ।
दे.लस्. ग्शन्.दुऽङ. म्छन्. पऽि. युल्. लस्. ऽदस् ।।

३. दे. ल्तर्. नम्.म्खऽ. सेम्स्. दङ. छोस्. ञिद्. ल ।
थ.दद्. चुङ. सद्. योद्.प. म.यिन्. ते ।।
थ.दद्. मिङ. नि. ग्लो. बुर्. ब्तग्स्.प. चम् ।
दे. ल. दोंन्. मेद्. ब्जुन्. ग्यि. छिग्. तु. सद् ।।

४. छोस्.नँम्स्. थम्स्.चद्. रङ.गि. सेम्स्. यिन्. ते ।
सेम्स्.लस्. म.ग्तोग्स्. छोस्. ग्शन्. ड्डुल्. चम्. मेद् ।।
गङ.गिस्. ग्दोद्.नस्. सेम्स्.मेद्. तोग्स्.प.यिस् ।
दुस्.ग्सुम्. ग्यँल्.बऽि. द्गोङस्.प. दम्.प. ञोंद् ।।

---

* स्तन्. ऽग्युर्, शि, पृष्ठ १२२ क ३—१२४६

९ (ख) दोहाकोश महामुद्रा-उपदेश

(हिन्दी)

नमो वज्रयोगिन्यै । नमः सहजज्ञान मैकायमहासुखाय ।

१. जिमि वस्तु औ अवस्तु प्रतिभास-शून्य,
कारण औ अकारण चल औ अचल ।
तिमि सकल अशेष आकाशस्वभाव,
सब कालोंमें कभी न चल ॥

२. आकाश आकाश इति प्रोक्त भी,
आकाश-स्वभाव कुछ भी ना सिद्ध ।
है नहीं औ न है-न नहीं,
इससे अन्यत्र भी निमित्त-विषयसे परे ॥

३. जैसे आकाश चित्त औ धर्मतामें,
भेद कुछ भी है नहीं ।
भेद नाम आकस्मिक गौण मात्र,
उसे अर्थहीन मिथ्यावाक्य में डालै ॥

४. सारे ही धर्म अपना चित्त (है),
चित्तसे अतिरिक्त अन्य धर्म कुछ भी नहीं ।
जिसने प्रथम से अचित्त कल्पना की,
(उसने) त्रिकाल जिने[1]के अभिप्राय पा लिया ।

---

१ बुद्ध

५. छोस्. क्यि. स. म्तोग्. चेस्. योङ्स्.सु. ग्दग्स् ।
दे. यङ. लोग्.पऽि. छोस्. ग्शन्. म.यिन्. ते ।।
ग्सोद्.नस्. ल्हन्. चिग्.स्क्येस्.पऽि. रङ. ब्शिन्. नो ।
122b दे.यि. दे.ञिद्. ब्स्तन्.दु. योद्. मिन्. ते ।।

६. ब्र्जोद्.मेद्.पस्. सुस्.क्यङ. गो.ब. मेद् ।
गल्.ते. ब्दग्.पो. योद्. न. नोर्. योद्. दे ।।
ये.नस्. ब्दग्.मेद्. दे.ल. चि. शिग्. योद् ।
सेम्स्. योद्. ग्युर्. न. छोस्.कुन्. योद्. रिग्स्. ते ।।

७. सेम्स्.मेद्.प.ल. छोस्. शिग्. सु.यिस्. तोग्स्. ।
सेम्स्. दङ. छोस्.सु. स्नङ. ब. थम्स्.चद्. नि. ।।
ब्चल्. न. मि. ञैद्. छोल्. म्खन्. गोङ.नस्. मेद्. ।
मेद्.प. दुस्.गसुम्. म.स्क्येस्. मि. ऽगग्.पस्. ।।

८. दे. ञिद्. ग्शन्.दु. ऽग्युर्.ब. मेद्.प. नि. ।
रङ.ब्शिन्. ब्दे.ब. छेन्.पोऽि. ग्नस्.लुग्स्. यिन्. ।।
दे.फ्यिर्. स्नङ.ब. थम्स्.चद्. छोस्.क्यि. स्कु. ।
ऽग्रो.ब.सेम्स्.चन्.नँम्स्. नि. सङस्.ग्र्यस्. ञिद्. ।।

९. ऽदु.ब्येद्.लस्. कुन्. ये.नस्. छोस्.क्यि. द्ब्यिङस्. ।
ब्तग्स्.पऽि. छोस्.नँम्स्. रि.बोङ. वँ. दङ.ऽद्र. ।।
क्ये.म. ञि.म. स्प्रिन्.ब्रल्. ऽोद्.स्ेर्. कुन्.ख्यब्. क्यङ. ।
मिग्. मेद्. नँम्स्. ल. मुन्. प. नँम्स् सु. स्नङ. ।।

१०. ल्हन्.चिग्.स्क्येस्.पस्. कुन्.ल. ख्यब्.ग्युर्. क्यङ्. ।
र्मोङस्.प. दग्.ल. दे. ञिद्. शिन्. तु. रिङ. ।।
ऽग्रो.ब.नँम्स्.क्यिस्. सेम्स्.मेद्. म. र्तोग्स्. पस्. ।
ब्तग्स्.पऽि. सेम्स्.क्यिस्. सेम्स्.ञिद्. रब्. तु. ब्चिङस्. ।।

११. जि.ल्तर्. ग्दोन्.ग्यिस्. ब्र्लब्स्.पऽि. स्म्योन्.प. दग्. ।
द्बङ.मेद्. दोन्.मेद्. स्दुग्.स्ङल्. ब्येद्.प. ल्तर्. ।।

५. धर्म-फरंडक इति परिहास¹, सो भी मिथ्या धर्म (छोड़) अन्य नहीं।
आदि से सहज स्वभाव (है) उसका, सोई उसके शासन में नहीं ।।

६. अकथ को कोई ना जानै, यदि पति है (कहै) तो भ्रम है।
आदितः अनात्मा वहाँ क्या है, चित्तसत्ता हो तो सर्व-धर्म सत्ता-युक्त ।।

७. चित्त के अभाव में धर्म किसने समझा, चित्त औ धर्म में सारा प्रतिभास ।
ढूँढे तो न लहै गवेषक पूर्व से नहीं, अभाव त्रिकाल (में) अजात अनिरुद्ध ।।

८. सोई अन्यत्र निर्विकार, (उसका) स्वभाव महासुख की व्यवस्था है।
अतः सर्व प्रतिभास धर्मकाय (है), जगत् प्राणी (सारे हैं) बुद्ध ही ।।

९. संस्कार सारे आदि से धर्म-धातु, गौण धर्म (हैं) शशश्रृंग से ।
अहो निरभ्र में सूर्य किरण (से) सर्वव्यापी तोभी, नेत्रहीनों को
अन्धकार प्रतिभासै ।।

१०. सहज सब में व्याप्त भी, मूढ़ों को सोई अति दूर ।
सांसारी अचित्त को न समझ (अतः) गौण चित्त से चित्त अतिबद्ध ।।

११. जिमि आग्रह से शिक्षा-उन्मत्त, अनधिकार अनर्थक दुख करैं।

१ गद्. गस् २ उपदेश

द्ङोस्. ऽजिन्. नंम्. तोंग्. ग्दोन्.छेन्. सिन्.प.यि. ।
स्क्ये.बो. दोन्.मेद्. स्दुग्.ब्स्ङल्. ऽबऽ. शिग् ब्येद्. ॥

१२. ख. चिग् ब्लो.यि. द्ब्ये.बस्. मोंङस्.नंम्स्. ब्चिङस्. ।
ब्दग्.पो. ख्यिम्.दु. ब्शग्.नस्. ग्शन्. दु. छोल्. ॥
ख.चिग्. ग्सुग्स्. बर्न्न्.दग्.ल. ग्दोन्. दु. ऽजिन्. ।
ख.चिग्. चं.ब. बोर्.नस्. लो. ऽदब्. ऽब्रेग्. ॥

१३. जि.ल्तर्. ब्यस्. क्यङ. ब्स्लुस्.प. म. छोर्. रो. ।
क्ये. हो. बुस्.ब.नंम्स्.क्यिस्. दे.ञिद्. म.रिग्. क्यङ. ॥
दे. ञिद्. ङङ.लस्. ग्योस्.मेद्. ङ.यिस्. तोंग्स्. ।
ङ.यिस्. यिर्. थोग्. (प.) म्थऽ. शेस्. ग्युर्. पस्. ॥

१४. ङ.यिस्. म्थोङ. रङ.ञिद्. ग्चिग्. पुर्. लुस्. ।
ग्चिग्.पो. ञिद्.ल. ब्ल्तस्.पस्. ग्चिग्. म. म्थोङ. ॥
म्थोङ.ब्य. म्थोङ. ब्येद्. ब्रल्.बस्. ब्र्जोद्. दु. मेद्. ।
ब्जोद्.दु. मेद्.प. सु.यिस् गो. बर्. ऽग्युर्. ॥

१५. ग्ञुग्.मऽि. यिद्. ल. गङ.छे. स्ब्यङस्. ग्युर्. प. ।
दे.छे. रि. ख्रोद्. ङ.यि. तोंग्स्.पर्. ऽजुग्. ॥
सेङ.गेऽि. ऽो.म. स्नोद्.ङन्. फल्.बर्. मिन्. ।
जि.ल्तर्. नग्स्.न. सेङ.गेऽि. ङ.रो.यिस्. ॥

१६. रि.दग्स्. फ.मो. थम्स्.चद्. स्क्रग्.ग्युर्. क्यङ. ।
123a सेङ.फ्रुग्.नंम्स्. नि. द्गऽ.बस्. ब्ग्र्युग्.प. ल्तर्. ॥
ग्दोद्.नस्. म.स्क्येस्. ब्दे.छेन्. ऽदि. ब्स्तन्.पस्. ।
मोंङस्.प. लोग्.तोंग्.चन्.नंम्स्. स्क्रग्. ग्युर्. क्यङ. ॥

१७. स्कल्.ल्दन्. रब्.तु.द्गऽ. बस्.पु. सिङ. ब्येद्. ।
क्ये.हो. म.येङस्. सेम्स्.क्यिस्. रङ. ल. ल्तोस्. ॥
रङ.गि. दे. ञिद्. रङ.गिस्. तोंग्स्.ग्युर्. न. ।
येङस्.पऽि. सेम्स्. क्यङ. फ्यग्.ग्यं.छेन्.पोर्. ऽछर्. ॥

वस्तुग्राही विकल्प महाआग्रह-बद्ध, पुरुष निरर्थक केवल दुख करै ।।

१२. कोई बुद्धि-भेद से मूढ़ों को बांधैं, स्वामी घर में रहै और अन्यत्र ढूंढ़े ।
कोई प्रतिरूपों में आग्रह पकड़ै, कोई मूल छाड़ि पत्ते को सींचै ।।

१३. की गई बंचना जिमि ना वेदन करै, अहो शिशु सोई ना जानै ।
हंससे अकंपित सोई मैं समझूं, मैंने आदि अन्त जाने ।।

१४. मैंने स्वयं ही अकेले देखा शरीर, अकेले में ही देखते क न दीखै ।
दृश्य-दर्शन रहित (होने) से कथन में नहीं (आवै), अकथ को किसने जाना ।।

१५. अपने मन में जब घोष हुआ, तब शबर मेरी कल्पना में पइठा ।
सिंहिनी का दूध कुपात्र में (रखना) ठीक नहीं,
जिमि वन में सिंह की गर्जन से ।।

१६. सारे छोटे मृग भीत होवें, सिंह शिशु आनन्द से दौड़ें जिमि ।
प्रथमतः यह अज महासुख बताने से, मूढ़ मिथ्या तार्किक भीत होवे ।।

१७. भव्य प्रमुदित रोम हर्ष करै, अहो अनुद्धत चित्त अपने ही अपने देखै ।
अपने सोई अपने से समझे तो, उद्धत चित्त भी महामुद्रा में उदित होइ ।।

१८. म्छन्म. रङ.ग्रोल्. ब्दे.ब. छेन्.पोऽि. दङ. ।
र्मि.लम्.दग्.गि. ब्दे. दङ. स्दुग्.ब्स्ङल्. कुन् ।।
सद्.पऽि. दुस्.न. रङ.ब्शिन्.मेद्.पऽि. फ्यिर्. ।
रे. दङ. द्गोस्.पऽि. ब्सम्.पस्. कुन्. ब्स्लङ. नस्. ।।

१९. द्गग्. दङ. स्ग्रुब्.पऽि. ब्सम्.प. सु. शिग्. ब्येद्. ।
ऽखोर्. दङ. म्य.ङन्.ऽदस्.पऽि. छोस्.नंम्स्. कुन्. ।।
दे. ञिद्. म्थोङ. बस्. रङ. ब्शिन्. मेद्.पऽि. फ्यिर्. ।
रे. दङ. द्गोस्.पऽि. ब्लो. नि. सद्. ग्युर्.पस्. ।।

२०. स्पङ. दङ. ब्लङ. बऽि. बद्. चोंल्. चि. ब्यर्. योद्. ।
स्नङ. ग्रग्स्. थम्स्. चद्. स्ग्यु.म. स्मिग्.र्ग्यु. दङ. ।।
ग्सुग्स्. ब्र्ञन्. दङ. म्छुङ्स्. द्ङोस्.पो. म्छन्. म. मेद्. ।
स्ग्यु.मर्. स्नङ.म्खन्. सेम्स्. ञिद्. नम्.म्खऽि. स्ते. ।।

२१. म्थऽ.ब्रल्. द्बुस्.मर्. सुस्. क्यङ. शेस्. मि. ऽग्युर्. ।
गङ.गा. ल.सोग्स्. छु.क्लुङ. स्न.छोग्स्. प. ।।
ब. छ.चन्.ग्यि. र्ग्य.म्छोर्. रो.ग्चिग्. ल्तर्. ।
ब्तग्स्.पऽि. सेम्स्. दङ. सेम्स्. ब्युङ. स्न.छोग्स्. कुन्. ।।

२२. छोस्.क्यि. द्ब्यिङ्स्.सु. रो.ग्चिग्. शेस्.पर्. ब्योस् ।
गङ. शिग्. नम्. म्खऽि. खम्स्. नि. योङ्स्.ब्चल्. क्यङ ।।
म्थऽ. दङ. द्बुस्.मेद्. म्थोङ.ब. योङ्स्.सु. ऽगग् ।
दे.ब्शिन्. सेम्स्. दङ. छोस्. नि. योङ्स्.ब्चल्. बस् ।।

२३. स्ञिङ.पो. ङुल्. चम्. र्ञेद्.पर्. मग.युर्. ते ।
योङ्स्. सु. छोल्.बऽि. सेम्स्. क्यङ. मि.द्मिग्स्.पस् ।।
चि. यङ. म. म्थोङ. ब. ञिद्. दे. म्थोङ. यिन् ।
जि.ल्तर्. ग्सिङ्स्.ल.ऽफुर्.बऽि. ब्य.रोग्. नि ।।

२४. फ्योग्स्.नंम्स्. ब्स्कोर्.शिङ. स्लर्. यङ. दे. रु. ऽबब् ।
ऽदोद्.पऽि. सेम्स्.क्यिस्. ब्स्तन्.पऽि. जेस्. ब्चद्. क्यङ ।।

१८. स्वयं मुक्त निमित्त महासुख और, स्वप्नों के सुख औ दुख सारे।
प्रातः काल स्वभाव-रहित होने से, आशा औ अपेक्षा की बुद्धि नष्ट होइ ।।

१९. निरोध औ साधन में चित्त कौन करै, संसार औ निर्वाण सारे धर्म।
सोई देखने से निःस्वभाव के लिये, आशा औ उपेक्षा की बुद्धि नष्ट होइ ।।

२०. त्याग-ग्रहण का यत्न-व्यायाम करे क्या होवे,
प्रतिभास प्रसिद्धि सारी माया-मरीचि (हैं)।
प्रतिबिंब-तुल्य निर्निमित्त वस्तु, माया प्रतिभासी चित्त ही आकाश-सम ।।

२१. अन्तरहित मध्य को कोई भी न जान पाया,
गंगा इत्यादि नाना नदी,
लवण-सागर में एकरस (होइ),
जिमि, गौण चित्त और चैतसिक नाना सारे,

२२. धर्मधातुमें एकरस जानो,
जिमि आकाशधातु परिगवेषै भी अन्त और मध्य-रहित में दृष्टि रुकै।
तिमि चित्त औ धर्म परिगवेषै तो सार अणु-मात्र वहां ना लहै ।।

२३. परिगवेषक चित्त भी ना मिलै, कुछ भी ना देखै सोई देखना है।
जिमि नावमें उड़ता काक,

२४. दिशाओंमें घूमि पुनः वहां उतरै ।।
राग चित्तसे शासन अनुच्छिन्न भी, प्रथम चित्त निज में ही उतरै।

दङ.पोऽि. सेम्स्. ञिद्. गञ्ुग्.म. ञिद्.दु. ऽबब् ।
क्येन्.ग्यिस्. मि.ऽगुल्. रे.बऽि. यि. छद्. प ।।

२५. दोग्स्.पऽि. स्कुग्स्. स. शिग्स्.पस्. दों.जें.सेम्स् ।
चं.ब. छोद्.पऽि. सेम्स्. ञिद्. नम्.म्खऽ.ऽद्र ।।
स्गोम्.दु. मेद्.पस्. यिद्.ल. मि. ब्य. स्ते ।
थ.मल्. शेस्.प. रङ. लुग्स्. ग्ञ्ुग्.म. ल ।।

२६. ब्चोस्.मऽि. द्मिग्स्.प. दग्.गिस्. ब्स्लङ.ब. दे ।
123 a रङ.ब्शिन्. दग्.पऽि. सेम्स्.ल. ब्चोस्. मि.द्गोस् ।।
म. ब्सुङ. म.ब्तङ. रङ.द्गऽ.ञिद्.दु. शोग् ।
गल्.ते. म.तोंग्स्. ब्लो.ल. स्गोम्.ग्र्यु. मेद् ।।

२७. तोंग्स्.प.चन्.ल. ब्स्गोम्.ब्य. स्गोम्.ब्येद्. मेद् ।
जि.ल्तर्. नम्.म्खस्. नम्.म्खऽ. द्मिग्स्.सु. मेद् ।।
दे.ल्तर्. स्तोङ.पस्. स्तोङ.प. ब्स्गोम्.दु. मेद् ।
ग्ञिस्.मेद्. शेस्.पस्. छु. दङ. ऽो.म. ल्तर् ।।

२८. स्न. छोग्स्. रो.ग्चिग्. ब्दे.छेन्. ग्र्युन्. छद्. मेद् ।
दि.ल्तर्. दुस्.ग्सुम्. नंम्.प. थम्स्.चद्. दु ।।
यिद्.ल्. ब्य.ब.मेद्. चिङ. म.ब्रल्. ग्ञ्ुग्. मऽि. दङ ।
दे. ञिद्. स्क्योङ. ल. स्गोम्. शेस्. थ.स्ञद्. ग्दग्स् ।।

२९. लुङ. नि. मि. ब्सुङ. यिद्. नि. मि. ब्चिङ. बर् ।
म. ब्चोस्. शेस्.प. बु.छुङ.ल्त.बुर्. शोग् ।।
द्रन्. तोंग्. ब्युङ. न. दे. ञिद्. रङ.ल. ल्तोस् ।
छु. दङ. लंब्स्. ग्ञिस्. थ. दद्.म.तोंग्स्. शिग् ।।

३० यिद्.ल. मि. ब्येद्. फ्यग्.ग्र्य.छेन्. पो. ल ।
स्गोम्.ग्र्यु. ङुंल्. चम्. मेद्.पस्. मि. ब्स्गोम्. स्ते ।।
स्गोम्.मेद्. दोन्. दङ.ब्रल्.मेद्. स्गोम्.पऽि. छोग् ।
ग्ञिस्.मेद्. ल्हन्.चिग्. ब्दे.ब.छेन्.पोऽि. रो ।।

प्रत्यय द्वारा अकम्प आशा में (चित्त-) लयन ॥

२५. शंका राजपथ भूमि विचारसे[१] वज्रसत्त्व तीक्ष्ण-छेदक चित्त खसम ही ।
अभावना मनमें ना करै, इत्वर जानना निजमें स्वमर्यादा ॥

२६. कृत्रिम अवलम्बनों से उसे ना उठा,
स्वभाव शुद्ध चित्तको पकाना ना चाहिये ।
ना पकड़ै ना छोड़ै स्वच्छन्द ही रहै,
यदि निर्विकल्प बुद्धि में भावना करै नहीं ॥

२७. कल्पनावान्को ध्येय औ धारणा नहीं,
जिमि आकाशका आकाश आलंबन नहीं ।
तिमि शून्यतासे शून्यता भावना नहीं, अद्वय ज्ञानसे नीर-क्षीर इव ॥

२८. नाना एकरस महासुख-स्रोत अनुच्छिन्न, तिमि त्रिकाल सर्व प्रकार ।
अमनसिकार अविरहित निज औ, सोई रक्षामें भावना इति व्यवहार गौण ।

२९. पवन ना गहै मन ना बांधै, ज्ञान ना पकाये शिशु जिमि रहै ।
स्मृति तर्क उपजै तो सोई अपने में देखै,
जल औ बेला दो भिन्न ना समझै ॥

३०. मनमें ना करै महामुद्रा को, भावना अभाव से अणुमात्र ना भावै।
अभावना निरर्थक नहीं भावना उत्तम, अद्वय सहज महासुखका रस ॥

३१. जि.ल्तर्. छु.ल. छु. ग्शग्. रो.ग्चिग्. ल्तर् ।
जि.ब्शिन्. ङङ.दु दे.ब्शिन्. ग्नस्.पऽि. छे ।।
द्मिग्स्.ऽजिन्. शेन्.पऽि. यिद्. नि. रब्.तु. शि ।
क्ये.हो. ग्ञिस्.मेद्. ग्ञुग्.मऽि. नॅल्.ऽब्योर्. गङ. दे. ल ।।

३२. स्पङ. दङ. ब्लङ. बऽि. द्ङो.स्.पो. चि. शिग्. योद् ।
ङस्. नि. छोस्.कुन्. म. ब्तङ. बस् ।।
बु. ख्योद्. ऽदि. यिस्. ब्य.ब. मि. स्म्रऽो ।
जि.ल्तर्. नोर्.बु. दे. द्ङो.स्.मेद्.प. ल्तर् ।।

३३. नॅल्.ऽब्योर्. स्प्योद्.प. दे. द्ङोस्.मेद्.प. स्ते ।
दु.ब्येद्. स्न.छोग्स्. चल्.चोल्. गङ. स्म्रस्. क्यङ ।।
नॅल्.ऽब्योर्. ब्लो. नि. ग्चिग्.लस्. मि. ऽदऽो ।
ग्चिग्. ञिद्. न. नि. ग्चिग्. क्यङ. योद्. मिन्.पस् ।,

३४. नॅम्.प. स्न.छोग्स्. चॅ.ब. ब्रल्.ग्युर्. ते ।
स्म्योन्.प. ब्शिन्. दु. चॅस्.मेद्. यन्.प.ल ।।
ब्यर्.मेद्. स्प्योद्.प. बु.छुङ. ब्शिन्.दु. ग्नस् ।
ग्रे.म. स्ग्रिद्.पऽि. ऽदम्.स्क्येस्. पद्.म. ल्त.बुऽि. सेम्स् ।।

३५. ञोस्.प. गङ.गि गङ.ल. गोस्.प. मेद् ।
स. शिङ. ऽथुङ. ल. ग्ञिस्. स्प्रोद्. ब्दे. ब. दङ ।।
गल्.ते. लुस्. सेम्स्. रब्.तु.ग्दुङ. ग्युर्. दङ ।
नॅम.प. स्न.छोग्स्.गङ. ल. स्प्योद्. ग्युर्.प ।।

३६. गङ.गिस्. म.ब्चिङस्. म.ग्रोल्. गोस्.प. मेद् ।
तॅग्स्.पऽि. रङ. स्प्योद्. चिस्.मेद्. दङ. दे.नस् ।।
124a मॅङस्.पऽि. ऽग्रो.ब. ञम्.थग्. म्ङोन्. ग्युर्. छे ।
मि. ब्सोद्. स्ञिङ.जॅऽि. शुग्स्.क्यिस्. म्छिम्.ब्युङ ।।

३७. ब्दग्. ग्शन्. ब्स्लोग्.नस्. फ़न्.प. ञिद्. ल. ऽजुग् ।
दोन्.ब्तॅग्स्.प. न. द्मिग्स्.प. ग्सुम्.ब्रल्.बस् ।।

३१. जिमि जलमे जल डाले रस एकसा, जैसे चंचल तिमि स्थिरकाले।
आलम्बनमें आसक्त मन प्रशान्त, अहो, अद्वय निज जो योगी उसे ॥

३२. छोड़ने-लेने की वस्तु क्या है, मैंने सर्व धर्म ना छोड़ा।
बच्चे अतः तू क्रिया मत कहै, जिमि वह मणि अवस्तु तिमि ॥

३३. योगचर्या सो अवस्तु (है), नाना संस्कार जो कहना भी वेकार।
योगबुद्धि एकसे ना अतीत, एक तो एक भी है नहीं।

३४. नाना विधमूल-रहित होइ, पागल जिमि अनगिनत विनु स्वानंद में।
चर्या निष्क्रिय शिशु जिमि रहै, अहो भव पंकमें उपजै पद्म सा चित्त ॥

३५. जिसका दोष जिसको चाहिये नहीं, खाओ पीओ दोनों दान औ सुख।
यदि काय-चित्त प्रतप्त, नानाविध जहां चर्या होइ ॥

३६. जिसे न बंधन औ न-मोक्ष ना चाहिये,
कल्पनाकी अगणित स्व-चर्या उससे।
मूढ़ जगत् बेचारा साक्षात्कार-काले, अ-च्युत करुणा-बलसे न अ-तृप्त गया ॥

३७. स्व-पर निवारि हित में ही निमग्न हो,
अर्थप्रत्यवेक्षण तो तीन आलंबन-रहित।

---

१. स्कुगुस्. स. शिगुस्. पस

यङ.दग्. म. यिन्. मि.लम्. स्ग्यु.ऽद्र. स्ते ।
छगस्. थोगस्.[1] ब्रल्.बस्. द्कऽ.शिङ. स्क्य.मेद्. प. ॥

३८. स्ग्.यु.म. म्खस्.प. स्ग्यु.मऽि. दोन्. ब्येद्. मछुङ्स् ।
ग्दोद्.नस्. दग्.प. नम्.म्खऽि. रङ.ब्शिन्. ल॥
स्पङस्. दङ. थोब्.पऽि. द्ङोस्.पो. ऽगऽ. यङ. मेद् ।
यिद्.ल. ब्यर्.मेद्. फ्यग्.ग्र्यॆ. छेन्.पो. नि ॥

३९. ऽब्रस्. बु. गङ.दुऽङ. रे. ब. म. ब्येद्. चिग् ।
रे. बऽि. सेम्स्.[2] नि. ग्दोद्.नस्. म. स्क्येस्. पस् ॥
स.पङस्. दङ. थोब्.पऽि. द्ङोस्.पो. चि. शिग्. योद् ।
गल्.ते. गङ.गिस्. थोब्.पऽि. द्ङोस्.पो. चि. शिग्. योद् ॥

४०. गल्. ते. गङ. गिस्. थोब्. पऽि. द्ङोस्. योद्.न ।
ब्स्तन्.पऽि. फ्यग्.ग्र्यॆ. र्नम्.ब्शिस्. चि. शिग्. ब्येद् ॥
जिज. ल्तर्. रि.दग्स्. ऽख्रुल्.पस्. ग्दुङस्.प.यिस्[3] ।
स्मिग्. ग्र्युऽि. छु.ल. रब्.तु. ब्ग्र्युग्.प. ल्तर् ॥

४१. र्मोङस्.प. गङ.शिग्. ऽदोद्.पस्. रब्.ग्दुङस्.पस् ॥
जि.ल्तर्. ऽबद्. क्यङ. स्लर्. नि. रिङ. बर्. ऽग्युर् ॥
ये. नस्. म. स्क.येस्. रङ. ब.शिन्ऽर्नम्. दग्. पस् ।
दे.लस्. ख्यद्.पर्. चुङ.सद्. योद्. मिन्. ते ॥

४२. ब्तग्स्.पऽि. यिद्. नि. द्ब्यिङस्. सु.[4] दग्. ऽग्युर्. प ।
दे. ल. दोर्.जे. ऽछङ. शेस्. ब्तग्स्.प. चम् ॥
जि.ल्तर्. ए.थङ. स्कम्.पोऽि. स्मिग्.ग्र्यु. दग् ।
छुर्.स.नङ. छु. नि. ग्ञिस्.सु.मेद्.प. ल्तर् ॥

४३. ब्सोद्.नस्. दग्.प. ब्तग्स्.पऽि. यिद्. सङस्. प ।
दे.ल. तॅग्.छद्. ग्ञिस्.सु. ब्जोद्.दु. मेद् ॥
यिद्.ब्शिन्. नोर्.बु. द्पग्.ब्सम्.[5] शिङ. ब्शिन्. दु ।
स्मोन्.लम्. द्बङ.गिस्. रे. ब. योङस्. स्कोङ. ब ॥

सक्यग् नहीं स्वप्नमाया सदृश,
काम उपादान से रहित कठिन क्षेत्र उत्पन्न नहीं ॥

३८. मायाकुशल के माया-अर्थ करने तुल्य, प्रथम से शुद्ध आकाश स्वभाव सदृश।
त्यक्त औ प्राप्त वस्तु कोई नहीं, अमनसिकार महामुद्रा ॥

३९. किसी फल में भी आंशा ना करै, आशा-चित्त प्रथम से न उपजावै तो
त्यक्त औ प्राप्त वस्तु क्या है, जिसके द्वारा प्राप्त वस्तु क्या हो ॥

४०. यदि जिसके द्वारा प्राप्त वस्तु है तो, शासन की चार विध मुद्रा क्या करै।
जिमि मृग भ्रमसे सन्तप्त ? (माया) मरीचि जल में बहुत भागै ॥

४१. मूढ जो राग से सन्तप्त, निरत भी पुनः जिमि दूर होइ।
आदि से अजन्मा स्वभाव विशुद्ध, उससे विशेष कुछ है नीं ॥

४२. गौण मन धातु में शुद्ध भूत, वहाँ वज्रपाणि इति गौण मात्र।
जिमि शुष्क मरु की शुद्ध मरीचिका, जल प्रतिभासी जल अद्वय (है) ॥

४३. आदि से शुद्ध गौण मन शुद्धेति, वहाँ नित्य उच्छेद दोनों कहने को नहीं।
चिन्तामणि कल्पलता सदृश, अधिष्ठान वश आशा परिपूरै।

४४. दे. यङ. ऽजिग्.र्तेन्. थ.स्ञद्. कुन्.जोब्. स.ते ।
दम्. पऽि. दोन्. दु.ऽगऽ यङ दोन्. म. यिन् ॥

दो. ह. म्ज़ोद्. चेस्. ब्य. फ्यग्.र्ग्य. छेन्. पोऽि. मन्. ङग्. द्पल्. रि. ख्रोद्. प. छेन्
पोस्. स. र. हऽि. शल्. स.ङ. नस्. मजद्. प. जोंग्स्.स सो ॥

र्ग्य. गर्. ग्यि. म्खन्. पो. श्री. वै. रो. च:न. र. क्षि. तस्. रङ.ऽग्युर्. दु. म्जद्.पऽो ॥

---

४४. सो भी जगव्यवहार संवृति (है), परमार्थ में कोई भी अर्थ नहीं।

॥इति दोहाकोष महामुद्रोपदेश महाशबर सरह के श्रीमुखसे रचित समाप्त॥

भारत के उपाध्याय श्री वैरोचनरक्षित ने स्वयं अनुवादित किया॥

---

१०. द्वादश उपदेशगाथा

(भोट और हिन्दी)

१०. मन्.ङग्. ब्झिग्स्.सु. ब्चद्.प. ब्चु.ग्ञिस्.प.

(भोट)

द्पल्.दो.र्जे.सेम्स्.द्पऽ.ल. फ्यग्.ऽछ़ल्.लो ।।

124b १. ब्यङ. छुब्. सेम्स्.[७]नि. शि. ब. स्ते ।
दे. ल. ग्नस्. प. गङ. यिन्. प ।।
नम्. म्खऽ. ब्शिन्. दु. शि. बर्. ऽग्युर् ।
लुस्. दङ. यिद्. लस्. ब्युङ. ब. यि ।।

२. दे.ल. चुङ.सद्. ऽग्युर्.ब. मेद् ।
यङ.दग्. ये.शे.स्.लस्. ऽदस्.प ।।
र्नम्.पर्. मि.र्तोग्. शि.बर्. ऽग्युर् ।
र्तोग्.प. शि.बस्. सङस्.ग्र्यस्. ञिद् ।।

३. दे.ञिद्.[१] र्नम्.प.म्ख्येन्. ञिद्. दो ।
द्ङोस्.पो. द्ङोस्.पो. म्थोङ.नस्. नि ।।
दे.ल्तर्. र्नम्.र्तोग्. गङ. ब्युङ.ब ।
दे.नि. र्तोग्.मेद्. ये.शेस्. यिन् ।।

४. ऽग्रो.ब. थ.दद्. ऽजिन्. फ्यिर्. रो ।
दङोस्.पो. कुन्.ग्यि. रङ.ब्शिन्. नो ।।
थम्स्.चद्. दु. नि. सो.सोर्. ग्नस् ।
दे.दग्.ल. नि. ख्यद्.पर्.दु ।।

५. ङ.र्ग्यल्.मेद्.[२] चिङ. र्मोङस्.प. मेद् ।
दे. फ्योग्स्.ग्चिग्. प . द्ङोस्.पो. ल ।।

---

१. स्तन्.ऽग्युर्. र्ग्युद्, शि, पृष्ठ १२४ क७—१२५क. ३

१०. द्वादश उपदेशगाथा

(हिन्दी)

नमो वज्रसत्त्वाय

१. बोधिचित्त शान्त है, वहाँ रहनेवाला जो।
आकाश जिमि शान्त होइ, काया औ मन से भये का।

२. वहाँ कुछ भी विकार नहीं, सम्यग् ज्ञान से परे।
निर्विकल्प शान्त होइ, कल्पना शान्ति से (है) बुद्ध ही।।

३. सोई प्रकार–विज्ञता, वस्तु वस्तु देख कर।
तिमि जो विकल्प (उत्पन्न) होइ, सोई निर्विकल्प ज्ञान है।।

४. जग (के) भेद ग्रहण के कारण, सब वस्तु का स्वभाव (है)।
सब में पृथक् रहे, उनके विशेष में (कर)।।

५. निरहंकारी मूढ नहीं, सो एकपक्षी वस्तु को।

ब्दग्.तु. ऽजिन्.प. जि.ल्तर्. गङ. ब्युङ.ब ।
दे. नि. र्तोग्.मेद्. ये. शेस्. यिन् ।।

६. दुद्.ऽग्रो. ल.सोग्स्. रङ.ब्शिन्. नो ।
फ्योग्स्. ग्चिग. चम्.लस्. गङ. ब्युङ. ब ।।
दे.यि. ङो.बोर्. ब्शद्.पर्. ब्य ।
यङ. दग्. सेम्स्.क्यिस्. ग्सुङ. बर्. व्योस् ।।

७. स्तग्. नि. फ़ुग्. न.[3] ग्नस्. प. दङ. ।
स्वल्. प. स्तोङ. प. छेन्. पो.दङ ।।
ब्यि. ल. ब. स्पु. ल्दङ. ब. दङ. ।
ब. लङ. ल. सोग्स्. लुस्. पो. स्प्रुग् ।।

८. स्बुल्. ल. ब्सऽ. ब. मेद्. प. दङ् ।
ब्य. नंम्स्. म्खऽ. ल. ऽग्रो. ब. दङ ।।
स्रिन्. बु. मे. ख्येर्.ऽोद्.ऽफ्रो. दङ ।
ङं.मो. स्ब्रुल्. नंम्स्. ऽगुग्स्.प. दङ ।।

९. मं.ब्य. स्कोम्. लस्. गं.यल्.ब.दङ ।
बुङ. बस्. दुग्. नंम्स्. सोस्.प. दङ ।।
छु. ब्यस्. द्बङ. पो. ब्र्ङम्स्.प. दङ ।
सेङ. गे. ऽजिग्स्.प.मेद्.प.दङ।।

१०. ऽुग्. पस्. म्छन्. मऽि. म्थोङ. ब. दङ ।
ब्य. र्गोद्. रिन्. छेन्. र्तोग्स्.प. दङ ।।
स्ब्रुल्. ग्यि. दुग्. नि. ब्येद्. प. दङ ।
मं. ब्यस्. दुग्. नंम्स्. स. ब.[5] दङ ।।

११. दुर्. प. म. ऽोङस्. शेस्. प. दङ ।
नि. छे. छिग्स्. ल. म्खस्. प. दङ ।।
स्ब्रङ. बुस्. जेंस्. नंम्स्. स्दुद्. प. दङ ।
ऽदुद्. ऽग्रो. ल. रङ. रिग्. ऽग्रो ।।

आत्मग्रहण-सा जो हुआ, सो निर्विकल्प ज्ञान है ।।

६. पशु इत्यादि स्वभाव एकपक्ष मात्र से जो हुआ ।
उसका (स्व) भाव कथनीय, सम्यक् चित्त से कथन कर ।।

७. बाघ गुफा में बसता औ, मेंडक महाशून्य (में) ।
मूष कंबललोम उडै औ, गौ इत्यादि शरीर धोवै ।

८. साप का खाना नहीं औ, चिडियोंका आकाशमें जाना ।
जुगनू की स्फुट किरण औ, ऊँट साँपों (का) आमंत्रण ।।

९. मोर प्यास विजयी औ, भ्रमर विषों को खाता ।
जलपक्षी (बगला) का इन्द्रिय-संयम और, सिंह का निर्भय होना ।।

१०. उल्लू का रात में देखना औ, गिद्ध का रत्न समझना ।
साँपका विष बनाना औ, मोर का विषों का खाना ।।

११. चकवे का भविष्य जानना औ, तोतेका शब्द में पण्डित (होना) ।
मधुमक्खी का मधु-संचयन औ, तिर्यक् इत्यादि का स्वसंवेदन ज्ञान ।।

१२. ङङ. पस्. छु. दङ. ऽो. म. ब्येद् ।
बुङ. बऽि. स्कद्. नि. शिन्. तु. स्ञान् ॥
छु. स्क्यर्. म्छिल्. मस्. से्म्स्. चन्. ऽजिन् ।
स्बुल्. ग्यि. मिग्. गिस्. थोस्. प. दङ ॥

१३. रि. दग्स्. लस्. नि. ग्ल. र्चि. ऽब्युङ ।
गु. नस्. नि. ञिद्. मिग्. गिस्. स्नोम् ॥
छु. यि. नङ. न. ग्नस्. पऽि. ञ ।
स्नोग्. दङ. चर्ोल्. बस्. ऽगोग्. पर्. व्येद् ॥

१४. छुल्. ङन्. ब्स्लस्. प. ब्रम्. से. यिस् ।
ये. शेस्. म्छोग्. तु. थल्. बर्. ऽग्युर् ॥

125 a स्तग्. ल. सोग्स्. पऽि. सोग्. छग्स्. कुन् ।
स्ङ. मऽि. बग्. छग्स्. लस्. ब्युङ. बऽि ॥

१५. रङ. ब्शिन्. योन्. तन्. ऽब्युङ. बर्. ऽग्युर् ।
दे. दग्. ऽजिग्. र्तेन्. ये. शेस्. चन् ॥
द्कऽ. थुब्. म. यिन्. ग्रोल्. ब. मिन् ।
स्ङ. मऽि. बग्. छग्स्. लस्. ब्युङ. बऽि ॥

१६. दे. दग्. सो. सोर्. ग्नस्. प. यिन् ।
दे. चम्. ये. शेस्. यिन्. न. नि ॥
दुद्. ऽग्रो. नेम्स्. क्यङ. ग्रोल्. बर्. ऽग्युर् ।
दे. ल्तर्. शेस्. ते. शेन्. स्पङस्. नस् ॥

१७. यङ. दग्. ये. शेस्. स्प्यद्. पर्. ब्य ।
गङ. गिस्. ब्यङ. छुब्. दम्. प. दग् ॥
द्ङोस्. ग्रुब्. दम्. प. ऽब्युङ. बर्. ऽग्युर् ।

मन्. ङग्. गि. छिग्स्. सु. बचद्. प. बचु. ग्ञिस्. प. ब्रम्. से. छेन्. पो. स. र. हऽि. शल्. नस्. ग्सुङस्. प. र्जोगस्. सो ॥

---

१२. हंस का नीर-क्षीर पृथक् करना, भ्रमर का शब्द अति मधुर ।
बगला राल थूक से प्राणि धरै, सांप आँख से सुनै ।।

१३. मृग से कस्तूरी होइ, घुन (?) आँख से सूँघै ।
जलके भीतर बसती मछली, श्वास औ व्यायाम से रोधै ।

१४. दु:शील जपी ब्राह्मण, उत्तम ज्ञान में प्रसक्त होइ ।
बाघ आदि सारे प्राणी, पूर्वकी वासना से उत्पन्न ।

१५. स्वभाव गुण (से) हुआ, सो संसारी ज्ञानी ।
तपस्या नहीं मोक्ष नहीं पूर्व की वासना से उत्पन्न ।।

१६. वे सब पृथक्-पृथक् रहें, उतना मात्र ज्ञान है तो ।
पशु भी मुक्त होवें, ऐसे ज्ञान (हो तो) आसक्ति त्याग से ।

१७. सम्यग् ज्ञान चर्या कर, जिससे परमबोधि शुद्ध ।
परम सिद्धि होइ ।।

इति द्वादस-उपदेश गाथा, महान् ब्राह्मण सरह के श्रीमुख से भाषित समाप्त ।।

---

११. स्वाधिष्ठान-क्रम

(भोट और हिन्दी)

११. रङ्. ब्यिन्. ग्यिस्. ब्र्लब्.पऽि. रिम्-प*

(भोट)

द्पल्.दों.र्जे. सेम्स्.द्पऽ.ल. फ्यग्.ऽछल्. लो ।

१. ब्दग्.ल .ब्यिन्. ग्यिस्. ब्र्लब्. पऽि. ख्यद्. पर्. ब्स्तन्. पस्. स.प्रुल्.[५]
प.स्ग्यु. मऽि. ब्दग् ।।

द्पल्. ल्दन्. दों. र्जे. स्गेग्. मो. ञिद्. ल. ल्हग्. पर्. रोल्. पऽि. रो.
गङ. चि. यङ .रुङ ।।

दों. र्जे. ब्दुद्. चि. द्पल्. ल्दन्. गङ. ल. गङ. गिस्. ब्स्तोङ. प.दे.
ल्तऽङ. ऽख्रुल्. पऽि. रङ. ब्शिन्. न ।।

जि. ल्तर्. ब्र्जोद्. प.ऽदि. लस्. ग्शन्. सु. ब्चोम्. ल्दन्. दे. ल.कुन्. नस्.
फ्यग्. ऽछल्.[4] लो. ।।

२. गङ. यङ. म्ङोन्. द्गऽि. ग्यॅल्. बऽि. स्कु. म्जेस्. ग्चिग्. पु. ञिद्. ।।

सु. यङ. म्खस्. नॅम्स्. स्ञिङ. सद्. मि. ऽग्युर्. ब. ।।

गङ.शिग्. शर्.बस्. म्ञन्.पऽि. दुस्. न. द्बङ.पो. दङ. ।

युल्. नॅम्स्. ब्चस्. प. नुब्. प. दे. ल. फ्यग्.ऽछल्.लो. ।।

३. गङ. ल. स्प्रोस्. प. द्पल्. ल्दन्.[5] ब्दे. बऽि. रङ. ब्शिन्. दों. र्जेऽि.
म्छोन्. ऽजिन्. चिङ. ।

गङ. शिग्. छ. ब्यद्. स्प्रोस्. ब्रल्. द्रि. मेद्. शेस्. रब्. रङ. ब्शिन्.
कुन्. दु. ऽग्रो. ।।

द्पग्. ब्सम्. ल्चुग्. मस्. म्ङोन्. मछुङस्. ग्नस्. ग्सुम्. ञोन्.
मोङस्. द्र. ब. ग्चोद्. प. गङ. ।

द्पल्. ल्दन्. दों. र्जे. छिग्. म्छन्. ब्चुन्. मो. दे. ल. कुन्. नस्. फ्यग्.
ऽछल्.[6] लो. ।।

---

* स्तन्-ऽग्युर्, ऽग्युंद्, शि, पृष्ठ--१२५ क ३-१२६ क ६ ।

११. स्वाधिष्ठानक्रम

(हिन्दी)

नमो वज्रसत्त्वाय

१. आत्मा-अधिष्ठान के विशेष आदेशसे निर्मित माया-पति
श्री वज्रश्रृंगारिणी ही में अधिक ललित रस जिसे कुछ पसन्द ।
बज्रामृत श्री जहाँ, जिसे शुन्य, सो दृष्टि भी भ्रम-स्वभाव,
यथा कथित इससे अन्य भगवान् को सर्वतः नमस्कार ।।

२. जो भी अभिनन्दित जिन (प्रभु) के अकेला सुन्दर शरीर ही,
कोई भी पंडित हृदय विबुद्ध नहीं हुआ ।
जो उदय से श्रवणकाल में इन्द्रिय औ,
विषयों के सहित अस्त हुआ, उसे नमस्कार ।।

३. जिसका प्रपंच श्रीसुखस्वभाव (जो) वज्रायुधधरा,
अंशकर निष्प्रपंच निर्मल प्रज्ञास्वभाव सर्वगामिनी ।
कामना से साक्षात्तुल्य त्रिभूमिक[1] क्लेश-जाल-छेदिका जो,
श्रीवज्रपदलांछन उस पटरानी को सर्वतः नमस्कार ।।

---

१. तिनमंजिला

गङ. शिग्. दों. जे. यन्. लग्. म. श्ेस्. कुन्. नस्. दन्. पस्. क्यङ. ।
ञोन्. मोङस्. ब्रल्. बऽि. ब्दे. ब. ऽबऽ. शिग्. सेर्. नि. ब्दे. ऽग्रो. ब. ।।
दे. ल. मि. फ्येद्. गुस्. पऽि. खुर्. ग्यि. ऽचिद्. क्यिस्. म्ग्रिन्. स्नङ.नस्. ।
दे. यि. शब्स्. क्यि. पद्. मऽि. ड्र्ल्. ल. स्प्य. बोस्. फ्यग्. ऽछल्. लो. ।।

125b५. गङ. गिस्. ब्कऽ.[7] द्रिन्. सेर्. ग्यिस्. रब्रोस्. प. ब्दग्. गिस्. दे. ञिद्.नि. ।
रिन्. छेन्. ऽोद्. क्यिस्. ब्स्कोर्. बस्. मुन्. पऽि. छोगस्. नि. रब्.
ब्चोम्. शिङ. ।।
ञोंग्. मेद्. मिग्. गिस्. रङ. गि. नॅम्. पर्. रोल्. प. रिङ. म्थोङ. बऽि. ।
ब्ल. म. नॅम्.पर्.स्नङ.ब्येद्. दे. ल. यङ. दुग्. ऽदुद्. ।।

६. गङ. शिग्. स्रिद्. प. दङ. नि. शि. ग्नस्.[1] ऽग्रम्. दु. द्गऽ. ग्युर्.म्थन्.ऽबब्.।
ये. शेस्. नम्. म्खऽि. छु. बोस्. यिद्. ग्येस्. द्पल्. ल्दन्. ब्ल. म.
ग्सुम्. प. ञिद्. ।।
द्पल्. ल्दन्. दों. जे. स्गोग्. मो. ब्चुन्. मोऽि. छोगस्. नॅम्स्. शेस्.
रब्. फ. रोल्. फ्यिन्. रङ. ब्शिन्. ।
गङ. शिग्. ग्नस्. ग्सुम्. स्तोन्. प. ग्चिग्. पु. दम्. पऽि. द्बङ. फ्युग्.[2]
दम्. पऽि. सेम्स्. ल. ब्दग्. स्क्यब्स्. म्छि ।।

७. गङ. गिस्. सेम्स्. नि. म्ञम्. प. ञिद्. क्यि. युल्. दु. ऽजोग्. चिङ.
दुग्. ऽद्र.बऽि. ।
ऽखोर्. ब. ब्चुद्. क्यिस्. लेन्. ग्यि. नॅम्. पर्. म्जद्. प. रङ. द्बङ.
स्ङग्स् ऽद्र. ब ।।
गङ.गिस्. स. स्तेङ. द्बङ. पोऽि. ब्लो. यिस्. मिन्. ऽग्रो. ग्सुम्.
खङ. छुङ. गि. ।
द्रि. म.[3] ऽखुद्. नस्. ग्चिग्. पु. ब्ल. म. दम्. पऽि.ङग्. ल.फ्यग्.ऽछल्.लो. ।।

८. गङ. गङ. द्रन्. पर्. यङ. दग्. ग्नस्. पस्. स्ञिङ. ग. पद्. मऽि.स्दुद्.प.नि. ।
द्बुगस्. ऽब्यिन्. ग्रोल्. बर्. स्ब्योर्. बऽि. क्ल. मऽि. ब्कऽ.लुङ.दे.ङस्. नि. ।

४. जो वज्रांगिनी रति सर्वतः स्मृति द्वारा भी,
निःक्लैश सुख केवल भूमि में सुखगामी।
वहाँ न अर्थ-भक्तिभार भरसे कंठ प्रतिभास से,
उसके चरणाकमलरजको ललाट से नमस्कार ।।

५. जिसने करुणाकिरणसे प्रपंचित किया,
मैंने उसी रत्नप्रभामंडल से तनसमूह प्रध्वस्त किया।
अनाविल नयन से स्वविलास दीर्घदर्शी,
उस वैरोचन गुरुको सम्यक् नमस्कार ।।

६. दो भवके साथ शान्त वसि आनन्दहेतु अनुकूल तटपर उतरा,
ज्ञान आकाश नदी से विपुलहृदय तृतीय श्रीगुरु।
श्रीवज्रशृंगारिणी (जिसकी) अग्रमहिषी प्रज्ञापारमितास्वभाव,
जो तीनों स्थानोंके अकेले शास्ता परमेश्वर परमचित्त (उस) की मैं शरण हूँ ।।

७. जिसका चित्त समता-विषय में प्रविष्ट विष समान,
संसार रसायनग्रहण का निर्माण स्ववशमंत्रसम।
जो भू-पर इन्द्रिय-बुद्धि से अगम तीन कोठरी का,
मल धोवे अकेला सद्गुरु (उस) के वचन को नमस्कार ।।

८. जौ जो स्मृति में सम्यक् रहने से हृदय-पद्म की ग्रंथि,
श्वास के ग्रहण मोक्ष की योजक गुरुकी आज्ञा को।

ञि. फ्येद्. ऽोद्. छ्ोग्स्. क्यिस्. ग्नस्. ग्सुम्. खङ. बुऽि.[4] मुन्. ऽजे म्स्. शिङ. ।
मोङ्स्. दङ. ऽगल्. ल. ब्दग्. नि. दुल्. बर्. ब्चस्. पस्.फ्यग्.ऽछल्.लो. ।।

९. ब्ल. मऽि. श़ब्स्. क्यि. र्डुल्. ऽदि. च़ुङ. सद्. द्रन्. प. यि ।
योन्. तन्. स्प्रोस्. प. योङ्स्. सु. ग्युर्. पस्. द्पल्.ल्दन्. प ।।
मि. ब्दे. ब. यि. ब्दग्. ञिद्. क्यङ. नि. म्छोग्. ब्दे. बर् ।
गल्. ते.[5] ग्रुब्. न. ऽदि. लस्. ब्स्ग्रुब्. ब्य. ग्शन्. मेद्. दो ।।

१०. ब्दग्.नि.ब्ल.मऽि.श़ब्स्.क्यि.र्डुल्. ल. गुस्. दङ. ल्दन्.पस्. गँ. शि. दङ ।
नद्. दङ. स्दुग्. ब्स्ङल्. स्न. छ्ोग्स्. म्दऽ.ऽद्रऽि. सुग्. र्डुऽि. छ्ोग्स्. ऽदिस्. ङल्. ब. मेद् ।।
लुस्. चन्. नँम्स्. ल. ये. शेस्. ब्दुद्. चि. स्कल्. ब. म. ब्गोस्. मि. नुस्. पस्.[6] । गङ. शिग्. ब्दग्. गिस्. स्ब्यद्. प. दे. नि. योङ्स्. सु. ग्दुङ. ब. छ्े ।।

११. ब्लो. यि. युल्. मिन्. देस्. न. गङ. गि. स्प्योद्. युल्. मिन् ।
ग्शि. यि. ग्तम्. ग्यि. रिम्. प. ब्ल. मस्. ग्सुङ्स्. प. रिङ ।।
दे. यि. रिम्. पस्. स्ञिङ. जे. ल. सोग्स्. योन्. तन्. दग् ।।
दद्. ल्दन्. नँम्स्. ल. स्ञिङ. गि. ग्नस्. सु. रङ. ञिद्. स्क्य ।।

126a १२. ब्ङोस्. पो. ऽदि. कुन्. ग्चिग्. प. दङ ।
ङ्. मऽि. रङ. ब्शिन्. छ्. ब्रल्. ते ।।
ऽदि. नि. शेन्.पऽि. स्ब्योर्. ब्रल्. बस् ।
चोल्. बऽि. नँल्. ऽब्योर्. नँम् पर्. ऽग्युर् ।।

१३. स्पु. लङ्स्. म्यु. गुऽि. छ्ोग्स्. क्यिस्. रब्. द्गऽ. यि ।
म्छिम्स्. मिग्. गङ. ज़्. म. बक्रुस्. नस्. सु[1] ।।
छेस्. ब्स्तन्. गुस्. पऽि. खुर्. ग्यिस्. म्गो. ऽजिन्. नि ।
द्पल्. ब्सम्. ब्ल. म. दम्. ल. ऽदुद्. दो ।।

१४. ग्सल्. बर्. स्प्यि. बोर्. लग्. स्ङर्. च़ुङ. सद्. ब्येद् ।
रब्. द्गऽ. ब्चस्. पस्. मोर्. ऽजिन्. यन्.लग्. ऽब्युङ ।।

मधुयान्ह रश्मि सा समूह से त्रिभूमिक कोठरी के तमका नाशक,
(उस) मूढ(ता) विरोधी को विनयसहित नमस्कार ।।

९. यह गुरुचरणरज थोड़ी स्मृति, गुणप्रपंच परिभूत श्रीमान् ।
असुखी भी उत्तम सुखे यदि सिद्ध,(तो) इससे अन्य साध्य नहीं ।।

१०. मैं गुरुचरणरेणुमें भक्तिमान् जरामरण औ,
रोग-दुख के नानावाण-शल्यसमूह से अशान्त ।।
शरीरियों को ज्ञान-अमृत भागी न (कर) सके,
जो मैंने आचरा सो महापरिदाह ।।

११. बुद्धि का विषय नहीं वह, जिसका गोचरविषय नहीं,
मूलकथा का क्रम गुरु-कथित दीर्घ।
उसके क्रमसे करुणा इत्यादि गुण,
भक्तिमान् के हृदयस्थान में स्वयं उपजै ।।

१२. यह सारी वस्तु अकेली औ, अनेकस्वभाव अंशरहित है ।
यह व्यसनयोगरहित अभ्यासी योगी होइ बिकारी ।।

१३. रोमांच अंकुरसमूहसे बहुआनन्दित, निर्झरे जो रोम धोवै ।
अति शासनभक्ति के भारसे (नमित)कन्धा, श्रीचेतन सद्गुरुको नमस्कार ।।

१४. उज्जवल मूर्धा में पहिले थोड़ा हाथ कर, प्रमोदसहित वसुधा को अंग लगा ।

यङ. दग्. गुसु: पऽि. स्कुद्. पस्. यिद्. क्यि. मे. तोग्. नि ।
म्दुद्. पर्.[२] ब्ग्युंस्. पऽि. ब्दग्. गि. फ्रेङ. ब. ऽदि. ब्शेस्. शिग् ॥

१५. म्गोन्. पो. ख्योद्. क्यि. ब्कऽ. ग्नद्. ञ्ुङ. ऽदुस्. शेस्. रब्. नि ।
ग्यंल्. पोऽि. बु. मो. छ. लस्. म्खस्. ऽद्र. द्बङ. दु. ब्येद् ॥
ऽग्रो. ब. नंम्स्. क्यि. रङ. ब्शिन्. रोल्. पऽि. रो. यि. ब्द्रे. ब. नि ।
ऽबऽ. शिग्. जंस्. स्ु. म्योङ. ब. दे. नि. यिद्. ग्चिग्.[३] ब्सोद्. नम्. चन् ॥

१६. लङ. छोऽि. स्ञिङ. जंस्. ब्लंन्. पस्. ख्योद्. क्यिस्. स्ङो. न्. मंद्. लम्. ग्सुङस्. प ।
ऽग्रो. ब. ब्ग्रोद्. ब्य. मंद्. दङ. ऽग्रो. मंद्. चंस्. ब्य. ङो. म्छर्. छे ॥
गङ. दु. गोम्. प. बोर्. ब. चम्. ग्यिस्. म्ञाम्. मंद्. ब्द. बऽि. ग्युंन्. व्चस्.
गङ. छें. स्त्रिद्. दङ. शि. ब. चुङ. सद्. थ.[४] दद्. म. म्थोङ. ङो ॥

नंल्. ऽब्योर्. ग्यि. द्बङ. पयुग्. द्पल्. स. र. ह. छेंन्. पोस्. म्जद्. प. ब्दग्. विदन्. ग्यिस्. ब्लंब्. प. ग्रुब्. प. जोंग्स्. सो ॥

पण्. ङि.त. छेन्: पो. प. शा. न्त. भ. द्रऽि. शल्. स्ङ. नस्. दङ, बोद्. विय. लो. च. ब. मं. बन्. छोस्. ऽबर्. ग्यिस्. ब्स्ग्युर्. चिङ. श्ुस. ते. ग्तन्. ल. फब्. पऽो ॥

तृतीय सम्यक् सूत्रसे मनके पुष्प को,
गूँथ मेरी यह माला ग्रहण करो।।

१५. नाथ तुम्हारी आशा अल्प समये प्रज्ञा,
राजकन्या-अंश चतुर-सम स्ववश करै।
जगतीके स्वभाव ललित-रस का सुख,
केवल अनुभवै सो एकमना पुण्यवान्।।

१६. तरुण करुणा से आर्द्र तुमने अपूर्व मार्ग बताया,
जग अपथ नहीं औ अगम नहीं इति महाआश्चर्य।
जहाँ पद त्याग मात्रसे (होइ) विषम सुखसन्तान सहित,
जब भव औ शान्ति में कुछ भेद न दीखै।।

।। इति योगीश्वर श्रीमहासरह-कृत स्वाधिस्ठानक्रम साधन समाप्त ।।
।। महापंडित प्रशान्तभद्र के श्रीमुख से भोट के लो.च.ब[1]. मं. वन्. ।।
छोस्. बर् द्वारा अनुवादित पूछ कर निर्णीत ।।

---

१. लोकचक्षु = अनुवादक

१२. तत्त्वोपदेशशिखर दोहागीति

(भोट और हिन्दी)

१२. तत्त्वोपदेशशिखर दोहागीति

(हिन्दी)

नम आर्यमंजुश्रियै ।

१. अचल कायवाक्चित्त-स्वभाव, वज्रशिखर सद्य: गीत गाने के अर्थ ।
जब सहज शुद्ध, नौ से अवबोध करे ।।

२. कारण लक्षण प्रमेय इत्यादि नहीं, (यही) वस्तुओं का तत्व ।
बाधन औ साधन नहीं है, भेद इत्यादि का अभाव कहो ।।

३. प्रतिपक्षों का बन्धु कुछ नहीं, औ दु:शीलता पीत-प्रतिभास ।
आलस्य प्रतिहिंसा विद्वेष, औ अविद्या प्रहाण इत्यादि ।।

४. प्रहाणपारमिता नहीं, (क्योंकि) सर्व वस्तु का अभाव कहा है ।
निर्विकल्प सर्व समचित्त से रहित, संसार से अन्य (है) महामुद्रा ।।

५. एक भी धप(?) जो न कहना, सोई संबुद्ध का मार्ग ।

ऽदोद्. योन्. ल.सोग्स्. म. स्मद्. पस्. ।
ऽब्रस्. बु. रे. ब. मेद्. प. स्ते.[२] ॥

६. स्कु.ग्सुम्. लम्.ग्यि. ङो.बो. गङ. ।
चि. फ्यिर्. शे. न. मि. र्तोग्. स्ते. ॥
खो. न. ञिद्. नि. जि. ल्तर्. र्तोग्स्. ।
ग्शन्. ल. मि. रे. गङ. गिस्. पर्. ॥

७. रिन्. छेन्. ग्तेर्. दङ. ग्यॅल्. पोऽि. द्कोर् ।
फल्. प. यि. नि. बङ. म्जोद्. ब्शिन्. ॥
म्छोग्. तु. ग्चेस्. प. रङ. ल. ग्नस्. ।
सेम्स्. लस्. म. ग्तोग्स्. फ्यि. रोल्. दोन्. ॥

८. ग्चिग्. क्यङ. योद्. प. म. ब्शद्. दे[३] . ।
सेम्स्. ञिद्. कुन्. दु. ऽोद्. ग्सल्. बऽो. ॥
दे. बस्. सेम्स्. लस्. ग्शन्. पऽि. छोस्. ।
यङ. दग्. पर्. नि. ब्र्तग्स्. न. मेद्. ॥

९. द्ङोस्. कुन्. सुङ. ऽजुग्. रङ.ब्शिन्. ल. ।
स्क्ये. बऽि. रङ. ब्शिन्. योद्. म. यिन्. ॥
ङो. बो. म. स्क्येस्. स.तोङ. प. गङ. ।
ग्शन्. योद्. प. म. यिन्. ते.[४]।

१०. ग्ञिस्. दङ. योद्. मेद्. थ. स्ञद्. ब्रल्. ॥
ग्चिग्. दङ. दु.म. ल. सोग्स्. क्यिस्. ।
ब्र्तग्स्. न. मेद्. प. म. यिन्. ते. ।
योद्. प. म. यिन्. मेद्. म. यिन्. ॥

११. रिग्स्.पस्. ऽग्रुब्.प. म.यिन्. नो ।
द्ङोस्. पोर्. स्नङ.बऽि. छोस्. नॅम्स्. कुन्. ॥
ङो.बो. ञिद्.लस्. म.ऽदस्. ते. ।
ग्यॅ. म्छोङ.[५] सुग्स्. ब्र्ञन्. मे. लोङ. ब्शिन्. ॥

इच्छा गुण इत्यादि ना निन्दै, है फल (की) आशा नहीं ।।

६. त्रिकाय मार्ग का स्वभाव जो, क्यों आसक्त बिना समझै ।
तत्त्व जिमि समझै, अन्यत्र ना आशा जिससे अन्तराल में ।।

७. रत्ननिधि औ राज-धन, प्राकृत (जन) का मंजूषाकोश जिमि ।
उत्तम प्रिय अपने में बसै, चित्त से अन्यत्र बाह्य अर्थ, ।।

८. एक भी है (यह) ना कह, चित्त ही सर्वत्र आभासै ।
ततः चित्त से अन्य धर्म को, सम्यक्[1] निरूपण ना करै ।।

९. सर्व युग वस्तु उतरै स्वभावमें, उत्पत्ति का नहीं स्वभाव है ।
भाव[2] ना उपजै जो (है) शून्य, अन्य सत्ता है नहीं ।।

१०. द्वैत औ अभाव (हैं) व्यवहार-रहित, एक औ अनेक इत्यादि से ।
निरूपण (हो) तो अभाव नहीं, भाव नहीं अभाव नहीं है ।।

११. युक्ति से सिद्ध नहीं हैं, वस्तु के तौर पर प्रतिभासी सारे धर्म ।।
भाव ही से न (हैं) परे, सागर प्रतिबिंब दर्पण में जिमि ।।

---

१. भला, ठीक २. वस्तु

१२. द्रन्.मेद्. द्ब्यिङस्. नस्. कुन्. ऽब्युङ. बस्. ।
रङ. ब्शिन्. ञिद्. दु. दुस्. देर्. रिग्. ।।
ग्ञिस्.मेद्. ग्ञिस्. सु. मेद्. मिन्. पस्. ।
म. ऽदस्. द्ब्येर्.मेद्. रो.ग्चिग्. ल. ।।

१३. ग्चिग्. तु. ग्शग्. पर्. ब्य. बऽङ. मेद्. ।
द्ङस्. म. दे. ञिद्. म. ब्स्लद्. पऽि.[6] ।।
खो. न. ञिद्. क्यिस्. गर्. म. ग्योस्. ।
खो. न. ञिद्. क्यि. शेस्. प. ल. ।।

१४. ऽजिन्. प. मेद्. दे. ङो. बो. ब्रल् ।
चिर्. यङ. मि. ऽजिन्. छोस्. क्यि. स्कु ।।
ङो. बो. ञिद्. ल. द्ब्य. ब. मेद् ।
ऽजिन्. पऽि. छ. नस्. ब्र्तग्स्. प. गङ ।।

१५. स्क्ये. मेद्. द्ब्यिङस्. क्यि. रङ. ब्शिन्. ल ।
सृङ. दु. ऽजुग्. पस्. थ. मि. दद्[7] ।।
127a स्ग्रो. स्कुर्. ब्रल्. बस्. ग्न्ुग्. मर्. ब्शद् ।
ग्शल्. यस्. खङ. दङ. म्छन्. द्पे. दङ ।।

१६. स्न. छोग्स्. स्प्रुल्. स्कु. गङ. स्तोन्. प ।
ग्दुल्. ब्य. लम्. ल. शुग्स्. पऽि. स्तोब्स् ।।
म्दऽ. ब्स्मुन्. दग्. गिस्. गङ. स्म्रस्. प ।
ऽदि.ल. द्मिग्स्. सु. ङुल्. चम्. मेद्[1] ।।

१७. फ्यिन्. चि. लोग्. गि. स्क्ये. बो. ल ।
ञोन्.मोङस्. युल्. ग्यि. दुग्. ऽग्युर्. ते ।।
जि. ल्तर. स्नङ. बऽि. रिम्. प. यिस् ।
द्ब्येर्. मेद्. छुल्. दु. ग्नस्. प. स्ते ।।

१८. ऽोद्. ग्सल्. ब. ञिद्. र्नम्. पर्. ब्शद् ।
रङ. ब्शिन्. मेद्. पऽि. ङो.बो. ब्रल् ।।

१२. विस्मृति धातु से सर्वभू (होने) से, स्वभाव ही में काल वहाँ विदित (है) ।
द्वैत नहीं अद्वैत नहीं, परे नहीं भेद नहीं एकरस में ।।

१३. एक में स्थापनीय नहीं, अच्छा सोई न कलुषित ।
तत्त्व से लोह ना हिलै, तत्त्व के ज्ञान में ।।

१४. धारणा नहीं सो निःस्वभाव, क्यों ना धारै धर्मकाय ।
(स्व)भाव में भेद नहीं, धारण-अंश से निरूपित जो ।।

१५. अजात धातु के स्वभाव को, बंधन में उतरने से भेद नहीं ।
पक्ष प्रेषण विना निजहि कहै, कूटागार औ लक्षण इव[३] ।।

१६. नाना निर्माण-काय जो शास्ता, विनेय मार्ग में आरूढ़ बल ।
मैं सरह ने जो कहा, इसमें आलम्बन अणु मात्र नहीं ।।

१७. विपर्यास (वाले) पुरुषको, क्लेश-विष का विष होइ ।
जिमि प्रतिभास के क्रम से, अभेद स्वरूप में रहै ।।

१८. आभास्वर ही बखानैं, निःस्वभाव (है) वस्तुरहित ।

३. दृष्टान्त

थ.दद्.म.यिन्.ग्ञिस्.सु.मेद् ।
खम्स्.[2] ग्सुम्.ब्लो.ऽदस्.ये.शेस्.ल. ॥

१६. ऽदि.शेस्.ब्य. बऽि. मिङ. ङम्. ब्र्द ।
म्दऽ. ब्स्मुन्. दम्. गिस्. ग्सुङ. दु. मेद् ॥
द्ब्येर्. मेद्. रो. ग्चिग्.म. र्तोग्स्. न ।
ग्ञिस्. सु. स्नङ. बऽि. छोस्. र्नम्स्. क्यिस् ॥

२०. गल्. ते. ब्स्कल्. पर्. ञेद्. मि. ऽग्युर् ।
म्छोग्. गि. गो. ऽफङ. मि.[3] ऽथोब्. स्ते ॥
खो.न.ञिद्.क्यि. रङ. ब्शिन्. ल ।
द्गग्. दङ. स्ग्रुब्. प. ङङ. गिस्. ब्रल् ॥

२१. ग्ञिस्. मेद्. ङङ. लस्. म. ग्योस्. पस् ।
गङ. ऽदिर्. यिद्. क्यि. ये.शेस्. नि ॥
ग्चिग्. क्यङ. ब्रल्. ब. म. यिन्. नो ।
ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. गङ. ब्दे. बऽि. रो ॥

२२. र्ग्युन्. मि. ऽछद्.पऽि. ब्दग्. ञिद्. दे[4] ।
छु. बोऽि. र्ग्युन्. दङ. नम्. म्खऽ. ब्शिन् ॥
मि. ऽग्युर्. दुस्. र्नमस्. कुन्. दु. ग्नस् ।
र्तोग्. पऽि. र्जेस्. ब्रङस्. म्छन्. मऽि. ब्लोस् ॥

२३. नम्.यङ.शेस्.प.म.यिन्.नो ।
ब्सम्.मेद्.युल्.ल.ब्र्तग्.तु.मेद् ।
युल्. मेद्. ब्स्गोम्. पर्. ग. लस्. ऽग्युर् ।
ब्स्गोम्. मेद्.[5] ञिद्. क्यङ. योद्. म. यिन् ॥

२४. द्पे.यि. दोन्.ल. गङ. द्रिस्.प ।
सङस्. र्ग्यस्. कुन्. ग्यि,. थुग्स्. लऽङ. म्ञम् ॥
ब्रो. गर्. ग्लु. दङ. रोल्. मो. यिस् ।
फ्योग्स्. र्नम्स्. कुन्. दु. स्ग्र.स्ग्रोग्स्. शिङ ॥

भेद नहीं द्वैत नहीं, तीन भुवन बुद्धि से परे ज्ञान में ।।

१६. इस ज्ञेय का नाम या संकेत, मुझ सरह को कहना नहीं ।
अभेद एकरस निर्विकल्प तो, द्वैतप्रतिभासी, (है) धर्मों से ।।

२०. यदि कल्प (भर) लाभ न होइ, उत्तम पद ना पावै ।
तत्त्व के स्वभाव में, बाधन साधन साथ रहित ।।

२१. अद्वय संग से ना काँपै, जो यहाँ मन का ज्ञान ।
एक भी वियोग नहीं, सहज जो सुख का रस ।।

२२. अविच्छिन्न स्रोत अपने ही सो, नदी-स्रोत औ आकाश जिमि ।
अविकार सब कालों में रहै, तर्क के अनुसारी निमित्त की बुद्धि से ।।

२३. कदापि ज्ञात नहीं, अचिन्त विषय में तर्क नहीं ।
विषय-रहित भावना कहाँ से होइ, अभावना भी है नहीं ।।

२४. उपमा के अर्थ जो पूछै, सर्व बुद्ध के चित्त में भी समान ।
नट नाटक गीत औ वाद्य से, सब दिशाओं में निर्घोष (करै) ।।

२५. नॅल्. ऽब्योर्.मस्. नि. ग्योन्.नस्. ब्स्कोर् ।
द्मिग्स्. ग्तङ. ब्रल्.बऽि. रङ.ब्शिन्. ग्यिस् ।।
ऽबद्.प.मेद्. पर्. कुन्.दु. स्प्यद् ।
ग्ञिस्.सु.स्नङ.बऽि. र्तोग्. प. थम्स्. चद्. ब्चोम्. ग्युर्.नस् ।।
ब्ज़ॅद्. मेद्. नॅम्. मेद्. ऽब्रस्. बु. थोब्. ऽग्युर्. शोग् ।

नॅल्. ऽब्योर्. क्यि. द्बङ. फ्युग्. छेन्. पो. द्पल्. स. र. हऽि. शल्. नस्. ग्सुङ्स्. प, फ्यग्.र्ग्य.छेन्.पो. दे.खो.न.ञिद्.[7] चॅ.मो. दो. हऽि. ग्लु. शॅस्. ब्य. ब. ज़ॅगॅस्. सो ।।

कृष्णपण्डितस्. रङ. ऽग्युर्. दु. म्जद्. पऽो ।।

२५. योगिनी बायें से घूमै, ग्रहण-त्याग विनु स्वभाव से।
प्रयास विना सर्वत्र आचरै, द्वैत प्रतिभासी सब कल्पना मर्दित (होने) से ।।
अवाच्य अप्रकार फल प्राप्त होइ।

।। इति महायोगीश्वर श्री सरह के श्रीमुख से भाषित 'महामुद्रातत्त्वोपदेशशिखर' दोहागीति समाप्त ।।

कृष्ण पण्डित द्वारा स्वयं अनुवादित।

---

१३. वसन्ततिलक दोहागीति

(भोट और हिन्दी)

१३. द्प्यिद्.क्यि. थिग्.ले. दो. ह. म्ज़ोद. क्यि. ग्लु*

(भोट)

द्पल्. हे्.रु.क.ल. फ्यग्.ऽछल्.लो ।।

१. से्.भु.स्कु.ग्सुम्.ल.सोग्स.क्यि ।
सोस्.कऽि.मे.तोग्. म्थोङ.ब.यि ।।
ग्शोन्.नु.ब्दग्.[२] नि.म्योस्.पर्.ऽग्युर् ।
हे्. रु.क. ल. छग्स्. प. यिस् ।।

२. सोस्. कऽि. दङ. पो. दङ. ऽदिर्.(न) ।
ख्योद्. क्यिस्. ब्दग्. नि. ब्सुङ. बर्. म्जोद् ।।
ग्दुङ. बस्. ऽगुम् पर्. म. म्जद्. चिग् ।
मे. तोग्. श्रं. भ.क.रु.ण. ।।

३. द्रि. ब्सुङ. ल्दन्. पस्. द्ग्येस्. पर्. ऽग्युर् ।
श. रिस्. पस्. नि. ब्दुङस्.पस्. ब्दुङस् ।।
मे. मर्. खुर्. नस्. च. ण्ड. ली. ।
रि. मो. ब्दग्. ल. बब्. बो. शेस् ।।

४. क. न.प. नि. ग्शेग्स्. पर्. रे ।
सो. गऽि. दङ. पो. द्प्यिद्. दुस्. ल ।।
ख्योद्.क्यिस्. ब्दग्. नि. ब्स्रुङ. बर्. म्जोद् ।
ग्दुङ. बस्. ऽगुम्. पर्. म. म्जद्. चिग् ।।

---

* र्तन्. ऽग्युर. ग्र्युद्, छि, पृष्ठ ५ ख २–६

१३. वसन्ततिलक दोहागीति

(हिन्दी)

नमः श्रीहेरुकाय ।

१. सेभू त्रिकाय इत्यादि ग्रीष्म पुष्प देखनेवाला ।
तरुण पति मस्त होइ, हेरुक के राग से ।।

२. ग्रीष्म में पहिले यहाँ, तू अपने को रक्षित कर ।
दाह से च्युति ना कर, पुष्प अंभ करुणा ।।

३. प्रश्नभाणक मुदित होइ, सर्षप-कुटान कुटाया ।
आग घी ढो कर चंडाली, चित्र पति में उतरी इति ।।

४. कँपा गया, ग्रीष्म के पहिले वसन्त काल में ।
तू अपने को रक्षा कर, दाह से च्युति ना कर ।।

५. फ्योगस्. ब्चुर्. ब्ल्तस्. न. ब्दग्.गिस्. नि ।
ख्योद्.लस्. ग्शन्. नि. म्थोङ.ब. मेद् ॥
ग्दुङ.[४] बऽि. मो. यिस्. ब्दग्.गिस्. नि ।
ब्दग्.गि. लुस्. क्यङ. ब्सम्. प. मेद् ॥

६. र्नल्.ऽब्योर्.म. बग्यंद्. लस्. ब्शि. नि ।
ब्दग्. चग्. ग्सोल्.ब. ब्तब्.प.यिस् ॥
ब्चोम्. ल्दन्. ऽदस्. नि. ब्शङस्. पर्. म्ज़ोद् ।

ड्पल्. किय. थिग्. ले. दो. ह. म्ज़ोद्. किय.ग्लु. श्स्. ब्य. ब. स्लोब्. द्पोन्. नग्. पो. नस्. बग्युद्. प. स्लोब्. द्पोन्. स. र. हस्.[५] म्ज़द्. प. जोगिस् सो ॥

---

५. दश दिशि देखे अपने ही, तुझसे अन्य दीखै नहीं ।
दाहिका ने अपने ही, स्वकाया की भी चिन्ता नहीं ।।

६. आठ योगिनियों में से चार, हमने प्रार्थना की,
भगवान् उत्थान करो ।।

।। इति आचार्य कृष्ण-परंपरा से 'वसन्ततिलक' दोहाकोशगीति आचार्य सरह कृत समाप्त ।।

---

१४. महामुद्रोपदेश वज्रगुह्यगीति

(भोट और हिन्दी)

१४. फ्यग्.ग्यं.छेन्. पोऽि. मन्. ङग्. दों. जैंऽि ग्लु*

(भोट)

ब्चोम्.ल्दन्.[७] ऽदस्. शेस्. रब्. क्यि. फ. रोल्. दु. फ्यिन्. प. ल. फ्यग्. ऽछल्. लो।

१. क्ये. हो. ग्यंल्. पोऽि. रिग्स्. ग्युंद्. बु. यिस्. ऽजिन्. ऽग्युर्. ग्यि।
गसेर्. ऽग्युर्. चि. यि. रिग्. ब्येद्. ऽछद्. गिस्. तोंग्स्॥
ग्यं. म्छोऽि. लम्. ग्युंस्. रिग्. ल्दन्. देद्. द्पोन्. म्खस्।
ख्रि. स्नान्. मिग्.गिस्. नोर्.[१] बुऽि. नुस्. प.ल्त॥

२. रि. लु. ग्रुब्.पस्. ब्रम्.सेंऽि. ब्य. ब. जोंग्स्।
गङस्. लस्. बब्. पऽि. छु. ल. द्रि.म. मेद्।
मु. द्र. लस्. ब्तोन्. ग्सुग्स्. नंम्स्. थ.मि.दद्।
ग्सेर्. ल. द्ङुल्. ग्यि. र. मेद्. स. ले. स्ब्रम्॥

३. म्खन्. ब्सोस्. म. ब्यस्. ब्से. रु. ग्शग्स्. पऽि. ग्सुग्स्।
जिङस्. क्यि. थग्. प.[२] लु.गु. ग्युंद्. दु. स्ब्रल्॥
म. ग. ध. प. द्कोर्. म्जोद्. बु. ल. ऽबोग्स्।
म्दऽ. ब्दग्. छिग्. ल. ब्चुन्. मो. सुर्. मि. ग्यो॥

४. म्छङ. शेस्. द्कऽ. ब. म. यिन्. स्ग्यु.मऽि. ऽफुल्।
स्ब्रद्. गोंद्. ऽथुङस्. पऽि. नुस्. पस्. युन्. मि. थोग्स्॥
क. ऽजि. मि. द्गोस्. रङ.गिस्. ब्सग्स्.पऽि. ग्सेर्।
द्मुस्. लोङ. मिग्.[३] फ्ये. युल्. नंम्स्. रङ. ङोस्. सिन्॥

---

* स्तन्. ग्युर्. ग्युंद्. छि, पृष्ठ ५५ क ७–६२ क ५

१४. महामुद्रोपदेश वज्रगीति

(हिन्दी)

नमो भगवत्यै प्रज्ञापारमितायै ।

१. अहो राजवंशिक पुत्र से गृहीत, सुवर्णभूत औषधि-भेद अन्तर समझै ।
सागरपथ पता जानै सार्थवाह चतुर,
दश-सहस्र-कलनेत्र से मणिसामर्थ्य जिमि ।

२. गुटिका-सिद्ध ब्राह्मण की क्रिया समाप्त हिम-स्रवित जल में मल नहीं ।
मुद्रा से निर्गत रूपों का भेद नहीं, सोने में रजत का छाग नहीं सुवर्णपिंड[1] ।।

३. पंडित-ग्रास न हुआ गैंडे का पाटित रूप,
वापी की रज्जु मेष-सन्तान में सर्प ।
मागध धनकोश बाल क का प्रावरण[2], वाणपति शब्द में रानी कोण न चलै ।।

४. ब्रह्मज्ञान कठिन है ना माया, मधुमत्त पान में समर्थ काल (है) अव्याहत ।
पट न चाहिए अपना संचित सुवर्ण,
जन्मांध नेत्र के बाहर विषयों को गहै निज पास ।।

---

१. स्वप्न २. दुशाला

५. रिन्.छेन्. गसेर्.ग्यि. स्कुद्. प. खब्. श.ुल्. ऽग्रिम् ।
गि्लङ. लस्. स्क्योल्. बऽि. देद्. द्पोन्. थे. छोम्. ब्रल् ।।
द्रङ. स्रोङ. गिस्. नि. ग्सो.रिग्. म्छद्.नॅम्स्. गो ।
स्ल. ब. म्थोङ. बऽि. रि. बोङ. स्ञोम्स्. लस् ग्रोल् ।।

६. लम्. नोर्. ङो. श़ेस्. दे. दुस्. ग्ञिद्. दु. ल्दोग् ।
ग. बुर्. नुस्. प.[४] छद्. पऽि. स्तेङ. दु. ग्युग् ।।
नोर्. बु. लुस्. ल. ब्तग्स्. न. ऽदु .ब. ऽब्युङ ।
ल्तो. ग्रोस्. द्रि. छोर्. म्तिग्. ल. ऽब्रोस् ।।

७. फ्युग्स्. ब्दग्. म्थोङ. बस्. उ. म्चोद्. प. न. ब्क्रोल् ।
मॅ. ब्यऽि. फ्रु.गु. दङ.पोऽि. छङ. मि. ऽदोद् ।।
देद्. द्पोन्. गि्लङ. लोन्. नोर्. ल. श़े. मि. ग्दुङ ।
ऽङॅऽ. बोऽि. ब्चें. ग्दुङ. ग्रोग्स्. क्यिस्. ब्स्लुस्. छे. शिग्[५] ।।

८. ङल्. बर्. मि. ऽदुग्. ग्सेर्. छोन्. ञेद्. पऽि. मि ।
देद्.द्पोन्. गॅन्.पोऽि. गि्लङ. दोन्. ग्शन्.ग्यिस्. फ्येद् ।।
सुर्. म. मिग्. नस्. ब्तोन्. पऽि. ञग्. थग्. म्ञोन् ।
बॅ. लस्. ऽब्योल्. बऽि. ग्रु. प. यन्. लग्. ब्रेल् ।।

९. नोर्. बुऽि. ऽोद्. ल. लॅद्. गिस्. ग्नोद्. मि. ऽग्युर् ।
नग्स्. ल.ग्नस्. पऽि. ग्लङ. पो. रङ.द्बङ. थोब् ।।
ऽछि.[६]बऽि. दुस्. देर्. ग्यॅल्. स्रिद्. चुङ. शिग्. बय् ।
ग्दन्. सर्. ब्युङ.बऽि. ल्ह. स्रस्. ग्यॅल्.स. थोब् ।।

१०. द्रि.म. दग्. पऽि. ग्सेर्. बुम्. गङ. न. म्जेस् ।
खोङ. ग्सेर्. ब्रल्.बऽि. देद्.द्पोन्.ल. ल्तोस्. दङ ।।
गर्. छद्. ऽथुङस्. पऽि. ग्यद्. क्यि. यङ. स्तोर्.ब ।
लॅम्. सेम्स्. मि. स्क्ये. ग्यॅल्. ङोशेस्.पऽि. मि ।।

56b ११. दद्. प. क्येंन्. ग्यिस्. ब्स्कुल्. बु. शिऽि. म ।
ख्रि. मोन्. नङ. दु. ग्सेर्. स्प्रोग्. चि. शिग्. ब्य ।।

५. महार्घ सुवर्णसूत्र सूई के छिद्र में पिरो, द्वीप से चलित सार्थवाह सन्देहरहित।
ऋषि कुटिल चिकित्सा विद्या जानैं, चन्द्र में दीखता शश अतुल ।।

६. भूले मार्ग का परिचित उसी समय लौटै, कपूरकी सामर्थ्य ज्वर के ऊपर दौड़ै।
मणि काया पर फेंके तो धुआँ उपजै, भक्षित कंटक गंध की ओर दौड़ै ।।

७. पुशुपति के देखने से उमा विवाद रोपै, मयूरशावक प्रथम मद्य ना चाहै।
सार्थवाह द्वीप के धन की आसक्ति से अपीड़ित।
पूर्व दया पीड़ित साथी से बंचन काले लुप्त ।।

८. थका नहीं सुवर्णवर्ण लाभी पुरुष,
बूढ़े सार्थवाह के द्वीप के अर्थ अन्य ने आधा (किया)।
मृदु कटाक्ष से निर्गत एक रस्सी कोमल, तटसे भागते नाविक के अंगको बांधै।

९. मणिप्रभा पवन से बाधित ना होइ, वन का वासी गज स्वच्छंदता पावै।
मरणकाले तंह राज्य अल्प करै, पीठभूमि उत्पन्न देवपुत्र राजधानी पावै ।।

१०. शुद्ध सुगँधी सुवर्णकलश जहँ सोहै,
औ सो सुवर्णहीन सार्थवाह को दीखै।
नृत्य मद्यपान के ओज में पुनः भ्रमै,
अजात पत्र चित्त राजपरिचित पुरुष ।।

११. श्रद्धा कारण प्रेरित मृत-पुत्र की मा,
राजकिरात[1] के भीतर सुवर्ण घोषणा कैसे करै।

---

१. ग्यि.मोन्=सिंहासनीय किरात

ग्सिङ्स्. क्यि. स्तेङ. दु. देद्. द्पोन्. मिग्. वस्. ग्चेस् ।
ग्लिङ. लस्. ब्लङ्स्. पऽि. नोर्. बु. ग्चेस्. स्प्रस्. थोब् ॥
१२. ग्सिङ्स्. क्यि. ब्सो. छर्. देद्.द्पोन्. शोल्.मि. थेब्स्. ।
छ. ग्रङ. ग्ञिस्.क. सेल्. ब. सेङ.गेऽि. स्कु ॥
ब्सऽ. ब्तुङ. मि. द्रन्. द्गुन्.[1] छु. ऽथुङ्स्. पऽि. स्प्रुल् ।
सो. ब्तङ. बुम्. पर्. ग्सेर्. ग्यि. स्नोद्. क्यङ. ब्तुब् ॥
१३. रि. ब्रग्स्. बर्. ग्यि. सेङ. गे. स्ल. मि. स्ञाग् ।
ख्यु. म्छोग्. थोङ. म्खन्. शिङ. गि. म्थऽ. मि. म्थोङ ॥
ग्चिग्. पुर्. ग्नस्. पऽि. ब्से.रु. स्दुग्. ब्स्ङल्. ब्रल् ।
द्रङ. स्रोङ. ग्यॅल्. म्छन्. म्गोन्. बस्रुङ. स्दोम्.प. मेद् ॥
१४. ऽग्रो. बर्. म्छद्. ग्लिङ.[2] लस्. बोद्.प. मि. ऽग्युर् ।
ञोङ. ल. ब्चे. बऽि. स्प्रेऽु. स्ञिङ. रे. जे ॥
ऽदब्. ग्शोग्. ग्यॅस्.पऽि. फ्रु.गु. नद्. नस्. ऽफुर् ।
स्क्युग्. नद्.चन्. देस्. सस्. क्यि. ऽखिर. ब. छोद् ॥
१५. रब्. पु. ब्युङ. छे. द्मन्. प. ऽदोर् ।
रि. दग्स्. नद्. प. ख्यु. नस्. ऽगर्. न. ब्दे ॥
रिग्स्.ङन्. बु.मोस्. ऽजे. स्गोग्. स्पङ्स्. नस्. ऽदुग् ।
दुर्. स्रुङ. मि. ल. म्जऽ. बोस्. चि. शिग्.[3] ब्य ॥
१६. रब्. शुब्. म. ब्चस्. द्पऽ. बोस्. ग्युल्. मि. ल्दोग् ।
ल्जोन्. शिङ. ग्रिब्. ल. दुब्. पऽि. सेम्स्. ङल्. सोस् ॥
ग्यॅन्. ग्यिस्. स्प्रस्.पऽि. ब्चुन्. मोस्. ग्शन्. यिद्. ऽफ्रोग् ।
ऽदोद्. द्गुऽि. ऽब्युङ. ग्नस्. रिन्. छेन्. ग्तेर्. ग्यि. स्ग्रोम् ॥
१७. थब्स्. ल. मि. रे. ज्व. ल. ऽबर्. बऽि. नद् ।
द्पोन्. ल. मि. ब्र्तेन्. रिग्. ब्येद्.[4] छर्. बऽि. मि ॥
रङ. गि. म्थेब्. म्जुब्. ग्शन्. ग्यि. लग्. प. मिन् ।
गर्. यङ. ब्दे. ब. लङ. छो. ग्यॅस्. पऽि. लुस् ॥

पोत के ऊपर सार्थवाह नेत्र-प्रिय,
द्वीप से उठी प्रिय उज्जवल मणि पावै ॥

१२. पोत निर्माण समाप्त सार्थवाह फलक न गिरै,
शीत-उष्ण दोनों नाशक सिंह-काया ।

खान-पान विस्मृत हेमन्त-जल-पायी सर्प,
दांत लगा कलश के सुवर्ण-पात्र को भी काटै ॥

१३. शैल के सिंहचन्द्र ना बाघ, वृषभ देखे क्षेत्र का अन्त न देखै ।
अकेले बैठा गेंडा निर्द्वन्द, ऋषिध्वज नाथ राखै ना बंधै ॥

१४. गमन टूटा द्वीप से ना पुकार, कंपन में अनुकंपा वानर की करुणा ।
महा पक्ष बच्चा रोग से उडै, वमन-रोगी भोजन कर खाट कटावै ॥

१५. प्रभव काले हीन त्यक्त, रोगी मृग बैल से नाचै सुखी ।
कुजाति कन्या नाच छोड बैठी,
श्मशान-रक्षक पुरुष को प्रिय से क्या करना ॥

१६. बहु निन्दा सहित वीर युद्ध से ना फिरै,
वृक्षछाया थके का चित्त-श्रम हरै ।
अलंकृत रानी दूसरे का हृदय हरै,
नौ कामनाओं की आकर रत्ननिधि-मंजूषा ॥

१७. चूल्हे को अग्नि-ज्वाला जलने की व्याधि,
स्वामीको अनाश्रित वेद समाप्त पुरुष ।
अपनी तर्जनी दूसरेके हाथ में नहीं,
जहां भी सुख फुल्ल तरुण शरीर ॥

१८. म्थोङ.वस्. छोग्.प. चि. म्छोग्. ग्सेर्. ऽग्युर्. ब्सो ।
ख्यिम्. मि. द्गऽ. ब. बु. मोऽि. ब्लो. मि. ऽफ्रोग्स् ।।
उ.र्ग्यन्. दुर्. ख्रोद्. स्त्रिन्.मो. ख्रोस्. पऽि. स ।
थुब्. पऽि. ब्श.ुग्स्. स. मि. नुब्. र्दो. र्जेऽि.[५] ग्दन् ।।

१९. द्गोस्. पऽि. र्क्येन्. छोग्स्. क. लिङ. कऽि. ग्नस् ।
र्ग्ये. म्छोऽि. बस्. म्थर्. स्ब्रल्. ग्यि. दुग्. मि. ऽब्युङ ।।
रिन्. छेन्. र्जोद्. ल. ऽजिग्स्. पऽि. यङ. नि. ब्रल् ।
ग्यो. स्ग्यु. स्पङस्. प. म. ग. ध. पऽि. मि ।।

२०. स्म्र.बर्. मि. फोद्. ब्च.ुन्. मो. ब्स्नोल्. ग्यि. म्छङ ।
ग्दिङ. ल. ङर्. थोग्स्. ग्चन्. ग्सन्. सेङ. गेऽि. बु ।।
थुर्. ग्श.ोल्. लम्. दु.शिङ. र्त. ऽग्रो. बर्. ब्चोन् ।
स्ने. ल. चोऽि. वर्. मेद्. बु. ग्चिग्. फ. यि. म ।।

२१. र्ग्ये.म्छोऽि. लम्. ब्र्ग्येग्स्. देद्.द्पोन्. ञम्स्. ल. द्रिस् ।
ग्सो. रस्. छर्. ब्स्नुङ. ग्लिङ. लोन्. खोम्. पर्. ग्चेस् ।।
57*a*. ग्सिङस्. क्यि. छ. र्क्येन्. देद्. द्पोन्. खो. छग्स्. ब्येद् ।
युल्. ग्यि. ऽखि. ब. ञाग्.[७] थग्. ब्चद्. दुस्. शिग् ।।

२२. ऽदोद्. पऽि. र्लुङ. ब्युङ. देद्.द्पोन्. ब्लो. सेम्स्. ब्दे ।
ग्लिङ. दोन्. म. ग्रुब्. देद्.द्पोन्. फ्यिर्. मि. ल्दोग् ।।
ऽग्युर्. ब. मेद्. प. र्ग्यल्. पोस्. ग्स.ुङस्. पऽि. छिग् ।
स्ब्रङ. छङ. ऽबेब्स्. दुस्. यिद्. ल. गो. छ. ब्येद् ।।

२३. गर्. छङ. ब्लुङ. पो. ऽछम्. पऽि. र्तेग्स् ।
मिग्.[१] ग्सेर्. म्थोङ. बऽि. लस्. मिस्. ब्दे. स्दुग्. स्पङस् ।।
दर्. ग्यि. स्त्रिन्. बु. ख. छु. सग्स्. पस्. फुङ ।
दे. नि. ग्शन्.ग्यिस्. म. लन्. रङ.लस्. स्क्येस् ।।

२४. छङ. ल. ञेस्. स्क्योन्. योद्. पद्. म. यिन्. नो ।
म. रिग्. स्तोब्स्. क्यिस्. ख. छु. मङ. दु. स्क्युग् ।।

१८. देखने से पर्याप्त उत्तम-औषध सुवर्ण शिल्प,
घरमें अप्रसन्न लड़की की बुद्धि ना हरै।
ओडियान श्मशान राक्षसी की क्रोधभूमि,
मुनिका निवास वज्रासन न अस्त (होइ) ।।

१९. प्रयोजन प्रत्यय-समूह कलिंग स्थान,
सागर के छोर पर सर्प-विष ना उपजै।
रत्नदुर्ग में भी निर्भय,
बलात्कार-त्याग मागध मानुष ।।

२०. कहने में ना उत्सहै रानी वक्र गति,
आस्तरण में मृणालधारी श्वापद सिंह-शिशु।
निम्न-उन्नत मार्ग रथ गमन प्रयास,
अग्नि-शिखा निरन्तर एकपुत्र पिता माता ।।

२१. सागर मार्ग मत्त सार्थवाह विनाश पूछै,
उपल-वर्षा रक्षक द्वीप-गामी क्षण प्रिय।
पोत अंश हेतु सार्थवाह सो पादुका करै,
विषय दीवा पीठ-रज्जु छेदते समय नष्ट ।।

२२ कामवायु होइ सार्थवाह बुद्धि चिन्तै सुख,
द्वीप-अर्थ ना साधि सार्थवाह बाहर ना लौटे।
ना वदलै राजा की कही बात,
मधुमद्य आवेश के समय मन का कवच बनै ।।

२३. नृत्य मद्य गायन नृत्य-चिह्न,
कामला-दृष्टि कर्मी सुखदुख छाड़ै।
रेशमकीट की च्युत-राल की राशि,
सो अन्य से ना ले अपने उपजावै ।।

२४. मद्य में दोष पाप है नहीं,
अविद्या बश थूक बहुत बमन करै।

रङ. ञिद्. फुङ. बर्. बस्. क्यिस्. ग्शन्. दु. मिन् ।
ल्चगस्. स्रेग्.[२] स. ग्शि. मे. छोगस्. म. ब्स्क्येद् ॥

२५. ब्यर्. चि. ङो. शेस्. छेद्. दु. चें. ब. ग्लेन् ।
स्मिग्. ग्यु. छुर्. म्थोङ. रि. दग्स्. स्ञिङ. रे. जें ॥
थिग्. ले. म. यल्. ग्यं. खोल्. दल्. मि. ऽग्युर् ।
बेर्. क. ग्ञिस्. फोग्. मि. दे. चि. रु. रुङ ॥

२६. ग्तेर्. ग्यि. ब्दग्. पो. मि. रे. रिग्स्. ङन्. बु ।
दुद्. पस्. मि. ऽजिग्स्. चि. मेद्. स्ब्रङ.मऽि.[३] छङ ॥
ऽछि. ब्दग्. ख. रु. म्छुङ. स्क्ये. ऽग्रो. ब. गङ ।
लुस्. ल. ऽब्युङ. ब. म. ऽख्रुग्स्. दों. जें. यि. मि ॥

२७. मिङ. नस्. बोस्. पस्. शि. ब. ल्दोग्. गम्. चि. ।
म्थोङ. स्नङ. द्ग्र. रु. रेद्. प. दुग्. स्ब्रुल्. मिग् ॥
ख्योद्. ल. शिङ. लोस्. ग्नोद्. प. स्क्यल्. ब. मेद् ।
ब्रग्. चऽि. स्ग्र. ल. बुस्. प. ब्स्तन्. स्दुग्. चिस् ॥

२८. मि. लम्. ग्तेर्.[४] ञेंद्. सद्. छे. म्य.ङन्. ब्येद् ।
ग्योद्. खेङस्. लङस्. पऽि. स्प्यद्. कि. र. ल. मुंग्स् ॥
बग्स्. पऽि. रिग्स्. चन्. द्ग्र. ल. बु. रु. ल्त ।
ग्नोद्. प. स्क्यल्. दुस्. स्लर्. ल. ग्चेस्. पर्. ऽजिन् ॥

२९. फन्. लेन्. म. ब्तग्स्. स्क्ये.ऽग्रो.नंम्स्.क्यिस्. मेद् ।
ख्यि. ख्रोस्. दों. ल. ऽछऽ. ब. स्ञिङ. जेंऽि. युल् ॥
च्ँब. मे. रुम्. दु. बस्. दुस्.[५] दु. ब. ऽछद् ।
म्थोङ. स्नङ. लोग्. पऽि. रि. दग्स्. ब्दे. व. स्तोर् ॥

३०. लुस्. ल. रङ. द्बङ. म. थोब्. स्दुग्. ब्स्ङल्. ब्र्तेन् ।
छे. म्थऽ. रिङ.पस्. फुङ.ब. द्म्यल्. बऽि. लुस् ॥
ऽदि. ल. ब्दे. बऽि. बर्. म्छम्स्. ऽदुग्. गस्. चि ।
स. बोन्. म. रुल्. न्य. ग्रो. लो. ऽब्रस्. ग्यु ॥

स्वयं ही राशि अतिथि अन्यत्र नहीं,
लोहा तप्त भूमि आधार अग्निसमूह ना उपजावै ।।

२५. क्रिया औषधि परिचय हेतु खेलै अज्ञ,
मृग मायाजाल देखि अहो करुण ।
तिलक ना बड़ी शाखा मन्थर दास न होइ,
दो लाठी पातै सो आदमी क्यों उचित ।

२६. निधि-पति मानुष कुजाति-पुत्र,
धूप से ना डरै औषध बिना मधु-मदिरा ।
यम-मुख से समुत्पन्न जो, देह जन्मा सिवाय डरै बज्र-पुरुष ।।

२७. नाम पुकारे (से) मृत लौटे क्या,
दृष्टि प्रतिभासी रिपु में है बैठी सर्प-चक्षु ।
तुझे पत्र से बाधा प्लवन में नहीं,
प्रतिध्वनि-शब्द फूंक दिखावे प्रिय औषध ।।

२८. स्वप्न में निधि लहि जागते समय शोक करै,
शठता मद से उठि सियार बकरे को काटै ।
आर्य रिपु को पुत्र (सा) देखै,
बाधा दीर्घ-काल में पुनः (वि-)चित्र धरै ।।

२९. हित-ग्रहण अलख ना जगवालों से,
क्रुद्ध कुक्कुर पत्थरको काटे(अहो) करुण विषय ।
तृण को अग्नि बीच मारते समय धुआँ फूटै,
मिथ्या-दृष्टि प्रतिभा से मृग सुख से भ्रमै ।।

३०. शरीर को स्वच्छन्द न पा दुख आलंबै,
दीर्घ-जीवन-अन्त से व्यर्थ नरक शरीर ।
यहाँ सुख के भीतर सीमा हो तो क्या,
बीज विना सड़े वट के फल का कारण ।।

३१. देद्.द्पोन्. स्ञिङ. ख्रग्. ऽथुङस्.प. स्कल्.बर्.ल्दन ।
थिग्स्. प. ब्सग्स्. पऽि. र्ग्य.म्छो. ङो.म्छर्. छे ॥
नम्.म्खऽ. म्थोङ.बस्. द्ब्यिङस्.क्यि. फ्योग्स्. ऽजिन्. शि ग् ।
युद्. चम्. म्थुद्.पस्. ब्स्कल्. (प.) ऽजद्. पर्. ल्तोस् ॥

३२. र्ग्युस्.स्कुद्. लम्. स्न. ऽख्रिद्. प. फग्.र्गोद्. स्पु ।
ख्रि. स्ञन्. पग्स्.प. म.गोन्. द्रङ.स्रोङ. मिन् ॥
57b ग्रु.ब. प. यन्. लग्.[७] ब्रेल्. ब. रङ. गि. छेद् ।
दब्.ग्शोग्. र्ग्यस्.छे. छ्ङ. न. दुग्. क्यङ. म्खऽ ॥

३३. यिद्.ब्शिन्.नोर्.बुऽि. द्गोस्. प. गङ. यिन्. ल्तोस् ।
मे. तोग्. लस्. ब्युङ. स्गङ. बु. दुस्. सु. स्मिन् ॥
बुम्. प. ब्सङ. प.द्गोस्. ऽदोद्. ऽब्युङ. बऽि. स्नोद् ।
मर्. ग्यि. ग्यु.नि. ऽो. म. यिन्.पर्. ङेस् ॥

३४. ञोंद्.पर्. मि. ऽग्युर्. सेर्. पो. दोर्. बऽि. ग्सेर् ।
ञि. मऽि. सेर्. ग्यिस्. मुन्. पऽि. ग्य. रुम्. ऽजोम्स् ॥
ग्सेर्. दु. स्नङ. बऽि. द्ङुल्. छु. ग्शन्. दु. मिन् ।
छु. ल. छु. ब्शग्. थ. दद्. मि. स्नङ. ङो ॥

३५. मर्. ल. मर्. ब्शग्. दे. च्शिन्. ञिद्. दु. बस् ।
म्थऽ. थन्. न. र. ग्ञिस्. सु. गङ. गिस्. ऽब्येद् ॥
र्ग्य. म्छोऽि. लँङस्. प. स्प्रिन्. ग्यि. ङो. बोर्. ग्चिग् ।
म्खऽ.[2] ल. ल्चग्स्. द्ब्युग्.शुल्. ल. ख्यद्.पर्. मेद् ॥

३६. चिं. लेन्. प. यि. स्ब्रङ. म. ल. ल्तोस्. दङ ।
ग्लङ. पोऽि. र्ग्यब्. खल्. ग्रोग्. मऽि. ल्तो. रु. ऽजद् ॥
र्ग्यल्. पोऽि. स्कु. द्रि. मस्. गङ. छे. ऽगोस्. ऽगोस् ।
फ. रब्. ङुँल्. ग्यि. नुस्. प. ङो. म्छर्. छे ॥

३७. म्खस्.पऽि. ब्सो. नि. रिम्. प. ब्शिन्. दु. छर् ।
थब्स्. ल्दन्. शिङ. प.[3] रिग्स्. स्नङ. म्छु. रु. ब्स्रिङ ॥

३१. सार्थवाह हृदय-रक्त पीवै भाग्यवान्,
बिन्दु से संचित सागर महाश्चर्य ।
आकाश देखि स्वर-धातु-दिशा पकड़,
क्षण मात्र कटे से कल्प-समाप्ति देख ।।

३२. कारण-सूत्रमार्ग नाक पकड़ना शूकर-रोमांच,
मृदु आस्तरण चर्म ना पहिने ऋषि नहीं ।
नाविक अंग-संबंध स्वयं हेतु,
बहु पत्रछद समय पंक्ति में रहैं आकाश ।

३३. चिन्तामणि चाहै जो (उसे)
देख, फूल से उत्पन्न बाल समय पके ।
भद्रघट प्रयोजन की इच्छा से उत्पन्न पात्र,
घीका का कारण दूध है निश्चय ।।

३४. लाभ न होवै पीत त्यक्त सुवर्ण,
सूर्यकिरण तमपुंज नाशै ।
सुवर्ण दीखना पारद अन्यत्र,
जल में जलफेन भिन्न ना दीखै ।।

३५. घी में घृत-फेन तैसे ही अतिथि, अन्त ग्राह (अन्.) उचित जो द्वैत करै ।
सागर-वाष्प मेघ का एक (स्व-) भाव,
आकाश लौहदंड मार्ग में निर्विशेष ।।

३६. औषध लेनेवाली (मधु-) मक्खी को देख औ,
गज पीठ पलान में चींटी का पेट समाप्त* ।
राजा के शरीर को गंध जब चाहिये,
परमाणु रेणु की शक्ति महा अद्भुत ।।

३७. चतुर का शिल्प (कर्म) यथाक्रम समापै,
उपाययुक्त किसान कुलभासी चंचु ओठ में बंटै ।

ख्योद्. क्यिस्. युर्. ब. ऽगग्स्. प. फ्यर्. सोल्. चिग् ।
दुस्. पऽि. खम्. शिङ. ऽग्नस्. बु. ल. ल्तोस्. दङ ॥

३८. चन्दन्. स्दोङ. बो. स्प्रुल्. ग्यि. स्क्यब्स्. ग्नस्. स ।
छु. थिग्स्. ग्यं. म्छोर्. बोर्. ब. स्कम्. मि. ऽग्युर् ॥
ग्यंन्. नंम्स्. ऽब्युङ. ब. शुन्. स्ब्यङ्स्. छ्र्. पऽि. ग्सेर् ।
बु. छिस्.[4] मि. द्रन्. ग्यं. म्छोऽि. ग्रु. शिग्. मि ॥

३९. स्प्र. मि. स्नान्. प. नोर्. ल. शि. मि. ग्दुङ ।
गलिङ. दोन्. मिग्. ञोर्. देद्.द्पोन्. चि. रु. रुङ ॥
सु. शिग्. ब्दे. ऽदोद्. ग्यंब्. क्यि. खुर्. छ. बोर् ।
द्मुस्. लोङ. फ्ये. बऽि. मि. ल. द्रिन्. ब्सो. रिग्स् ॥

४०. बं. ऽखोर्. फ्योग्स्. नस्. ब्स्लोग्. पऽि. देद्. द्पोन्. ब्कुर् ।
मुन्. रुम्. नङ. दु. म्खऽ. ल. स्ल. ब. ग्चेस् ॥
ऽदम्. नस्. ऽदोन्. पऽि. मि. ल. सु. शिग्. गोंल् ।
ग्लिङ. ब्लन्. देद्.द्पोन्. स्प्य. बोर्. लोङ. शिग्. दङ ॥

४१. शर्. नस्. न. बुन्. उत्पल्. छु. ल. मेद् ।
थद्. कर्. मि. ग्नस्. म्खऽ. ल. शर्. बऽि. ऽजऽ ॥
ङिङ. गि. छु. नि. फिग्. पर्. ग्युर्. छे. ऽजद्. ।
छुनि. थुर्. ग्शोल्. ग्येन्. ल. ब्स्लोग्. मि.[6] ऽग्युर् ॥

४२. ग्रो. दोन्. मि. म्जद्. थुब्. प. चि. फ्यर्. ऽदऽ ।
स्मिग्. थुंऽि. क्लुङ. ल. छु. यि. ऽदु. शेस्. बोर् ॥
ब्देन्. प. म. यिन्. मि. लम्. ग्तेर्. ञेद्. दुस् ।
ऽख्रुल्. ग्यि. बु. मो. ऽदि. ल. म. छग्स्. शिग् ॥

४३. म्छङ. चन्. ग्शेद्. मस्. सिन्. पऽि. सेम्स्. दे. ल्तोस् ।
ग्सेर्. दङ. ग्रेस्. म. स्प्रेग्. गि. ङो. बोर्. म्नाम्[7] ॥
58a म. सोस्. बु. रम्. म्थोङ. बस्. म्ङर्. मि. ऽग्युर् ।
म. द्क्रोग्स्. शो. यि. नङ. नस्. मर्. मि. ञेद् ॥

तू थाला-बाँधने के लिये बाहर रख ?,
सामयिक जामुन वृक्ष फल को देख ।।

३८. चन्दन-वृक्ष सर्प का शरणस्थान,
जलविन्दु सागर से निकाले सूख ना जावै ।
भूषण-उत्पत्ति संदेह धातुनिष्ठ सुवर्ण,
पुत्रमरण विसरे भग्न सागरपोत मनुष्य ।।

३९. अमधुर शब्द के भ्रम में ना चित्त जरे,
द्वीपार्थ अव्यवहार सार्थवाह कहाँ अभव्य ।
कौन सुखार्थी (सो) पीठ के महाभार को छाडै,
जन्मान्ध नष्ट मनुष्य पर दया उचित ।।

४०. तट के आवर्त की दिशासे लौटे सार्थवाह,
तनगर्भ के भीतर आकाशे चन्द्र प्रिय ।
पंक से बंधे मनुष्य को कौन प्रेरित करै,
द्वीप से लौटे सार्थवाह शिर में एक अन्ध ।।

४१. कुहरा उदय उत्पल-जल में नहीं,
प्राकारे ना रहै आकाशे उदित चन्द्रधनुष ।
तडाग जल भेदन होते समय समाप्त,
जल-निम्न उभड ऊपर ना लौटे ।।

४२. जगहित न कर (सो) मुनि कैसे,
माया-नदी में पानी की संज्ञा त्याग ।
सत्य नहीं स्वप्ननिधि लाभ के समय,
इस भ्रम की कन्था में राग न करै ।।

४३. सुन्दर व्याध ने पकड़ा उस चित्त को देख,
कंचन-रज्जु की साँकड़ में स्वभाव (एक) समान ।
खाये विना गुड़ देखने से मीठा न होवै,
बिना मथे दही के भीतर से मक्खन ना लहै ।।

४४. म. ऽथुङस्. ग. बुर्. छद्. प. सल्. लम्. चि ।
मछोग्. गि. नोर्. बु. स्प. बर्. ब्य. ब. मिन् ॥
र्दम्. बोऽि. लग्. तु. स्त. रेऽि. नुस्. प. स्तोर् ।
फोल्. ऽब्रस्. मैल्. द्गोस्. पर्. म्थोङ. व. सु[1] ॥

४५. छु. शिङ. स्ञिङ. पो. ञेद्. पऽि. मि. दे. गङ ।
ग्सेर्. मेद्. प. यि. लस्. क. द्गोस्. प. मेद् ॥
म्थोङ. ब्शिन्. दु. नि. दोङ. दु. ऽग्रो. मि. रिग्स् ।
ङुग्. छु. ऽथुङ. ऽफ्रो. ञम्. छद्. ब्दे. मि. ऽग्युर् ॥

४६. ह्. ल. सोङ. बऽि. स्मन्. मर्. चि. रु. रुङ ।
दुस्. दे. ञिद्. दु. स्ब्रङ. छद्. ऽथुङस्. पस्. ब्सि ॥
ऽग्रो. दुस्. फुङ. पो. ञि. यि. ग्सन्. लेन्.[2] ब्यस् ।
र्मोङस्. प. स्रिन्. मोस्. चोद्. पन्. ब्चिङस्. ल. द्गऽ ॥

४७. म्छिल्. पस्. सिन्. पस्. ञ. यि. ब्दे. ब. स्तोर् ।
ऽछि. ऽदोद्. नद्. ल. द्रङ. स्रोङ. ङग्. मि. ञन् ॥
दे. नि. ग्नोद्. पऽि. ख. सस्. स्तेन्. ल. द्गऽ ।
फन्. पऽि. स्मन्. ल. ग्चेस्. पऽि. ऽदु. शेस्. बोर् ॥

४८. दु. व. व्स्क्येद्. पऽि. स्प्योद्. लम्.छेद्. दु. ब्येद् ।
स्मन्[3]. ल्. नुस् प. मिङ्.-चेस्. र्मो. र्मोङस्. प.स्म्र ॥
मि. ग्रुब्. खस्. ब्लङस्. र्ग्येल्. पोऽि. ब्कऽ. छद्. ग्नस् ।
ब. शेल्. र्जेस्. मि. सुङ. रङ. ल ग्नोद्. पर्. बस् ॥

४९. नोर्. बुऽि. नुस्. प. थल्. बस्. ब्यिब्स्. छे. स्तोर् ।
सेङ.गेऽि. ऽो. म. र्जे. यिन्. नङ. दु. मिन् ॥
छद्. मेद्. दु. बऽि. बुस्. प. श. रे. छद् ।
ब्स्तेन्. ऽफ्रो. ब्चद्. पर्. मि.[4] रिग्स्. फन्. पऽि. स्मन् ॥

५०. स्तोद्.लोग्. मि. ब्य. रिन्. छेन्. ग्लिङ. गि. मि ।
गल्. दु. मि. रुङ. ऽखोर्. लोस्. स्युर्. र्ग्येल्. ग्ञऽ ॥

४४. विना पीये कपूर ना ज्वर विनाशै,
उत्तम मणि को ना गोपन करै।
पागल के हाथ में कुठार का बल न ठीक,
पुरुष के फल बर्तने का प्रयोजन देखै कौन ।।

४५. केला के साथ का लाभ सोई आदमी कहै,
जो सोने के विना कर्म न चाहै।
देखते हुए जैसे गड़हे में जाना नहीं ठीक,
विषजल पीकर साफ विच्छिन्न हो ना सुखी होई ।।

४६. हल ? गति की औषधि घी क्या चाहिए,
उसी समय मधु के मद्य को पीने से मतवाला।
.जाल स्वीकारै चलते समय स्कन्ध
मूढ़ यक्षिणी द्वारा मुकुट बाँधने में प्रसन्न ।।

४७. बंसी से पकड़ी मछली का सुख जाई,
मरण-इच्छुक रोगी ऋषि-वचन ना सुनै।
सोई हानिकर भोजन सेवन में प्रसन्न,
हित-औषध के प्रिय ज्ञान को त्यगै ।।

४८. नाना वृद्धि की चर्या मार्ग का प्रयोजन करै,
औषध में समर्थ नाम है, यह मूढ़ कहै।
असिद्ध स्वीकार कर राजाज्ञा तोड़ बैठे,
स्फटिक न अपने को अनुरक्षै हानिकारक ।।

४९. मणि की शक्ति धूल से ढँके समय भ्रान्त,
सिंह नीका दूध मिट्टी के बर्तन में न रहै।
निरन्तर धुआँ फेंकना मांस-छेदन,
स्पष्ट उपदेश तोड़ना ना हित-औषध ।।

५०. झूठे शून्य ना करै रत्नदीप का मानव,
तैरने में ना ठीक चक्र घुमाना राजचिह्न ।

म्छुर्. मेद्. ग्सेर्. ग्यिस्. द्ङुल्. छु. ल्चग्स्. मि. ऽग्युर्।
रङ. ञाम्स्. म. लोन्. ग्यद्. ल. ब्स्दो. मि. रिग्स् ॥

५१. ब्रस्. बु. स्मिन्. पस्. ग्ञुग्. मऽि. चं. ब. ब्लंग् ।
फ्युग्स्. ब्दग्. लिङ.[5] म्छोद्. पऽि. द्रि. मस्. ख्येर् ॥
ख्रुल्. पऽि. ग्यंल्. पो. बङस्. क्यि. ग्योग्. तु. गंस् ।
ङो. म्छर्. छे. ब. ग्सेर्. मछोग्. ग्सेर्. ऽग्युर्. चि ॥

५२. म्दोङस्. ल. ल्त. बऽि. मं. ब्य. गुद्. नस्. ऽछि ।
दुग्. गि. छु. नि. ब्तुङ. बर्. ब्य. ब. मिन् ॥
ब्रम्. से. छङ. गिस्. ब्सि. ब्चोस्. ब्यस्. दुस्. लद् ।
मिग्. गि. रिन्. ल. चि. ब्तुब्. सोम्स्.[6] दङ. क्ये ॥

५३. ग्युंस्. मेद्. छोद्. ल्दोङ. लुस्. ल. बेर्. क. ऽफोग् ।
ब्सो. यि. रिग्. ब्येद्. छोङ. ल. ग्शुग्. प. मिन् ॥
स्तग्. गि. रि. मो. ब्कब्स्. ग्योद्. लग्. तु. गस् ।
लुस्. ल. लुंङ. म्ख्रिस्. फ्यि. नस्. शुग्स्. प. मिन् ॥

58b ५४. चंल्. ग्सुम्. जोंग्स्. पस्. फुङ. ब. सेङ. गेऽि. लुस् ।
दोम्. ग्यि. स्दुग्. ब्स्ङल्. स्ब्रङ. चि. ञोंद्. दुस्.[7] ब्लङ ॥
छोङ दुस्. द्बुस्. सु. दोन्. स्तोर्. दोन्. मि. ऽग्रुब् ।
ब्से. रु. छोल्. बऽि. मि. दे. स्दुग्. ब्स्ङल्. छे ॥

५५. दोग्स्. पस्. न. बऽि. खोङ. न. दुग्. योद्. मिन् ।
क्लु. म्छोग्. म्गो. बो. दे. ञिद्. स्दुग्. ब्स्ङल्. तेंन् ॥
द्रि. सऽि. बु. नि. ग्युंद्. मङस्. स्ग्र. यिस्. ब्चिङस् ।
स्ब्रङ. मऽि. छङ. नि. चि. मङ. सोग्. पस्. फ़ुङ ॥

५६. थर्. लम्.[1] ऽदोद्. पस्. ख्यि. यि. स्ञिङ. फ्युङ. चिग् ।
ल्चगस्. क्यु. दङ. ब्रल्. ग्लङ. पो. ब्दे. बर्. ग्नस् ॥
ग्यंल्. पोऽि. शब्स्.तोग्. बस्ङो. ब्ग्रङस्. ब्यस्. छे. यल् ।
ब्ये. यि. फ्रु. गुऽि. ग्चेस्. ऽजिन्. द्गोस्. प. गङ ॥

सुवर्ण से पारा लोहा न होवै,
स्व-निधन विना विक्रम चाहना नहिं ठीक ।।

५१. पका फल निज मूल में लगा,
पशुपति द्वीप पूजा गन्ध से ले जावै।
झगड़ू राजा के बस में नौकर बूढ़ा,
महाअद्भुत उत्तम सोना औषध होइ ।।

५२. मुख देखि मोर विपत्ति से मरे,
विष का जल पीने योग्य नहिं ।
ब्राह्मण मद्य से मतवाला होते समय,
नेत्र के मूल्य को क्या काटै रे ।।

५३. अकारण वैश्य देह पर दण्ड मारै,
शिल्प-वेद दूकान में न रहै ।
बाघ का चित्र मंगल करता रक्खै,
देह में खाना न खींच बाहर ना रहै ।।

५४. त्रिविक्रम निष्पन्न राशि सिंह का देह,
भालू का दुःख मधुप्राप्ति के समय पावे ।
विक्रय के समय बीच में अर्थ छाड़ि अर्थसिद्ध ना होई,
गैंड़े की गवेषणा आदमी के लिए महादुःख ।।

५५. शंका-रोग के भीतर विष है नहीं,
उत्तम नाग सोई दुःख का आश्रय ।
गन्धर्वकुमार वंशी शब्द से बँधा,
मक्खी का मधु बड़ी औषध पयालपुंज ।।

५६. मुक्तिमार्ग की इच्छा से कुत्ते का हृदय,
अंकुश विना गज सुख से रहै ।
राजसेवक गवेषणा करते समय,
पक्षिशावक का प्रिय चाहै जो ।।

५७. द्ङुल्. छु. स्नोद्. दु. सग्स्. पर्. ग्युर्. त. रे ।
स्निन्. बु. मे. ख्येर्. ड्रेग्स्. पस्. ग्यॅल्. रिन्. मेद् ।।
ने. छेऽि. फ्रु. गु. स्म्र. म.[2] शेस्. पस्. म्छ़द् ।
स्ब्रङ. छ़ङ. म्थोङ. बऽि. दोम्. मिग्. म्खऽ. ल. ल्त ।।

५८. दे. दुस्. सि़म्. बुम्. म्योङ. स्दुग्. ब्स्ङल्. गॅ्यु ।
ख. ब्रग्. लम् दु. ग्युंस्. मेद्. मि. थे. छोम् ।।
छु. क्लुङ. मु. रन्. स्दोङ. ग्रु. ञ्‌ाल्. बऽि. स्ङस् ।
स्ब्रङ. चि़. म्योस्. पस्. ङॅ. मोग्.योद्. ल. गुतुग्स् ।।

५९. बग्. मस्. ल्तद्. मो. म. म्थोङ. छ़ोद्. दुस्. द्बुस् ।
सोस्.[3] ब्शि़न्. ब्स्तेन्. न. स्मन्. म्छ़ोग्. दुग्. तु. ऽग्युर् ।।
दोन्. ग्चिग्. मि. ऽग्रुब्. ग्ञिस्. ऽजि़न्. चन्. ग्यि. ब्लो ।
ख्यिम्. लस्. म. ऽफग्स्. देद्.द्पोन्. गि़लङ. मि. लोन् ।।

६०. ब्तॅग्. पऽि. म्छ़ङ. मेद्. नोर्. बु. द्ब्यिग्. ल. ब्दर् ।
स्तोद्. ल. म्नन्. पऽि. स्प्रेऽु. कॅङ. लग्. ब्रेल् ।।
नद्. ङोस्. म. सि़न्. ब्चोस्. क. ख्रो. लोग्. ब्स्ग्युर् ।
देद्.[4] द्पोन्. म्ज़ोद्. म्थोङ. ख्यिम्. ब्दग्. दॅङ. ङो. ल्दङ ।।

६१. सेङ. गेऽि. म्गो. ङो. म्थुर्. ग्यि. फ्यर्. मि. ऽब्रङ ।
म्खऽ. ल्दिङ. ग्शोग्. ज़ोग्स्. छ़ङ. ल. मिग्. मि. ल्त ।।
र्ल. बो. म्थोङ. दुस्. ब्से. रु. गुद्. दु. गब् ।
ग्रोङ. लस्. ग्रिङस्. पऽि. चे. र्प्यङ. लुस्. सेम्स्. ब्दे ।।

६२. द्ग्र. यि. स्दुग्. ब्स्ङल्. ब्रल्. ब. ग्चेर्. बुऽि. लुस्[5] ।
ऽबग्. गि. रिग्. ब्येद्. ग्सो. यि.ब्सो. ल.ग्नोद् ।।
म. हेऽि. स्ग्य.द्. ख्योल्. ऽग्रो. लम्.थुर्. ग्शोल्.ब्दे ।
म्खस्. पस्. मि. छुन्. ब्लुन्. पोस्. स्ब्यङस्. पऽि. ग्लङ ।।

६३. ल्तो. रु. दुग्. सोस्. शु. जॅस्. ब्दे. मि. ऽग्युर् ।
मोंङस्. पऽि. दग्. ल. ञ्‌ान्. फस्. ऽछेङस्. प. गङ ।।

५७. पारे के बर्तन में च्युत होइ,
जुगनू दर्प से महामूल्यवान् नहीं।
शुकशावक पूरा बोलना ना जानै,
मधु-मद्य देखते भालू का नेत्र आकाश देखै ॥

५८. उस समय कोमल न अनुभवै दुःख-हेतु,
शिलाकीर्ण मार्ग में अपरिचित आदमी निस्संदेह।
नदी पुरान काष्ठपोत शय्या उपधान,
मस्त मक्खी ऊँट के ऊपर नवै ॥

५९. बहू का तमाशा ना दखै हाट बीच,
लौकी आश्रय ले उत्तम औषध होवै विष।
एक अर्थ न साधि दूसरे को लेनेवाली बुद्धि,
घरसे विना उठे सेठ द्वीप न लेइ ॥

६०. अपूर्ण परीक्षित मणि धन में प्रविशै।
उन्मार्ग में कूदता बानर हाथ-पैर से फँसै।
व्याधि स्वभाव न पकड़ै मिथ्या परिवर्तन।
सेठ-कोश देखै गृहपति सोपान चढ़ै ॥

६१. सिंह सिर के घूमै अनुसरै।
गरुड़ पक्ष-सहित पाँती में ना ढूँढ़ै।
चन्द्रदर्शनके समय गैंड़ा सिकुड़ छिपै।
बस्ती से भागे सियार के देहचित्त में सुख ॥

६२. शत्रु के दुःख से रहित नग्न का देह।
पुतली बेद चिकित्सा शिल्प बाधै।
भैंस-जाँघ विषम मार्ग सुखी।
चतुर न मानै मूर्ख महावत गज ॥

६३. उरग के विष को खा पचा कर सुखी ना होइ।
मूढ़ की बानी सुने कौम अर्थ।

मुक्त हो कारा में डूबै अहो करुणा !

मेष-शावक का बन्धन तोड़ना कठिन ।।

६४. देवता के दोष उपजै परुषक वन ।

भिक्षु का निवास रानी का प्रकोष्ठ नहीं ।

पाश में पड़ते समय बानर बिना वन ।

दोष जिमि साथ लेवै सेनापति ।।

६५. सोनार अपने कण्ठ में भूषण न धारै ।

दासी पा भी मणि-स्वामी ले जावैं ।

रुग्ण-दंत वृद्ध सेठ द्वीप ना लेवै ।

पुत्र ताड़ै तो नाती प्रिय धरै ।।

६६. गुहा में सिंह पराक्रम ना शोधै ।

मृग भालू की चाल से सेना-राग ना परिभवै ।।

दल और मित्र हृदय-बल के व्याघात से ।

मूषिका अनुसरि पितृदेश ना धरै ।

६७. कुत्ते खुले ओष्ठ में बलि लेइ ।

कौवे का साथ बक मीन छाड़ै ।।

गन्ध अलिप्त पिण्ड पात्र सूना बर्त्तन ।

चक्का उतारि रथ क्षण न देइ ।।

६८. राजा हीना-चारी किसकी आँख में पहले सुन्दर ।

मधु-इच्छुक नम्र मक्खी का वन ।

पद्म पर माया का सुन्दर कलश ।

रज-अलिप्त अकटु चमकता ।।

६९. निर्दोष निष्प्रभ प्रकारवान् ।

नगर पास ना ढूँढ़ै रवि-शशि भूषण से सज्जित ।

दुर्लभ होने से प्रेरणा दरिद्र है ।

पद्म-कली मुख ना खोलै ।

७०. चन्दन्. छु. नि. स्क्योन्. ब्रल्. स्नोद्. दु. ब्लुग्स् ।
द्ङुल्. ग्शोङ. म. फियस्. ग्यँल्. पोऽि. ग्सङ. मि. ऽद्रेन् ।।
म्खर्. मऽि. स्प्यद्. दु. सो. ब. ब्लुग्स्. मि. ब्य ।
छु. बो. ब्शि. ऽबब्. ग्यँ. म्छो. रोम्स्. मि. ऽग्युर् ।।

७१. देद्. द्पोन्. ञोंद्. दुस्. ग्लिङ. दोन्. ब्स्ग्रुब्. पर्. ब्य ।
ब्शि. म्दोऽि. छोङ. ऽदि. ग्सिङस्. क्यि. ऽग्रोस्.ल. ग्नोद् ।।
छेस्. ग्सुम्. स्ल. ब. गँस्. पऽि. दुस्. ल. ब्स्ञोन् ।
छु. गङ. ऽखोर्. मस्. देद्. द्पोन्. दोन्. स्तब्स्. ग्चोग् ।।

७२. खिम्र. मोन्. ख. रु. ल्ह. यि. स्ग्रस्. मो. ब्यर् ।
ग्लिङ. ल. तोंल्. बऽि. छोङ. पऽि. ब्लो. मि. ब्तँन् ।।
दुग्. स्ब्रुल्. ग्चुग्. गि. नोर्. बु. ब्लङ. मि. ब्य ।
ग्यद्. फ्रुग्. चँल्. स्ब्यङ. सेम्स्. दे. दोङ. चिग्. दङ[5] ।।

७३. ब्चुन्. मोऽि. ब्सुङ. म्छोन्. म. ल. ब्चोल्. ब. मिन् ।
थर्. प. ऽदोद्. न. म्छल्. ग्यि. थिग्. ले. ब्सुब्स् ।।
दम्. योद्. प. छु. ञोंग्. पस्. दङस्. मि. ऽग्युर् ।
खिय. गोंद्. म्थोङ. दुस्. मि. स्रोग्. रङ. ब्चोम्. स्क्युर् ।।

७४. द्रि. सऽि. ग्रोङ. ख्येर्. ब्ल्त. बर्. ब्य. ब. मिन् ।
ग्रोग्. मऽि. स्प्योद्. प. बोर्. न. ङेस्. पर्. ब्दे ।।
तिल्. ग्यि.[6] मे. तोग्. मि. ब्तोग्. ब्चद्. पर्. फङस् ।
शिङ. लोऽि. स्तेङ. न. दुर्. स्त्रुङ. यन्. लग्. दल् ।।

७५. बुद्. मेद्. ख्यिम्. ग्यिस्. सुन्. प. दे. ल. ल्तोस् ।
स्तोब्स्. क्यिस्. ऽख्रुल्. पऽि. ऽखोर्. लोऽि. ग्शोग्. प. ब्रेल् ।।
चिं. यिस्. सिन्. पऽि. ल्चग्स्. ऽदि. ग्सेर्. दु. ऽग्युर् ।
ग्सेर्. लङस्. स. बोन्. योङस्. सु. ब्स्दो. मि. ब्य[7] ।।

59b७६. नम्. मखऽि. ङङ. ल. शर्. ल्हो. फ्योग्स्. म्छम्स्. मेद् ।
दर्. ग्यिस्. छोस्. क्यिस्. शेल्. गोङ. दोग्. स्ग्युर् ।।

७०. चन्दनजल निर्दोषपात्र में डालै।
रजतनिधि न खोले राज-रहस्य ना खींचै।
खेत के ऊपर घास ना डालै।
चार नदी उतर सागर ना मिलै॥

७१. सेठ लाभ समय द्वीप का अर्थ साधै।
चार सूत्र पण्य यह संक्रम की शपथ बाँधै।
तृतीया का चाँद जीर्ण होते समय सेवे।
पूर्ण-जलावर्त में सेठ का अर्थबल खंडै॥

७२. राजकिरात मुख में देवकन्या होइ।
द्वीप छिद्रक वणिक् की बुद्धि अदृढ़।
विषसर्प की शिखामणि ना लेवै।
बच्चा विक्रम पाल चित्त त्यागै॥

७३. रानी की रक्षिका को प्राथैं नहीं।
मोक्षकामी वन-तिलक रक्षै।
पंकिल पानी का स्पर्श स्वच्छ ना करै।
चंड श्वान देखते समय मानव-प्राण स्वयं ध्वस्त।

७४. गन्धर्व नगर दीखता नहीं।
चींटी की चाल छाड़ि सुख निश्चय।
तिल-पुष्प न खनि छेदै प्रिय।
पर्ण के ऊपर श्मशानिक मन्द अंग॥

७५. स्त्री गृह-दूषित वहाँ देख।
बल-भ्रमित चक्र-पक्ष-हीन।
पारस छूते लोहा सोना होइ।
सुवर्ण उठ बीज ना अंकुरै।

७६. आकाश की ओर पूर्व दक्षिण दिशा नहीं समान॥
रेशमी रंग से काच वर्ण होइ।

म्दोग्स्. द्ब्यिब्स्. थ. दद्. स्प्रिन्. ग्यि. युल्. स. म्खऽ ।
मो. ग्शम्. बु. यि. बग्. म. ङस्. म. म्थोङ ।।

७७. कार्षापणिस्. दुद्. गि. ख. दोग्. म्छोन् ।
नम्. म्खऽ. स्क्येद्. पर्. ब्येद्. पऽि. ऽम्. सु ।।
जिग्.[1] छग्स्. ब्स्कल्. पस्. नम्. मखऽ. ग्यो. मि. ऽग्युर् ।
द्कर्. नग्. छोन्. ग्यिस्. म्खऽ. ल. गोस्. प. मिन् ।।

७८. . . . . ।
नम्. म्खऽ. गङ. नस्. ब्लङस्. प. ख्योद्. क्यिस्. स्म्रोस् ।
ऽजऽ. यि. ख. दोग्. ग्यॅङ. नस्. ऽोद्. दु. ग्सल् ।।
गम्. दु. फ्यिन्. नस्. ब्चल्. बस्म. प. ञोद्.[2] दो ।

७९. योद्. मेद्. ग्ञिस्. सु. स्म्र. ब. गङ. गिस्. नुस् ।।
ल्चग्स्. क्यि. थोब्. प. गङ. गिस्. फिग्. प. यिन् ।
ग्र. ब. द्बङ. पोऽि ग्थु. ऽदि. म्खऽ. ल. यल् ।।
स्बल्. बऽि. स्पु. यि. ल. ब. सु. ल. योद् ।

८०. ब्रग्. चऽि. स्ग्र. ऽदि. गङ. गि. ख. नस्. ब्जोद् ।।
छु. स्ल. छोल्. बऽि. स्प्रेऽ. स्ञिङ. रे. जें ।
कु. बऽि. नङ. ऽदि. चि. यिस्. ब्रग्.[3] प. यिन् ।।
म्खऽ. ल. ऽजऽ. खर्. छोस्. नॅम्स्. ब्तन्. नस्. सोङ ।

८१. नम्. म्खऽ. ऽफेल्. दु. म. सोङ. ल्तोस्. दङ. क्ये ।।
ए. म. नुब्. पर्. क्यङ. नि. ग्युर्. म. यिन् ।
छग्स्. पऽि. तॅन्. स. गङ. लस्. ब्यस्. पर्. ऽग्युर् ।।
ऽदि. यि. ग्र्यु. क्यॅन्. चि. लस्. ब्यस्. प. यिन् ।

८२. फन्. छ्ुन्. थ. दद्. मेद्. पर्. ङो. म्छर्. छे ।।
क्ये.[4] हो. स्ग्यु. मऽि. स्क्यस्. बुऽि. ऽदु. शेस्. स्तोर् ।
ऽदोन्. ब्येद्. मि. नुस्. मि. लम्. नोर्. ग्यि. ग्सॅब् ।।
दों. यि. मि. यि. रिग्. ब्यद्. गङ. दु. सोङ ।

वण-आकृति भेद का लोपस्थान आकाश ।
बन्ध्यापुत्र की बहू मैंने ना देखी ।।

७७. कार्षापण से शंख का वर्ण लखै ।
आकाश का जन्मदाता कौन ।
बहु भय-प्रीति से आकाश नच लै ।
श्वेत कृष्ण वर्ण से आकाश अनावृत ।।

७८. रजनीकाल से आकाश ना संभवै ।
आकाश कहां से उद्‌भूत, बताओ ।
इन्द्रधनुष का रंग समीप से भासै ।
पेटिका में जो ढूँढै ना पावै ।।

७९. भाव-अभाव दोनों कौन कहि सकै ।
लोहे का मुद्‌गर किसने फेंका ।।
जाल इन्द्रधनुष यह आकाशे लुप्त ।
मेष-लोम का कम्बल किसका है ।।

८०. शिलाखण्ड यह शब्द किसके मुंह से निकलै ।
बानर जल-चन्द्र ढूँढै अहो करुण ।।
लोटे के भीतर क्षिप्त रोग यह नर से क्षुब्ध है ।
आकाश में इन्द्रधनुष उदित धर्मदेशना से समाप्त ।।

८१. आकाश में विस्तारे न जा देख रे ।
अहो अस्त भी नहीं हुआ ।।
राग का आश्रय स्थान जहाँ से बना ।
इसका हेतु-प्रत्यय किससे किया ।।

८२. परस्पर भेद नहीं यह महा-आश्चर्य ।
अहो माया-पुरुष की संज्ञा भ्रम ।।
अर्थ-क्रिया में असमर्थ[1] स्वप्न-धन की पेटिका ।
शिलापुत्र की वेदना कहाँ गई ।।

---

१. "अर्थक्रिया समर्थ यत् तदत्र परमार्थसत्"—धर्मकीर्त्ति (प्रमाणवार्त्तिक—२) ।

८३. ग्लङ. पोऽि. म्गोल्. वें. मेद्. छग्. दोग्स्. प. ब्रल् ॥
छु. शिङ. स्ञिङ. पो. फ्यि. नङ. ग्ञिस्. कर्. मेद् ।
दुग्. स्ब्रुल्. म. ब्ल्तस्. स्गोङ. ब्लङ. ब. मि. रुङ ॥
द्रङ.स्रोङ. नद्. क्यि. ग्रोग्स्. दङ. ग्ञन्.[5] पो. सेम्स् ।

८४. देद्. द्पोन्. बु. नि. यब्. ल. ग्लिङ. ग्र्युस्. ऽद्रि ॥
ग्रु. छेन्. ल. ग्नोद्. द्ग्र. नेम्स्. फ्यि. रु. सेल् ।
द्गोस्. पऽि. वर्येन्. दङ. मि. ऽब्रल्. छ्र्. ब. ग्रिमस् ॥
ञ. स्ब्रुल्. श. नि. नोर्. ञन्. छे. बस्. ब्र्तग् ।

८५. ग्रो.म्गोन्. ग्यिस्. क्यङ. नम्. म्खऽि. मु. म. ग्सिग्स् ॥
द्म्यल्. बऽि. लुस्. ल. छ्. ग्रङ. गो. स्कब्स्. मेद्[6] ।
ख. दोग्. ब्स्ग्युर्. सिन्. म्छु्र्. दु. स्पङस्. न. ल्ङङ ॥
ग्सो. रस्. थल्. खुर्. ऽजुग्. प. द्रि. म. मेद् ।

८६. ि.ख्य शिङ. लो. ऽब्रस्. स्मिन्. पर्. ग्युर्. छे. चेंग् ॥
गल्. नङ. सस्. लेन्. दे. दुस्. ञिद्. दु. फुङ ।
छोङ. खङ. नङ. गि. ऽग्रोन्. पो. स्ङ. रिम्. ऽग्येस् ॥
स्रिन्. ग्यि. ख. छुस्. रङ. ञिद्. ऽछिङ. बर्. ऽग्युर् ।

८७. चॅव. यि. स्ग्रोन्. मे.[7] म्छेद्. प. रब्. तु. क्र्येन् ॥
ग्यॅ. म्छो.स्ग्रोल्. बऽि. ग्रु. ल. सग्. ल्हन्. ग्चिस् ।
द्रेग्स्. पस्. म्योस्. पर्. मि. ऽग्युर्. नद्. पऽि. लुस् ॥
रङ. स्रोग्. स्तेर्. बऽि. द्रङ. स्रोङ. लन्. लोन्. चिग् ।

८८. फन्. पऽि. स्मन्. मर्. ऽबोर्. बर्. ब्य. ब. मिन् ॥
ग्यॅ. म्छोऽि. ल्बु. ब. यल्. बऽि. ज्ॅस्. मि. ल्त ।
ग्दन्.[1] स. म. स्पङस्. ग्यॅल्. पोस्. छोस्. मि. ऽग्रुब् ॥
ख्यिम्. दोर्. नग्स्. सु. ऽदुग्. पऽि. मि. दे. ब्दे ।

८९. दोम्. ग्यि. स्ञिङ. ख्रग्. म. ऽथुब्. ख. ल. ल्तोस् ॥
मे. तोग्. चि. यिस्. स्ब्रङ. म. दल्. मि. स्तेर् ।

८३. गजके सिरमें सींग नहीं राग-रंग रहित।
केला में सार भीतर बाहर दोनों नहीं॥
विषसर्प न देखि अण्डा उठाना ना उचित।
ऋषि रोगमें सखा और मित्र समझै॥

८४. सेठ का पुत्र पिता से द्वीप का पता पूछै।
महापोत-भंग शत्रु बाहर से मारैं।
इच्छित प्रत्यय और अरहित लवण मग्न?
मीन सर्प का मांस धन अतिहृष्ट परखै॥

८५. मार्गदर्शक भी अनेता आकाश निरेखै।
नरक-देहमें गर्मी-सर्दीका अवकाश नहीं॥
वर्ण-परिवर्तन ग्रहै वर्ण छाड़ि उठै।
भृंगी धूल धोइ निर्मल॥

८६. लता बर्षफल, पकते समय अशुद्ध।
जब भीतर अन्न ले तो राशि होइ॥
दूकान के भीतर की कौड़ी पंचक्रम होय॥
(रेशम) कीट थूकसे स्वयं बंधि जाइ॥

८७. लुकारी जलानेका भारी हेतु।
सागरगामी पोत एक बार चुवै॥
मद से उन्मत्त न हो रोगी का देह॥
स्वप्राणदाता ऋषि उत्तर दे॥

८८. हित भैषज्य त्यागै नहीं।
सागरका फेन लुप्त हो फिर ना दीखै॥
आसन ना त्यगि नृप धर्म ना साधै।
घर छोड़ वनमें बसे आदमी सो सुखी॥

८९. भालूका हृदय-रक्त न छेदि मुँह देखै।
पुष्प-औषधि में मक्खी क्षण नहीं गंवाती॥

बु. रम्. मुर्. गऽि. कुग्स्. म. ख. रोग्. ऽदुग् ।।
ग्लिङ. ल. द्बङ. बऽि. ग्र्यल्. पो. बु. दङ. ऽग्रोग्स् ।

६०. ऽखोर्. लोस्.[2] ब्चल्. बऽि. लम्. ल. शुग्स्. पर्. ब्य ।।
खङ. ब्सङ. रिन्. छेन्. स्पङ. दु. मि. रुङ. ङो ।
द्रि. म. चन्. ग्यि. सस्. स्कोम्. मि. ब्र्तेन्. चिङ ।।
ख्यिम्. ब्दग्. द्पऽ. बो. फ्यि. रु. मि. ब्स्क्रद्. दो ।

६१. छे.ऽदिऽि. छे. थब्स्. ब. शिग्. प. दुर्. स्रुङ. मि ।
ग्दोल्. पऽि. म्गुल्. दु. रिन्. छेन्.ग्र्यन्. मि. दोग्स् ।
यब्. क्यि. स्प्योद्. लम्. स्ञग्.[3] प. देद्. द्पोन्. बु ।।
स्म्योन्. पऽि. स्प्योद्. प. ग्सब्स्. ग्तद्. ब्रल्. नस्. ऽदुग् ।

६२. ल्कुग्स्. मऽि. ग्सङ. छिग्. ख. रु. मि. ऽदोन्. नो ।।
ञो. ब. दग्र्. ग्युर्. ब्लो. ग्रोस्. द्रि. युल्. शिग् ।
ग्सुग्स्. क्यि. चोल्. स्ग्रुब्. मि. ब्येद्. लोङ. बऽि. ग्रोग्स् ।।
फ्यग्. दर्. ख्रोद्. प. थोङ. ग्शोल्. ञो. मि. ऽग्युर् ।

६३. नद्. प. छु. स्क्युग्. गङगा. ल. मि.[4] ल्त ।।
ग्सेर्. ग्यि. म्गर्. ब. ब्य. ब. ग्शन्. मि. स्ग्रुब् ।
दर्. छेन्. दर्. सब्स्. फग्. जि. गोन्. मि. ऽग्युर् ।।
छङस्. स्प्योद्. मि. नुस्. स्म्युग्. म. म्खन्. ग्यि. ख्यिम् ।

६४. स्म्र. म्खस्. थब्स्. ल्दन्. नि. छो. ख्यु. नस्. ऽब्योल् ।।
ऽफ्येस्. पऽि. ग्लिङ. पो. बुर्. शिङ. ब्रेस्. मि. स्ञोग्स् ।
ग्सेर्. स्ग्रोग्. ब्चुग्. क्यङ.ऽछम्. ऽग्रोस्.[5] ब्येद्. मि. नस् ।।
देद्. दपोन्. बु. नि. ब्रे. स्रोङ. ल. मि. ल्त ।

६५. ग्लिङ. दोन्. खर्. ऽब्तोन्. शि. यङ. ख्यिम्. मि. ऽदुग् ।।
छोङ. फ्रुग्. ऽदुस्. छे. न. यङ. जिङ. स. ल. स्ञाग् ।
ऽदोद्. पऽि. लुङ. नि. रेस्. ग्सोर्. दग्. गिस्. ऽगुग्स् ।।
जि. स्रिद्. नोर्. बु. म. लोन्. फ्यिर्. मि. ब्युङ ।

ऊखके छोर पर कौवा बैठा ।
द्वीपमें शक्तिमान् राजपुत्र और साथी ।।

६०. चक्रसे ढूँढ़ने मार्गे बल करो ।
सुन्दर गृहरत्न त्यागना ना ठीक ।।
गन्धयुक्त खानपान ना आलम्बो ।
शूर गृहपति बाहर ना प्रवासै ।।

६१. इस समय महाउपाय नष्ट श्मशानिक पुरुष ।
चंडाल के कण्ठ में रत्नभूषण ना बँधै ।।
पिताके आचरित मार्गमें मग्न सेठ का पुत्र ।
पागल का आचरण त्याग दान विना रहै ।।

६२. गूंगे का गुह्य शब्द मुख से न निकलै ।
पास की शत्रु सी बुद्धि से गन्ध-विषय ध्वस्त ।।
रूप-अध्यास ना साधि अन्धा साथी ।
पाँसुकूलिक[1] हलका फाल न खरीदै ।।

६३. रोगी पानी थूक गंगा ना देखै ।
सोनार दूसरा कार्य न साधै ।।
रेशम का थान सूअर के बाल के मूल्य का ना होइ ।
ब्रह्मचर्य ना कर सकै बसौरके[2] घर ।।

६४. वाक्चतुर उपायवान् शुक झुण्डसे भागै ।
पंगु गज ऊख-पुंज ना पकड़ै[3] ।।
कंचनश्रृंखला (बद्ध) नृत्य कर सकै नहीं ।
सेठ का पुत्र आढक शकट को ना देखै ।।

६५. द्वीप के अर्थ बाहर जा मर भी घर ना रहै ।
सेठ का पुत्र चिरकाल भी पुष्करिणी में डूबे ।।
कामना-वायु कभी फूटनेसे रुकै ।
जैसे मणि न पा बाहर से घर ना आवै ।।

---

१. गूदड़धारी । २. वंशकार । ३. स्न्योग्स् ।

९६. ब्रग्. लस्. स्क्येस्. पऽि. छु. ब्य.म्छो. ल. स्ञग् ।।
नग्स्.[6] ब्यि. फ्र. ब. द्गुन्. ग्यि. च्ँव. मि. सोग् ।
ग्दोन्. ग्यिस्. ब्र्लम्स्. छे. दोन्. दे. लम्. दु. स्तोर् ।।
ञ. यिस्. ब्र्नङस्. पऽि. स्क्यर्. मो. दग्.ल. ऽब्योल् ।

९७. ग्चिग्. तु. मि. ग्नस्. ग्नस्. स्तग्. मो. ग्रुस्. मऽि. छङ ।।
ग्रोन्. पो. लम्. श.ग्स्. ग्सेर्. र्ग्यल्. फियर्. मि. ऽखुर् ।
ग्चो. बोऽि. ग्सङ. ग्रोस्. ख्रोम्. दु. ब्जोद्. मि. ऽग्युर्[7] ।।
स्ग्रग्. पर्. मि. ब्येद्. बङ. म्जोद्. ब्र्कुस्. पऽि. मि ।

९८. ब्रम्. सेऽि. रिग्. ब्येद्. बु. लस्. ग्शन्. दु. मिन् ।।
योन्. दोर्. मि. स्तेर्. चि. म्छोग्. ग्सेर्. ऽग्युर्. थब्स् ।
म्छन्. द्पेस्. रब्. स्प्रस्. ऽखोर्. लोस्. स्ग्युर्. र्ग्यल्. लुस् ।।
छङस्. पऽि. द्ब्यङस्. ल. यन्. लग्. द्रुग्. चुर्. ल्दन् ।

९९. थुब्. पऽि. थुग्स्. नि. योन्. तन्. कुन्.[1] ग्यि. म्जोद् ।।
नोर् बु. रिन्. छेन्. द्गोस्. ऽदोद्. ऽब्युङ. बऽि. र्तेन् ।
र्ग्यल्. पोऽि. ब्शुल्. स्न. ग्सेर्. ग्यि. ऽखोर्. लोस्. द्रेन् ।।
गिन्. जऽि. मे. तोग्. लुङ. गिस्. ब्स्क्योद्. पर्. स्ल ।

१००. दुस्. सु. स्मिन्. पऽि. पद्म. ख. दोग्. ग्सल् ।।
ऽब्युङ. बऽि. द्ग्र. र्नम्स्. ब्चोम्. प. र्दो. जेऽि. स्कु ।
ग्रङस्. पर्. स्क्येन्. प. ब्रस्. प. छुङ[2]. बऽि. ल्तो ।।
र्गस्. दङ. ब्रल्. ब. द्ङुल्. छु. ऽथुङस्. पऽि. लुस् ।

१०१. स्मन्. म्छोग्. ब्सिल्. म्ङर्. थुन्. ल. छे. मि. द्गोस् ।।
चि. स्म्रस्. दोन्. दु. ऽग्युर्. ब. द्रङ. सोङ. छिग् ।
ग्लिङ. लस्. ब्लङस्. पऽि. मे. तोग्. द्गोस्. मेद्. मिन् ।।
द्गे. स्लोङ. छिग्. ल. ग्तम्. ग्यि. दोन्. मि. ब्युङ ।

१०२. स्मन्. ग्यि. ग्नस्. सु. दुग्. गि. स्क्ये.द्रुङस्.[3] ऽगग्स् ।।
ऽफ्रुल्. ग्यि. मे. लोङ. फ्यि. नङ. ग्ञिस्. कर्. म्सल् ।

९६. शिला-उत्पन्न जलपक्षी सरोवर में डूबै।
वनमूषिका जाड़े में तृण ना करै।
आरम्भ से बाधा के समय वह अर्थ के मार्ग पर भ्रमै।
मछली रोकने से छिद्र से भागै।

९७. एकत्र ना रहै व्याघ्री की पूरी पाँती।
अतिथि मार्ग में स्थित सुवर्णभाण्ड बाहर न ले जावे॥
प्रधान रहस्य सचिव बाजार में न बोलै।
चुपके ना करै पेटिका धन चोर आदमी॥

९८. ब्राह्मण-माणवक से अन्यत्र नहीं वेद।
छोड़ नहीं दे उत्तम औषध सोना होने के उपाय।
लक्षण से ज्ञात चक्रवर्ती राजा,
ब्रह्मघोष में साठ अंग सहित॥

९९. मुनि का हृदय सब गुणों का कोश।
मणिरत्न इच्छा-आश्रित सम्भूत॥
राजमार्ग नासा-सुवर्णचक्र खीचै।
गिंजा का फूल वायु उड़ा चलै।

१००. काले में पक्व पद्मवर्ण प्रकाशै। भूत शत्रु नाशक-वज्रकाय॥
सर्दी से समुदित फूँक का कोश।
निर्जर पारा पिये देह।

१०१. उत्तम भैषज्य मधुर-प्रहार स्वभाव बड़ी ना चाहिये।
जो कहै सार्थक सत्य ऋषिवचन॥
द्वीप से ना उठावै अनिच्छित पुष्प।
भिक्षुवचन में कथा का अर्थ नहीं होइ।

१०२. भैषज्य के स्थान विषज मल रोके,
ऋद्धि-दर्पण का भीतर बाहर दोनों स्वच्छ॥

मङ. दु. बर्चे.ग्स्. क्यङ. ग्स.ग्स्. रर्ञन्. ऽग्रिब्. मि. ऽग्युर् ।।
बुग्. प. योद्. ब्शिन्. सङ. थल्. युल्. मि. ऽगग् ।

१०३. स्ग्यु. चॅल्. ऽब्योङस्. पऽि. ग्यद्. नि. फिय. फियर्. रिम् ।।
स्मिग्. ग्र्युऽि. म्छ्ङ. शेस्. छु. यिस्. ऽदु. शेस्. शिग् ।
शिङ. ल. मे. योद्.[4] दे. छे.दु. ब. ऽब्युङ ।।
ख. लॅङस्. स्ग्रोन्. मेर्. ग्युर्. प. मे. ख्येर्. यिन् ।

१०४. रि. ब्रग्स्. बर्. न. स्मिग्. ग्र्यु. योद्. म. यिन् ।।
ञ. ग्यॅस्. स्ल. ब ञि. मऽि. ऽोद्. दङ. ब्रल् ।
रेग्. ब्य. ग्स.ग्स्. क्यिस्. स्तोङ. प. खोल्. मऽि. नङ ।।
स्ङ. ल्तस्. शर्. बऽि. बु. मो. ब्चुन्. मोर्. ऽग्युर् ।

१०५ बि. चि. ऽथुङस्. पऽि. मिग्. ल. म्छ्न्. मो.[5] मेद् ।।
ल्ह्. खङ. स्गो. फ्ये. दे. दुस्. स्कु. ग्स.ग्स्. म्थोङ ।
फ्युग्स्. जिऽि. लग्. ब्दॅ. गङगाऽि. फ्योग्स्सु. ब्येद् ।।
स्ब्रङ. चिस्. ब्सिङस्. पऽि. छ्ङ. ऽथुङस्. लुस्. पो. स्ब्रिद् ।

१०६. ग्शोर्. ल. ब्सिग्स्. पऽि. स्बो. ग. ग्तिङ. मि. ऽजल् ।।
ऽफ्योङ. दों. ब्तग्स्. पऽि. ग्सिङस्. ल. ग्यो. ल्दग्. मेद् ।
द्ङुल्. ग्यि. मे. लोङ.[6] फिय. न. ग्सल्. बर्. ऽग्युर् ।।
शल्. त. छुङ. पऽि. मि. दे. स्ङर्.स्प्योद्. ऽदोर् ।

१०७. फ्योग्स्. म्छम्स्. कुन्. दु. ऽफुर्. क्यङ.ञल्. सर्. छ्ङ ।।
सो. ब. खेङस्. दुस्. दे. छे. द्प्यद्. थग्. ऽद्रेन् ।
श. छग्स्. मिस्. सिन्. दे. यि. शेस्. प. ल्तोस् ।।
61a फ्रिन्. यिग्. लेग्स्. प. म्थोङ. दुस्. सेम्स्. ङल्. सोस् ।

१०८. मि. ऽग्युर्.[7] म्खऽ. ल. ल्देङ. बऽि. ग्शोग्. प. ब्रेल् ।।
द्रेग्स्. पर्. ब्सो. बऽि. ब्शिन्. दे. खोङ. दु. छुद् ।
ब्यङ. छुब्. शिङ. दु. थुब्. पऽि. स्प्योद्. लम्. ब्दे ।।
शुस्. ल. बब्. पऽि. ग्सेर्. म्गर्. ग्येङस्. दङ. ब्रल् ।

बहुधा कूट भी रूप का आधार नही गन्दा ।
सछिद्र सा पीतल भस्म विषय ना रोकै ।

१०३. कला शोधन का प्रयास वाह्य क्रम ।
मृगजल में पानी की संज्ञा नष्ट ।।
काष्ठ अग्नि हो तो धुम्राँ निकले ।
दीपक प्रतिज्ञा ना होइ अग्निवाहक ।

१०४. पर्वतशिला के बीच मृगजल नहीं होइ ।
महामत्स्य चन्द्र-सूर्य प्रकाश-रहित ।।
वेदनीय रूप से खाली गवाक्ष के भीतर ।
पूर्व निमित्त में उदित मध्य-रात की रानी होइ ।

१०५. बी (?) औषधि पियेक आँख में रात नहीं ।
मन्दिरद्वार खुलते समय पूर्ति का रूप देखै ।।
पशु जम्बाल के हाथ का संकेत गंगा की दिशा में करै ।
मक्खी मधु-मद्य पी शरीर छींके पर ।

१०६. उठा फेंक फेन का नीचे ना डूबै ।
निकष-पाषाण परीक्षा पोत गरुड़ नहीं ।।
रूपे के दर्पण बाहर स्पष्ट हुआ ।
चौकीदार वह आदमी, पहले-कर्म आचरन छोड़े ।

१०७. तुल्य दिशा में सर्वत्र उड़ के भी शयन स्थाने उड़ै ।
शिल्पकार तब निर्माणकाल समीप खींचै ।।
मांस-इच्छुक मनुष्य ने कहा उसका ज्ञान देख ।
राजादेश देखते समय चित अभिमानी होइ ।

१०८. निर्विकार आकाश में गरुड़पक्ष का सम्बन्ध ।
मदकार जिमि सो भीतर रख ।।
बौधिवृक्ष के नीचे मुनिचर्या मार्ग का सुख ।
मांग के उतरा सोना किरण रहित ।

१०९. ग्युल्. दु. ङल्. बऽि. ग्लङ. पो. ल्तोस्. दङ. क्ये ।।
ऽबऽ. यिस्. नोन्. पऽि. रि. बोङ.[1] चन्. मि. म्थोङ ।
खोग्. चेस्. ब्कब्. पऽि. मि. यि. दुद्. प. लुब्स् ।।
स्प्र. ब्सो. छर्. दुस्. म्थन्. पो. यङ. यङ. ल्त ।

११०. पर्. ति. क. न. ग्रोग्स्. प. म्जऽ. दुस्. ऽब्रल् ।।
स्मन्. ग्यि. छोङ. पऽि. ऽग्रो. फ्योग्स्. ल्तोस्. शिग्. दङ ।
र्गुन्. ऽब्रुस्. थङ. म. मि. स्पुङ. फ्योग्स्. ब्शिर्. ब्र्दल् ।।
ब्य. ब. सिन्. पऽि. र्जे. स्प्यद्. फ्यि.[2] छिस्. मिन् ।

१११. स्क्येद्. मेद्. नद्. प. स्मन्. ग्शन्. ब्स्तेन् पर्. रिगस् ।
म्खस्. प. लङ. पो. द्रग् दल्. गञिस्. सु. स्प्योद्
बुस्. प. मि. सद्. शुन्. मर्. स्ब्यिन्. म. ब्य ।।
फग्. गि. ल्चे. यिस्. ख. म्ङर्. स्पङस्. नस्. ऽदुग् ।

११२. ब्रम्. से. स्कुद्. प. ऽखल्. ब. ल्तोस्. शिग्. दङ ।।
द्बऽ. क्लोङ. ऽखुग्स्. दुस्. थब्स्. ल्दन्. ऽफ्योङ.[3]दो. ऽदोग्स् ।
सु. शिग्. ब्दे. ऽदोङ. स्ब्रङ. मऽि. स्प्योद्. प. बोर् ।।
र्ग्यल्. ख्रिम्स्. छोस्. छे. ब्लोन्. पोऽि. चोल् ब. शिग् ।

११३. नोर्. बु. लोन्. पऽि. देद्. द्पोन्. सेम्स्. लस्. ब्रल् ।।
र्ग्यल्. पोऽि. बु. मो. ग्शन्. ग्यि. र्ग्यन्. मि. ल्त ।
स्दोङ. दुम्. म. ग्सल्. शिङ. र्तें. ऽग्रोर्. मि. ब्तुब् ।।
स्मन्. ग्यि. लो. ऽब्रस्. द्रङ. स्रोङ. बु. ल. स्तोन् ।

११४. ब्चो.[4] मऽि. ऽो. ऽोद्. ल. ग्सेर्. म्खन्. म्दोग्. मि. ऽदोन् ।।
स्पु. ग्रि. ति. ल. ल. दर्. ब्लुद्. मिग्. मि. ऽदोद् ।
बु. यि. स्त्रिद्. सिन्. र्ग्यल्. पोऽि. ब्य. ब. र्जोग्स् ।।
दुग्. छोर्. मि. द. ल्हग्. म. स्. मि. ऽग्युर् ।

११५. ब्रम्. सेऽि. रिग्. ब्यद्. सोङ. दुस्. ब्य. ग्शन्. ऽदोर् ।।
ब्र्चे. मेद्. ब्स्रुब्. म. ब्स्कोर्. बर्. मि. ब्यऽो ।

१०९. देश में विनीत गज देख रे।
मृग द्वारा विक्रान्त शश न देख॥
महामंडप-मनुष्य को नमो कहै।
समाप्ति समय आचार्य फिर-फिर देखै।

११०. प्रतीक में प्रिय साथी काल-रहित।
औषधि-बिक्रेता के जाने की दिशा देख॥
द्राक्षा-स्थली पुरुष चारो दिशा स्थली असेचित।
क्रियावान् द्रव्य चर्चा वाह्य संधि नहीं।

१११. अपुत्पन्न रोग में अन्य औषधि कहना उचित।
चतुर गज टहलते दोनों चलै॥
फुफुकार न मार घरे दान न कर।
शूकरजिह्वा से मधुर मुख छोड़े रक्खै।

११२. ब्राह्मण का सूत्र पहनना देखै,
बेला वीचि प्रतिकूल काल में उठी॥
जो कोई सुख चाहै मक्खी का आचरन छोड़ै।
राजबिधान के समय अमात्य बनो।

११३. मणि लेना सार्थवाह चित से छोडे।
राजकन्या दूसरे का भूषण ना देख।
घंटा (रव) प्रकटे विना रथ नहीं जावै।
औषध वर्ष का फल ऋषि पुत्र को बतावै।

११४. जांबूनद पर सोनार रंग नहीं रंगैता।
छुरा को तिल से तीक्ष्ण करने से छेद नही होवे॥
पुत्र के राज्य संभाल लेने पर राजा का कार्य समाप्त है,
तीव्र विष आदमी जूठ ना खावै।

११५. ब्राह्मण वेद पढ़ते समय दूसरा काम छोड़ै।
निष्करुण मथानी ना घुमावै।

गॅ्यल्. पो. ऽछि. दुस्. ख्रिम्स्.[5] यिग्. ल. मि. ल्त ।।
नोर्. बऽि. लम्. दु. ऽजुग्प. पर्. मि. रिग्स्. सो ।

११६. नग्. छुर्. मि. द्गोस्. ऽजम्. बु. छु. बोऽि. ग्सेर् ।।
पद्म. ऽदम्. गि्य. स्क्योन्. दङ. ब्रल्नस्. ऽदग् ।
दग्. मेद्. रङ. द्बङ. थोब्. प. सेङ. गेऽि. बु ।।
ग्ञाऽ. शिङ. ब्क्रोल्. बऽि. म. ह्. गर्. द्गर्. ऽग्रो ।

११७. र. म. शुग्स्. पऽि. ग्सेर्. नि. गु. लङ. म ।।
छे. र. म.[6] पियन्. पऽि. शुल्. दे. ब्रु. ब. मिन् ।
चोर्. स्गो. फ्येद्. पऽि. दे. स्रोग्. मि. ऽदोन् ।।
शे. स्गो. शो. यिस्. ग्रङस्. प. ल. ल्तोस्. शिग् ।

११८. ग्सो. रस्. ङे. बल्. ब्स्दम्स्. प. द्रग्स्. पस्. ऽछिङस् ।।
स्ग्र. ञान्. पऽि. फग्. र्गोद्. ग्दम्स्. प स्तोन् ।
ङन्. स्ग्रस्. ब्स्तोद्. छिग्. ख्यद्. मेद्. र्दो. यि. मि ।।
61b स्मिग्. र्ग्युऽि. क्लुङ. न. छु.[7] थिग्स्. योद्. म. यिन् ।

११९. स्क्ये. दङ. ऽछि. ब. मो. ग्शम्. बुस्. म. ब्यस् ।।
म्दोग्. द्ब्यिब्स्. थ. दद्. छु. ब्रन्. र्ग्य. म्छोर्. ग्रोल् ।
नम्. म्खऽ. ल. नि. द्बुस्. दङ. मु. म. म्छिस् ।।
रो. ग्ञिस्. म्थोङ. बऽि. कङक. म्खऽ. ल. ल्दिङ ।

१२०. स्तोब्स्. ल्दन्. सेङ. गे. स्रोग्. गि. मेल्. छे. स्तोर् ।।
क्ये. हो. स्म्योन्. बऽि. सो. स्कोस्. सेम्स्.[1] दङ. क्ये ।
च. स्प्यङ. मिग्. ऽदि. ङो. म्छर्. छे. ब. यिन् ।।
म. ल. य. न. चन्दन्. मे. रु. ऽबुद् ।

१२१. सेङ. गे. गङस्. दङ. ब्रल्. बर् मि. ब्यऽो ।।
स्मन्. पऽि. गॅ्यल्. पो. ग्सो. रिग्. लुङ. दङ. ऽग्रोग्स् ।
म्खन्. पोस्. लेग्स्. ग्सुङस्. द्गे. स्लोङ. गिस्. मि. ग्तोङ ।।
द्पऽ. बो. ग्युल्. दु. ऽजुग्. छे. गो. मि. ऽबुद् ।

र.जा की मृत्यु के समय विधान ना देखै ।।

भूले मार्ग में रहना ना ठीक ।

११६. वनप्रान्ते न चाहिये जाम्बूनद सुवर्ण ।

पद्मपत्र का दोष ना रहै ।

शत्रु विना स्वतंत्रता प्राप्त सिंहकुमार ।।

जूआ ढोता भैंसा नाचता जावै ।

११७. राम (जिसके) घुसा (सो) सोना हुआ है ।

कंटक (निगल) जाने का सौ मार्ग वंचै नहीं ।

चोर द्वार खोल के कई प्राण ना निकाले ।

काचपात्र दही भरा दीखे ।

११८. भंग ऊँट केश से बँधा अहंकार बंधै ।

शब्द सुन अरण्यशूकर बन्धन में बँधै ।

दुरुक्त स्तोत्रशब्द समान शिलापुरुष ।

मृगतृष्णा नदी में जलविन्दु ना होइ ।

११९. जन्म-मरण वन्ध्यापुत्र ना करै ।

वर्ण-आकृति-रहितहो नदी समुद्र में मुक्त ।

आकाश के मध्य और सीमा नहीं ।

दो शव देखता काक आकाश में उड़ै ।

१२०. बली सिंह को प्राण प्रहार समय का डर नहीं ।

मैं अहो पागल देखता विचारो ।

सियार की आँख यह महा आश्चर्य ।।

मलय चन्दन आग में फूँकै ।

१२१. सिंह सर्दी का अभाव ना करै ।

वैद्यराज चिकित्सा आगम औ साथी ।।

पण्डित-सुभाषित (करना) भिक्षु ना छौड़ै ।।

शूर युद्ध करते समय ना जानै फुफकारना ।

१२२. ऽग्रो.[2] ब. ब्सङ. सोस्. ञ. ब. स्रो. सोर्. ऽजिन् ॥
ग्येङ. ब. मेद्. प. दुर्. ख्रोद्. द्बुस्. क्यि. मि ।
दुर्. ख्रोद्. मि. यि. लुस्. ङस्. थ. मल्. स्पङस् ॥
ल्तो. ग्यॆब्. शुग्स्. लस्. ऽब्युङ. ब. दुर्. ख्रोद्. मि ।

१२३. दुर्. ख्रोद्. मि. ल.फ. म. ख. म्छु. मेद् ॥
द्गोस्. प. म्दुन्. दु. ऽग्रुब्. प. दुर्. ख्रोद्. मि ।
ग्लङ. पोऽि. ऽग्रो. स. ग्रम्. पऽि.[3] ग्सेब्. म. यिन् ॥
मे. छुऽि. द्ग्र. ल. छोद्. योद्. ब्यर्. मि. रुङ ।

१२४. शिङ. पस्. स. यि. म्दोग्. ल. लुद्. रिग्स्. स्ब्योर् ॥
ग्यॆल्. पोऽि. शब्स्. नस्. ब्तेग्. छे. ब्कऽ. ल. ऽदोग्स् ।
क्ये. हो. स्तग्. छङ. योद्. पऽि. सर्. मि. ऽग्रो ॥
ग्यॆल्. पोऽि. ब्कऽ. ब्तग्स्. थोब्. दुस्. द्ग्र. दङ. ब्रल् ।

१२५. न. छ. मेद्. पऽि. दुस्. दे.[4] ब्दे. बर्. ग्नस् ॥
ब्सङ. ङन्. ग्ञिस्. ल. सस्. क्यि. म. छुन्. मेद् ।
म्य. ङन्. ग्दुङ. बस्. शि. बऽि. बु. दे. म्थोङ ॥
ब्र्ज्ुन्. स्पङस्. द्रङ. स्रोङ.दग्.गि. फ्रिन्.लस्.ग्रुब् ।

१२६. ग्यद्. ल. रल्. ग्रि. ब्तग्स्. ते. ग्यॆल्. पो. मञेस् ॥
नग्स्. क्यि. स्त्रङ. म. गि. वङ. द्रि. ल. स्नोम् ।
म. गि. त. ल. ब्सिल्. द्रोद्. नुस्. प. छङ[5] ॥
र्चि. स्ब्योर्. ऽथुङस्. पस्. लुस्. क्यि. स्रो. म्दोग्. ब्दे ॥

१२७. तिल्. छङ. ल्तोर्. ग्रोद्. रिग्. प. ङर्. ग्यिस्. ख्योग्स् ॥
यिद्. ब्शिन्. नोर्. बु. कुन्. ग्यिस्. ल्त. बर्. म्जेस् ।
ग्यॆल्. नि. पो. ल. सु. शिग्. गॊल्. बर्. नुस् ॥
बु. ग्चिग्. प. ल. म. स्रिद्. ग्दुङ. सेम्स्. ल्दन् ।
श्स्. छे. म्ग्रोन्. ल. बोस्. प. गङ. मि. ऽोङ ॥
पङ. दु. ऽोङ. दुस्.[6] बु. ल. ऽ. म. द्गऽ ।

१२२. भद्र जगत परस्पर समीप गहै ।
ना बँधै गुहा के बीच का मानव ।
गुहा मानव कायवाक् मल त्यागै ।
भक्षण पश्चात् शक्ति (युक्त) हुआ महामानव ।

१२३. श्मशानी मानव का चुगली मुकदमा नहीं ।
अभिलाषा सिद्ध श्मशानिक मानव ।
गज गमन मार्ग में किनारा अन्दर नहीं ।
आग-जल-शत्रु को तप्त करना नहीं उचित ।

१२४. किसान भूमि के रंग–आगम–जाति से जुड़ा ।
राज-चरण से उत्क्षेप समये वचन-बद्ध ।
अहा, बाघ की माँद की जगह न जावै ।
राजवचन पाये समय शत्रु नहीं ।

१२५. रोग न हो तो सुख से बसै ।
अच्छा बुरा ोनों में भोजन अजीर्ण नहीं ।
शोकमग्न उस मरे पुत्र को देखै ।।
मिथ्या छोड़ि ऋषियों के आदेश से साधै।

१२६. विक्रम में असि उठा राजा मुदित ।
वनमक्खी गोरोचन की गन्ध सूँघै ।
मगित के शीतोष्ण में समर्थ चूल्ही ।।
औषधयोग पीया देह के रचनावर्ण (से)सुखी ।

१२७. तिल शराब खाकर कुबिद्या स्वतः भागै ।
चिन्तामणि चारों ओर से देखने में सुन्दर ।
राजा से कौन बाद कर सकै ।।
एक पुत्रवाली मौसी ज्वर चित्तयुक्त ।

१२८. पूछते समय पथिक को बुलावे, जो न आवै ।
गोद में आये समय पुत्र की माता खुश ।

नम्. म्खऽ. दङस्. पऽि. ङङ. ल. ग्रि. म. मेद् ॥
छेगस्. मेद्. ग्नद्. ऽफ्रोद्. रिग्. ब्येद्. ग्सेर्. ऽग्युर्. चि ।

१२९. ग्लङ. पो. म. म्थोङ. फग्. पऽि. लुस्. द्ब्यिब्स्. ल्तोस् ॥
द्मन्. पऽि. लस्. ल. मि. शुग्स्. गं्यल्. पोऽि. लुग्स् ।
बे. दऽि. ऽब्रस्. बु. सु. बोन्. दुस्. सु. ऽग्रुब् ॥
62a मं. ब्यऽि.' म्दोङस्. ल. ऽद्रि. म्खन्. योद्. म. यिन् ।

१३०. थुब्. द्बङ. लग्. गि. दों. जें. ब्स्क्योङ. मि. नुस् ॥
ऽदम्. नस्. ब्तोन्. पऽि. उत्पल्. ल्तोस्. दङ. क्ये ।
ब्दे. ब. दङ. ल्दन्. सेर्. स्क्यर्. ग्ञिद्. लोग्. दुस् ॥
रङ. ख. थोन्. प. ऽजम्. बु. छु. बोऽि. ग्सेर् ।

१३१. छब्. रोम्. रङ. ब्शिन्. छु. यि. ङो. बो. यिन् ॥
स्बल्.[1] पऽि. स्पु. यि. ल. ब. ग्सर्. ञिङ. ब्रल् ।
दम्. ग्यि. क्येन्. ग्यिस्. पद्म्. ख. दोग्. गुङस् ॥
थब्स्. क्यिस्. छुन्. छे. दे. दुस्. द्ग्र. दे. ब्शेस् ।

१३२. ग्यंल्. मो. क. रऽि. ग्स ुग्स्. ल. थ. दद्. मेद् ॥
छु. ञिद्. ग्यं: म्छोऽि. ग्यं. म्छो. दङ. ञिद्. छु ।
चि. यिस्. सिन्. पऽि. मि. दे. रि. बो. म्गुल् ॥
द्बऽ. लंब्स्. छे. ऽब्रिङ. ग्चङ. पोऽि. द्ब्यिङस्. ल. थिम् ।

१३३. मुन्. प. दग्. पर्. ब्येद्. प. मर्. मेऽि. ऽोद् ॥
शग्. मिग्. प. ल. ञि. म. मुन्. पर्. ब्स्नोस् ।
स्मद्. ऽछोङ. बु. सु. यि. रिग्स्. ग्युंद्. यिन् ॥
दुर्. ख्रोद्. चे. स्प्यङ. छङ. ल. म्ङोन्. शेन्. मेद् ।

१३४. ग्दोन्. ग्यिस्. ब्र्लंम्स्. पऽि. ग्तम्. दे. स्न. छोग्स्. स्म्र ॥
ब्यिस्. पऽि. रङ. ब्शिन्. ग्चिग्. तु. ऽदुग्.[3] मि. ऽग्युर् ।
नग्स्. क्यि. रि. दग्स्. शिङ. ब्रुऽि. फ्योग्स्. रिस्. स्पङस् ॥
ल्ह्. जंस्. रिन्. छेन्. नुस्. प. सु. यिस्. ब्यिन् ।

अच्छे आकाश का हँस निर्मल ।।

निरुपद्रव पथ्य-वेद सुवर्ण होइ ।

१२९. गज न देख शूकर देह की आकृति देखै ।

वैद्यकार्य मेंन रहे राजा की नीति ।

सुखफल बीज के समय सिद्ध ।

मोर की पिच्छ का चित्रकार नहीं होइ ।

१३०. मुनीन्द्र के हाथ का वज्र पाल ना सकै ।

पंक से निकला उत्पल देख रे ।

सुखावती कपिलवस्तु निद्रा से उठते समय ।

अपने मुख से निकला जाम्बूनद सुवर्ण ।

१३१. ओले का स्वभाव है जलवस्तु ।

मेंढक के रोम का कम्बल न नया न पुराना ।

उपाय से जाने तो वह शत्रु है मित्र।

पंक के कारण पद्म का वर्ण धुला ।।

१३२. रानी शक्कर के रूप में भेद नहीं ।

पानी हो समुद्र और ही पानी ।

औषधि ग्राही सो मानव पर्वत के समीप ।।

महामध्यम बेला नदी धातु में विलीन ।

१३३. तम शोधै दीप-प्रभा ।

अन्धे को सूर्य अन्धेरा करे ।

वेश्या का पुत्र किस जाति का है ।

गुहा में सियार पूरा अभी प्रविष्ट नहीं ।

१३४. सन्देही दुर्वचनकथा नाना कहै ।

बाल-स्वभाव एकत्र न रहै ।

वन-मृग फल की ओर झुण्ड त्यागै ।

देव द्रव्य रत्न को शक्ति कौन देवै ।।

१३५. नोर्. बु. रिन्. छेन्. थोग्. मर्. गङ. नस्. ऽोङस् ।।
यिद्. ब्शिन्. नोर्. बुस्. द्गोस्. ऽदोद्. स्तेर्. म. म्योङ ।
म्छोग्. गि. नोर्. बुऽि. रिन्. थङ. स्मोस्. क्यङ. क्ये. ।।
नोर्. बुऽि. ब्दग्. पो. द्बुल्. बऽि. स्दुग्.[4] ब्स्ङल्. ब्रल् ।।

ग्र्य. छेन्. पोऽि. मन्. ङग्. दों. जें. गसङ्. बऽि. म्गुर्. शेस्. ब्य. ब. नंस्. ऽब्रोर्. गिय. द्बङ्. फ्युग्. द्पल्. स. र. ह. पऽि. शल्. नस्. गुसुङ्स्. प. जोंग्स्. सो ।।

र्ग्य. गर्. गिय. म्खन्. पो. क. म. ल. शी. ल. दङ., बोद्. किय. बन्दे. लो. च.ब.श्.म स्तोन्. प. सेङ. गे. र्ग्य. ल. पो. ब्स्ग्युर्. चिङ. श्.ुस्. ते. ग्तन्. ल. फब्.[5] पऽो ।।

---

१३५. मणिरत्न आदितः कहाँ से आवै।
चिन्तामणि लोभ की इच्छा नहीं छोड़े।
उत्तम मणिका मूल्य सूचित करै तो रे।
मणिका पति प्रदाने दुःख-विना ॥

॥ इति योगीश्वर श्रीसरहमुखकथित 'महामुद्रोपदेश' वज्रगुह्यगीति नाम समाप्त ॥

॥ भारतीय आचार्य कमलशील और भोट के वन्दनीय लो. च. व.श.म. स्वामी सिंहराज द्वारा अनुवादित लिखकर निर्णीत ॥

१५. चत्तगुह्य दोहा

(भोट और हिन्दी)

१५. चित्तगुह्य दोहा

(१) स्‌.तन्‌. ऽग्युर्‌. र्ग्युद्‌ (पृष्ठ ६७ क३—७१ क ७) में 'चित्तगुह्यदोहा' ('थुग्स्‌. क्यि. ग्सङ्‌. ब. ग्लुर्‌. ग्लङस्‌. प) ग्रंथ है, जिसमें निम्नलिखित सिद्धों और दूसरों की सूक्तियाँ हैं—

सरह, नागार्जुन, प्रराँफल, शांतरक्षित, स्थिरमति, वागीश्वर, वज्रघंटा, शंकर, शांतिपा, विरूपा, ज्ञानपाद, शान्तिदेव, ज्ञानगर्भ, निरुपा, कालपा, भूसुक, लुइपा, कृष्णपा, इन्द्रभूति, रत्नकीर्ति, कौकर्त, सहज, महागजचर्म वसुधर, हेरुक, कनकोति, रविमूल, रत्नवज्र, त्रेउत्र, अनंगवज्र, जबरीपा, कंबलपा, गुदरीया, डोम्बिहेरुक, रविगुप्त, गुण(म)ति, पद्मवज्र, ज्ञानश्री, परहित, कामश्री, मि. थुब्‌. स्‌.ल. ब (अलाभ चंद्र), जालन्धर, मैत्रीकमल, पद्मवज्र, नागबोधि, मंजुमित्र, राजहस्ति, भद्रश्री, लीलाभद्र, मधूतिय, दारुपर्ण, शबरीपा आदि।

इसमें सरह का निम्नलिखित दोहा मिलता है—

(ब्रम.से. छेन्‌.पो सरहस्‌. थुग्स्‌.क्यि.र्तोग्स्‌.प. म्गुर्‌. दु. ब्शेङ्स्‌. प.)

१. क्ये.हो. ऽखोर्‌. ऽदस्‌. कुन्‌. ग्यि. चो॑. ब. सेम्स्‌. क्यि. रङ.ब्शिन्‌. ते।
र्तोग्स्‌. न. स्गोम्‌. दु. मेद्‌. क्यि. म. ब्चोस्‌. ल्हुग्‌. पर्‌. श़ोग्‌॥
रङ. ल. ब्शग्‌. नस्‌. शन्‌. लस्‌. छोल्‌. ब. अ.रे. ऽख्रुल्‌।
ऽदि. यिन्‌. ऽदि. मिन्‌. मेद्‌. दो. थम्स्‌. चद्‌. ग्न्ग्‌. मऽि.ङङ॥

इस संग्रह में सबसे पहिले 'सरहपाद' का दोहा दिया गया है।

अनुवाद के बारे में लिखा है—"ग्‌. ले. दग्‌. पऽि. फ्रेङ्‌. ब. शस्‌. ब्य. ब. ग्रुब्‌. थोब्‌. ब्र्ग्यद्‌. चुऽि. र्तोग्स्‌. बर्जोद्‌. प. म्खऽ. ऽग्रो. मस्‌. यि. गेर्‌. ब्तब्‌. स्ते. ग्सङ म्जोद्‌. न. ग्नस्‌. प. लस्‌ द्ब्यिङस्‌. क्यि. फ्यो. मो. नेम्स्‌. क्यिस्‌. बकऽ. ब्ग्रोस्‌. नस. ज़े. दम्‌. प. ग्यं. गर्‌. ल. ग्नङ. ब. श. म. लो. च. बस्‌. लेग्स्‌. पर. बस्ग्युर्‌. बऽो"॥

(२) इससे आगे* श. म. लोचव द्वारा अनुवादित "ग्रुब. थोब. ल्ङ. बचु ऽि. र्तोग्स्‌. प. बर्जोद. प. शिग. ले. ऽोद्‌. क्यि. फ्रेङ. ब." (७१ ख १–७४ क ८) है, जिसमें निम्नलिखित सिद्धों और दूसरों की उक्तियाँ हैं—आर्यदेव,

*पृष्ठ. ७१ ख १–७४ क ७।

१५. चत्तगुह्य दोहा

(हिन्दी)

नमो मंजुश्रियै कुमारभताय ।

महान् ब्राह्मण सरह ने करुणायुक्त (यह) अवबोध गीत रचा ।

१. अहो संसार से परे सर्वमूलचित्त का स्वभाव सोइ ।

समुझ ध्यान में मथे विन मुक्त होइ ।

अपने को रखके अन्य का अन्वेषण अरे भ्रम ।

'यह है', 'यह नहीं', सब निज टूटै ।

नागार्जुन, वज्रघंटा, लूइ, शान्तिदेव, भिसपा, ग्योग्.पो. ल्जोन्.प. चन् (दास गुहावाला), अवधूतिपा, शबरीश्वर, ज्ञानपाल, लीलापा, रविगुप्त, धरणीधर, बिन्स, (?), दिङ्नाग, वज्रघंटा, लीलाभद्र, नागबोधि, तोग. चे.प (कुदालिपा), कालपा, भिनपा, पद्मांकुर सरोरुहवज्र, (सरह), गुदरी तिलोपा, नारोपा, कृष्णपा, भदुल, डोम्बिहेरुक, कनपा, बन्धवज्र, कंबल, प्रज्ञाफल, श्रीवत्स, अद्वयगुप्त, इन्द्रभूति, कपचरी, कुलमरि, रत्नबोधि, पदमवज्र, रमफल, नागबोधि, कर्मवज्र, चन्द्रकीर्ति, सुकरसिद्ध, ज्ञानवज्र, सरोरुहवज्र (?सरह), रत्रित तथा बहुत-सी डाकिनियाँ। सरोरुह सरह का दूसरा नाम है, इसलिए यहाँ इस नाम से उद्धृत पद्य शायद सरह ही का हो। पद्य निम्नलिखित है—

१. ल्तें. ब. म्खऽ. द्ब्यिङ्स्. ग्रु. ग्सुम्. दु।
रिग्. पऽि. ल्ह. मोऽि. स्कुर्. ग्सल्. ते॥
ऽोद्. सेर्. स.प्रो. ब्स्दुस्. ऽग्रो. दोन्. ब्येद्।
स्कु. ग्सुम्. ग्शन्. नस्. ब्चल्. मि. द्गोस्॥

और

२. द्पे. यि. ये. शेस्. म्छोन्. दु. मेद्।
दोन्. ग्यि. ये. शे. स्. स्गोम्. दु. मेद्॥
थब्स्. क्यि. मन्. ङन्. स.म्र. रु. मेद्.।
ब्ल. मऽि. द्रिन्. लन्. ऽखोर्. थब्स्. मेद्॥

सरोरुहवचने--

१, नाभि गगन धातु के त्रिकोण में।

अम्ल विद्यादेवी प्रकटै।

प्रभा उत्साह का संग्रह जगत् के अर्थ करै।

त्रिकाय को अन्यत्र ढूँढ़ना नहीं चाहिए ॥

२. उपमा ज्ञान वेदने नहीं,

अर्थज्ञान ध्याने नहीं;

उपाय-उपदेश स्मरणे नही,

गुरु कृपा उत्तर चक्र उपाय नहीं ॥

—इति कहा

१६. सरह के पद

(मूल, छाया)

१६. सरह के पद

दोहा, चौपाई के अतिरिक्त सरहपाद ने कितने ही गीत भी रचे हैं, जिनकी संख्या काफी रही होगी, पर हमारे पास तक उनमें से थोडे ही पहुँचे। गीतों के साथ उनके रागों को भी दिया गया है, जिससे यह भी पता लगता है, कि यह परिपाटी ईसा की आठवीं सदी में भी प्रचलित थी। राग गुंजरी शायद गुर्जरी है, भैरवी आज भी एक प्रसिद्ध रागिनी है, मालसी मालवश्री है, द्वेशाख भी एक पुराना राग था। भूमिका में हम बतला चुके हैं, कि सरह के साथ हमारे साहित्य में बहुत-से नये तत्त्व प्रविष्ट होते देखे जाते हैं। क्या इसी (अपभ्रंश-)काल से राग-रागनियों की परिपाटी तो शुरू नहीं हुई ?

चर्या-पदों के पुराने पाठ के लिए हम अधिक अच्छी स्थिति में नहीं हैं। नेपाल या भारत की जो प्रतियाँ मिली हैं, वह उस समय की हैं, जब कि भूतकाल का 'इल' प्रत्यय प्रचलित हो चुका था। सरहपाद से ५-६ शताब्दियों बाद उनके गीतों में भारी परिवर्त्तन हो जाना स्वाभाविक है। मीराबाई के शुद्ध राजस्थानी पद कैसे विकृत रूपों में मिलते हैं, यह मालूम ही है। 'चर्यापद' के लिए बहुत खींचातानी की आवश्यकता नहीं है। बोधि-चर्या की तरह सिद्ध-चर्या या वज्रयान-चर्या भी रही है। चर्या का अर्थ आचरण, अभ्यास या अनुष्ठान है; दिन-चर्या कहते हम उसी भाव को हिन्दी में देखते हैं। नेपाल के बौद्ध अपनी गुप्त पूजा को 'चर्या' या 'चचा' कहते हैं, जिसमें ये पद गाये जाते हैं। इसीलिए इन्हें चर्या-पद कहा गया। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री द्वारा संपादित चर्यापदों में निम्नलिखित चार सरहपाद के हैं—

राग-गुंजरी

(१)

अपणे रचि रचि भव-निर्वाणा ।
मिछें लोअ बन्धावइ अपणा ।।
अम्हें ण जाणहुँ अचिन्त जोई ।
जाम मरण वि कइसन होई ।।
जइसो जाम, मरण वि तइसो ।
जीवन्ते मइलें नाहि विशेसो ।।
जा एथु जाम मरणे विसंका ।
सो करउ रस-रसानेरे कंखा ।।
जे सचराचर तिसअ भमन्ति ।
ते अजरामर किमपि न होन्ति ।।
जामे काम कि कामे जाम ।
सरह भणइ अचिन्त सो धाम ।।

(२)

राग—देशाख

नाद न बिन्दु न रवि न शशिमंडल ।
चिअराअ सहावे मूकल ।।
उज रे उजु छाड़ि मा लेहु रे वंक ।
निअहि बोहि मा जाहु रे लंक ।।
हाथेर कांकण मा लेहु दापण ।
अपणे अपा बूझते निअ मण ।।
पार-उआरें सोई गाजइ ।
दुज्जण संगे अवसरि जाइ ।।
बाम दहिण जो खाल-बिख (1) ला ।
सरह भणइ बापा उज बाट भाइला ।।

(१)

निज मने रचि रचि भव निर्वाणा।
वृथा लोक बँधावै अपना ॥
हम न जानै अचिन्त योगी।
जनम मरण कैसा होई ॥
जैसा जनम मरणहु तैसा।
जीवत मरत नाहि विशेषा ॥
जो यह जनम मरण की करे शंका।
सो करै रस-रसयन कांछा ॥
जे सचराचर तृषित भ्रमन्ति।
ते अजरामर किमपि न होन्ति ॥
जनमे कर्म कि कर्मे जन्म।
सरह भनै अचिन्त्य सो धाम ॥

(२)

नाद न बिन्दु न रवि न शशिमंडल।
चित्तराज स्वभावे मुक्त ॥
ऋजु रे ऋजु छाडि ना लेहु रे वंक।
नियरे बोधि, ना जाहु रे लंक ॥
हाथे रे कंकण ना लेहु दर्पण।
अपने आप बूझहु निज मन ॥
पार-वार सोई गाजै।
दुर्जन-संगे डूबे जाये ॥
बायें दाहिने जो खाल-बेखाला।
सरह भनै बप्पा ऋजु बाट भइला ॥

(३)

राग—भैरवी

काअ णावडि खाण्टि मण केडुआल ।
सद्गुरु-वअणे धर पतवाल ।।
चीअ थिर करि धरहु रे नाइ ।
आन उपाये पार न जाइ ।।
नौवाही नौका टानअ गुणे ।
मेलि मेल सहजे जाउ ण आणें ।।
बाटत भअ खाण्ट वि बलआ ।
भव उलोलें सब वि बोलिआ ।।
कूल लइ खर सोन्तें उजाअ ।
सरह भनै गअणें समाअ ।।

(४)

राग—मालशी

सुइणेंहो विदारिअ निअ मन तोहरे दोसे ।
गुरु-वअण-विहारें रे थाकिब तइ घुण्ट कइसे ।।
एक ट भवइ गअणा ।
बङ्गे जाया निलेसि परे भागेल तोहोर विणाणा ।।
अदभुअ भव मोहो रे दीसइ पर अप्पाणा ।
ए जग जलबिम्बाकारे सहजें सूण अपणा ।।
अमिअ अच्छन्तें बिस गिलेसि रे चिअ परबस अपा ।
घरें परेक बुझ्झिले रे खाइब मइ दुठ कुण्डवाँ ।।
सरह भणन्ति बर सूण गोहाली कि मो दुठ बलन्दें ।
एकेले जग नाशिअ रे बिहरहु सुच्छन्दे ।।

(३)

काया नावड़ी खाँटी मन केडुआल ।
सद्गुरु-बचने धरु पतवार ।।
चित्त थिर करि धरहु रे नाव ।
आन उपाये पार न जाव ।।
नौवाहक नौका टानै गुणे ।
मेलि मेल सहजे जाहु न आने ।।
बाटते भय, दस्यु बलवान् ।
रव हिलोरें सर्व कंपमान ।।
कूल से खर स्रोते उजाय ।
सरह भनै (जाइ) गगने समाय ।।

(४)

सपने न विदारि अरे निज मन तोहरे दोसे ।
गुरु-बचन बिहारे रहब तैं मूढ़ कैसे ।।
अद्भुत हुंकार-भव (चित्त) गगने ।
(अद्वय) वंगे लीलेसि जाया परे भागल तोर विज्ञाना ।।
अद्भुत भव-मोह रे दीसइ पर आपना ।
एहु जग जल-बिम्बाकार सहजे शून्य अपना ।।
अमिय अछतै विष गिलेसी रे चित्त परवश आपा ।
घरे परैक बूझी रे खाइब मैं दुष्ट कुंडवा ।।
सरह भनै बरु सूनी गोशाला कि मोर दुष्ट बलदा ।
अकेले जग नाशिय रे बिहरहु स्वच्छन्दे ।।

।। इति राहुल सांकृत्यायन-सम्पादित सरह दोहाकोशावलि समाप्त ।।

परिशिष्ट १

१. विनयश्री की गीतियाँ[१]—

(१)

2a निमूल तरुवर डाल न पाती ।
निभर फुल्लिल्ल पेखु बिम्राती ।। ध्रु० ।।१।।
भणइ विनयश्री नोखौ तरुअर। फुल्लए करुणा फलइ अणु[1]त्तर।
करुणामोदें सएलवि तोसए। फल संपतिएँ से भव नाशए।।२।।
से चिन्तामणि जे जइ स वासए। से फ़ल मेलए नहि[2] ए साँसए।
वर गुरुभत्तिएँ चित्त पवोही। तहि फल लेहु अणुत्तरबोही।।३।।
गेल्लिअहुं गिरिसिहर रि जात्तें[3] । तहिं झंपाविल्लि कलिके अन्ते ।। ध्रु०।।
हल कि करमि सहिएँ एकेल्लि। बिसरे राउ लेल्लइ लिसु पेल्ली।
तहिं झंपइ ट्ठे[4]ल्लि हेरुअ मेले। बिसअ बिसइल्लि मा छाडिय हेले।
भणइ विनयश्री वरगुरु बएणे। नाह न मेल्लप रे गमणे।।४।।

(२)

राहुअें चान्दा गरसिअ जाबें। गरुअ संबेअण हल सहि ताबें।।ध्रु०।।
भणइ विनयश्री नोख बिनाणा। रवि साँजोएँ बान्ह गहणा ।
वान्द गरसिल्ले आन्न न दिशइ। सएल बिएक रूअ पडिहारइ।।
साब् गरासिउ आध राती। न तहि इन्दी बिसअ बिम्राती।।
कइसो आपु व गहणा भइल्ला[२]। सम गरासें अथवण गइल्ला।।५।।

(३)

गिरिवर सिहरेहि लाला लाम्बए। तहिं सो[3] केवटिणि रिभर जागए।।
अरे भल्लि केवटिणि जाण विचारअ। माआ माच्छ निरन्तरें मारअ।।

---

१. तालपत्र का फोटो-प्लेट मिलाओ।

द्वतिश नाला साब्ब निरुन्धी[4] । मारअ माच्छा निसर बान्दी ।।
माआ माच्छा आगे म विभाक्खी । आछइ चउमुह जाला राक्खी ।।
अइसि केवटिणि सो पडिहा ।

(४)

4a खाने पाने जो कोइ राता । सरुअर हिअ बट भमइ उमता ।।ध्रु०।।
भन्तिएँ रे भन्तिएँ जग अइसे वहिउ । आपणु रचि रचि वानुण लाइउ[1] ।।
चउकोडि रहिआए सुखसाला । तथत रहिअ मूढ भमन्ति ते काला ।।
मान छडिआ सदगुरु से कह । जे सो तथता सरूअं पावह ।।
चउक खलभलि आ[2] एल विवहिउ । सदगुरु पुछिया आपाण न चाहिउ ।।०।।

राग–बनाडी

जिम अन्धारें रज सो माया । तिम सो मुणहु रे सएलवि आपा[3] ।।ध्रु०।।
परम बिरम माझें जो कोइ लागा । आहवा णिअ जिम बोहिते भागा ।।
जिम नउ भासइ बिविर पसि उदधि । तिम लोअ भासइ तथता रिद्धि ।।
चउ खशमु हलहु रे ठाए एक वि ठाणा । ताबें जइ पावहु सिरि माहाजा[5]णा।।
सरुअ भणइ हंसु मुअइसे नाइ ।
पण्डिअ बएणें हत्थुअ हमें थाक ।
किसे . . . भेअ भावाभाव । पडिबख रहिआ सहज सहाव ।।
4b चउ धाउ पाञ्च कान्ध छअे बिसया । सअेल वि अमणेसि करि रे माया।।ध्रु०।।
गाह्य गाहक रहिअ त्रिहुण बिलसइ । सहज मुणेन्त पडिबख नासइ ।।
शुनासुन भणिब न जाइ । सहज सहावे सो पडिहाइ ।।
गाह्य गाहक जइ अेक न ठाणा । सावग कइसें[2] जिणधर राणा ।।
अवधू भणइ अइस माण्डल चाका । ए जग सएल विसह जनि विता ।।
तिहु ण फारिउं एवउ चाकें । पडिबख कम्म[3] मुणि सहज रे जाकें ।।ध्रु०।।
अइसि चंडाली तिहुणे दिट्ठ । अहनिसि करुणा पीवइ बइट्ठ ।।
ज्ञान समरोग निबाणें अतिनि । सएल साहारे[4] सहज भतिनि ।।
जाव सो गएणे दाढा । पडिबखधाम तबे सएल वि भागा ।।

अइसि चण्डालिहि जइ हिअहि पसइ । पखापख सए हेल बिनासइ[5] ।।
सरुअ भणइ दे बहु बिह भाङ्गे । सदगुरु पुच्छि जाणहु चांगे ।।

(५)

6a खमणा खमणिअें बाला बाली । खमणएँ खमण्डल भाग्रअ हाली ।।
विरही खमणी अइसु पमाणें । खुधी पइसइ घोर मसाणें ।
भणइ विनयश्री खमणि दिठी । खमणा च्छाडि न खणवि संतुट्ठी ।।
सिहर तलाम्बीचउ मुह घाटा । तहिं नइ बोधिए पडिल पाटा ।।
भणए विनयश्री धोविणि सेठी । सरुअ[2] पक्वाले सम्भोअें पइठी ।।ध्रु०।।

(६)

भैरम्भेहें पीउ सोहइ चौरस । पाञ्चै बान्ने पखालइ समरस ।।
धोअे असेसवि नालइ मूल[3] । थूल सरुअ निखारअ तुल्य ।।
गाल्लीअ च्छाडी अस मुह बोलअ । जान्तहि डीअ बिसेसें गालअ ।।१९।।
उल्हसी घोर मसाण वि[3] साजअ । अणहा घणहण कीविउ वाजअ ।।
अ` भल्ल विनयश्री साम्भोअे नाचअ । जिण गुण सुन्दरि काण्ठें न मूचअ ।
धीरवीरसरि गोन्दल वाटअ । साम्बइ नि भर चाक पएटअ ।।
6b निहर रमहु सो गुञ्ज न तुटअ । तहिं बल खाजइ नि[6] राँगुअ रजिअ ।।
सुद्ध कलिंजर दुदुर बजिअ ।।२०।।

(७)

आलि कालि जे करिआ दवडी । माथें गोआलिणि बेनिअ जोडी ।।ध्रु०।।
दुट्ठ गोआलिणि[1] देइ न विकए । भणइ विनयश्री आपणे भखए ।।
ए घोल पाणी करिआ आसार । लेइ सिणेहा एकाकार ।।
आपु बस हठाणें[2] गोआलिणि डोलअ । बिबरिअ करणे णवणी तोलअ ।।
आन से मान्थअ भेद् दे नाली । अहन्निशि ससहर बहुअे खणाली ।।२१।।

(८)

नअरबाहरें ताम्बोलिणी पाडा । चउपह माझे ताव पसारा ।।ध्रु०।।
बइठी पसारए देइ न बिकए । भणइ विन(य)श्री आपणे[4] भाखअ ।।

सहिश्रे ताम्बोली ताम्बोल बिलइश्रा। घरवि पोशइ पगरा दइश्रा ।।
सएँ विकए सएँ श्रापणे कीणश्र। सएँ कु श्रापान सो सएँ समाणश्र ।।
बिशश्रे र माँझे मे पवराण।। सदगुरु बोहे तासाम्भेएँ[5] जाणा ।।

(९)

7a मेहलि चण्डाली घरवि बाम्हण। जग विटालन्ती ते दुइ लाम्बल ।।ध्रु०।।
हल सहि का मञ्चिश्रचा भुश्र दिट्ठा। बाह्मण मणुस चण्डालिएँ तुट्ठा।
श्रइसिनि राजक माणल दिशइ। माउग चण्डाली बाह्मणें पइसइ ।।
देखु चण्डाली र वाह्मण जार। पञ्चि बान नेल्ल एकाकार ।।२३।।
ते दुइ नासन्ति सम साँजोश्रे। भणइ विनयश्री सदगुरु बोहें ।।

(१०)

हे हेरु न जाणमिलाज्ज। शुनने श्रच्छिल्लाएँ किम काज्ज ।।ध्रु०।।
उठ राउल माण्डल राज। ताडिच वि[3]णु हेर न सिज्झए काज्ज ।।
पञ्चश्र डाकिनी जे पञ्चश्र संचोएँ। श्रलल श्राहें हेरुश्र बोहए ।।
बिश डाकिणि[4] जे बिशएँ राती। हेरुश्र बोहए ले बिश्राती ।।
बेन्नि डाकिणि मीले करन्ती सो। ठार उठहु भव हींहीकार ।।
भणइ विनयश्री हेरु[5]श्र लाङका। धणु पर हाथ कवाल खडङ का ।।३४।।

(११)

देव राग :

श्राङ् ना बेरी खाणि णिवाणी। होल वाहइ उज्झाइ पाणी ।।ध्रु०।।
श्रणहा घणहण बाजइ तूर। पइसइ खाण्ठणी पर च कपूर[6] ।।
भजर भेलो सहि सासें बडिल्ली। समुद माझे खेल[1]इ नावा हेल्ली ।।
काच्छि कण्हिला करि श्राउ घाडा। जिणि श्रापइ ट्ठोलि चउमुह डाढा ।।
भणइ विनयश्री खाण्डिणि[2] लइश्रा। सुह भुञ्जहुं निराल होइश्रा ।।३५।।

(१२)

हल सहि घोर मंसाणविहारी। तहिं पइसि नाचए नै[3]रामणि दारी ।।ध्रु०।।
भणए विनयश्री पेख रे पेखुण। लाख ख लाख कनो ख बिलासण ।।

नावए दारी करण बिसेसे। इन्दी पाञ्च भूम्र सम तोसें।।
सुह बस लोली ना लेन्ते सोहअ। बिसम्र बिसइण्णा समर सबोहम्रे।।
सोन्ने रूपे बिभू[5]सिम्र नारी। नाचए बिहारें से कुल दारी।।३६।।
चन्दा आदित जे समसरस जोए।

(१३)

मल्लार राग :

हउं वाह्मण गिरिकुंज निवासी। दुठ चण्डाल।[1] ए लइल्लाहु पइसी।।ध्रु०।।
भणइ विनयश्री एकली काले। समरस भइल्लाहु वाह्मचण्डाले।।
बहिलि समिर[2]णें कुंजम्र पइसम्र। से आच्छे पिणे मो कुल नासम्र।।
सहल सहिम्रा पुव पेखु इन्दि म्राली। हउं[3] वाह्मण से मेहलि चण्डाली।।
से आणुराती चण्डाली रे देख। बेनि संजोम्रे अ्रसेस वि एक।।२०।।

(१४)

गवरी राग : शबरी[4]

एकै ता मै नावग दिल्ला। पाँच जण बाहिबा कएल्ला।।ध्रु०।।
भणइ विनयश्री हमु कण्णाहर। जिण ग्रां जाए थम चउमु[5]ह पार।
ललना रसना बे ।न पाताका। णेहा घाल्ल लाइल चउचाका।।।
खर सो आणहिं नरु वढिम्र। अलि·कलि दुइ गुणे[1] कढिम्र।।
हमु कण्डा हरण भिडि नलाधम। पाञ्चन बाहि तिण म्रावा हम।।
सोन रुपे हं भरल्लि नाव। कुञ्ज तवइ णिम्र[2] रूप म लाब।।३।।।

(१५)

बाहडी राग :

सर सांजोइम्र बिन्धहु लाख । तुट उपाए पाखापाख।।ध्रु०।।
भणइ[3] विनयश्री पखबि लाखण। बेह नबेह क समसुह लाखण।।
नीचण विनाणी लाख तबे जाए। गरुम्र संबेम्रण म्रान कि सिज्झए।।
अ्रइस बिनाणी सो पडिहासम्र। हल ख बिन्धी अ्रप्प सवि तोसम्र।

(१६)

२. सुमइगीत[1]–

अखंड पयंड मोह दण्ड खण्ड मज्जिलें । काण्ड कोदण्ड नीलोप्पल सज्जिलें ।।
जयपि देव मंज बज्जवीरा[1] । रापि जणु अण्ण दिण दीप सबोही ।। ध्रु०।।
चंद चंदन मलिणें कुंकुम कत्थूरि णाणा वल लिणें[2] ।।ध्रु०।।
भणयि सुमयि मयि तुह्म पय सरणा ।
दहयि मोह महु तिण जिम दहणा ।।ध्रु०।।
रमणिजण मण रम[3]ण मंजरव वीरा ।
गयण सम जरामरण समर हर वधीरा ।।
अवनिनिहित जानु सव्यहस्ते क्खड्गतदितर कर मुष्टौ तर्जनीसवतपाश:
निविड धन शरीर श्चण्डरुक्चण्डचक्षु: शमयतु तव विघ्नं विघ्नहर्ताऽचलोयं
जयि मुणिराजदेव मंजहु मारा ।
रयिजणु[4] अणुराप्प धम्मं गंभीरा ।।ध्रु०।।
गयि शरण सयल भय हरिह किअ बोही ।
उरु करुण गुरुचरण[5] णीमय गुण सोही ।।ध्रु०।।

३. लुइ गीति[2]–

[तालपत्र सवा ८ इच लंबा, पौने दो इंच चौड़ा, एक ओर प्राग्-मैथिली (मागधी) में]

गुजरी राग :

ए वथु वाथु बस जन रे जाहा, णिअे सआण न होइ ।
तबे से पञ्चहु आअ चेवर होइ बाए[1] र गण्ठि जइ पाइ ।।
अच्छि वञ्चु रे वसन्तव खाण्डी चाही, पास पडे सिह में वसन्ते न देखल ।
ज्चुजा[2] न मोडि मोडि खाइ ।।ध्रु०।।
अचल कुल दल समुद साएर अचलें दश दिशि धाइ ।
एहे बाअें[3] बिलसइ सिद्धा पाङगु धरिआं वुलाइ ।।ध्रु०।।

---

१. कागज के एक पृष्ठ पर। २. ताल-पत्र फोटो-प्लेट

बावें उपजइ बावें निश्रजइ चाउखण्डी डोलिश्रा लगाइ
बा[4] वेर वणिजारा बावे व सक्षाइश्रा बावे से मूदिल जाइ ।।
निश्रम वरत हर हरे लोउ पूस्ट जमे रे[5] श्राही।
लूइ वोलन्ति श्रम्हे वाव खण्डे भूसहु सङ्ग जाश्र से पुलिन बशेइ ।

४. कण्हपा गीति[3]—

वंञ्चि भव पांजर तोडिश्र हेले। सो करुण बेलमाठइ लीले।
डमरुहि हुकारे वाजइ। वज्र योगिनि लेइ हेरुश्र नाचइ ।।ध्रु०।।
फाडिश्र गण चाम पसाहिउ। भैरव कालरातितणे पाडिउ ।।
वामे खटाङ्ग दहिण करे डमरु। नाचइ हेरुश्र श्रालम्बइ कमलू ।।
टरिश्र मेरु तरन्तरु मम ताकिउ। श्राठ मसाण पश्र भे[2] चापिउ ।।
यासु पयभार मेदिनि कांपइ। हेरुश्ररश्र धरि कान्हिल नाचइ ।।४।।
सन बसहिं रे तथता पाहारी। बोह भण्डारि लइ स‌ राश्र फरी[3] ।।
घूमइ नाचइ वइस परविभाग । सहज निदालू मोर कान्हिल लाग ।।
चेवइ न बेवइ भन निदा गेला। सश्र न मूकल करि सुह सूतला[4] ।।
सोश्रणे देखिलहुँ चू तिहुश्रण सूनो। घोरि पडइ श्रवागमने विहूणो ।।
साखि करहु गुरु जालन्धरि बाज। मोहे न बुझइ पण्डिश्र श्रा (ज) ।
सद्गुरु वएणा। मूल सुन्न बाप्प स एल वासणा ।।२६।।

---

३. ताल-पत्र फोटो-प्लेट

परिशिष्ट २

सरह दोहाकोश-गीतिदोहार्धानुक्रमणी

(ह. हरप्रसादशास्त्रीके 'बौद्ध गान ओ दोहा'का पृष्ठांक), अन्यत्र दोहांक

परिशिष्ट ३

अपभ्रंशभोट--शब्दानुक्रमणी

त. तिब्बती अनुवाद। स. सस्क्य हस्तलेख। ब. बागची संपादित दोहाकोश। श. शहीदुल्ला।

अन्धार ∠अन्धकार, मुन्. नग्. (त. ११७; ब. ९७, मुन्.प (त. २१; स. १९)

अँधार ∠अंधकार, ल्कोग्.तु. ग्युर् (त. २१; स. १९)

अन्त–म्थऽ ∠त. २४; स. ५१)

अप्पउँ ∠आत्मापि, ब्दग्. ञिद्. (त. ७८; स. ७१)

अप्पउ अप्पा ∠आत्मनि आत्मना, रङ. गिस्. रङ. ल. (त. ७४; स. ६७)

अप्पण ∠आत्मनः, ब्दग् (त. ७; ब. ६)

अप्पणु∠आत्मनः, ब्दग्.ञिद्.(त.९९; स. १२१)

अप्प सहाव ∠आत्मनः स्वभावः, रङ. गि. ङो. बो. (त. ३०; स. २९)

अप्पा ∠आत्मा (आप), ब्दग् ञिद्. (त. ७६; स. ६९)

अप्पाण ∠आत्मनः (आपन), रङ. ञिद् (त. २९,५४; स. ५१,८०)

अ-पुब्ब ∠अ-पूर्व, स्ङ. न. `. (त. १०१; ब. ८२)

अब्भन्तरु∠अभ्यन्तर, नङ. (त. ११०; ब. ८९)

अभिण्ण-मइ∠अभिन्न-मति, (श. ८९)

अमण ∠आगमन, ऽोङ. (श. ७०)

अमिअ-रस ∠अमृत-रस, ब्दुद्. र्चिऽि. छु. (त. ६६; स. ४४)

अरे—ऐ.म.हो. (त. ५५; ब. ४४ क्ये. हो. (त. ८६; ब. ७१)

अरे पुत्त∠अरे पुत्र, क्ये. हो. बु. (त. ६१ ब. ५१)

अवचेअण ∠अवचेतन, र्तोग्स्.प. (श. १८)

अवस्स ∠अवश्य, नम्स्. क्यङ. (त. ९२; ब. ७५)

अ-वाअ ∠अ-वाच्य, ब्र्जोद्.दु.मेद्. (त. २३; स. २२)

अ-वाच्चें ∠अ-वाच्ये, ब्र्जोद्. दु. मिन् (त. ३५; स. ८९)

अ-विआर ∠अ-विकार, स्प्यद्.पर्. ब्य. ∠त. १०३; ब. ९४)

अ. विकल–मि.र्तोग्. प. (त. १२८; ब. १०४)

अ-बेज्ज ∠अ-विद्या, मि.शेस्. प. (त. ६१; त. ६१; ब. ५१, श. ५३)

अ-समल–दग्.प. (त. २५; ब. २३)

अ-सेस ∠अ-शेष, म.लुस्. (त. २८; स. ५०)

अह ∠अथ, गल्. ते. (श. २२)

अहवा ∠अथवा, ऽोन्.ते. (त. १६; स. १७) यङ.न. (त. ११५; ब. ९५)

अहिमाण ∠अभिमान, म्ङोन्. पऽि. ङ. र्ग्यल्. (त. ६३; स. ६०)

आअतन ∠आयतन, (श. ६४)
आआसवि ∠आयस्तव्य, गोम्.पर्.ग्युर् (त. ३६; स. ३४)
आअर ∠आकर, म्ञम्.ल्दन्. (त. ६०; स. ७६)
आइ ∠आदि, थोग्. (त. २४; स. ५१)
आएस ∠आदेश, मन्. ङग्. (त. ३८; स. २८)
आच्छ-अ (है), (श. ६६)
आणन्द ∠आनन्द, द्गः. (त. ११६; ब. ६६)
आहास∠आभास, स्न्ङ. बृशिन्.(त.७६; ब. ७२)
आयत्त–ग्नस्.न. (त. ११६; ब. ६६)
आयत्त:—द्वङ.गिस् (त. ११६; ब. ६६)
आलमाल–प्रलाप, चल्.चोल्. ग्तम्. (त. ६५; स. ६३)
आलमाल करह–द्मिग्स्. पर्.ब्येद्.प. (त. १३२; ब. १०६)
आलें ∠अलम्, ख्रुल्. प. (श. २०) मिङ. (श. ३५), स्य. ङन्.ग्यि. (श. ५१)
आलिउल ∠आलिकुल, तंग्.तु. (त. २५; स. ४८)
आवइ जाइ ∠आयाति याति, ग्रोङ.ऽोङ. (त. १०२; ब. ८२)
आवइ ∠आगमति (आगच्छति), ऽोङस् (श. ८४)
आवत्तन्त ∠आयान्त, ऽोङस् (त.१००; ब. ८१)
आस ∠आशा, रे.ब. (त. ११४; ब. ६४)
आसत्ति ∠आसक्ति, शेन्. प. (त.८६; ब. ७१)
आसन—स्कियल्. (त. ५; ब. ४)
इ ∠हि, (श. ३७, ७६)
इअ ∠इति, (श. ८६)
इच्छा–ऽदोद्.प. (त. ४३; स. २३; ६८; ब. ७६)
इति—श्स् (त. २०)
इँदि ∠इन्द्रिय, द्बङ. पो. (श. ६४)
इन्दिय ∠इन्द्रिय, द्बङ पो. (त. ३०; स. २६; त. १२१; ब १०१)
उ ∠च, (श २०)
उअ-पिट्ठ ∠उपपीठ, ञो. बडि. ग्नस्. (त. ५८; स. ६६)
उअल ∠उत्पल, पद्म (त.७७; स.६६)
उआर ∠उपकार, फन्. प. (त. १०३; ब. १०७)
उएस ∠उपदेश, मन्. ङग् (त. २७; स. ४६) बृस्तन्. प. (त ३; ब.२)
उज्जोअ ∠उद्योत, ऽछद्.पर्.योद्. प. (त. ५१; ब ६७)

उंछ—लङस्.ते. (त. ९; ब. ८)
उड्डी ∠उड्डीय, फुर्. बडि. (त. ८५; ब. ७०)
उणो ∠पुनः, लल. (श.४२)
उत्तिम ∠उत्तम, म्छोग्. (त.१६; स. १६)
उद्दूलिय ∠उद्धूलित, ऽब्रयुग्स्. नस्. (त. ४; ब.३)
उपाडण ∠उत्पाटन, ब्लोग्स्.पस्. (त. ८; ब.७)
उपाडिअ ∠उत्पाट्य, बल्.बर्. ब्येद्. (त.६; ब.५)
उबएसे ∠उपदेशे, ब्स्तन् (त.८४; स.६९) मन्. ङग्. (त. ६६; ब. ५६)
उबरइ ∠उवजइ उत्पद्यत, (श. ८६)
उबाउ ∠उपाय, थब्स्. (त.११५; ब. ९५)
उवाहरण ∠उदाहरण, (श. ९८)
उवेस ∠उद्देश्य, छेद्.दु. (त. ७; ब. ६) ∠उपदेश, ब्स्तन्. प. (श. ३)
उवइ ∠उदयति, शर्. (त. ११८; ब. ९८)
उबज्जइ ∠उत्पद्यते, स्क्येस्.प. (त.१०४; ब.८४), (त.३८; स.२७ त.६४; स. ६२; ब. ५४) स्क्ये प. (त.२२; स. २०) ञो. बर्. स्क्ये. ब. (त.६२; स. ५२)
उवरइ ∠ स्क्ये.ब. (त. १०४; ब. ८४)
उल्लाल–ऽब्युङ. ब. (श. ५९)
ए ∠हे (श. ९२)
∠इदम्, दे. ल्तर्. (श. ६२
एकवि ∠एकोपि, चिग्,सोग्स्. (त. १४; ब. ११)
एकाकार ∠एकाकार, ग्चिग्.गि. नम्. प. (त.६५; स ६३)
एक्क ∠एक, चिग् (त.२७; स.५०)
एक्क करु ∠एकं कुरु, चिग्.तु. ब्य. ब.स्ते. (त. २७; स. ५०)
एक्कु खाइ ∠एकः खादति, ग्चिग् सोस्. (त.९९; ब. ८०)
एक्कबि ∠एकोपि, चिग्. क्यङ. (त. ४१; स. ३६)
एत ∠एतावन्त (श्र. ३९, ६३)
एत्तवि ∠एतावदपि, दे. चम् (त. ७८; स ६८)
एमइ ∠एवं हि, गङ.ल्तर् (त. ७८; ब. ७१) गो. ब्स्लेग् (त. ५३; स. ४३)
एरइ ∠आचार्य (शैव), (त.४; ब. ३)
एवं ∠एवं, ऽदि. ल्तर्. (त.४१; स. ३६, त. ११८; ब. ९८)
एवइ ∠एवं हि, (त. ७४; स. ६७ दि.ल्त.बुस्. (त. २६; स. ४८) ग्यि.न (त. २; ब. १)

एहिं ∠अत्र, अधिकरणप्रत्यय), बर् (त. ५; ब. ४)

एहु ∠अयं, ऽदि. (त. १३५; ब. ११२) दि. ल. (त. २९; स. ५१)

ऐसें∠ईदृश, दे. ल्त. बु. ञ्जिङ्(त. ३६; ब. ३४)

ओ ∠औ (द्विवचन) दग्. (त. २; ब. १)

कज्ज ∠कार्य, दोन्. (त. ३; ब. २)

कट्ठ ∠काष्ठ, शिङ. (त. ५४; स. ४४)

कड्ढिअ ∠कर्षित, म्थोन्.पोस्. (त. २३; स. १९)

कण्ण ∠कर्ण, नं. वर्. (त. ५; ब. ४)

कप्प ∠कल्प, तोग्. (त. ६२; ब. ५२)

कवडिआर ∠कवडिकार. (हाथीवान) ग्लङ.पो.स्क्योङ. (त. १२१; ब. १०१)

कमल ∠पद्.म. (त. ११४; ब. ९४)

कम्म ∠कर्म, लस्. (त. ४१; स. २४)

कर—लग्. (त. १२१; ब. ११)

करइ∠करोति, व्येद्.पर्. सद्. (त.९२; ब. ७५)

(करतल)—म्थिल्. (त. १९; स. १५)

करहा∠करभ, ङ.मो. (त. ५३; स. ४३)

करहु ∠कुरु, ब्येद्. चिग्. (त. ३३; स. ४४)

करि—ग्लङ. छेर्. (त. ९, ८७, ९३; ब. ८, ७१, ७६)

करिज्जअ ∠क्रियते, ब्य. (त. ७८; स. ७१) ब्येद् ऽग्युर्.न. (त. ९४; ब. ७७)

करिज्जइ ∠क्रियते, ब्येद्.पर्. ऽग्युर्. (त. ९३; ब. ७७)

करु ∠कुरु, ब्येद्. चिङ. (त. ८६; ब. ७१) ब्येद्.पर्. (त. २७; न. ५०)

करुणा—स्ञिङ.जे. (त. १५; स. १६)

कल ∠कला, रङ. ब्शिन्. (श. ५५)

कलङ्क—ञोग्. प. (त. १००; ब. ८१)

कवण ∠कोनु, गङ.यन्. ते. १३५; ब.११२)

कहइ∠कथयति, ब्स्तन्.चिङ. (त. ७६; स. ६९)

कहाण सक्कइ∠कथितु शक्नोति,ब्स्तन्.पर्. नुस्. प. (त. ६२; ब. ५०)

कहमि ∠कथयामि, (श. ९५)

कहाणा ∠कथानक, ग्तम् (त. ४७, ९५; स.१२७)

कहि ∠कुत्र, गङ. यङ. (त. १०१; ब. ८२)

कहिँ ∠कुत्र, गङ. दु. (त.३८; स. २७) ∠कथं, चि.शिग्. (त. ६४; स. ६१)

कहिअअ ∠कथितक, ब्र्जोद्.यिन्. ते. (त. ६५; स. १२७)
कहिअउ ∠कथितो, ग्यिन्. म्छोन्. (त. ७१; स. ६४) ब्र्जोद्.क्यङ. (त. ३६; स. ३८)
कहिज्जइ ∠कथ्यते, ब्स्तन्.ते. (त. ८८; ब. ७३) ब्स्तन्.नुम्. त.७२; स.६५) ब्स्तन्. पस्. तोग्स्. (त. ६४; स. ६२)
कहहउ जाइ ∠कथयतु यात्वा, ब्स्तन्. नस्. ऽग्रो (त. ३२; स. ३०)
काअ ∠काया, लुम् (त. १०२; ब. ८३)
काअ-वाअ-मण ∠काय्-वाक् मन, लुस्. ङग्. यिद्, (त. १०२; ब. ८३)
काआ ∠काया, लुस् (त. १०; ब. ६)
क इँ ∠कथं, जि.ल्तर् (श. २४)
काउ ∠काक, व्य. रोग्. (त. ८५; ब. ७०)
काम—ग्दुङस.प. (श. ५२) लस्. (त. ८०; स. ६७)
काम. अ-∠अ-कर्म, लस्. मेद्. (त. ८०; स. ६७)
कारण—र्ग्यु. (त.२४; स. २३) र्ग्यु. म्छन् (त. १३३; ब. ११०)
काल—दुस्. (त. ३६; स. ३४ छे (श.६८)
काल करइ (काल करोति, छङ.ब.) (त. ८०; ब. ६६)
कासु ∠कस्य, सु. ल. (त. ७२; स. ६५)
कोवि ∠कोपि, सु. ल. (त. ३०; स. ५२)
कासु ∠कस्य, सु. ल. (त. ७२; स. ६५ त. ८८; ब. ७३)
कि ∠किम्. चि. (त. १४; स. १२) चि. द्गोस्. (त. १४; ब. १२) चि. ब्यर्. (त. ६६)
किज्जइ ∠क्रियेत, ब्य. (त. १५; स. १२)
क्रिम्पि ∠किमपि, नम्. यङ. (त. ६; ब. ८)
की. ∠कथं, जि. ल्तर्. (त. २३; स. २०)
कीअइ ∠क्रियते, ब्यर्.योद्. (त. २३; स. २२)
कु—ङन्. प. (त. ११६; ब. ६६ ण)
कुन्दुर—(रति, मैथुन,) कु.न्दु.रु. (त. ११३; ब. ६१)
कुमारी—ग्शोन्.नु.म. (त. ७२; स. ६५)
कुस ∠कुश, कु. श. (त. २; ब. १)
(कृत)—म्जद्.प. (ग्रंथान्ते)
केणवि ∠केनापि, सुस्. क्यङ. (त. २४, ६५; स. २२, १२८)

गहिअ ∠गृहीत्वा, ब्लङस्. नस्. (त.१२१; ब.११)
गहिउ ∠गृहीतो, जिन्. (त. ७७; स. ६६)
गही ∠गृहे, ख्यिम्. न.(त.२०; स १८)
गाइव ∠गात्वा, ग्लु. लेन्. ते. (त.४१ स. ३६)
गाम ∠ग्राम, ग्रोङ (त. ८०; स. ६७, ब. ६७)
गाहइ ∠गहते, शेस्. प. (त. ११३; ब. ६१)
गाहिइ ∠गाहितो, ख्यब्.ग्रुब्.प. (त. ४८; स. १२७)
गाहिब ∠गाहित, म्थोङ. ङो. (त.४१; स.३६)
गिरि–रि. (त.१२०; ब.१००)
गिहवास ∠गृहवास, स्ख्यिम्.थब्. (त. १३५; ब. ११)
गुण–योन्.तन्. (त. ४०, ७१, ६०, स. ५,३६,६४,७८)
गुणिज्जइ ∠गुण्यते, ऽजिन्. दङ. स्गोम्.प. (त. १८; स. १४)
स्गोम्. प. (त. १८; स. १४)
गुरु–ब्ल. म. (त.६४; स.६२;ब.५४ त. ८४; स. ६६ , स्लोब्.द्पोन्. (त. ३१; स. ३४)
गुरुपाअ ∠गुरुपाद, ब्ल.मऽि. शल्.) (त. १६, ३१; स. १५, २६)
गुरु. वर–ब्ल.म.दम्.प. (त. ३५; स.८६)
गुहिर ∠गंभीर, म्थोन्. प. (श. २३)
घण्टा–द्रिल्.बु. (त. ५; ब. ४)
घर ∠गृह, ख्यिम्. (त. २; ब. १)
घरहि ∠गृहे, ख्यिम्. दु.(त. ५; ब. ४)
घरिणि ∠गृहिणी, ख्यिम्. ब्दग्. मो.) (त. १०३; ब. ८४)
घरे ∠गृहे, ख्यिम्.(त. ४७; ब.१२७)
घरें अच्छह ∠गृहे सति, ख्यिम्. न. ग्नस्. (त. ७५; ब. ६२)
घरे घरे ∠गृहे गृहे, ख्यिम्. दङ. ख्यिम्. न. त.६५; स.१२७; ब.७८)
घोरान्धारें ∠घोरान्धकारे, मुन् नग्. छेन्.पो. (त. ११७; ब. ६७)
घोलिअइ ∠घूर्णित, रब्.तु.शेस्. (त. १०८; स. २५)
(च)–दङ (त.२; ब.१)
चउजह ∠चतुर्दश, (श. ६१)
चउट्ठ ∠चतुर्थ, ब्शि. प.(त.११६; ब. ६६)
चक्क ∠चक्र, ऽखोर्. लो. (त. २५; स.४८), ऽखोर्. लो. दम्. प. (त. ११८; ब. ६८)
चंग–चारु, मि.सू्न्. (त. ५५; स. ४५)
चंचल–मि. सू्न् (त.५५; स.४५)

चदहभुवणें ∠चतुर्दश भुवने, व्चु. ब्शि. प. यि. स. ल. (त.११०; ब. ८९)

चन्द्रमणि ∠चन्द्रमणि, स्ल.व. नोर्. बु. (त. ११७; व. ९७)

चमर—ग्यग, त. ८; ब. ७)

चरेइ∠चरेत्, स्प्यद्.पर्.ब्य.(त.८४; ब. ७०)

चल—ग्यो (त. ८०; ब. ६६)

चलउ∠चलत, स्क्योद्. (त. ६५;स. ६३)

चान्द∠चन्द्र, स्ल. ब. (त.५८; स. ९६)

चार ∠चत्वारि, ब्शि.(त. २; ब. १)

चाली ∠चलित्वा, ऽग्रोल्. (त. ५; ब. ४)

चाहन्ते ∠इच्छन्त, पश्यन्त, ब्ल्तस् शिङ. (त. ३५; स. ३४)

चाहिअ ∠दृष्टो. म्थोङ. (श. ४१)

चाहिअ ∠दृष्टो, म्थोङ. ङो. (त. ४१; ब. ३९)

चित्त—ब्सम्. (त. ७०; स. ६४; त. ४८; स. १२८)
सेम्स् (त. ३७,७४,९०; स. २७, ६७, ७८; त. १३२;ब. १०८)

चित्तआ—ब्सम्. ग्यिस्.मि.ख्यब् (त.४८; स. १२८)

चित्तह ∠चित्तस्य, सेम्स्.स्क्ये (त. ५४; स. ४४)

चित्ताचित्त—ब्सगोम्. दङ. मि. ब्सगोम्. (त. ९६; स. १२३)

चित्तेकरूअ ∠चित्तैकरूप, सेमेस् क्यि. छुल्.ऽजिन् (त. ११;स. १०)

चिन्तइ ∠चिन्तयति, सेम्स्. प. (त. ३८; स. २८)

चिन्तामणि—यिद्.ब्शिन्. नोर्.बु. (त. ४३; स. २३; त. ९३; ब. ७६)

चेल्लु—श्रामणेर (चेला), द्गे छुल्. (त. १०; स. ९;ब. ९)

च्छड्डइ—दोर्. रो. (त. १०१; ब. ८२)

च्छड्डहु—बोर् (त. १७; स. १३)

च्छाडी—ब्रल्. (त. १३;स. ११)

च्छारें ∠क्षारेण, थल्. बस्. (त. ४; ब. ३)

च्छुप्पइ ∠स्पृशति, रेग्. ब्शिन् (त. ७७; स. ६९)

छिण्ण ∠छिन्न. ब्चद्. प. (त. ७२;स. ६५)

जइ ∠यदि, गङ. छे (त. ७६;स. ६९)

जइ ∠यदि, गल्.ते. (त.७; ब. ६)
स्लर्.यङ. (त. ११६; ब. ९५)

जं जं ∠यं यं, गङ. गङ. (त. २९; स. ५२)

जग ∠जगत्, ऽग्रो (त.४८; स.१२८) ऽग्रो.कुन्. (त. ६५; स. १२=), ऽग्रो.र्नम्स् (त. ४१; स. २४, ऽग्रो.ब. (त. ४, २४, १०८; स. ३, २२, २५)

जड—ब्लुन्. पो. (त. ४४, ६८; स. ६१)

जडा (जटा, रल्. प. (त.४; ब. ३)

जण ∠जन, स्क्ये. बो.(त.३६; स. ३५, त. ५; ब. ४)

जत ∠यद्, गङ.जिग्. (श. २३)

जत्थ ∠यत्र, गङ.दु. (त. ३०; स. २६)

जन्त ∠यान्त, फियन्. (त. १००; ब. ८१)

जब्बे ∠यदा, गङ. छे. (त. ४१; स. ३६; ब. ३६)

जरइ ∠जरति, र्नम्.पर्. (श. ७१)

जलेहि जल ∠जले जल, छु.ल.छु (त. ३४; स. ८८)

जसु ∠यस्य, गङ. ल. त. १४; स. १२)

जहि ∠यत्र, गङ. (त. १२५; ब. १०३ गङ.दु. (त. २६; स. ४६) गङ. ल. (त. ८१; ब. ६७)

जा ∠जात, (श. ७५)

जाउ ∠यावत्, जि.सृद्. (त. ८०; स. ६७)

जाइ ∠याति, ऽग्रो. (त. १५; स. १३)

जाण ∠जानाति, म्योङ.वर्.शेस्. (त. ११६; ब. ६ ब. ६६ शेस्. पर्.ब्य. (त.१०७; ब.८७)

जाणग्र ∠जानीत, तोग्स्. सो. (त. ८२; स. ७४)

जाणइ ∠जानाति, शेस्.पर्.ग्युर् (त.११५; ब.६५)

जाणमि ∠जानामि, शेस्.सो. (त. १११ ब.६०)

जाणहु ∠जानीहि, शेस्. पर्. ब्योस्. (त.७६; स.६६; त.३६; ब.३७)

जाणिग्र ∠ज्ञात्वा, शेस्. पर्. शिङ. (त. ४; ब. ३)

जाणिउ ∠जानीतो ज्ञातो, शेस्. पर्. नुस्. (त. ६१; स. ५१)

जाणी ∠ज्ञात्वा, शेस्. ब्यम्. (त. ७६; स. ६६)

जानन्ती ∠शेस्. (त. २; ब. १)

जाया ?–ब्लस्. ब्र्जोद्. (त. ७६; स. ६६)

जाल—ऽद्र. ब. (श. ३५)

जाव ∠यावत्, गङ. छे. (त. ७३; स. ६६)

जाली ∠ज्वालयित्वा, ब्तङ.नस्. (त. ५; ब. ४)

जाहि ∠याहि, ऽग्रो. (त. १२५; ब. १०३)

जिग्घउ ∠जिग्घ, स्नोम्.ख्यम्. (त. ६५; स. ६२)

जिम ∠यथा, जि. ल्तर् (त. ६३, १०१, ११७; ब. ७६, ८६, ९७;)

जुत्त ∠यूथ, (श. ७३)

जुवइ ∠युवती, ब्रुद्.मेंद्. (त. ८; ब. ७)

जे ∠यः (श. १६, ६१, ७६, ८६, ९३)

जेण ∠येन, गङ. गिन् (त. ४४,१२३; स. ६१)

जेत्तइ ∠याव्, जि.ल्तर्. (त. ८९४ स. ७७)

जो ∠यः, गङ. (त. १५; स. १६)
गङ. यिन् (त. १२६; ब. १०२)
गङ. शिग्. (त. १४,२०; स. १२, २०; त. ८१, ८३; ब. ७६, ७३)
चि. स्ले. (त. ११४; ब. ९८)

जोअण ∠योजन, स्त्र्योर्. ब. (श. १७)

जोअमि–∠जोहूं, म्थोङ. ब. (त. २९ स. ५२)

जोइ ∠योगी, नेंल्.ऽब्योर् (त. ५४; स. ४४)

जोइणिचार ∠योगिनिचार, नेंल्.ऽब्योर्. स्प्योद्.प. (त. १०४; ब. ८४)

जोइणि माअ ∠योगिनी माया, स्ग्यु. मऽि नेंल्. ऽब्योर्. (त. १०६) ब. ८६)

जोइ ∠योगी, नेंल्. ऽब्योर्. (त. ३४, १०५; स. ८८)

जोडण ∠योजन, स्त्र्योर्. बर्. (त. १६; स. १७)

जो पुण ∠यः पुनः, गङ यङ. (त.१६; स.१७)

जोहि–रिग्.ब्योद्. (त. ११२; ब. ९१)

झगड–झगडो, ग्दुङ. ब्येद्. चिग्. (त. २५; ब. २३)

झाण ∠ध्यान, ब्सन्. ग्तन्. (त. १४ ३४, ६३; स. १२, ४१, ६१)

ठविअ∠स्थापित, ग्तेर्. (त. १९ स. १५)

ठविअउ ∠स्थापित-तो, ग्नस्. पऽि (त. १९; स. १५)

ठाइ ∠स्थापि, ब्र्तन्. पर्.ग्नस्. (त. ५२; स. ४३)

ठाण ∠स्थान, ग्नस् (त. ९५; स. १२७ त. ४७; स. १२७)

ठाणु वर.∠स्थान वर, ग्नस्. म्छोग्. (त. ६२; ब. ५२)

ठिअअ ∠स्थितक, ग्नस्. (त. १२७; ब. १०३)

ठिअउ ∠स्थितको, ग्नस्. (त. ११०; ब. ८९)

ठिउ ∠स्थितो, ग्नस्.प. (त. १२८; ब. १०४. ञ.म्स्. पर्. ऽग्युर्. (त. ३०; स. २९)

ठीअउ ∠स्थितो, ओङ्स्. पऽि. छ्रे. (त. १३४; ब. १११)
डहाविअ ∠दग्ध्वा, ग्नोद्.प. (त. ३; ब. २)
णई ∠नदी, छ्रू. (त.१२०; ब.१००)
णउ∠नच, म.यिन्.ते. (त.२२;स.१९ त. ११६; ब. ९६) मि. (त. १७; स. १७)
णख ∠नख, सोन्. मो. (त. ६; ब ५)
णण्गल ∠नग्नल, गोस्. दङ. ब्रल्. शिङ. (त. ६; ब. ५)
णण्गाविअ ∠नग्नत्व, ग्चेर्. बु. (त. ७; ब. ६)
ण वाअें ∠न वाच्ये, ब्र्जोंद्.मिन्. (त. ६७; स. ७७)
णाउ∠नाम, मिङ.(त.१३१; ब.१०७)
णाम∠नाम, मिङ. (त.१११; ब.९०)
णाल∠नाल, नेंल्.म. (त.५९; स.९७)
णासइ ∠नाशयति, ऽगग्स्. (त. ६३; स. ६०)
णासग्ग∠नासाग्र, स्न. च्ंर्. (त.५४; स. ४४)
णाह ∠नाथ, म्गोन्. पो. (त. ३०; स. ५२, त. ८७; स. ७५, त. ९०; ब. ७२)
णाहि ∠नहि, मेद्. (त. २६; स.४९)
णि ∠निस्, मेद्. (श. ७०)
णिअ ∠निज, गञ्ुग्.मऽि. (त. १९; स. १६)
णिउण ∠निपुण, ग्चिग्. तु. स्दोद्. (श. ३४)
णिक्करुण∠निष्करुण, दम्. पऽि.स्ञिङ. जें. (त. १३१; ब. १०९)
णिक्कलंक ∠निष्कलंक, तोंग्. प. (त. १००; ब. ८१)
णिक्कोली–निर्मल, मि. लुग्. द्रि. मेद्. (श. ६३) ब्लुन्. पो. (त.७६; स. ६८)
णिच्चल ∠निश्चल, ब्र्तन्.पर्. ग्युर्.प. (त. ५५; ब. ४५)
मि. ग्यो (त. ५२,७३,६९,७७; स. ६६ ब. ८३)
णिवेसी ∠निवेश्य, ब्चुग्स्.ते. (त. ५; ब. ४.)
णिव्बाण ∠निर्वाण, म्य.ङन्.ऽदस्. (त. १३,१७; स. ११, १७)
परम–म्य.ङन्.ऽदस्. (त. ४२; स. २४)
णिम्मल∠निर्मल, द्रि. म. मेद्.(त.१२२; ब.१०२)
णिम्मिअउ ∠निर्मितो, स्प्रुल्. वर्. स्प्रुल्. (त. ११८; ब. ९८)
णिमिस ∠निमिष, ऽजम्स्. (त. ७९; ब. ६६)
णिर् ∠निर्. मेद्. (श. ९०)

णिरक्खर ∠निरक्षर, यि.गे.मेद्. (त. १०८; स. २५)
णिरवन्ध ∠निर्बंध, मि.गोग्स्. (त. ७६; स. ६४)
णिरन्तर ∠निरन्तर, तंग्.पर्. (त.१२५ व. १०३) गंयुन्. दु. (त. १२३; व. १०३ त. ११०; ब. ८६) गंयुन्. दु. ग्नस्. प. (त. १२६; ब .१०६)
णिरास ∠निराश, रे.ब.मेद्. (त. १३४; व. १२१)
णिरुद्ध ∠निरुद्ध, गग्स्.पर्. ऽग्युर्. (त. ३५; स. ३४)
णिलज्ज ∠निर्लज्ज, ङो.छ्.मेद्. (त. ८३; स. ७५)
णिस्सरि जाइ ∠निस्सृत्य याति, ल्दोग्. पर्. ऽग्युर्.प. (त.१२१; ब. १०१)
णिस्सर ∠निस्सर, ल्दोग्. प. (त.१३१; ब. १०१)
णिहाल ∠निभालय, ब्र्तग्स्.न. (त. ११६; ब. ६६)
णेवज्ज ∠नैवेद्य, ल्ह.ब्शस्. (त. १४; स. १२)
णहुग्रें–ग्चिग्. तु. (त. ३४; ब. ८८)
तइलोग्र (ण) ∠त्रिलोचन, मिग्. ग्सुम् (त. ६०; स. ६६)
तड ∠तट, ग्रम्.दु. (त.१२०; व.१००)
तण ∠तनु, लुस्. (त. ३१; स. २६)
तत्त, तात्त ∠तत्त्व, दे. ञिद्. (त. ३६; ब. ३५ त. ३८; स. २८)
तत्तइ ∠तावत्, दे.सि्द्. (त. ८७; स. ७२)
तत्तरहिग्र ∠तत्त्वरहित, दे.ञिद्. ब्रल्. ऽग्युर्. (त. १०; ब. ६)
तन्त ∠तन्त्र, ग्युद्. (त. २८; ब. २३)
तप–दक्ऽ, थुब्. (स. १३)
तब्वे ∠तदा, दे. छे. (त.४०; स. ३६
तरंग–दब्. ऽलेब्स् (त.१००; स. ८१ लंब्स्. दग् (त. ८८; स. ७६; ब. ७२)
तरुग्रर ∠तरुवर, स्दोङ.पो. (त.१३०; ब. १ ब. १०७), स्दोङ. पो. दम्. प. (त. १३१; ब. १०८)
तहवि ∠तथापि, दे.ऽद्रस्. (त. ७६; स. ७२) दे. बस्. (त. १३५; ब. १११)
तहा ∠तथा, दे. ञिद्. नस्. (त. १२१; ब. १०१)
तेहि ∠तदा. दे. छे. (त. ६३; ब.७७) ∠तत्र, देर्. (त. २८; स. ५१) दे. ल. (त. ११; ब. १०, त. १३२; ब. १०६)
ता–ञिद्. (त. २२; स. २०)
तारा–स्कर्. म. (त. ११८; ब. ६८)
ताव ∠तावत्, जि. सि्द्. (त. १०८; स. २५) दे. छे. (त. ७३; स. ६६, त. १०२; ब. ८३)

तावइ ∠तावत्, दे.सि्द्. (त. ८०; स. ६७)

तिण्णवि ∠त्रीण्यपि, नॅम्.ग्सुम्. ग्यि. (त. ३७; स. २७)

तित्थ ∠तीर्थ, मु. ग् नस्. (त. ५९; स. ६७)

बब्. स्तेग्स्. (त. १५; स. १३)

तिम ∠तथा, दे.ब्शिन् (त. ११०; ब. ८९)

तिल——तिल्. (त. ९२)

तिसिअ ∠तृषित, स्कोम्. प. (त. ६६; स. ८८)

तिसिओ ∠तृषितः, स्कोम्.नस्. (त. ११३; ब. ९१), स्गोम्.पस्. (त. ११३; ब. ९१)

तिसित्तन ∠तृषितत्व, स्कोम्. (श. ९३)

तिहुअण ∠त्रिभुवन, खम्स्.ग्सुम्. (त. २४; स. ५०, ब. १३०; ब. १०७) स. ग्सुम् (त. १०६, ११४; ब.व. ८७, ९४)

तुट्टइ ∠त्रुट्यति, छद्. ते. (त. ७९; स. ७२) नॅम्.पर्.ऽछद्.पर्. ग्युर्. (त. ५६; स. ६४)

तुरंग–र्त. ∠त. ९; ब. ८)

तुल्ले ∠तुल्ये, म्ज्म्. (त. ४; ब. ३)

तुस ∠तुष, शुन्. प. (त. ९२; ब. ७५)

त्थविर ∠स्थविर, ग्नस्.ब्र्तन्. (त. १०; ९)

त्रिदंडी–द्वयुग्. ग्सुम्.लग्स्.ल्दन्. (त. ३; ब. २)

थक्कु ∠तिष्ठ, ऽदुग्, (त. १२५; ब. १०३

थल ∠स्थल, थङ. (त. ६६; स. ४४)

थाक्कइ ∠तिष्ठति, ग्नस्.ब्र्तन्. प. (त. ७३; स. ६६)

थाक्कु ∠तिष्ठ, ऽदुग्. (श. १०५)

दक्खिणा ∠दक्षिणा, ब्ल.मऽि. योन्. (त. ६; ब. ५)

दंडी——द्ब्यु. गु. (त. ३; ब. २)

दत्त ∠दैत्य, ब्यिन्.चिङ. (त. ३६; स. ३५)

दलु ∠दत्त, स्तोङ.पो. (त. ५९; स. ६७)

दस ∠दश, ब्चु. (त. २९; स. ५२)

दाण ∠दान, स्ब्यिन्. प. (त. १३५; ब. ११२)

दिक्खिज्जइ ∠दीक्ष्यते, द्वङ. नम्स. ब्स्कुर्. शिङ. (त. ६; ब. ५

दिज्जअ ∠दत्त्वा, व्यनि्. नस्. (त. ७८; स. ७१)

दिट्ठउ ∠दृष्टो, यङ.दग्.म्थोङ. (त. ५९; स. ६७)

दिट्ठि ∠दृष्टि, ल्त. ब. (त. ११९; ब. ९९ ल्त. बु. (त. १८; स. १५, म्थोङ. व. (त. ३५; स. ३४)

दिट्ठो ∠दृष्टो, म्योङ. (त. ११; ब. १०)

दिवाग्रर ∠दिवाकर, स्नङ. ब्येद्. (त. ११८; ब. ९८), ब्सल्. ब्येद् (त. ५८; स. ९६)

दिस∠दिशा, फ्योग्स्. (त.२९; स.५२)

दीग्रउ ∠दत्तो, स्तेर्. ब. (त. १३५; ब. ११२)

दीप–मर्. मे. (त. १४; स. १२)

दीवा ∠दीप, मर्. मे. (त.५; ब.४)

दीस्सइ ∠दृश्यते, म्थोङ. (त. १००; ब. ८१)

दीसइ ∠दृश्यते, म्थोङ. ऽद्र. (त. १९; स. १५), म्थोङ. स्ते. (त. ८१; स.६७)

दीह ∠दीर्घ, रिङ. (त. ६; ब. ५)

दु ∠दुर्, मेद्. (श. ८८)

दुक्ख ∠दुःख, स्दुग्. ब्स्ङल. (त. ११८; ब. ९८)

दुट्ठ ∠दुष्ट, ञ्ि. सेर्. (त. ८९; ब. ७३)

दुरिग्र ∠दुरित, स्दिग्. प. (त.११७; ब. ९७)

दुल्लक्ख ∠दुर्लक्ष्य, म्छोन्.मेद (त. १०६; ब.८६)

देइ ∠ददाति, (दाति, स्तेर्. बर् ब्येद्. प. यि. (त.४३; स. २३)

देक्खइ ∠ देक्खति,प्रेक्षते, ल्तोस् (त.१९; स.१५

देक्खउ ∠प्रेक्षस्व, म्थोङ. (त. ६५; स.६२)

देव—ल्ह, (त.७८; स. ७१)

देस ∠देश, युल्. (त. ७७; स. ७०)

देह–लुस् (त.४; ब.३, त. ७३; स.६६)

देहहिं∠देहे, लुस्. ल. (त.८२; स. ७४)

देहा सरिस ∠देह सदृश, लुस्. दङ. ऽद्र. (त.५९; स.६७)

दोस ∠दोष, स्क्योन् (त. ९०; स. ७८; ब. १०३) ञ्ोस्.प. (त. ४०; स. ९०)

ग्ञोन्. पो. (त.९०)

दोसे ∠दोषेण, स्क्योन्.ग्यिस्. (त. ३६; ब.३४

दोहा ∠दोधक, (श. ९४)

धण्णो ∠धन्यो, ग्तेर्. यिन्. (त. ८४; ब.६९)

धंधा∠द्वन्द, ब्रुल्. प. (त. ३३; स. स. ४४) श्ञेन्. प. (त.१७; स.१३)

धंघी–स्लु. बर्. ब्येद्. (त. ५; ब.४)

धम्म ∠धर्म, छोस्. (त.४; ब. ३)

धम्म, ग्र- ∠ग्रधर्म, छोस्.मिन्. (त.४; ब ३)

धरिज्जइ ∠धार्यते, ऽज़िन्.प.यिन्. (त.९४; ब.७७)

धवहि∠धावयित्वा, दोम्स्.पर्. (त.६६; स.४४)

धारण—ब्सम्.ग्तन्. (त. २४, ७६; ब.६९,२३)

धावइ∠धावति, ऽग्रो.ब.चोम्. (त.५२; स.४३) ञोग्स्. ब्शिन्. (त.११३; स.९१)

धाविउ ∠धावितो, गं्युग्. ब्येद्. चिङ. (त.११; स.१०)

धाहिज्जइ∠ध्यायेत, ब्सम्.ग्तन्.ऽग्युर्. (त.१००; ब.८१)

धेअ ∠ध्येय, ब्सम्.व्य. (त. २४,७६; स. २३, ६९)

न—मि. (त.२; ब. १)

न्हाइ ∠स्नात्वा, शुग्स्.प. (त.१५; स. १३)

पअंगम ∠पतंगम, स्फ्य. लेब् (त.७५; स. ७६; ब.७१)

पआग ∠प्रयाग, प्र.य.घ. (त. ५८; स. ९६)

पइ ∠पति, ख्यिम्. ब्दग्. (त. ७५; स. ६८)

पइसइ ∠प्रविशति, शुग्स्.प. (त. १९; स. १५) ऽजुग् (त. ८१; ब. ६७) ऽजुग्.पर्.ऽग्युर्.(त. ४०;स. ३६)

पईसइ ∠प्रविशति, शुग्स् प. (त. १९; स. १५)

पउम ∠पढम ∠प्रथम, (श. ३६)

पच्चक्ख ∠प्रत्यक्ष, म्ङोन्.दु. ग्युर्. (त. २१; स. १९)

पच्छे ∠पश्चात् (पाछे), गं्यब्. (त. २९; स. ५२)

पडि ∠प्रति, यङ. दग्. (त. ५५; स. ४४) रब्. तु. (त. १२२; ब. १०२)

पडिपज्जइ ∠प्रतिपद्यस्व, यङ.दग्. स्पङ. (त. ५५; स. ४४)

पडिवण्ण ∠प्रतिपन्न, रब्.तु.तोग्स्. (त. १२२;ब. १०२), ब्स्तेन्.प. (त. १२५; ब. १०२)

पडिवेसी ∠प्रतिवेशी, ख्यिम्छेस् (त. ७५; स. ६८)

पडिहाइ ∠प्रतिभाति, स्नङ. ब. (त. १०५; ब. ८७)

पडिहाउ ∠प्रतिभातु, . स्नङबर्. ऽग्युर् (त. १२१; ब. १०१)

पडिहासइ ∠प्रतिभासते, ग्सल्.बर्. स्नङ. (त. ९८; ब. ७९)

पडेइ ∠पतेत्, बब्. (त. ८५; ब. ७०)

पढमे ∠प्रथमे, दङ. पो. (त. १११; ब. ९०) ग्दोङ. नस् (त. ३५; ब. ३४)

पढिअउ ∠पठितो, स्तोन्. (त. १११; ब. ९०)

पढिज्जइ ∠पठ्येत, ब्ल्कोग्.प. (त. १८;स. १४)

पढे ∠पठेत्, दोन् (त. २; ब. १)

पणमह ∠प्रणमत, फ्यग्. ऽछल्. लो. (त. ४३; स. २३)

पण्डिअ ∠पण्डित, म्खस्. प. (त. ४२; स. ७४, त. ९३; व. ७६)

पत्तिजइ ∠प्रतीयते (पतियाइ), यिद्. छेस्. पर्. (त. ३५; स. ८९)

पब्वज़्जा ∠प्रव्रज्या, रब्.तु. ऽब्युङ. ब. (त. २०; स. १८)

पब्बज्जिउ ∠प्रव्रजितो, रब्.ब्युङ. नस्. (त. ९. ; ब. १०)

पर–म्छोग्. तु. (त.९४; स. ९७ त.११७; ब. ७७) दम्. प. (श. ६०, ७८) ऽोन्. क्यङ. (श. १९ दे: (त. १०५; ब. ८४), ग्शन्. (त. २९; स. ५९)

परउआर ∠परउपकार, ग्शन्. ल. फन्. प. (त. १०३; ब. १०७)

परत्त ∠परत्र, फ्यि. म. (त. १३१; ब. १०८)

परमकल–म्छोग्. तु. तोग्स्. (त. ६३; ब. ५३)

परमत्थ ∠परमार्थ, दोन्.दम्. (त.१३; स. ११)

परमपउ ∠परमपद, दम्. प. सेम्स. (त.१०९; स.४१), परमपद, गो. ऽफ़ङ.

परममहासुह ∠परममहासुख, म्छोग्. तु. ब्दे. ब.छेन्.पो. (त. ११९; ब. ९९)

परमेसर ∠परमेश्वर, द्बङ. फ्युग्. दम्. प. (त.७२; ब.६५)

परमेसुरु ∠परमेश्वर, द्बङ. फ्युग्. म्छोग् (त.१००; ब.८१)

परलोक–जिग्.र्तेन्. फ.रोल्. (त. २६; स. ४८)

परि––योङस् सु. (त. ७२; स.६५ रब्. तु. (त. ७०; स. ६४)

परिआण ∠परिज्ञान, शेस्. प. (त. २१; स.१८), योङस्. सु. शेस्. (त. २५; स. १०३)

परिआणसि ∠परिजानासि, योङस्. सु. शेस्. (त. ७३; स. ६६)

परिआणहु ∠परिजानीहि, र्तोग्स्. पर्. ग्युर्. (त. १७; स. १४)

परिआणिअ ∠परिज्ञाय, योङस्.सु. शेस्. (त. ९५; स. १२७)

परिभावइ ∠परिभावयति, योङस्. सु. ब्स्गोम्. (त. १२८; ब. १०५)

परिमुचंति–म्युर्. दु. ग्रोल्. (त. ४४; स. ९१)

परिहरहु ∠परिहरत, रब्. तु. स्पङस्. (त. ७०; स. ६४)

परिसउ∠स्पृश, स्नोम्. ख्यम्. (त. ६५; ब. ५५)

पलुट्टिअ ∠पर्यस्य, स्कोर्.शिङ. स्लर्. (श. ७२)

पवण ∠पवन, लुंड. (त. २६, ३१, ४५, ५५; स. ४६, ३०, ४५, ७९; ब. ६६)
पविट्ठ ∠प्रविष्ट, ग्नस्. प. (ब. १४; स.१२)
पबेस ∠प्रवेश, जुग्. पर्. ऽग्युर्. ब. (त. २७; स. ४६)
पसु ∠पशु, व्योल्. स्रोस्. (त. २३; स. २०)
पसाअ ∠प्रसाद, द्रिन्. (त. ११५; ब. ९६)
पसाअँ ∠प्रसादे, द्रिन्. (त.११५; ब. ९५)
पाणी ∠पानीय, छु.यिस्. (त.७७; स.६९), छु. (त.२; व.१
पाव∠पाप, स्दिग्. प. (त.७७; स. ६९)
पावअ ∠प्राप्नोति, थोब्. ऽग्युर् (त.१६; स. १७)
पावइ ∠प्राप्नोति, ञोद्. दम्. (त.१०; स.९६), ञोद्.प. (त.१६; स.१६) ञोद् प. यिन्. ते. (त.१६; स.१६)
पावसि ∠प्राप्नोसि, थोब् पर् ग्युर्. (त.७३; स.६६)
पावहु ∠प्राप्नुहि, ऽफ्रद् (त.१०; ब. ८२)
पास ∠पार्श्व, (श. ८७)
पिअउ ∠पिव, ऽथुङ (त. १२०; ब.१००
पिच्छी ∠पिच्छ, म्जुग्स्. स्पु (त. ८; ब. ७)
पिज्जइ ∠पीयेत, थुङ. (त.१०५; ब. ८६)
पिवन्तें ∠पिबन्त, थुङस्. प. त १११; ब. ९०)
पीठ—कुन्.ग्नस्. (त.५८ स.९६)
पीवन्त ∠पिवन्त, थुङ. (त.२५; स.४८)
पुच्छ ∠पृच्छ, द्रिस्. ल. (त.१२०; ब.१००)
पुच्छअ ∠पृच्छत, द्रि (त.७५; स.६८)
पुच्छइ ∠पृच्छति, ऽछोल्. (त. ७५; स. ६२)
पुच्छमि ∠पृच्छामि, द्रि.वर्. ब्यऽो (त.३०; स.५२)
पुज्जि ∠पूज्यते, म्छोद्. प. (त. ७८; स. ७१)
पुडअणि—∠पुरइन, पद्मिनी, दब्. ल्दन्. (त.५९; स.९७)
पुणु ∠पुनः, फ्यि. नस् (त.६४; स.६१)
पुण्ण ∠पुण्य, दूर्ग्.य.ल. (त. ११५; ब. ९५)
पुब्व ∠पूर्व, सङ.न. (त. १०१; ब. ८२)
पूरइ ∠पूरयति, र्जोग्स् पर्. ऽग्युर् (त.११४; ब. ९४)
पुराण—स्ञिङ (त. १८, ७७; स. १४, ६५)

परिग्र∠पूर्ण, जोग्स्.पर्.ऽग्युर्(श. ६६)
पेक्खइ ∠प्रेक्षते, ल्तोस्. (त. १६; स. १५)
पेक्खु ∠प्रेक्षस्व, ल्तोस्. (त. ५३; स. ४३)
पेक्खह ∠प्रेक्षस्व, ल्त.बर्.ब्योस्. (त. ८७; ब. ७१)
फरन्ते ∠स्फरन्त, गेंङ्स् (त. २५, ५६; स. ४८, ६७)
फल—ग्रस्.बु. (त. ४३; स. २३; त. १३३; ब. ११०)
फुड ∠स्फुट, यङ.पो. (त. ६८; ब. ७६) ग्सल्. बर्. (त. ३१, ३८; स. २६, २७)
फुल्ल ∠पुष्प, मे.तोग्. (त. १३०; ब. १०७)
फुलिग्रउ ∠फुल्लितो, (त. १३; स. १०)
ब. ∠एव, ञिद्. (श. ७५)
बइट्ठ ∠विष्ट, शुग्स्. (त. ११; ब. १०)
बइसी∠विष्ट्वा, ऽदुग्. नस्. (त. ५; ब. ग्नस्. (त. ५; ब. ४), ग्नस्. शिङ. (त. २; ब. १)
बईसउ ∠विश, ऽदुग्. प. (त. ६५; स. ६२)
बक्खाण ∠व्याख्यान, छद्.पर्.ब्येद् (त. ११; ब. १०)
बक्खाणग्र ∠व्याख्यायते, ऽ छद्. प. यिस्. (त. ८२; स. ७४)
बक्खाणिज्जइ ∠व्याख्यायते, ऽछद्. प. (त. १८; ब. १४)
बज्जइ ∠वर्जयति, द्गोस्. प. (त. ६३; ब. ७६)
बज्झइ ∠बध्यते, ब्चिङ्स्.ऽग्युर्. ते. (त. ४१; स. २४), ऽछिङ्स्. ग्युर्. (त. ४३; स. ६१), छिङ. ब. (त. ६३; स. ६१)
बज्झन्ति ∠बध्यन्ते, छिङ.ऽग्युर्. (त. ८८; स. ६१)
बज्झे ∠बद्धेन, ब्चिङ्स्.पस्. (त. ४३; ब. ४२)
बढ—मूढ, मि.शेस्. प. (त. २७; स. ४६), मोंङ्स्. प. (त. ३६; स. ३७; त. ८६, ११६; ब. ७१, ६६)
बण ∠वन, नग्स्(त. १२८; ब. १०४)
बण्ण ∠वर्ण, यि.गे.)
बद्ध ∠ब्चिङ्स्. प. (त. ५२; स. ४३)
बंदह ∠वन्दस्व, ऽदुग्. चिग्. (त. ५४; स. ४४)
बन्देहिग्र ∠वन्द्याः, बन्दे.नंम्स्. नि. (त. १०; ब. ६)
बन्ध—छिङ.ब.स्ते. (त. ३३; स. ८८)
बन्ध करु ∠बन्धनं कुरु, छिङ्स्.बर्. ब्येद्. चिङ. (त. ८६; ब. ७१)

ब्रिगुग्र ∠त्रिज्ञक, (श. ३)
बिरला ∠विरल, ऽगऽ. यिस्. (श्र. ११५; ब. ६५)
बिस ∠विष, दुग्. (त. ७८; स ७१)
बिसग्र ∠विग्रय, युन् (त. २०; स. १८, त. ८०; ब. ६७)
बिसम ∠विषम, शिन्.तु.ऽकऽब. (श. ६६)
ब्रिसरश ∠विस्मर, ब्र्जोंद्.पर्.ग्युर्. (त. १११)
बिसरिस ∠विसदृश, द्पे.दङ.ब्रल्. (त. १०४; १०६; ब. ८४, ८६)
बिसाम कर ∠विश्रामं कुरु, गुग्स्. फ़्युङ. चिग्. (त. २७; स. ४६)
बीग्र ∠वीज, स. बोन्. (त.४२; स.२३)
वुज्झइ ∠बुध्यति, गो. (त. २३; स. २०) ब्स्लुस्. पर्. शेस्. व्य. (त.७४; स.६७), गो. ब. (त.६७; स.७७), ञेंद्.प. (त.७७; स.६६)
बुधा ∠बुधाः, म्खस्.नंम्स्. (त. ४४; स. ६१)
बुद्धि—ब्लो. (त. ६३; स. ६०)
बेग्रणु ∠वेदना, स्दुग्.व्स्ङल्. (त. ६२; ब. ७५)
बेइ ∠द्वैत, गोद्. (त. ६४; स. ६२)
बेणिम ∠द्विधा, ब्ये.ब्रग्. (श. ५१)
बेण्णबि ∠द्वावपि, ग्ञिस्. सु. ऽग्युर्. ब. (त. ११५; ब. ६५)
बेण्णि ∠द्वैत, ब्ये.ग्रग्. (त. ६०; स. ६७)
वेने ∠वेबे, ग्योग्स्. (त. ६; ब. ५), स्तोन्. (त. ६; ब. ५), ग्सुग्स् (त. ७; ब. ६)
बोह ∠बोध, र्तोग्स् (त. ७६, ६६; ब. ६६)
बोहि ∠बोधि, ब्यङ.छुब्. (त. १२७; ब. १०३)
बोहिग्र ∠बोहित, ग्सिङग्. (त. ८५; ब. ७०)
भग्र ∠भय, मोंङस्.प. (श. २६)
भत्ति ∠भक्ति, ब्स्ग्रिम्प्. ते. (त.७१; स. ५७), रब्. ऽब्रद्. (त. ७१; स. ६५)
भट्ठी ?—ऽग्रोग्स्.मो. (त. १०५)
भणइ ∠भणति, न.रे. (त.६; ब.८), स्म्र. (त. २०; स. १६)
भणइ ण जाणइ ∠भणितु न जानाति, स्म्र.रु. मि.ब्तङ, मणु. (त. ७२; स. ६४)
भत्तार ∠भर्ता, ख्यिम्.ब्दग्. (त.६६; ब. ८०)
भन्तिग्र ∠भ्रान्ति, ङो. म्छ्र्. (त.६३; स. ७६)
भमइ ∠भ्राम्यति, ब्ग्रोद्. चिङ. (त.७७; स. ६६)
भमउ ∠भ्रमत, ऽग्रो. (त.६५; स.६३)

भमर ∠भ्रमर, बुङ्.ब. (त. ८७; ब. ७१)
भमिअ ∠भ्रान्त्वा, फ्यिन्. ते. (त.५८; स. ६६)
भव—ऽखोर्.ब. (त.१२२; ब.१०२) स्रिद्. प. (त.२८; स.५१)
भवहि ∠भवे, द्ङोस्. पो. (त.६४; स.६१)
भाज्जा ∠भार्या, छ्युङ.म. (त.२०; स. १८)
भान्ति ∠भ्रान्ति (त.७४, १२६; स.६७, फ़.१०६)
भार—खुर्. बु. (त.४; ब.३
भाव—द्ङोस्.पो. (त.२२; स. १६)
भावइ ∠भावयति, योंद्. प. (त.६; ब.८)
भावाभाव—दङोस्. दङ. दङोस्. मेद्. (त.३३,७२; स.८८,६५)
भाविउ ∠भावित, स्गोम्.ब्येद्. त.१३; स.११)
भावे—ब्स्तन्. (त.१५; स.१२)
भिक्खु ∠भिक्षु, द्गे.स्लोङ. (त.१०; ब.६)
भिज्जइ∠भिद्यते, द्ब्येर्. प. (त.१०२; ब.८३)
भिडि ∠दृढ, (श. २१)
भिण्ण ∠भिन्न, द्ब्येर्. (त.१३३; ब.११०)
भुल्ले—(भूल), गोल्. (त.४; ब.३)
भोअ्रण ∠भोजन, स्. ब. (त.६; ब.८)
म. ∠मा, (त.१२५; ब.१०३)
मइ ∠मया, ङ.यिस्. (त.१२२; ब. १०२), ब्दग्. गिस्. (त. ५३, ७१; स. ४३,६४)
मग्ग ∠मार्ग, लम्. (त.१६; स.१६)
मज्झ ∠मध्य, बर्. (त.११४; ब.६४) द्बुस्. (त.२८; स.५१, द्बुस्. न. (त.५६; स.६७)
मट्टि ∠मृत्ति, स. (त.२; ब.१)
मण ∠मनः, यिद्. (त. ३४; स. ८८, त.३१; स.३०), (त.६४; ब.७७,) रङ.ग्युद्. (त.४२; स.२४), सेम्स्. (त.२६; स.४६)
मणहु∠मन्यतां, शेस्-पर्.ब्योस्. (त.३४; स.८५;)
मणु ∠मनः, सेम्स्. (त.१०६; ब. ८६;)
मण्ड—खु.ब. (त. १११; ब. ९०)
मण्डल—ब्क्यिल्.ऽखोर्. (त. ११८; ब.६८)
मण्णहु ∠मन्यस्व, ङेस्. (त. १२२; ब. १०२)
मति—ब्लो. ग्रोस्. (त. ८४; स. ६६)
मत—च्म्. (त. ६२; ब. ७५)
मन्त ∠मन्त्र, स्ङग्स्. (त. २४; स. २३) ग्सङ. स्ङग्स्. (त. १५; स. १२)

मोक्ख∠मोक्ष, थर्.ब. (त. १४, ४१; स. १२, २४, त.७,६; ब.६,८)
मोर ∠मयूर, में. (त.८; ग्रब.७)
मोहिअ ∠मोहित, मोंङस्.ऽग्युर्. (त.३७; स.३४)
रज्जइ ∠राजते, म्ज़ेस् (त. ६४, १०२,१०४; ब.७७,८३,८४)
रज्जह ∠रज्यतां, छग्स्.ब्योस्. (त. ५५; स.४४)
रंजिय ∠रंजित, ख.दोग्.स्ग्युर्. चिग् (त.२८; स. ५६)
रंडी—ख्यो.मेद्. (त.६; ब. ५)
रमइ ∠रमते, ब्स्तन्. ब्य. (त.८४; ब. ७०)
रमन्ते—द्गग्रऽ बस्. (त.२०; स.१८) ब्स्तेन्. पस्. (त.७७; स.६६), द्गाऽ. शिङ. (त.२५; स.४८)
रमन्तो—स्ङग्स्. चन्. (त.७८; ब.७१)
रवि—ञि्.म. (त. २६; स. ४६)
रस—रो. (त. ४६,६१; स. ५१)
रसण ∠रसन, ओन्. चोंद्.प. (त. ६१; स. ५१)
रहिअ ∠रहित, दङ. ग्रल्. त. १०; १५; ब. ६, १६), स्थित, ब्य. (श. २३,३३), रहित, स्पङ. ते. (त. ६२; ब. ५२)
रहिअअ ∠रहितक, मेद्. (श. २१)
रहिअउ ∠रहितो, ग्रल्. ब. (त. ७१; स. ६४)
राअविराअ ∠राग-विराग, छग्.दङ. छग्. ग्रल्. (त. १०५; ब. ८५)
राग—ऽछग्स्. प. (त. १०४; ब. ८४) ऽदोद्. छग्स्. (त. २८; स. ५०)
रव—ऽबोद्. प. (त. २२; स. १६)
रस—रो. (त. ६७; स. ७७)
रूअणे ∠ग्दोल्.ब. (त. ११२; ब.६१)
रूअ, रुअ ∠रूप, ङो.बो. (त. ३६; स. ३७) ऽद्र. (त.४३; स. २३), छूल्. (त. ११; स. १०)
रूअण∠रूपण, रङ. ब्शिन्.(श. ६३)
रे—क्ये.लग्स्. (त. १७; ५३; स.१३), क्ये. हो. (त ३३; स.८८) त. ३३,५०,८६,११६; ब. ८८, ०, ७१,६६)
लअ ∠लय, नुब् (श. ३८)
लअ जाइ ∠लयं याति, स्ङस् ? (त.३१; स. ३०)
लइ ∠लात्वा, ब्शङस्. नस्. (त. २२; स. २०)
लइउ∠लातो, ञेंन्. ब्यस् (त. ७७; स. ६६)
लक्ख ∠लक्ष, खि्.फग्. (त. ७८; स. ७१)
लक्खइ ∠लक्ष्यते, म्छोन्.प. (त. १८; स. १५)

लक्खिअइ ∠लक्ष्यते, म्छोन्.ते. (त. ३७; स. २७)

लक्खिअउ ∠लक्षितो, म्छोन्.नुस्. (त. ३६; स. ३५)

लक्खिअ ∠लक्षयित्वा, म्थोङ.ब. (त. १९; स. १६), म्छोन्. नुस्. (त. ३७; स. ३४)

लग्ग ∠लग्न, शुग्स्. (त.१५; स.१६)

लग्गहु ∠लगत, ऽोङ्स्. (त. ५१)

लब्भइ∠लभ्यते, थोब्. (त.१४; स.१२)

लिप्पइ ∠लिम्पति, गोस्.पो. (त.७७; स.६९), लिप्यते, गोस्.सो. (त.७७; स. ६९)

लिरा ∠ललाट, ग्शि. ब्येद्. (श. ८५)

लीण∠लींन, थिम्.पर्.ऽग्युद्. (त. ७२; स. ६५)

लुक्को ∠लुक्कायितो, स्वस्.प. (त. ११०; ब. ८९)

लोअ ∠लोक, जिग्. र्तेन्. (त. २३,३७; स. २०,३४)

लोअण∠लोचन, मिग्. (त.७९; ब. ६६)

लोडइ ∠लोडणा, पंजाबी), छोल्. (त. ९९; ब. ८०)

लोम—स्पु. (त. ८; ब. ७)

वअण ∠वचन, ब्कऽ. (त.; स. ८९), मन्.ङग्. (त. ६६; स. ४४), लुङ. (त. ७१; स. ५७)

वण्ण∠वर्ण, ख. दोग्. (त. ७१; ब. ६४) (वद्)—शिङ (त. ६; ब. ५)

वर—म्छोग्. (त. ६२; ब. ५२)

वरणालें∠वरनाले, शिन्. तु. फ ब. नंल्. म. (त. ५९; स. ९७)

वसन्त—ग्नस् शिङ (त.२०; स. १८)

वि—नंम् (त. ६३; स. ६०), रब्. तु. (त. ८०; स. ६७)

विअत्त∠व्यक्त, म्थोङ. ब. (त. ३८; स.२८), म्थोङ.बर्.ऽग्युर्. (त. ३९; स. ३७)

विअप्प ∠विकल्प, यन्.दु.छुग्. (त. १२०; ब. १००)

विचित्त ∠विचित्र, दु.मद्.ल्दन्. (त. १३१; ब. १०७) स्न. छोग्स्. (त. ६२; स. ५२)

विचिन्तेज्जइ ∠विचिन्त्यते, ब्सम्.दु. ग्युर् (त. १०५; ब. ८६)

वित्थार ∠विस्तार, कुन्.दु.ख्यब्. (त. १३०; ब. १०७)

विफुरइ ∠विस्फुरति, रब्.तु.गंयस्. (त. ८०; स. ६७)

विफुरति ∠विस्फुरति, फोब्. (त.४२; स. २३)

विबन्ध—छिङ् दङ. व्रल्. (त. १२८; ब. १०५)

विविह∠विविध, स्न.छोग्स् (त.१३१; ब. ९०)

विभ्रम—खु्ल् पर्ब्युदप. (त. २४; स. २३)
विमल—द्रि. मेद्. (त. ६४; ब. ६६)
विमुक्क ∠विमुक्त, र्नम्. ग्रोल्. (त. १३४; ब. ११०)
विमुक्कउ ∠विमुक्तो, र्नम्. पर्. ग्रोल्. (त. १२६; ब. १०५)
विमुक्केण∠विमुक्तेन, ग्रोल्.न.(त.४१; स. २४)
विमुच्च ∠विमुक्त, रङ.ग्रोल्.ऽग्युर्. (त.४२;स.२४; त.११६;व.६६)
विरहिअ ∠विरहित, र्नम्.पर्.स्पङस्. (त. १२२; ब. १०२), मेद्. (त.३; ब. २)
विरुद्ध—र्नम्.ऽगल्.(त.६६;स.१२१)
विलअ गउ ∠विलयं गतो, नुब्. ग्युर्. चिङ. (त.३०,८६; स.२६ ब. ७३)
विलअ जाइ∠विलयं याति, नुब्. (त. ३८,१०६; स.२७,४१)
विलास—र्नम्.पर्.रोल्.प.(त.११४; ब.६४)
विलासिणि ∠विलासिनी, स्गेग्.मो. दङ. फद्. (त.१०१; ब. ८२)
विलीण ∠विलीन, रब्. तु. थिम्. पर्. ऽग्युर्. (त.७२; स. ६५)
विलीणउ ∠विलीनो, ग्शिर्.ऽग्युर्. त.६०; स.६६)
विवज्जिअ ∠विवर्जित, मेद् (त ६४; स.६७)
विसम ∠विषम, शिन्. तु. द्कऽ (त. ८१; ब.६७)
विसल्लता ∠विशल्यता, सुग्.ङुस्. (त.६२; ब.७५)
विसुद्ध ∠विशुद्ध, दग्. प. (त.३५; स.३४,) र्नम्. पर्. दग्. (त.८४; ब.७०)
विसेस ∠विशेष, ब्ये.ब्रग्. (त. २७, ६८; स.५०)
वुत्त∠उक्त, स्म्रस् प. (त.१६;स.१५)
वेद—रिग्स्. व्येद्. (त.२; ब.१)
स ∠स्व, रङ. (त.१२०;व.१००) —दे. ञिद्. (त.१०७;ब.८७)
सअ ∠स्वक, रङ. (श. ७८)
सअल ∠सकल, कुन्. ग्यिम्. (त.४२; स. २३,) कुन्. (त.४२;स.२३) थमस्. चद्. (त.२४,८२; स.५०, ७४), म. लुस्. (त.३७,६८; स. ३४,२५, त. २२,११३,१२५; ब. २२,१०३,६१)
सइ ∠स्वयं, रङ. (श.४६)
सइच्छ ∠स्वेच्छ, रङ.द्गऽ.बर्. (त.१२०; ब.१००)
सएसंवित्ति ∠स्वकसंवित्ति, रङ. रिग्. (त.३३; स.४४)

सक्कइ ∠शक्नोति, नुस्. प. (त.६२; स.५२)

संचरइ ∠संचरति, गॅय्. शिङ.(त २६; स.४६)

सत्थ ∠शास्त्र, बृस्तन्. चोस्. (त. ११, १८; ब.१०; स.१४)

सत्थत्थ ∠शास्त्रार्थ, बृस्तन्.बृचोस्. दोन्. (त.६६; स.४४)

सन्तुट्ठ ∠सन्तुष्ठ, मोस्. प. (त.१४; स.१२)

सन्देह—थे. छोम्. (त. ४३; स. ६१)

सन्धि—गोङस्. प. (त. ८१; ब. ६७; त. १३०; ब. १०६)

सब्ब ∠सर्व, कुन्. रङ. (त. २४; ब. २३), थमस्. चद्. (त.१७; स. १४)

सब्बवि ∠सर्व अपि, थमस्.चद्. क्यङ. (त. ७६; स. ६६)

सम—मञम् (त. ५७, ८६; स.६५, ७७)

समरसु ∠समरस, रो.नमञम् (त. ५७, ८६; स. ६५, ७७)

समिट्ठउ ∠समिष्टो, बृल्तस्. पऽि तोंगस्. प. (त. ५८; स. ६६)

सरन्त ∠श्रयन्त, स्क्यब्स्.सु.ऽग्रो (त.७८; स.७१

सरह—म्दऽ.ब्स्मुन्. (त. ६; व. ८, श. २०, २२, २३, ३८, ३६, ४१, ६३)

सराव ∠शराव, खम्.फ़ोर्.ब्लग्स्. (त. १३४; ब. १११)

सरि ∠सरित्, गॅ्य. म्छो. (श. ४६)

सरिस ∠सदृश, दङ. ऽद्र. (त. ५६; स. ६७) द्पे. (त. १०४, १०६; ब. ८४, ८६)

सरीसो ∠सदृशो, व्शिन्. (त. ६३; ब. ७६)

सरुअ ∠सरूप, रङ. ब्शिन् (त. ८७, ८८; स. ७५, ७३)

सलत्त सल्लत, ∠शल्यता, सुग्. ङुस्. (श. ७७)

संवर ∠संवर, स्दोन्. प. (त. १०७; ब. ८७)

संवित्ति—रिग्. (त. ३३; स. ४४), (त. ३३, ६५; स. ४४, ६२)

संवेअण ∠संवेदन, ञ.मस् (त. ११६; स. ६८)

संसार—ऽखोर्. ब. (त. १७, ७६; स. १७, ७२)

ससि ∠शशी, स्.ल. ब. (त. २६; स. ४६)

सहज—रङ. ब्शिन् (त. १०४; ब. ८४) ल्हन्.चिग्.स्क्येस्. (त. १३, २१, ३७; स. ११, १६, २७, त. ६४; ब. ७७)

सहाव ∠स्वभाव, ङो.बो. (त. ३०; स. २६), रङ.बृशिन्. (त. १६; स. १६)

सहावे ∠स्वभावे, ङो. बो. क्यिस्. (त. १२६; ब. १०६)

सहि ∠सखी, (श. ४५, ६२)

सहिअ ∠सहित, ल्हन्. चिग्. (त. २०; स. १८)

सहिअउ ∠सहितो, दग्.दङ.ल्हन्. चिग्. (त. २०; स. १८)

सा—दे. यिस्. (त. ५५; ब. ४५)

साक्कअ, सक्यअ ∠शक्यते, नुस्. प. (त. १६; स. १७)

साच्चें ∠सत्यं, ब्दे.बर्. (त. ३५; स. ८६)

साह ∠शाखा, लो. ऽदब्. (त. १३२; ब. १०६)

साहअ ∠साधय, ब्स्गोम्स् (त. १६; स. १७)

साहइ ∠साधयति, द् क्रऽ. थुब्.ऽबऽ. शिग् (त. १०; ब.६); स्ग्रुब्. प.), (त. ११३; ब. ६१)

साहिउ ∠साधितो, ब्लङ्स्. प. (त. २४; स. २२)

सिआल ∠शृगाल, ब.सोग्स्. (त. ७; ब. ६)

सिज्झइ ∠सिध्यति, ग्रुब्. (त. २२; स. २०)

सिद्धान्त—ग्रुब्.म्थऽ. (त. ६६; स. १२८)

सिद्धि—द्ङोस्.ग्रुब्.दम्. प. (त. ११६; ब. ६६), ग्रोल्. (त. ८; ब. ७)

सिद्धि जाइ ∠सिद्धिं याति, ग्रुब्. ऽग्युर्. ते. (त. २६; स. ४८)

सिद्धि जोइणि ∠सिद्धियोगिनी, स्ग्रुब्. पऽ नैल्.ऽब्योर्. (त. १०७; ब. ८७)

सिद्धिरत्थु ∠सिद्धिरस्तु, स्ग्रुब्. यिग्. (त. १११; ब. ६०)

सिरि ∠श्री, द्पल्.ल्दन्. (त. ७६; ब. ६६)

सीस ∠शिष्य, स्लोब्.म. (त. ६७; स. ७७), शीर्ष, (त. ४; ब. ३)

सु—यङ. दग्. (त. ६; स. ५१) शिन् तु. (त. ५५; स. ४५)

सुक्क ∠शुक्र, (श. १००)

सुगति—ब्दे. बर्. ग्शेग्स्. प. (त. ३३; स. ८८)

सुणइ ∠शृणु, थोस्. (त. ६५; स. ६२)

सुणइ ∠शृणोति, थोस्. प. (त. ८८; ब. ७३)

सुणह ∠शुनक, श्वा, ख्यि. (त. ७; ब. ६)

सुण्ण ∠शून्य, स्तोङ.प.ञिद् (त. १५, ६१, १२३; स. १६)

सुत्तन्त ∠सूत्रान्त, म्दो. (त. ११; ब. ११)

परिशिष्ट ४

दोहाकोश भोट–शब्दानुक्रमणी

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
क.ल.कु.ट		९४		७७
ब्कङ.ब.		५०		
द्कऽ.थुब्	तप	१५	१३	
द्कऽ.थुब्.ऽवऽ. शिग्	साहइ	१०		६
ब्कऽ.यिस्.	बग्रण	३५	८६	
स्कद्.चिग्.	खणे	११७		९७
स्कद्.चिग्.म.	खण	११५		९५
स्कब्स्.सु.	खणहि	११३		९१
स्कर्.म.	तारा	११८		९८
ल्कुग्स्.प.	सुरंगा	८६		७२
कुन्	सग्रल	४२		
कुन् ग्नस्	पीठ	५८	६६	
कुन्.ग्यिस्	सग्रल	४२	२३	
कुन्.दु.ख्यब्	वित्थार	१३०		१०७
कु.न्दु.रु.	कुन्दुरु (मैथुन)	११३		९१
कुन्.रङ.	सब्ब	२४		२३
कु.श.	कुस	२		१
ल्कोग्.तु.ग्युर्.	ग्रन्धारे	२१	१६	
स्कोम्.नस्.	तिसिग्रो	११३		९१
स्कोम्.पस्.	तिसिग्र	६६	८८	
स्कोर्.शिङ.स्कोर्.शिङ.	पलुट्टिग्र	८५		७०

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
स्क्यब्स्.सु.ऽग्रो.	सरन्तो	७८	७१	
स्क्यिल्	आसन	५		४
द्क्यिल्.ऽखोर्.	मंडल	११८		६८
क्ये.लग्स्.	रे	१७,५३	१३	
क्ये.हो	रे	३३	८८	
		५०		
		८६		७१
		११६		९९
	अरे	८६		७१
क्ये.हो.बु	अरे पुत्त	६१	५१	
स्क्येस्	उबज्जइ	१०४		८४
क्येन्.गि्यस्		१०६		
क्येन्. ब्रल्. ग्सुग्		११२		
स्क्ये.प	उबज्जइ	२२	२०	
	उबरइ	१०४		८४
स्क्ये.बो	जाण(?), जणु	३६	३५	
	जण	५		४
स्क्ये.बो.दम्.प.		८६		
स्क्येस्.	उबज्जइ	३८	२७	
स्क्येस्.प.	उअज्जइ	६४	६१	५४
स्क्योद्.	चलउ	६५	६३	
स्क्योन्.	दोस	९०,१२३	७८	१०३
स्क्योन्.गि्यस्.	दोसें	३६		३४
स्क्योल्.ब.		८८		
स्क्र	केस	६		५
स्क्र.मेद्	मुंडी	६		५

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ऋुङ.ब्चस्.नस्	बन्धी	५		४
ख.चिग्	अण्णु	११	१०	
	कोइ	११	१०	
ख.दोग्	वण्ण	७१		६४
		५९	९७	
ख. दोग्. स्ग्युर्. चिग्	रञ्जिया	२८	५०	
खम्. फ़ोर्.		६९		
खम्. फ़ोर्. ब्लग्स्	सरावें	१३४		१११
खम्स्. सु.		४७		
खम्स्. ग्सुम्.	तिहुमण	२४	५०	
ख. सङ		४९		
म्खऽ. ञम्	ख-सम	९३, ९४		७७
खम्स्. ग्सुम्	तिहुवणें	१३०		१०७
म्खऽि. ल्तर्		६४		
म्खऽ. ऽद्र		४५		
म्खस्. नंम्स	बुधा	४४	९१	
म्खस्. प	पंडिअ	४२	७४	
	,,	९३		७६
खु. ब.	मण्ड	१११		९०
खुर्. बर्. ब्येद्	बाहिय	४		३
खुर्. बु	भार	४		३
ऽखोर्. ब	संसार	१७, ७९	१७, ७२	
	भव	१२२		१०२
ऽखोर्. लो	चक्क	२५	४८	
ऽखोर्. लो. दम्. प	चक्क	११८		९८
स्व्यब्. ग्रुब्. प	गाहिउ	४८	१२७	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ख्यब्. ऽजुग्	बिट्ठु	६०	६६	
ख्यि	सुणह	७		६
ख्यिम्	घरे	४७	१२७	
ख्यिम्. छेस्. दग्	पडिबेसी	७५	६८	
ख्यिम्. थब्	गिहवास	१३५		१११
ख्यिम्. ब्दग्	पइ	७५	६८	
	भत्तार	६६		८०
ख्यिम्. ब्दग्. मो	घरिणि	१०३		८४
ख्यिम्. दङ. ख्यिम्. न	घरें घरें	६५	१२७	७८
ख्यिम्. दु	घरहि	५		४
ख्यिम्. न	घर	२		१
	गही	२०	१८	
ख्यिम्. न. ग्नस्	घरें अच्छइ	७५		६२
ऽख्युद्		३४		
ख्येद्. चग्		८१		
ख्यो. मेद्	रंडी	६		५
ख्रल्. खुर्. ब	बाहिउ	६५	१२८	
ख्रि. फग्	लक्ख	७८	७१	
ख्रुल्. प	धंधा	३३	४४	
ऽख्रुल		२०	१६	
	भान्ति	७४, १२६	६७	१०६
	आले	१३०		१०७
ख्रुल्. प. शिग्. प.	अक्कड	६३		७६
ख्रुल्. पस		२०		
ख्रूल्पर्. ब्येद्. प	विब्भम	२४	२३	
ख्रो.बऽि.रङ ब्शिन्.		३६		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	वागची दोहांक
ऽख्र् ोल्	चाली	५		४
गङ	जो	१५	१६	
गङ.गङ	जं जं	२९	५२	
गङ.गऽि.गं्य.म्छ्ो	गंगासाअरु	५७	९५	
गङ.गिस्	जेण	४४,१२३	९१	
गङ.ल्तर्	एमइ	७८		७१
गङ.दु	जहि	२६	४९	
	जत्थ	३०	२९	
	कहिं	३८	२७	
गङ.दुऽङ		८३		
गङ.छ्े	जब्बे	४०	३६	३६
	जाव	७३	६६	
	जइ	७६,१०२	६९,०	
गङ.शिग्	जो	१४,२०,५१, ८१,८३	१२,२०,०,	६७,७३
	कोइ	८४		६९
	कासु	८८		७३
गङ.सग्स्		१०३		
गङ.यङ	जो पुण	१६	१७	
	कहि	१०१		८२
	जहि	१२५		१०३
गङ.यिन्	जो	१२६		१०२
	कवण	१३५		११२
गङ.ल	जसु	१४	१२	
	जहि	८१		६७
गङ.लस्	कहि	३८	२७	
गर्	जहि	३१		३०

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
गल्.ते	जइ	७		६
ऽगग्स्. पर्.ऽग्युर्	णिरुद्धो	३५	३४	
ऽगग्स्.प		४६,६६		
गॅल्.नस्.	निसार	७६	७२	
द्गऽ.बस्	रमन्ते	२०	१८	
द्गऽ.बऽि.सेम्स्		१०४		
ऽगऽ.यङ		४८		
ऽगऽ.यिस्	बिरला	११५		६५
द्गऽ.शिङ	रमन्ते	२५	४८	
ऽगॅल्.नुस्	निसार	७६	७२	
गुग्स.फ्युङ.चिग्	विसाम कर	२७	४६	
गेङस्	आवन्त	१००		८१
	फरन्ते	२५	४८	
द्गे.ब.		५६	६७	
द्गे.छ्ुल्	चेल्लु	१०	६	६
द्गे.स्लोङ	भिक्खु	१०		६
गे.सर्	केसर	५६	६७	
गो.	बुज्झइ	२३	२३	
स्गेग्.मो.दङ.फ्रद्.	विलासिणि	१०१		८२
गोग्स्, मि.	णिरवंधे	७६	६४	
गोङस्. प	सन्धि	८१		६७
	सन्धि	१३०		१०६
गो. ऽफङ	परम पउ			
गो. ब	बुज्झइ	६७	७७	
गो. ब्स्लोग्	एमइ(?)	५३	४३	
म्गोन्. पो	णाह	३०	५२	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
	णाहु	८७, ९०	७५	७२
म्गोन्. पो. ब्दग्. ञिद्	अप्पणु णाहो	९९	१२१	
म्गो. ल	सीससु	४		३
ऽगोल्.	भुल्ले	४		३
गोस्. दङ. ब्रल्. शिङ	णग्गल	६		५
गोस्. पो	लिप्पइ	७७	६९	
ऽगोस्. पर्. ऽग्युर्	आआसवि	३६	३४	
स्गोम्. प	गुणिज्जइ	१८	१४	
स्गोम्. प. मिन्		१२३		
स्गोम्. (? स्कोम्.) पस्	तिसिओ	११३		९१
स्गोम्. ब्येद्	भाविउ	१३	११	
ब्स्गोम्. दङ. मि. ब्स्गोम्	चित्ताचित्त	९६	१२३	
ब्स्गोम्स्	साहअ	१६	१७	
ब्स्गोम्स्. न.	साघअ	,,	,,	
द्गोस्. प.	बज्जइ	९३		७६
गोस्. सो	लिप्पइ	७७	६९	
गं्य. छे. ब.	उआहरणे	६८		
गं्यब्	पच्छें	२९	५२	
ब्गं्य. ल.	पुण्ण	११५		९५
गं्य. शिङ	संचरइ	२६	४९	
गं्यल्. स्रिद्		१०७		
गं्यस्	फुल्लिअउ	१३	१०	
गि्य. न.	एवहि	२		१
गि्यन्. म्छ्रोन्	कहिअउ	७१	६४	
गं्यु	कारण	२४	२३	
गं्युद्	तन्त	२८, ८०		२३

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
गॅ्युद्. दे.	बहइ	८०		३६
स्ग्यु.मऽि. नॅल्. ऽब्योर्.	जोइणि माअ	८०		३६
		११६		८६
स्ग्यु. मऽि. रङ. ब्शिन्.	माआमअ	६३	६०	
गॅयु. म्छन्	कारणे	११३		११०
गॅ्युग्. ब्येद्. चिङ	धाविउ	११	१०	
गॅ्युन्. दु	णिरन्तर	११०, (?) १२३		८६, १०३
ग्युन्. दु. ग्नस्. प.	णिरन्तर	१२६	०	१०६
ग्युर्	होइ	१४	१२	
ऽग्युर्	होइ	७		६
		४३		६९
	अत्थि	८		७
स्ग्यु. लुस्. ऽद्र.ब	माआजाल	३४	८९	
ऽग्रम्. दु	तड	१२०		१००
ब्स्ग्रिम्स्. ते	भक्ति (?)	७१	५७	
ग्रुब्	सिज्झइ	२२	२०	
ग्रुब्. ऽग्युर्. ते	सिद्धि जाइ	२६	४८	
ग्रुब्. म्थऽ.	सिद्धान्त	९९	१२८	
स्ग्रुब्. पऽि. नॅल्. ऽब्योर्	सिद्ध जोइणि	१०७		८७
स्ग्रुब्. प	साहइ	११३		९१
स्ग्रुब्. यिग्.	सिद्धिरत्थु	१११		९०
ऽग्रो	जाइ	१५	१३	
	जग	४८	१२८	
	भमउ	६५	६३	
ग्रोग्स्. दग्	हले	३१	२९	
		११६	९६	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ग्रोग्स्. पो		६२		
ग्रोग्स्. मो	भट्ठी (?)	१०५		
ग्रोङ	गाम	८०	६७	
ग्रो. ऽोङ	आवइ जाइ	१०१		८२
ग्रोल्	मुत्ति	७		६
	सिद्धि	८		७
	मुच्चअ	२०	१८	
ग्रोल्. ऽग्युर्	मुक्कइ	७३	६६	
ग्रोल्. बर्. ऽग्युर्	मुक्को	११०		८६
ब्ग्रोद्. चिङ	भमइ	७७	६६	
ऽग्रो. मि		४, ८८२		
ऽग्रो. कुन्	जग	६५	१२८	
ऽग्रो. र्नम्स्	जण	४१	२४	
ऽग्रो. ब.	जग	४, २४, १०८	३, २२, २५	
ऽग्रो. ब. च्ोम्	धावइ	५२	४३	०
ङ. मो	करहा	५३	४३	
ङ. यिस्	मई	१२२		१०२
ङल्. ब		८२		
ङस्	लअ जाइ	३१	३०	
ङस्.नि.ब.ग्तोग्स्		५३		
स्ङग्स्	मन्त	२४	२३	
ङुल्	अणु	७४	६७	
ङुल्. ब्रल्		७४	६७	
ङेस्	मण्णहु	१२२		१०२
ङेस्. पर्. र्तोग्स्		५०		
ङेस्. पर्. ग्शन्. मेद्.दे	अणुअरं, अणूणं	४१	२४	४०

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
म्ङोन्. दु. ग्युर्	पच्चक्ख	२१	१९	
म्ङोन्. पऽि. ङ. र्ग्यल्	अहिमाण	६३	६०	
ऽङोन्. ल. सोग्स्		६१	५१	
ङो. छ. मेद्	णिलज्ज	८३	७५	
ङो. म्छर्. छे	भन्तिअ ?	६३	७६	
ङो. बो. ञ्दि्. क्यिस्. दग्. प	सहावे सुद्ध	१२९		१०६
ङो. शेस्	मुणिअइ	१००		८१
द्ङोस्. ग्रुब्. दम्. प	सिद्धि	११९		९९
द्ङोस्. दङ.द्ङोस्.मेद्	भावाभाव	३३,७२	८८,६५	
द्ङोस्. पो	भाव	२२	१९	
द्ङोस्. पो. र्नम्. स्पङ्स्	भावरहिअ	६४	६१	
द्ङोस्. पो. मेद्	अभाव	२२	१९	
द्ङोस्. पोर्	भवहि	६४	६१	
चल्. चोल्. ग्तम्	आलमाल	६५	६३	
ग्चद्. पर्. ब्योस्		५४		
ब्चस्		१२४		
चि	कि	१४		१२
चि. द्गोस्	कि	१४		१२
चिग्. तु. ब्य. ब. स्ते	अेक्क करु	२७	५०	
चिग्. शोस्		१०१		४१
चिग्. सोग्स्	अेक्कवि	१४		११
चिङ	हउ (भूत)	११		१०
चि. ब्येद्	कि	६३	६१	
चि. ब्यर्		६९		
चि. शिग्	कहि (क्यों)	६४	६१	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
चि. रुङ		९४		७७
चि. स्ले	जो, को	११४		९८
चिस्		७		
ग्चिग्. क्यङ	अेक्कवि,	४१	३६	
	कोइ	१०८	२५	
ग्चिग. गि. नंम्. प	अेकाआरे	६५	६३	
ग्चिग्. तु	णेहुअें ?	३४	८८	
ग्चिग्. पु		९९	१२१	
ग्चिग्. सोस्	अेक्कु खाइ	९९		८०
ब्चिङ. बर्. ग्युर्		८६		
ब्चिङस्. ग्युर्. ते	बज्झइ	४१	२४	
ब्चिङस्. प	बद्धो	५२	४३	
ब्चिङस्. पस्	बज्झें	४३		४२
ब्चुम्स्. ते	णिवेसी	५		४
ब्चु. ब्शि. प. यि. स. ल	चद्दहभुवणें	११०		८९
ग्चेर्. बुस्	णग्गाविअ	७		६
ग्चेस्. पर्. ब्यस्		६१		
छग्. दङ. छग्. ब्रल्	राअ–विराअ	१०५		८५
छग्स्. प	राग ?	१०४		८४
छग्स्. ब्योस्	रज्जह	५५	४४	
छद्		१०३		
छद्. नस्		८२		
छद्. पर्. ब्येद्	बक्खाण	११		१०
छद्. चिङ		६१		
ऽछद्. ते	तुट्टइ	७९	७२	
ऽछद्. प	बक्खाणिज्जइ	१८		१४

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ऽछद्. प. यिस्	बक्खाणग्र	८२	७४	
ऽछद्. पर्. ब्येद्. प ब्शिन्	उज्जोग्र करेइ	११७		९१
ऽछद्. पर्. योद्. प		५१		
ऽछिङ	मरइ	३१	३०	
छिङ. ऽग्युर्	मारी	७८	७१	
	बज्झंति	८८	९१	
छिङ. दङ. ग्रोल्. ब		५०		
छिङ. दङ. ब्रल्	बिबन्धे	१२८		१०५
ऽछिङ. ब	बन्धण	५६	६४	
	काल करेइ	८०		६६
	बज्झइ	६३	६१	
ऽछिङ. ब. स्ते	बन्धा	३३	८८	
ऽछिङ. बर्. ब्येद्. चिङ	बन्ध करु	८६		७१
ऽछिङस्		५२		
ऽछिङस्. ग्युर्	बज्झइ	४३	९१	
ऽछि. यङ	मरइ	११३		९०
ऽछि. बर्. सद्	मरिब्बो	८६	४४	५६
छु	पाणि	२		१
छग्स्	बाज्झइ	७८	७१	
छुङ. पस्		८२		
छुङ. म. दग्. दङ	भाज्जे (भार्या) सहिग्रउ	२०	१८	
छुद्. पस्		८२		
छु. बुर्		१२७		१०३
छु. ऽजग्		१०७		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहाँक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
छु. यिस्	पाणी	७७	६९	
छु. ल. छु	जलेहि जल	३४	८८	
छेद्. दु	उबेसे	७		६
म्छेद्. पऽि		९०		
छोस्	धम्म	४		३
छोस्. मिन्	अधम्म	४		३
म्छोग्	उत्तिम	१६	१६	
म्छोग्. तु	पर	९४, ११७	९७	७७
म्छोग्. तु. तोग्स्	परम कलु	६३		५३
म्छोग्. तु. ब्दे.ब.छेन्.पो	परममहासुहे	११९		९९
म्छोङ		६१		
म्छोद्. प	पुडिज्जअ ?	७८	७१	
ऽजिग्. तेन्	लोअ	२३,३७	२०, ३४	
ऽजिग्. तेन्. फरोल्	परलोअ	२६	४८	
जि.ल्तर्	की	२३	२०	
	जेत्तइ	८९	७७	
	जिम	९३, १०१, ११७	७६,८९,९७	
जि. स्त्रिद्	जाउ	८०	६७	
	ताव	१०८	२५	
ऽजुग्		४६		
	पइसइ	८१		६७
ऽजुग्. प. मेद्		१२६		
ऽजुग्. पर्. ऽग्युर्	पइसइ	४०	३६	
ऽजुग्. पर्. ऽग्युर्. ब	पबेस	२६	४९	
ऽजुर्. बुस्		५१		
ब्र्जोद्. क्यङ	कहिअउ	३९	३८	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ब्र्जोद्. दु. मेद्	अवाअ	२३	२२	
ब्र्जोद्. दु. योद्. मिन्	अवाच्चें	३५	८९	
ब्र्जोद्. पर्. ग्युर्	विसरअ	१११		९०
ब्र्जोद्. मिन्	ण वाअें	६७	७७	
ब्र्जोद्. यिन्. ते	कहिअअ	९५	१२७	
ञ	मीण	८७		७१
ञम्स्		५०,१०९	४१	
ञम्स्. पर्. ऽग्युर्	ठिउ	३०	२९	
म्ञम्	तुल्ले	४,४९		३
म्ञम्. ञिद्		३३,४५		
म्ञम्. ल्दन्	आअर	९०	७९	
म्ञम्. पर्. म्थोङ		९८		
स्ञम्. पऽि. सेम्स्		९१		
ञल्. ब		१०१		
ञिद्	हि	२		१
ञि. म	रवि	२६	४९	
ञि. सेर्	दुट्ठ	८९		७३
ग्ञिस्. पो	वेण्णवि	१६	१७	
ग्ञिस्. मेद्	अद्दअ	१३०		१०७
ग्ञिस्. सुर्. ऽग्युर्. ब	वेण्णवि	११५		९५
स्ञिङ	हिअहि	१९,८९	१५	७२
	पुराण	१८,७२	१४,६५	
स्ञिङ. जे	करुणा	१५	१६	
स्ञिङ. ल	हिअहि	४०	३६	
स्ञिम्. प		५०		
ग्ञुग्. मऽि	णिअ	१९	१६	

तिव्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ग्ञुग्. मऽि. ञम्स्.	णिअ संवेअण	११६	९६	
ग्ञुग्. मऽि. यिद्.	णिअ मण	३४	८८	
ग्ञुग्. मऽि. रङ. ब्शिन्.	आभासें ?	७९	७२	
र्ञेद्. दम्.	पावइ	१६,११३	९६	९१
र्ञेद्. प.	,,	१६	१६	
	बुज्झइ	७७,८६		६९
ञेन्. ब्यस्.	लइउ	७७	६९	
ञे. बऽि. ग्नस्.	उअपिट्ठ	५८	९६	
ञे. बर्. स्क्ये. ब.	उवज्जइ	६२	५२	
ञे. बर्. ऽगग्स्. ऽग्युर्.		५६	९४	
	अत्थमणु जाइ	५६	९४	
ञेस्. प.	दोसअ	४०	९०	
ग्ञेस्. पो.		९०		
म्ञेस्. प.	मुसारिउ	१०९	४१	
र्ञेद्. प. यिन्. ते.	पावइ	१६	१६	
र्ञोग्. प. मेद्. प.	णिक्कलंक	१००		८१
र्ञोग्स्. ब्शिन्.	धावइ ?	११३	९१	
ञोन्. चोंद्. प.	रसण	६१	५१	
स्ञोम्स्.		६९		
र्तं.	तुरंग	९		८
ब्तङ. नस्.	जाली ?	५४		
र्तंग्. तु.	आलिउल ?	२५	४८	
र्तंग्. पर्.	णिरन्तर	१२५		१०३
ब्र्तंग्स्. न.	णिहालु	११९		९९
ग्तङ.		७०		
ब्तङ.		६९		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ब्र्तन्. पर्. ग्नस्.	ठाइ	५२,६७	४३	
ल्त. चिग्.		१०२		
ल्त. ब. ङन्. प.	कुदिट्ठि	११६		६६
ल्त. बु.	दिट्ठि	१८	१५	
ल्त. बर्. ब्योस्.	पेक्खह	८७		७१
ग्तम्.	कहाणो	४७,६५	१२७	
ब्ल्तस्. पऽि. र्तोग्स्. प.	समिट्ठउ	५८	६६	
ब्ल्तस्. शिङ. ब्ल्तस्.शिङ.	चाहन्ते चाहन्ते	३५	३४	
ब्स्तन्.	भावे	१५	१२	
ब्स्तन्. प.	उएसें	३		२
ब्स्तन्. चिङ.	कहइ	७६	६६	
ब्स्तन्. ब्चोस्.	सत्थ	१८	१४	
ब्स्तन्. चोस्.	(शास्त्र)	११		१०
ब्स्तन्. ब्चोस्. दोन्.	सत्थत्थ	६६	४४	
ब्स्तन्. ते.	कहिज्जइ	८८		७३
ब्स्तन्. नस्. ग्रो.	कहिहउ जाइ	३२	३०	
ब्स्तन्. नुस्.	कहिज्जइ	७२	६५	
ब्स्तन्. प.	उबएसें	८४	६६	
ब्स्तन्. पर्. नुस्. प.	कहण सक्कइ	६२		५०
ब्स्तन्. पस्. र्तोग्स्.	कहिज्जइ	६४	६२	
ब्स्तन्. ब्य.	रमइ	८४		७०
तिल्.	तिल	६२		
ग्ति. मुग्.		३२		
ब्र्तेन्.		१०१		
ब्र्तेन्. पर्. ग्युर्. प.	णिच्चल	५५		४५
ब्र्तेन् पर् ऽोस्.	सेउ	१२८		१०५

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ब्स्तेन्. पर्. ब्य.		६७	७७	
ब्स्तेन्. पस्.	रमन्ते	७७	६६	
	पडिवण्ण	१२५		१०२
ग्तेर्.	ठबिअ	१६	१५	
	धण्णो	८४		६६
स्तेर्. ब.	दीअउ	१३५		११२
स्तेर्. बर्. व्येद्. प. यि.	देइ	४३	२३	
र्तोग्. स्पङ. ते.	कप्परहिअ	६२		५२
ब्तोग्स्. पस्.	उपाडणें	८		७
ग्तोद्.				
ग्तोद्. प.		१०२		
र्तोग्स्.	बोहें	७६,६६		६६
र्तोग्स्., म.	विणु	६७	७२	
र्तोग्स्. नस्.	मुणेवि	४१,८३	३६	
र्तोग्स्. प.		४८		
र्तोग्स्. पर्. ग्युर्. न.	परिआणहु	१७	१४	
र्तोग्स्. सो.	जाणअ	८२	७४	
ल्तोस्.	पेक्खु	५३	४३	
	पेक्खइ	१६	१५	
स्तोङ. प.		८४		७०
स्तोङ. प. ञि.द्.	सुण्णहि	१५,६१,१२३	१६,०,०	
स्तोन्.	बेसें	६		५
	पढिअउ	१११		६०
ल्तोस्.	पेक्खइ	१६	१५	
थग्.		५४		
थग्.प. नग्.पो.		८५		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
थङ.	थल	६६	४४	
थ.स्ञ.द्.		१२४		१०४?
थ. दद्.		३३, १०२		
थब्स्.		१०७		
थब्स्. क्यि. ब्दे. ब.	उवाउसुह	११५		९५
थम्स्. चद्.	सब्बइ	१७	१४	
	सअल	२४, ८२	५०, ७४	
	सब्बरूअ	६३, ६६		७७, ८०
थम्स्. चद्. क्यङ.	सब्बवि	७६	६६	
म्थऽ.	अन्त	२८	५१	
म्थऽ. यि. छोग्स्.		६१		
थर्. प.	मोक्ख	७, ६, १४, ४१	१२, २४	६, ८
थल्. बस्.	च्छारें	४		३
थिम्. ऽग्युर्.		६७		
थिम्. पर्. ऽग्युर्.		१२७		१०४
थिम्. पर्. ल्तर्.		६७		
म्थिल्. दु.	हत्थो	१६	१५	
थुङ.	पीवन्तें	२५	४८	
ऽथुङ.	पिज्जइ	१०५		८६
	पिअउ	१२०		१००
ऽथुङ. ब.	पिविअउ	६६	४४	
ऽथुङस्. पस्.	पिवन्तें	१११		६०
थेग्. छेन्. ल.	महाजाणे	११		१०
थे. छोम्.	सन्देह	४३, ५१	६१,०	
थोग्.	आइ (आदि)	२४	५१	
थोङ.	मुच्चहु	१७	१३	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
थोब्.	लब्भइ	१४	१२	
थोब्.ऽग्युर्.	पावअ	१६	१७	
थोब्.पर्. ऽग्युर्.	पाविसि	७३	६६	
म्थोङ.	देक्खउ	६५	६२	
	दीसइ	१००		८१
म्थोङ.ऽग्युर्.		९०		
म्थोङ.ङो.	गाहिब	४१	३६	
	चाहिउ	४१		३९
म्थोङ.स्ते.		१०३		८४?
म्थोङ.ऽद्र.	दीसइ	१९	१५	
म्थोङ.ब.	जोअमि	२९	५२	
	दिट्ठि	३५	३४	
	विअत्त	३८	२८	
म्थोङ. ब. चम्.		८५		
म्थोङ. बर्.	लक्खिअ	१९	१६	
म्थोङ. बर्. ऽग्युर्.	विअत्त	३९	३७	
म्थोङ. स्ते.	दीसइ	८१	६७	
म्थोन्. पोस्.	कड्ढिअ ?	२३	१९	
थोस्.	सुणउ	६५	६२	
थोस्. प.	सुणइ	८८		७३
दग्.	(बहुवचन प्रत्यय)	२		१
	सुद्ध	१२९		१०६
दग्. दङ. ल्हन्. चिग्.	सहिअउ	२०	१८	
दग्. प.	असमल	२५		२३
	सुद्ध	१२९		१०६
	विसुद्ध	३५	३४	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ब्दग्.	अप्पण	७		६
	अप्पाण	२६	५१	
ब्दग्. गिस्.	मइ	५३, ७१	४३, ६४	
ब्दग्. ञिद्.	अप्पा	७६	६६	
	अप्पउं	७८	७१	
ब्दग्. दङ. ब्शन्.		६८		
दङ.	(च)	२		१
दङ. ऽद्र.	सरिस	५६	६७	
दङ. पो.	पढमे	१११		९०
दङ. बर्.		१२६		
ग्दङ. ब्सिल्. ब.		६६		
दङ. ब्रल्.	रहिअ	१०, १५		९, १६
स्दङ. ब.		८५		
द. ल्तर्.	अइसे	८१		६७
ब्स्दद्. प. रुङ.	वरु	१३५		१११
ऽदब्. ल्दन्.	पुडअणि	५६	६७	
ऽदब्. म.	हरन्त ?	७७	६६	
दब्. ऽलंब्स्. मेद्.	णित्तरंग	१००	८१	
दम्. प. सेम्स्.	परमपउ ?	१०६	४१	
दम्.पऽि. स्ञिङ.	णिक्करुण	१३१		१०६
ऽदि.	से	५७	६५	
	अेहु	१३५		११२
स्दिग्. प.	पावें	७७	६६	
	दुरिअ	११७		६७
ऽदि. ल्त. बुस्.	एवहि	२६	४८	
ऽदि. ल्तर्.	एवँ	४१, ८३, ११८	३६,०,००,०,६८	

तिब्वती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ऽदि. ऽद्र.		६		५
ऽदि. ल.	एहु	२९	५१	
दु.	हि (में)	५		४
दुग्.	विसअ (? विस)	७८	७१	
दुग्. गि. स्ङग्स्. चन्.	विसअ रमन्तो	७८	७१	
दुग्. ब्रल्.		८५		
स्दुग्. ब्स्ङल्.	वेअणु (वेदना)	९२		७५
स्दुग्. ब्स्ङल्. स्नङ. ब्येद्.	दुक्खदिवाअर	११८		९८
ऽदुग्. नस्.	वइसी	५		४
ऽदुग्. प.	वईसउ	६५	६२	
ऽदुग्. पर्. ग्युर्.	अच्छन्त	१००		८१
ग्दुङ. वर्. ब्येद्. चिग्.	झगड	२५		२३
ग्दुङ. बस्.	हव्बासें	७७	६९	
ग्दुङस्. पऽि. ऽब्रस्. बु.		६०		
ब्दुद्. र्चि.		४६		
ब्दुद्. र्चिऽि. छु.	अमिअरस	६६	४४	
म्दुन्.	अग्गें	२९	५२	
दु. ब.	धूम	३		२
दु. मर्. ल्दन्	विचित्त	१३१		१०७
र्दुल्.	धूलि	८९		७३
र्दुल्. चम्.	,,	४०		
दुस्.	खण ?	११६		९६
दुस्. थब्स्.		१२५		
दुस्. सु.	कालो	३६	३४	
ऽदुस्. प. ल.		५५		४५
ऽदुस्. सु.		४६		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
दे.	सो	३०	२६	
दे. खो. न. ञि्द्.	तत्त्व			
दे. ञि्द्.	ता	२२	२०	
	तत्त, तात्त	३६,३८	०,२८	३५,०
	स	१०७		८७
		१२३		
दे. ञि्द्. नस्.	तहा	१२१		१०१
दे. ञि्द्. ब्रल्. ऽग्युर्.	तत्तरहिअ	१०		६
दे. ल्त.बु. ञि्द्.	ऐसें	३६		३४
दे. ल्तर्.	एमइ	७४	६७	
	अइसें	६२		७६
दे. दे. ञि्द्.	सोवि	२६	५२	
दे. ऽद्रस्.	तहवि	७६	७२	
दे. बस्.		१३५		१११
दे. चम्.	एत्तवि	७८	६८	
दे. छे.	तब्बें	४०	३६	
	ताव	७३,१०२	६६,०	०,८३
	तहि	६३? १६८		७७?
दे. ब्शिन्.	तिम	४६,११०		०,८६
दे. यिन्.	सोवि	१८	१४	
दे. यिन्. ते.	सोवि	१७	१४	
दे. यिस्.	सा	५५		४५
	सो	११०		८६
दे. रिङ.		४६		
दे. रु.		८१		
देर्.	तहि	२८	५१	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
दे. ल.	तहि	११,१३२		१०,१०६
दे. स्. नि.	सो	१६	१६	
दे. स्रिद्.	तावइ	८०	६७	
	तत्तइ	८७	७२	
ब्दे.	सुह	२५	२३	
ब्दे. छेन्.	महासुह	११७		९७
ब्दे. छेन्. म्छोग्.	परममहासुह	२२,४७	२०, ०	
ब्दे. छेन्. ग्नस्.	महासुहट्ठाणे	९५	१२७	
ब्दे. न. नुस्.		११४		९४
ब्दे. ब. छेन्. पो. म्छोग्.	परममहासुह	२९	५१	
ब्दे. बऽि. ग्नस्. म्छोग्.	सुहठाणुवर	६२		५२
ब्दे. बर्.	साच्चें	३५	८९	
ब्दे. बर्. ग्शेग्स्. प.	सुगति	३३	८८	
ब्दे. ग्सङ.		९६ ?		
दो.	सो	९९	१२८	
ल्दोग्. पर्. ऽग्युर्. प.	णिस्सरि जाइ	१२१		१०१
ग्दोङ. बब्. प.		९१		
ग्दोङ. नस्.	पढमें	३५		३४
स्दोङ. पो.	तरुअरह	१३०, १३१		१०७, १०८?
स्दोङ. पो. दम्. प.	तरुवर	१३१		१०८
म्दो. दे.	सुत्तन्त	११		११
ग्दोद्. नस्.	अणवर ?	७४	६७	
ग्दोद्. नस्. स्क्ये. मेद्.	वेइविवज्जिअ	६४	६२	
	विण्णिविवज्जिअ	६४		५४
ऽदोद्.		४९		
ऽदोद्. छगस्.	रांग	२८	५०	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ऽदोद्. प.	इच्छें	६८		७६
ऽदोद्. प. चन्. ग्यि.	अत्थी अण स्क्ये. बो.	१३४		१११
ऽदोद्. प. पो.	अत्थी	१३५?		११२?
ऽदोद्. पऽि. ऽब्रस्. बु.	इच्छाफ़ल	४३	२३	
दोन्.	कज्ज	३		२
दोन्. दम्	परमत्थ	१३	११	
दोन्. दम्. पऽि. यि. गे.	परमत्थ वण्ण	?		
दोन्.	पढे	२		१
दोन्. पस्.		१०६		
स्दोन्. प.	संवर	१०७		८७
दोम्स्. पर्.	धवहि	६६	४४	
ऽदोर्. रो.	च्छड्डइ	१०१		८२?
ऽग्दोल्. ब.	रुअणे	११२		६१
दॊल्. पऽि. ख्यिम्.		६८		
दो. ह. म्जोद्.	दोहाकोश			
ऽद्र.	रूअ	४३	२३	
द्रन्. प.		६५	६२	
द्रि.	गंध	५७	५६	
	पुच्छअ	७५	६८	
द्रिन्.	पसाअें	११५		६५
द्रि. बर्. ब्य. ऽो.	पुच्छमि	३०	५२	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
द्रि. म. मेद्.	णिम्मल	१२२		१०२
द्रिल्. बु.	घंटा	५		४
द्रि. स.		८३		
द्रिस्. ल.	पुच्छ	१२०		१००
द्रुङ. दु.		५४		
स्नग्. छ.	मसि	१०३	४१	
नग्स्.	वर्णे	१२८,९०		१०४,०
नग्स्. सु. म. ऽग्रो.	म जाहि वर्णे	१२५		१०३
नङ.	अब्भन्तरु	११०		८९
स्नङ. ब.	पडिहाइ	९१,१०५		०,८७
नद्. ग्शन्. दग्.		७०		
नम्. म्खऽ. ऽद्र. ब.		४४		
नम्. म्खऽि. यिद्. चन्.	खबणेहि	७		७
	खबणाण	९		८
नम्. म्खऽि. रङ.ब्शिन्.	ख-सम	८८	७६	७२
नं. बर्.	कण्णेंहि	५		४
नंम्. गग्स्.	विणासइ	६३	६०	
नंम्. ग्रोल्.	विमुक्क	१३४		११०
नम्. तोंग्.		९७		
नंम्. पऽि. रङ. ब्शिन्.		१२४		१०४
नंम्. पर्. ग्युर्. प.		८३		
नंम्. पर्. ग्रोल्. ब.	विमुक्कउ	१२९		१०५
नंम्. पर्. ऽछद्. पर्. ऽग्युर्.	तुट्टइ	५६	९४	
नंम्. पर्. ऽछिङ.		४५		
नंम्. पर्. स्पङ्स्.	विरहिअ	१२२		१०२
नंम्. पर्. स्पङ्स्. नस्.		६९		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
नैम्. पर्. रोल्. प.	विलास	११४		९४
नैम्. ऽफ्रोस्. प.	विप्फुरइ	८७	७५	७२
नैम्. यङ.	किम्पि	६		८
		४६		
नैम्. ग्सुम्. ग्यि.	तिण्णवि	३७	२७	
नम्स्. बयङ.	अवस्स	६२		७५
स्न. ग्र्.	णासग्ग	५४	४४	
स्न. छोग्स्.	विचित्त	०२	६२	
	विविह	१३१		९०
न. रे.	भणइ	६		८
नैल्. दु. म्छोन्. प.				
नैल्. ऽब्योर्.	जोई	३४,५१,१०५	८८,०	
नैल्. ऽब्योर्. स्प्योद्. प.	जोइणिचार	१०४		८४
नैल्. म.	णाल	५६	६७	
ग्नस्.	ठाणो	४७	१२७	
	बइसी	५		४
	ठिअउ	११०		८९
ग्नस्. मि–,		१०६		
ग्नस्. ऽग्युर्.	वसअ	३८	२७	
ग्नस्. ब्र्तन्.	त्थविर	१०		९
ग्नस्. ब्र्तन्. प.	थाक्कइ	७३	६६	[illegible]
ग्नस्. न.	आयत्ता ?	११९		९९
ग्नस्. प.	पविट्ठ	१४	१२	
	अत्थि	८१		६७
ग्नस्. प. मेद्.	णउ ठिउ	१२८		१०४
ग्नस्. पऽि. ग्तेर्.	ठविअउ	१९	१५	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ग्नस्. शिङ.	बइसी	२		१
	वसन्ते	२०	१८	
	अच्छन्त	२५	२३	
नुब्.	बिलअ जाइ	३८,१०९	२७,४१	
नुब्. ग्युर् चिङ.	विलअ गउ	३०,८९	२९,०	०,७३
नुब्. प.	अत्थ गउ	११८		९८
नुस्. ल्दन्.		४६		
नुस्. प.	साक्कअ	१६	१७	
	सक्कइ	६२	५२	
ग्नोद्.	डहाविअ	३		२
ग्नोद्. ब्येद्. लम्.	विडम्बिअ	७		६
स्नोम्. ल्यम्.	जिग्घउ	६५	६२	
	परीसउ	६५		५५
नोर्. बु.		१०७		
पद्म.	कमल	११४		९४
पद्मऽि. स्तोङ. पो.	दलु कमल	५९	९७	
द्पल्.	सिरि (श्री)	७९		६६
द्पल्. ल्दन्.	सिरि	७९		६६
द्पल्. ल्दन्. ब्ल. म.	सिरिगुरुणाहें	६४	६२	५४
स्पु.	लोम	८		७
द्पे. दङ. ब्रल्. प.	विसरिस	१०४,१०६?		८४,८६?
पोङस्. स्प्येर्.		१०३		९४?
स्प्यद्. पर्. ब्य.	चरेइ	८४		७०
स्प्यर्. पर्. ब्य.	अविआर?	१०३		९४
स्प्योद्.		६९,१०४		
स्प्योद्. दे.		६९		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागच दोहांक
स्प्रब्. दि. ल.		१०६		
प्र. य. घ.	पन्नाग	५८	६६	
स्प्रल्. बर्. स्प्रुल्.	णिम्मिग्रउ	११८		६८
स्प्रोद्. क्यि.	सुरत्र	२५	४८	
फग्..		६३		७६?
फन्. पर्. ब्येद्. प.	हरेइ	११७		६७
फम्. ग्युर्. प.	मरेइ	६३	६०	
फुन्. सुम्. म्छोग्स्.		४६		
ऽफुर्. बऽि.	उड्डी	८५		७०
फोर्. ग्यिस्.		६६		
फ्यग्. र्ग्यस्.	मुद्दें	२४		२२
फ्यग्. ऽछल्. लो.	पणमह	४३	२३	
फ्यि. गोर्. बोर्. व.	खणु ?	१३४		१११?
फ्यिन्.	जन्त	१००		८१
फ्यिन्. ते.	भमिग्र	५८	६६	
फ्यि. नस्.	पुणु	६४	६१	
फ्यि. म.	परत्त	१३१		१०८
फ्यि. रोल्.	बाहिरें	७५,६	६२,०	०,८०
	बाहिर	११०		८६
फ्यि. रोल्. से. म्स्. ल.	मणु बाहिरे	१०६		८६
फ्यि. लेब्.	पत्रङगम	८७	७६	७१
फ्योग्स्. ब्चु. रु.	दस दिसें	२६	५२]	
फ्रद्.	पावहु	१०१		८२
फ्रोब्.	विफुरति	४२	२३	
बग्. छग्स्. ग्सुग्स्.	वासिग्र	६३		७६
द्बङ.		६८		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
द्बङ. गिस्.	आयत्ता	११९		९९
द्बङ. ब्स्ग्युर्. ब.		१०७		
द्बङ. छेन्.		४६		
बङ. दु.	कोलें	३४		८९
द्बङ. नंम्स्. ब्स्कुर्.शिङ.	दिक्खिज्जइ	६		५
द्बङ. पो.	इन्दिअ	३०,१२१	२९,०	०,१०१
द्बङ. पो. ल्तोस्. शिग्.		५३		
द्बङ. पो. युल्. ग्यि. ग्रोङ.	इन्दिविसअगाम	८०		६७
द्बङ. फ्युग्. मछोग्.	परमेसुरु	१००		८१
द्बङ. फ्युग्. दम्. प.	परमेसर	७२		६५
ऽबद्.		९८		
वन्दे. नंम्स्. नि.	वन्देहिअ	१०		९
ऽबब्.	पडेइ	८५		७०
ऽबब्. स्तेग्स्.	तित्थ	१५	१३	
बब्. प.		९१		
ऽबऽ. शिग्.	केवल	१०,१६,८४	०,१७,०	९,०,७०
बर्.	एहिं (सप्तमी)	५		४
	मज्झ	११४		९४
ऽबर्.		१०६		
बा. रा. ण. सी.	वाराणसी	५८	९६	
बल्. ब. ब्येद्.	उपाडिअ	६		५
स्बस्. प.	लुक्को	११०		८९
बु. ख्येद्. नंम्स्.		५३		
बुङ. ब.	भमर	८७		७१?
बु. छुङ.	बाल	७०	६४	
बु. दे.	पर?	१०४		८४

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
द्बु. मर्. शुग्स्.		१०५		
बुद्. मेद्.	जुबइ	८		७
द्बुस्.	मज्झ	२८	५१	
द्बुस्. न.		५६	६७?	
द्बुस्. न. ल्ह.		११२		
बुस्. प. नंम्स्.		१०३		
ऽबोद्. पर्. ब्येद्.	कड्ढिअ राव	२२	१६	
बोर्.	च्छड्डहु	१७	१३	
बोर्. नस्.	च्छड्डहु	१३५		१११
बोर्. ब.	(त्यक्त)	१३४?		१११?
बोर्. बर्. ब्यस्. न.	च्छड्डहु	१३५		११२
ब्य.	करिज्जअ	७८	७१	
	किज्जइ	१५	१२	
ब्यग्.	चमरह	८		७
ब्यङ. छुब्. ग्नस्.	बोहि ठिअ	१२७		१०३
स्ब्यङस्. ग्युर्. प.	सोहिअ	४०	३६	
ब्य. ब. ब्येद्.		५०		
ब्य. रोग्.	काउ	८५		७०
ब्यर्. योद्.	कीअइ	२३	२२	
ब्यस्.	(भूतकालिक सहायक क्रिया)	३		२
ब्यस्. प.		१०३		
ब्यिन्. नस्.	दिज्जअ	७८		७१
ऽब्यिन्. चिङ.	दल्ल	३६	३५	
स्ब्यिन्. प.	दाण	१३५		११२
स्ब्यिन्. स्रे्ग्.	होम	३		२

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ब्यिस्. प.	बालें	१९	१६	
द्ब्यु. गु.	(एक) दंडी	३		२
द्ब्युग्.ग्सुम्.लग्स्.ल्दन्.	त्रिदंडी	३		२
ब्युग्स्. नस्.	उद्दूलिअ	४		३
ऽब्युङ. ब.		१२४		१०४
ऽब्युङ. बर्.	होइ	७१	५७	
ब्ये. ग्रग्.	बिशेषा, वेण्णि	६०	९७	
ब्येद्.		३		
ब्येद्. ऽग्युर् न.	करिज्जअ	९४		७७
ब्येद्. चिग्.	करहु	३३	४४	
ब्येद्. चिङ.	करु	८६		७१
ऽब्येद्. पर्.	करु	२७	५०	
ब्येद्. पर्. ऽग्युर्.	करिज्जइ	९३		७७
ब्येद्. पर्. सद्.	करइ	९२		७५
द्ब्ये. ब.		६९,१२२		०,१०२
	बेट्ठिअउ ?	१२८		१०५
ब्ये. ब्रग्.	विसेस	२७,६८	५०,०	
द्ब्युर्. प.	भिज्जइ	१०२		८३
द्ब्येर्. मेद्.	अभिण्ण	१३३		११०
स्ब्योर्. ब्शि.		४७		
स्ब्योर्. बर्.	जोडण	१६	१७?	
स्ब्योर्. बर्. नुस्.	जोडण साक्कअ	१७	१७	
ब्योल्. स्रोग्.	पशु ?	२३	२०	
ब्रम्. स.	बाम्हण	५७	९५	
ब्रल्.	च्छाडी	१३	११	
ब्रल्. ब.	रहिअउ	७१	६४	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
बल्. बस्.	बाहिअ	२३		२२
ऽब्रस्. बु.	फल	१२३		११०
मै.	मोरह	८		७
मङ. म्य. ङम्. गि्ब.	मरुत्थलहिं	६६	४४	
म. ऽदुग्. चिग्.	म बंदह	५४	४४?	
म. ऽदुग्. प.	म थक्कु	१२५		१०३
मन्. ङग्.	उअेस	२७	४९	
	आअेसह	३८	२८	
	वअण	६६	४४	
मग्. ङग्.	वअण	६६	४४	
	उवअेसें	६६		५६?
द्मन्. पऽि. रिग्स्.	सुद्द	५७	९५	
स्मन्.		७०		
म. यिन्. ते.	णउ	२२,११६	१९,०	०,९६
मर्. मे.	दीवा	५		४
	दीपे	१४	१२	
मर्. मे. कु. दङ.		१०१		
म. लुस्.	सअल	२२		२२
	असेस	२८	५०	
	सअलवि	३७,९८,१०८ ११३,१२५	३४,२५,०,०, ०,०,	९११०३
म. लुस्. द्रि. मेद्.	णिक्कोली	७५	६१	
मि.	न	२		१
	णउ	१७	१७	
	मा	२७	५०	
मिगस्. शिङ. ऽछि. बर्.		८३		६९

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
मिग्.	अक्खि	३		२
	लोअण	७६		६६
मिग्. ग्सुम्.	तइलोअ	६०	६६	
स्मिग्. गँ.युऽि. छु.	मिअतिसणे	११३		६१
द्मिग्स्. दङ. ब्चस्.	(सालंबण)	१२३		१०३?
द्मिग्स्. ब्चस्. द्मिग्स्. मेद्.		१२४		१०४?
द्मिग्स्. पर्. ब्येद्. प.	आलमाल करह	१३२		१०६
मिङ.	णाम	१११		६०
	णाउ	१३१		१०७
मि. र्तग्.		४६		
मि. र्तोग्. प.	अविकल	१२८		१०४
मि. म्थुन्. फ्योग्स्.		१२६		१०६
मिऽ. ब्युङ.		१०६		
मि. ग्यो.	णिच्चल	५२,७३,६६,७७	०,६६	८३,०
मि. शेस्. प.	गाहइ ?	११३		६१
मि. शेस्. प. दग्.	बढ	२७	४६	
मु. ग्नस्.	तित्थ	५६	६७	
मुन्. नग्. छेन्. पो.	घोरान्धारें	११७		६७
मुन्. प.	अंधार	२१	१६	
मे.	अग्गि	२, १०६		१,०
मे. ल्चे.		६०		
मे.तोग्.	फुल्ल	१३०		१०७
मेद्.	विरहिअ	३		२
	णाहि	२६	४६	
र्मोङस्. ऽग्युर्.	मोहिअ	३७	३४	
र्मोङस्. नँमृस्.	बढ	३६	३७	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
मोंङस्. प.		३२,५२,६०		
	बढ	८६,११६		७१,६६
मोस्. प.	सन्तुट्ठ	१४	१२	
स्मोस्. सु.		६४		७७
म्य. ङन्. ऽदस्.	णिब्बाणें	१३,१७	११,१७	
	परमणिब्बाण	४२	२४	
	०	७०		
म्युर्. दु. ग्रोल्.	परिमुचन्ति	४४	६१	
म्युर्. दु. स्पोङ. ब.		४६ ?		
म्योङ.	दिट्ठो	११		१०
म्योङ. बर्. शेस्.	जाण	११६		६६
स्म्र.	भणइ	२०	१६	
स्म्र. रु. मि. ब्तङ.	भणइ ण जाइ	७२	६४	
स्म्रस्. प.	वुत्त	१६	१५	
चर्. ब.	मूल	३७,७८,१३२	२७,७१,०	१०६
चर्. ब. ब्रल्.	मूलरहिअ	३८	२८	
चम्.	केवल	१०		६
	मत्त	६२		७५
चर्द्. मो. ब्य.		१०३		
छ्गस्.		८२		
छ्ङस्. प.	वाम्ह (ब्रह्मा)	६०	६६	
छ्द्. म.	(प्रमाण)	११		१०
म्छ्द्. मर्. ऽजिन्. प.		६८		
म्छमस्. सु.	कोणहिं ?	५,३२		४,०
छिंग्. गिस्.	अण्णें	३६	३८	
छ्ुल्. दु.	अच्छहु	७०	६२	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
म्छ्ोन्.		५१		
म्छ्ोन्. ते.	लक्खिअइ	३७	२७	
म्छ्ोन्. दु. ऽग्रो.		९७		
म्छ्ोन्. नुस्.	लक्खिअउ	३६	३५	
	लक्खिअ	३७	३४	
म्छ्ोन्. प.	लक्खइ	१८,६६	१५,०	
म्छ्ोन्. प. मिन्.	ण लक्खइ	१८	१५	
म्छ्ोन्. मेद्.	दुल्लक्ख	१०६		८६
म्छ्ोर्. रो.		५०		
छ्ोल्.	पुच्छइ	७५	६२	
	लोडइ	९९		८०
ऽजग्.		१०१		
ऽजग्स्. प.		५०		
म्जद्. प.				
ऽजिन्.	गहिउ	७७	६९	
ऽज़िन्. दङ. स्गोम्. पइ.	गुणिज्जइ	१८	१४	
ऽज़िन्. प. यिन.	धरिज्जइ	९४		७७
म्जुग्स्. स्पु	पिच्छी	८		७
ब्र्जुन्.	अलीका	१७	१३	
ग्र्जुन्. प. ञिद्.	मिच्छेंहिं	४		३
ऽज़म्स्.	णिमिस	७९		६६
म्ज़ेस्.	रज्जइ	९४,१०२,१०४		७७,८३,८४
र्जोंग्स्. पर्. ऽग्युर्.	पूरइ	११४		९४
ब. सोग्स्.	सिआल	७		६
ब्शग्.	मिलन्ते	३४	८८	
ब्शग्. न.	पइसइ	८९	७८	७७

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ब्शग्. नस्.		१०४		८४
ग्शन्.	अण्ण	६,५६,६६	०,६७,०	५
	पर	२६	५६	
ग्शन्. र्नम्स्. ऽगल्.	परविरुद्धो	६६	१२१	
	अण्ण०	६६		८०
ग्शन्. प.	अण्ण	१८	१४	
ग्शन्. पऽि. सेम्स्.	परचित्त	१३२		१०८
ग्शन्. मेद्.	णउ पर	११६		६६
ग्शन्. ल. फन्. प.	परउआर	१०३		१०७
शल्.	(मुख)	१६		
ग्शि.		१०१		
ब्शि.	चार	२		१
ब्शि. प.	चउट्ठ	११६		६६
शिङ.	खेत्त	५८	६६	
ब्शिन्.	सरीसों	६३		७६
ग्शिर्. ऽग्युर्.	विलीणउ	६०	६६	
शुग्स्.	बइट्ठ	११		१०
शुग्स्.	लग्गा	१५	१६	
शुग्स्. प.	न्हाइ	१५	१३	
	पईसइ	१६	१५	
ग्शुङ्स्. लुग्.		११		
शेन्. प.	धन्धा	१७,७४	१३,०	
	आसत्ति	८६		७१
शेन्. पर्. ब्शिन्.		७२	६५	
शेस्.	(इति)	२०		
शोग्. चिग्.	वसउ	१२०		१००

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ग्शोन्. नु. म.	कुमारी	७२	६५?	
स.	खाहु	६५		५५
सग्. प.		११२		
सग्. मेद् ग्सुम्.		११२		
स. बस्.	भोग्रणे	९		८
सब्. प..	गम्भीरइ	११६		९६
ग्सऽ. दङ. म्ञम्. दु.		११८		९८
स. शिङ.	खाग्रन्ते	२५	४८	
	खज्जइ	१०५		८६
ग्सिङ्स्.	बोहिग्र	८५		७०
सुग्. ङुस्.	विसल्लता	९२		७५
ग्सुग्स्.	बेसें	७		६
ग्सुग्स्., रङ गि–,		१०२		
सोस्. नस्.	खज्जइ	१०३		८४
सोस्. प. यिस्.	खाइ	४०		९०
स्ल. ब.	ससि	२६	४९	
	चान्द	५८,१०७	९६,०	
स्ल. ब. र्ग्य. म्छो.	सोबणाह	५७	९५	
स्ल. ब. नोर्. बु.	चन्दमणि	११७		९७
ब्स्लस्. ब्र्जोद्.	जाया ?	७६	६९	
ऽोङ		८२,९१		
ऽोङ्स्. पऽि. छे.	ठीग्रउ ?	१३४		१११
ऽोङ्स्. शिङ.		६०	९७	
ऽोन्. क्यङ.	बि	१९,६८	१५,०	
ऽोन्. ते.	ग्रहवा	१६	१७	
ऽोस्.	सेड़ ?	१२८		१०५

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ब्यग्.	चमर	८		७
यङ. दग्. म्थोङ.	दिट्ठउ	५९	?	
यङ. दग्. ग्नस्.	सुसंण्ठिअ	६१	५१	
यङ. दग्. सद्. पर्. ऽग्युर्		६१		
यङ. दङ. यङ. दु.	बहलहु	२५	४८	
यङ. दङ. स्पङ.	पडिपज्जह	५५	४४	
यङ. न.	अहवा	११५		९५
यङ. पो.	फुड	९८		७९
यन्. दु. छुग्.	विअप्प	१२०		१००
यन्. लग्.		३१,९६		
यि. गे.	अक्खर	७१,१२८	६४,२५?	
यि. गे. ग्चिग्.	अक्खरमेक्क	१११		
यि. गे. मेद्.	णिरक्खर	५१,१०८	०,२५	
यिद्.	मण	३१,९४	३०	७७
यिद्. क्यिस्.		१२३		
यिद्. छेस्. पर्.	पत्तिजइ	३५	८९	
यिद्. दु. ऽोङ.		९१		
यिद्. म. यिन्. प.	अमणु	९४		७७
यिद्. ब्शिन्. नोर्. बु.	चिन्तामणि	४३,९३	२३	७६
यिन्. प.	अच्छहु	६४	६२	
युल्.	विसअ	२०	१८	
	देस	७७	७०	
युल्. ग्ञिस्.		८६		
युल्. ग्यि. म्छोन्. पस्.		९६		
युल्. ग्यि. ग्लङ. पो.	विसअगअेन्दें	१२१		१०१
युल्. न.	देसहि	१०३		८४

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
युल्. र्नम्. पर्. दग्. स्ते.	विसअविसुद्धे	८४		७०
युल्. र्नम्स्.	विसअ	७७	६९	
युल्. ल. शेन्. प.	विसआसत्ति	८६		७१
ग्यो.	चल	८०		६६
ग्यो., मि–,	णिच्चल	८०		६६
ग्योग्स्.	वेसे	६		५
योङ्स्. सु. ब्चद्. प.	परिछिण्णउ	७२	६५	
योङ्स्. सु. ब्र्तंग्स्.	वाणी ?	७६	६९	
योङ्स्. सु. स्पङ्स्. प.		९६		
योङ्स्. सु. शेस्.	परिआणसि	४५,७३	०,६६	
	परिआण	२५	१०३	
	परिआणिअ	९५	१२७	
योङ्स्. सु. शेस्. ब्य.		३२		
योङ्स्. सु. ब्स्गोम्.	परिभावइ	१२८		१०५
योद्. दे.		४८		
योद्. प.	वसन्त (रहते)	८२	७४	
योद्. प. म. यिन्.	न भावइ	९		८
योन्. तन्.	गुण	७१,९०	६४,७८	
योन्. ग्तन्.	गुण	४०	३६	
ग्यो. ब.		४६		
रङ. द्गऽ. बर्.	सइच्छे	१२०	१००	
रङ. गिस्. रङ. ल.	अप्पउ अप्पा	७४	६७	
रङ. गि. ङो. बो.	अप्प सहाव	३०	२९	
रङ. गं्युद्. ग्रोल्. न.	मणमोक्खेण	४२	२४	
रङ. ग्रोल्. ऽग्युर्.	विमुच्च	११९		९९
रङ. ञिद्.	अप्पाण	५४,८०		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
रङ. द्बङ. स्नङ. बर्. ऽग्युर्.	पडिहाइ	१२१		१०१
रङ. द्बङ. मेद्.		१०७		
रङ. ब्शिन्.	सहाव	१९	१६	
	सरूअ	८७,८८	७५,७३	७२
	सहजे	१०४		८४
रङ.ब्शिन्.ग्चिग्.स्क्येस.प.	सहजसहावें	९४		७७
रङ. रिग्.	सएसंवित्ति	३३	४४	
रङ. ल. छ्रेद्. ते.		५३		
रङ. ल. रङ. रिग्.		९३		७६
रङ. ग्सल्.		१०१		
रब्. तु. गॅ्यस्.	विफुरइ	८०	६७	
रब्. तु. तोग्स्.	पडिवण्ण	१२२		१०२
रब्. तु. थिम्.		४५		
रब्. तु. थिम्. पर्. ऽग्युर्.	विलीणउ	७२	६५	
? थिम्. प.	लीण	७२	६५	
रब्. तु. स्पङ्स्.	परिहरहु	७०	६४	
रब्. ब्युङ. नस्.	पव्बज्जिउ	१०		९
रब्. तु. ऽब्युङ. ब. मेद्.	पव्बज्जेहिं रहिअउ	२०	१८	
रब्. तु. ब्ल. मेद्.		१२४		१०४
रब्. तु. शेस्.	घोलिअइ	१०८	२५	
रब्. ऽबद्.	भक्ति	७१	६४	
रल्. प.	जडा	४		३
रिग्.	संवित्ति	३३	४४	
		६५	६२	
रिग्. ब्येद्.	जोहि ?	११२		९१
रिग्स्. ब्येद्.	वेद	२		१

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
रिग्स्. मेद्.		६१		
रिङ.	दीह	६		
रि. दग्स्.	हरिणह	८७		७१
रि. बो. छु.	गिरिणई	१२०		१००
रुङ.	वरु	१३५		११२
रेग्. ब्शिन्.	च्छुप्पइ	७७	६९	
रे. ब.	आस	११४		९४
रे. ब. मेद्.	णिरास	१३४		१११
रो.	रस	४९,६१	०,५१	
रो. म्ञाम्.	समरसु	५७,८९	९५,७७	
रोल्.		६८		
ल.	(२ विभक्ति)	२		१
लग्. तु.		१०२		
लग्. पऽि. म्थिल्. दु.	हत्थे	१९	१५	
लग्. पस्.	करें	१२१		१०१
क्लग्. तु. मेद्.	खीणु	१०९	४१	
ब्लग्स्.		१३४		१११
ब्लंग्.		८९		७३
ग्लङ. छ्रेन्.	करि	८७,७९		७१,७६
ग्लङ. पो.	करिह	९		८
ग्लङ. पो. स्क्योङ.	कबडिआर	१२१		१०१
ब्स्लङ. बस्.	गहणे	८		७
लङस्. ते.	उंछ	९		८
ब्लङस्. नस्.	लइ	२२	२०	
	गहिअ	१२१		१०१
ब्लङस्. प.	साहिउ	२४	२२	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
ब्स्लद्. दे.	खरडह	२५	२३	
लन्.	ववहारें?	६५	६३	
लन्. छब्.		९७		
लंब्स्.	तुरंग (? तरंग)	५५	४५	
लंब्स्. दग्.	तरंग	८८	७६	७२
ब्ल. म.	गुरु	८४	६९	
ब्ल. म. दम्. प.	वरगुरु	३५	८९	
ब्ल. मऽि. द्रिन्.	गुरुपसाए	१३५		९६
?द्रिन्.	पसाश्रें	११५		९६
ब्ल. मऽि. शल्.	गुरुपाश्र	१९,३१	१५,२९	
ब्ल. मऽि. योन्.	दक्खिणा	६		५
ब्ल. मऽि. लुङ.	गुरुश्रण	७१	५७	
ब्ल. मऽि. ब्स्तन्. प.		८४	६९	
ब्ल. मेद्.		४५,४९		
ब्ल. मेद्. लुस्.	दोहाणुत्तर	७३	५६	
लम्.	मग्ग	१६	१६	
लम्. म्छोग्.	उत्तिम मग्ग	१६	१६	
स्लर्. यङ.		६९,८५		०,७०
	जइ	११५		९५
ल. ल.	कोवि	११	१०	
लस्.	कम्प	४१	२४	
लस्. ब्यिस्.	कम्मेण	४१	२४	४०
लस्. मेद्.	अ-काम	८०	६७	
लस्. सिन्. प.		५४		
लस्. लस्. ग्रोल्. न.	कम्मविमुक्केण	४१	२४	
स्लु.	बाहिश्र	७		६

तिव्बती	अपभ्रंश	तिव्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
लुंङ.	पवण	२६,३१,४५	४६,३०	०,६६
		५५,७६	०,४५	
लुङ. नॅम्स्.		६८		
लुंङ. ब्चिङस्. प.		५४		
ब्लुन्. पो.	जड	४४,६८	६१,०	
	णिक्कोली ?	७६	६८	
स्लु. बर्. ब्येद्.	धंधी	५		४
ग्लु. लेन्. ते.	गाइब	४?	३६	
लुस्.	देह	४		३
	काम्रा	१०		६
	तणु	३१	२६	
लुस्. दङ. ङग्. यिद्.	काम्रवाम्रमणु	१०२		८३
लुस्. दङ. ऽद्र.	देहासरिस	५६	६७	
लुस्. मेद्.	म्रसरीर	११०		८६
लुस्. ल.	देहहिं	८२	७४	
व्स्लुस्.	वाहिम्र	२०,२४	१६,१२	
	बुज्झइ	३६	३४	
लेग्स्. पर्. श्स्. ब्य.	बुज्झइ	७४	६७	
लेन्.		१०१		८२
ब्लो.	बुद्धि	६३	६०	
क्लोग्. प.	पढिज्जइ	१८	१४	
ब्लो. ग्रोस्.	मति	८४		६६
स्लोङ. न.		६६		
लो. ऽदब्. मेद्.	साह	१३२		१०६
ग्लोद्.		५१		
स्लोब्. द्पोन्.	गुरु	३१	३८	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
स्लोब्. म.	सीस	६७	७७	
लोब्स्. नस्.		८२		
ल्ह.	देव	७८	७१	
ल्हुन्. ग्यिस्. ग्रुब्.		६९, १३१		१०८
ल्हुङ.		८०		
ल्हुङ. बस्.		१३३		१०९
ल्ह. ब्श्रस्.	णेवज्जे	१४	१२	
ल्हन्. चिग्.	सहिअ	२०	१८	
ल्हन्. चिग्. स्क्येस्.	सहज	१३, २१, ३७	११, १९, २७	
ल्हन्. चिग्. स्क्येस्. द्गऽ.	सहजाणन्द	११६		९६
ल्हन्. चिग्. क्येस्. प.				
व्दुद्. चिऽ. रो.	सहजअमिअरस	६७	७७	
ल्हन्. चिग्. ब्योस्.		६१		
ल्हन्. चिग्. ल.		६८		
ब्शद्. दु. योद्.	बखाणें	२३	२२	
शर्.	उवइ	११८		९८
शर्. चिङ.		१०९	४१	
शि. ग्युर्.	बाज्जइ	२२	२०	
शिङ.	(स्वार्थे)	२		१
	(वदर्थे)	६		५
शिङ.	कट्ठ	५४	४४	
शिङ. गि नॅल्. ऽब्योर्.	कट्ठजोइ	५४	४४	
शिङ. तु. द्कऽ.	विसम	८१		६७
शिन्. तु. फ. ब. नॅल्. म.	वर-णालें	५९	६७	
शिन्. तु. मि. स्नुन्.	सुचंचल	५५	४५	
?मि. स्नुन्.	चंचल			

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	दागची दोहांक
श ुग्स्.		१०५		
शुग्स्. प.	पइसइ	१६, ४७	१५, ०	
शुन्. प.	तुस	६२		७५
शुब्. श ुब्.	खुसखुसाइ	५		४
शेस्.	जानन्त	२		१
शेस्. प.	परित्राण	२१	१८	
	अवेज्ज	६१		५१
शेस्. पर्. ऽग्युर्.	जाणइ	११५		९५
शेस्. पर्. नुस्.	जाणिउ	६१	५१	
शेस्. पर्. ब्य.	जाण	१०७		८७
शेस्. पर्. ब्योस्.	मणहु	३४	८५	
	जाणहु	३६,७६	०,६६	३७,०
शेस्. पर्शिङ.	जाणिअ	४		३
शेस्. ब्यस्.	जाणी	७६	६६	
शेस्. स ोइ.	जाणमि	१११		९०
शोङ.		१०१		
शोङ. ङो.		४७		
स.	मट्टि	२		१
ग्सङ. स्ङग्स्.	मन्तह	१५	१२	
सङ. दङ. ग्शन्.		४९		
सङ. न. मेद्.	अपुव्व	१०१		८२
सङ. न.	पुव्व	१०१		८२
ब्सङस्.		५०		
सङस्. र्ग्यस्.		१०२		?
स. स्तेङ.		३१		
स. बोन्.	बीअ	४२	२३	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
स. बोन्. ग्चिग्.	एक्केम्बीए	१३३		११०
सम्. दङ. क्ये.		८१		६७
ब्सम्.	चित्त	७०	६४	
ब्सम्. ग्यिस्. मि. ख्यब्.	आचित्त	४८	१२८	
ब्सम्. ग्तन्.	झाण	१४,३४,६३;	१२,४१,६१	
	धारण	२४,७६		२३,६९
ब्सम्. ग्तन्. ऽग्युर्.	धाहिज्जइ	१००		८१
ब्सम्. ग्तन्. ब्यस्. प.		९८		
ब्सम्. ग्तन्. मेद्. चिङ.	झाणहीण	२०	१८	
ब्सम्. दु. ग्युर्.	विचिन्तेज्जइ	१०५		८६
ब्सम्. प.		४९,११७		९७
ब्सम्. पर्. ब्येद्.		९६		
ब्सम्. पस्.	चित्ते	४८	१२८	
ब्सम्. ब्य.	धेअ	२४,७६	२३,६९	
	(चेतसिक)	७०	६४	
ब्सम्. मेद्.	अ-चित्त	९५	१२८	
स रह् (म्दऽ. ब्स्मुन्.)		९		८
ग्सल्. बर्.	फुड	३१,३८	२९,२७	
ग्सल्. बर्. स्नङ.	पडिहासइ	९८		७९
ब्सल्. ब्येद्.	दिवाअर	५८	९६	
स. ग्सुम्.	तिहुअण	१०६,११४		८७,९४
ग्सुङ. ब्य.		४४		
सुन्. ब्यिन्.	बाहिउ	४८		१२८
सु. ल.	कोवि	३०	५२	
	कासु	७२	६५	
सुस्. क्यङ.	केणवि	२४,९५	२२,१२८	

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
	कोवि	३७,९०	३४,०	
सेम्स्.	मण	२६	४९	
	चित्त	३७,९०,१०७,०	२७,७८	८७
	चित्तउ	७४	६७	
सेम्स्. क्यि. ङो. बो.	चित्तरूअ	३९	३७	
सेम्स्. क्यि. चें. ब.		९१		
सेम्स्. क्यि. छुल्. ऽज़िन्.	चित्तेकरुअ	११	१०	
सेम्स्. क्यि. ग्लङ. पो.	चित्तगअेन्द	१२०	१००	
सेम्स्. स्क्ये.	चित्तह	५४	४४	
सेम्स्. ञ्-म्स्. प.		१०५		
सेम्स्. ज़िद्. ग्चिग्. पु.	चित्तेक	४२	२३	
सेम्स्. प.	चिन्तइ	३८	२८	
	मुणइ	१३३		९०?
सेम्स्. ल.	चित्ते	१०५	९५	
सोङ. नस्.	गइ	९९		८०
ग्सोद्. प.	मारइ	१२१		१०१
ग्सन्. प.		८३		
सोन्. मो.	णख	६		५
स्.	(तृतीया)	३,४		२,३
स्नङ. खऽि.		६९		
स्रिद्.	भव	२९	५१	
स्रिद्. दङ. म्ञ्-म्. शिङ.	भवसम	८८	७६	७२
स्रिद्. प.	भव	२४,७०	२२०	
स्रिद्. पऽि. स्न. च्र्.	भवगन्ध	५५	४४	
ब्स्रेग्.	हुणन्त	२		१
स्रोग्. छगस्.		४८		

तिब्बती	अपभ्रंश	तिब्बती दोहांक	तालपत्र दोहांक	बागची दोहांक
अ. थङ.		१०३		
अ. म.	माइये	१०४		८४
उत्पल.	उअल	७७	६९	
ए. म. हो.	अरे	५५	४४	
ए. र.	अइरि	४		३

परिशिष्ट ५

दोहों की तुलना

स.स्क्य विहार से मिली हमारी तालपोथी यही नहीं, कि अब तक मिले हस्तलेखों में सबसे पुरानी है, बल्कि इसमें दोहा की संख्या सबसे अधिक–१६५ है, जिनमें आधे से ऊपर न भोट अनुवाद में मिलते हैं, न डा० प्रबोधचन्द्र बागची और महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री की पुस्तकों में ही। इसके लिए निम्नस्थ तालिका को देखिए–

स.स्क्य तालपोथी से तुलना

स.स्क्य तालपोथी	भोट-अनुवाद	बागची	हरप्रसाद शास्त्री	विशेष
०	१	०	०	
०	२	१	२	
०	३	२	३	
०	४	३	४	
०	५	४	५	
०	६	५	६	
०	७	६	७	
०	८	७	८	
८ घ	९	८	९	
९	१०	९	१०	
१०	११	१०	११	
१२	१४	१४	१४	
१३	१५ १७ क ख	१५	१५ ख ग, १७ ख ग	
१४	१७ ग घ १८ क ख	१६ ग घ १७ क ख	१७ घ १८ ख ग	
१५	१८ ग घ १९ क ख	१७ ग घ १८ क ख	१९ क ख ग	

संस्क्य तालपोथी	भोट-अनुवाद	बागची	हरप्रसाद शास्त्री विशेष
१६	१९ ग घ १५ ग घ	१८ ग घ ००	१९ घ १५घ १६क
१७	१६	०	१६ ख ग घ १७क
१८	२०		२० ख ग घ २१क
१९	२१		२१ ख ग घ २२क
२०	२२		२२ ग घ २३ क ख
२१			२३ ग घ ००
२२			
२३	४१ ग घ ४२ क ख	४१	
२४	४२ ग घ ४१ क ख	४०	
२५	१०७	८८	
२६			
२७	३६ ग घ ३७ क ख	३६	
२८	३७ ग घ ३८ क ख	३७	
२९	३०	२९	
३०	३१	३०	
३१-३२			
३३	३४ ग घ ३५ क ख	३४	
३४	३५ ग घ ३६ क ख	३५	
३५			
३६	३९ ग घ ४० क ख	३९	
३७-४०			
४१	१०८		१०९
४२	२३	२२	२४
४३	२४	२३	२५
४४-४७			
४८	२५	२४	२५ ग घ २६ क ख
४९	२६	२५	२६ ग घ २७ क ख

स.स्क्य तालपोथी	भोट-अनुवाद	बागची	हरप्रसाद शास्त्री	विशेष
५०	२७	२६	२७ गघ २८ कख	
५१	२८	२७	२८ गघ २९ कख	
५२	२९	२८	२९ गघ ३० कख	
५३			३० गघ ००	
५४-५५				
५६	६० गघ ६१ कख		६२	
५७-६०				
६१	६२ गघ ६३ कख	५३ गघ ५४ कख	६३	
६२	६३ गघ ७४ कख	५४ गघ ५५ कख		
६३	६४ गघ ६५ कख	५५ गघ ५७ कख		
६४	७०	५७ गघ ५८ कख		
६५	७१	५८ गघ ५९ कख		
६६	७२	५९ गघ ६० कख		
६७	७३	६० गघ ००		
६८	७४	६१ गघ ६२ कख		
६९	७५	६२ गघ ६३ कख		
७०	७६	६३ गघ ००		
७१	७७	६४ गघ ००		
७२	७८	६५ गघ ००		
७३			७३	
७४		००६८ कख	७४ कख ००	
७५	८१ गघ ८२ कख	६८ गघ ७२ कख		
७६	८७	७२ गघ ००		
७७	६६ गघ ००	००७४ कख		
७८	८९	७४ गघ ००		
७९-८७				
८८	३२ कख ००	३२		

स.स्क्य तालपोथी	भोट-अनुवाद	बागची	हरप्रसाद शास्त्री	विशेष
८९	३३	३३		
९०	३४ क ख ००			
९१	३९ क ख ४२ ग घ	४२		
९२	४३ क ख ५१ ग घ	४३		
९३	५२ क ख ५३ ग घ	४४		
९४	५४	४५ ? ४६ क ख		
९५	५५ ग घ ५६ क ख	४६ ग घ ४७ क ख		
९६	५६ ग घ ५७ क ख	४७ ग घ ४८ क ख		
९७	५७ ग घ ५८ क ख	४८ ग घ ४९ क ख		
९८	५८ ग घ ५९ क ख	४९ ग घ ५० क ख		
९९	५९ ग घ ६० क ख	५० ग घ ००		
१००-१०२				
१०३	६२	००५२ क ख		
१०४	६१ ग घ ००	५२ ग घ ५३ क ख		
१०५-१२०				
१२१	९७ ग घ ९८ क ख	८०		
१२२-२६				
१२७		००७८ क ख		
१२८	४६ ग घ ४७ क ख	७८ ग घ ००		
१२९-१६४				

इस तालिका से मालूम होता है, कि स.स्क्य के निम्नांकित दोहों का न अनुवाद है, और न दूसरी पोथियों में पता है—

२१ ग घ २२, २९, ३१, ३२, ३५, ३७-४१, ४४-४७, ४३-६०, ७६ ग घ, ७७, ७८ ग घ, ७९-८७, ८८ ग घ, ९०, ९९ ग घ, १००-१०२, १०३ क ख, १०५-१२०, १२१ ग घ, १२२-१२६, १२७ क ख, १२८ ग घ, १२९-१६४.

भोट अनुवाद में १३४ दोहे मिलते हैं। यद्यपि डा० बागची के संस्करण में ११२ ही दोहे हैं, लेकिन दोनों का क्रम एक जैसा है, जिससे मालूम होता है,

कि दोनों किसी पुरानी एक जैसी प्रति के विस्तृत और संक्षिप्त रूप हैं। तुलना के लिए यहाँ हम भोट-अनुवाद, बागची और स.स्क्य की प्रतियों के दोहों को देते हैं—

भोट	बागची	स.स्क्य
१	०	१
२	१	
३	२	
४	३	
५	४	
६	५	
७	६	
८	७	
९	८	८
१०	९	९
११	११	१०
१२	११	
१३	१२	११
१४	१३	१२
१५	१४	१३,१६
१६	१५	१७
१७	१६	१७,१३,१४
१८	१८	१४,१५
१९	१९	१५,१६
२०	२०	१२७
२१	२१	१८,१९
२२	२२	१९,२०
२३	२३	४२
२४	२४	४२,४३

भोट	बागची	स.स्कय
२५	२५	४३,४८
२६	२६	४८,४९
२७	२७	४९-५०
२८	२८	५०,५१
२९	२९	५१,५२
३०	३०	५२,२९
३१	३१	२९,३०
३२	३२	३०,८८
३३	३३	८८
३४	३४	८९
३५	३५	३३
३६	३६	३३
३७	३७	३४,२७
३८	३८	२७,२८
३९	३९	२८,९
४०	४०	९१,३६
४१	४१	३६,२४
४२	४२	२४,२३
४३	४३	२३,९१
४४	४४	९२
४५-४६		
४७	१२८	१२८
४८		१२८
४९-५१		
५२	४३	९२
५३	४४	९३
५४	४५	९३

भोट	बागची	स.स्वय
५५	४६	६४
५६	४६,४७	६५
५७	४७,४८	६५,६६
५८	४८,४९	६६,६७
५९	४९,५०	६७,६८
६०	५१	६९
६१	५२	
६२	५२,५३	५६
६३	५३,५४	६१
६४	५४,५५	६२
६५	५५,५६	६३
६६	५६	४४
६७		७७
६८-६९		
७०	५७	४६
७१	५८	६४,६५
७२	५९	६५
७३	६०	६६
७४	६१	६७,६८
७५	६२	६८
७६	६३	६९
७७	६४	७०
७८	६५	७१
७९	६६	७२
८०	६७	
८१	६७,६८	
८२	६८	७५

भोट	बागची	स.स्कय
८३	६९	
८४	७०	
८५		
८६	७१	
८७	७२	७६
८८	७३	७६,७५
८९	७४	७८
९०		७८
९१	७५	
९२	७६	
९३	७७	
९४	७८	
९५		१२८
९६	४६	
९७	४६	१२०
९८	८०	
९९	८१	
१००	८२	
१०१	८३	
१०२	८४	
१०३	८४,८५	
१०४	८५,८६	
१०५	८६,८७	
१०६	८७,८८	
१०७	८८	
१०८	४१	४१
१०९	६८	

भोट	बागची	स.स्कय
११०	९०	
१११		
११२-१२१	९१-१०२	
	९४	
१२२-१२३		
१२४	१०३	
१२५		
१२६-१३४	१०४-११२	
१२८	१०४-१०५	
१२९	१०५,१०६	
१३०	१०६,१०७	
१३१	१०७,१०८	
१३२	१०८,१०९	
१३३	१०९,११०	
१३४	११०,१११	
१३५	१११,११२	

परिशिष्ट ६

पण्डित अद्वयवज्र

सिद्धों के ग्रन्थों के टीकाकारों और पंजिकाकारों में अद्वयवज्र का प्रमुख स्थान है। सिद्धों की सरल भाषा अपने रहस्यवादी रूप के कारण दुरूह हो जाती है, जिसको खोल कर रखने में अद्वयवज्र बहुत ही सिद्धहस्त हैं। सौभाग्य से सरहपाद के सर्वप्रसिद्ध ग्रन्थ 'दोहाकोशगीति' की अद्वयवज्रकृत पंजिका मूल संस्कृत में मिल चुकी है, और नागरी अक्षरों में डॉक्टर पी० सी० बागची द्वारा संपादित होकर छप भी चुकी है। अद्वयवज्र विद्वान् ही नहीं थे, बल्कि वह सिद्धों के संपर्क में आकर सिद्धचर्या के अभ्यासी भी थे। पर, वह सिद्ध नहीं बन सके, यद्यपि अभी (ग्यारहवीं सदी के प्रथम पाद में) सिद्धों की चौरासी की सूची पूरी नहीं हुई थी। वह दीपंकर श्रीज्ञान के विद्या-गुरु थे, जो ग्यारहवीं सदी के मध्य में तिब्बत गये और वहाँ से फिर भारत नहीं लौटे। दसवीं सदी के अन्त में वह मौजूद थे; संभव है ग्यारहवीं सदी के प्रथम पाद में भी जीवित रहे हों।

उस समय जीवनियों के लिखने की परिपाटी थी, जो अद्वयवज्र की इस अत्यन्त संक्षिप्त जीवनी से मालूम होगा। यह जीवनी नेपाल में सन् १९३४ या १९३६ ई० की यात्रा में मुझे मिली थी। मूल पुस्तक किसके पास है, यह स्मरण नहीं। पुस्तक में दो पन्ने थे। किस लिपि में थी, यह भी नहीं कह सकता। मैंने किसी नेपाली मित्र को उतारने के लिए कह दिया, जिनकी लिखी प्रति मेरे पास मौजूद है। भाषा अशुद्ध है, जो शायद लिपिकरों के प्रमाद के कारण ही। मैंने उसके शुद्ध पाठ को देने की कोशिश नहीं की, क्योंकि उससे समझने में कठिनाई नहीं है। स्थानों के नाम कुछ जाने जा सकते हैं, पर उनका जन्म-स्थान कपिलवस्तु के पास जिस गाँव में था, वह बहुत समय तक घोर जंगल बन गया था; इसलिए उसके नाम का कोई गाँव शायद ही मिल सके। जीवनी इस प्रकार है—

"नमः श्री सवरेश्वराय। इह खलु मध्यदेशे पदम (!) कपिलवस्तुमहानगर-

समीपे झोतकरणी नाम पल्लिकाऽस्ति (।) तस्मिंस्थाने ब्राह्मणजातिर्नानूको नाम ब्राह्मणी च साविती नाम प्रतिवसति स्म। तदा च कालान्तरेण दामोदरो नाम तत्पुत्रो बभूव। स चैकादशवर्षदेशीयः कुमारः सामार्द्धवेदको गृहान्निष्क्रम्य मर्तबोधो नामैकदण्डोभूत्। ततः पश्चाल्लीकटी-सत्रे पाणिनिव्याकरणं श्रुतं, श्रुत्वा सप्तवर्षपर्य्यन्तेन सर्वशास्त्रमधिगम्य विंशतिवर्षपर्य्यन्तं नारोपाद-समीपे प्रमाणमाध्यमिकपारमितादिशास्त्रं श्रुतं। तदनु मन्त्रनयशास्त्रज्ञेन रागवज्रेण सहावस्थितः पञ्चवर्षपर्य्यन्तं। पश्चात् महापण्डित-रत्नाकरशान्ति-गुरुभट्टारक-पादानां पार्श्वे निराकारव्यवस्थां वर्षमेकं यावत्। पश्चाद् विक्रमशील (!) विक्रमशिलां गत्वा महापण्डितज्ञानश्रीमित्रपादानां पार्श्वे तत्प्रकरणं (तेन) श्रुतं वर्षद्वयं यावद्।

ततो विक्रमपुरं (विक्रमशिलां) गत्वा संमतंतीय (?सम्मिती) निकाये (प्रव्रज्य) मैत्रीगुप्त नाम भिक्षुर्बभूव। सूत्राभिधर्मविनयञ्च श्रुत्वा वर्षमेकं यावत् (अतिष्ठत्।) पञ्चक्रम तारास्नायेन मन्त्रजापं कृत्वा कोटिमेकं चतुर्मुद्राऽर्थसहितेन। भट्टारके(न) स्वप्ने गदितं-'गच्छ त्वं खसर्प्पणं'। तत्र (ततः) विहारं परित्यज्य खसर्प्पणं गत्वा वर्षमेकं यावन्निषीदति। पुनरपि गदितं—"गच्छ त्वं कुलपुत्र दक्षिणापथे मनभङ्गचित्तविश्रामौ पर्वतौ तत्र सवरेश्वरस्तिष्ठति। स तत्रा (? तवा) नुग्राहको भविष्यतीति। तत्र च सागरनामा मिलिष्यति। स च राढदेशवासी राजपुत्रस्तेन सार्द्धं गच्छ"। पश्चाद् गते सति सागरेण मिलितं।

उडदेशपर्यन्तेन (? न्तं) मनभंगचित्तविश्रामयोर्वार्ता न श्रुतवान्। श्री धान्य ०धान्यकटकं) वर्षमेकं स्थितः पश्चाद् वाकुत्पडु (?) देशे स्वाधिष्ठानतारां साधयितुमारब्धवान्। मासैकेन स्वप्नोऽभूत्—"गच्छ त्वं कुलपुत्र वायव्यां दिशि पर्वतौ तिष्ठन्तौ। पञ्चदशदिनेन प्राप्येते"। भट्टारिकाया वाक्येण वायव्यां दिशि संघातैः सार्द्धं गच्छति प्राप्तिपर्यन्तं पुरुषेणैकेनोक्त(म्)। "परम् (? पर) दिने नभङ्गचित्तविश्रामौ प्राप्येते लग्नौ। तत्र सुखेन वस्तव्यं"।

इति श्रुत्वा पंडितपादो हृष्टोऽभूत्। अपरदिने प्राप्तं (? प्राप्तौ) तत्र पर्वते (? पर्वतौ)। दिने-दिने दश-दश मण्डलानि कृतवान्। कन्दमूलफलाहारं कृत्वा दिनदश-पर्य्यन्तं शिलातलपर्य्यङ्कमारुह्य एकाग्रचित्तेन उपवासं कर्तु-

मारब्धः। सप्तमे दिवसे स्वप्नदर्शनं भवति। दशमे दिवसे ग्रीवां छेत्तुमा(र)ब्धः। तत्क्षणात् साक्षाद् दर्शनं भवति सेकन्ददाति अद्वयवज्रना (मा)ऽभूत्। पंचक्रम-चतुर्मुद्रादिव्याख्यानं कृतं द्वादशदिनपर्य्यन्तं। पुनरप्युपदेशेन पञ्चदिनं यावत्। सर्वधर्मदृष्टान्तेन वीणां वादयति तत्र पद्मावली ज्ञानावली। सवरेश्वरेण आज्ञा दत्वा (? दत्ता) 'प्राणातिपातादिमायां दर्शय त्वं'। तदनन्तरं सागरः कायव्यूहं दर्शयते। पण्डितपादेनोक्तः—"भगवन् किमप्यहं कायव्यूहं निर्मयितुमशक्तः।" सवरेश्वर आह—"विकल्पभूतत्वात्।" पण्डित आह—"तर्हि किं कर्त्तव्यं, मम ज्ञापयंतु पादाः।" सवराधिप आह—"तवेह जन्मनि सिद्धिर्नास्ति देशना-प्रकाशनाः कुरु"। अद्वयवज्र आह—"अशक्तोऽहं भगवन् कर्तुं कथं करिष्याम्यहं'।" आह—"इह वज्रयोगिनि-उपदेशात् करिष्यसि त्वं फलं च फलिष्यतीति" इहोपदेश (? इममुपदेश) मित्यु (? अयं उपदेश इत्यु) क्त्वा भट्टारकपादोऽन्तर्धानोऽभूत्।

"नेदन्धनुर्न च मृगो न वराहपोतः
संपूर्णचन्द्रवदना न च सुन्दरीयं।
निर्म्माणनिर्मिततयार्थिजनस्य हेतोः
सन्तिष्ठते गिरितले सवराधिराजः।"
अमनसिकारे यथाश्रुतक्रमः समाप्तः।

संक्षेप में अद्वयवज्र की जीवनी निम्न प्रकार है—

कपिलवस्तु (वर्त्तमान तिलौराकोट, तौलिहवा, नेपाल पश्चिमी तराई) के पास झोतकरणी नाम का एक गाँव था। जहाँ ब्राह्मण नानूक और उसकी पत्नी सावितो (सावित्री) रहते थे। उनको एक पुत्र पैदा हुआ, जिसका नाम उन्होंने दामोदर रखा। बालक दामोदर ने अपने वेद साम का आधा पढ़ लिया था, जब कि वह ग्यारह वर्ष की आयु में किसी एकदंडी का शिष्य हुआ और उसका नाम मर्तबोध (अमृतबोध) रखा गया। इसके बाद अपने पंडितों के लिए प्रसिद्ध लीकटी नामक गाँव में जा मर्तबोध ने पाणिनि व्याकरण का अध्ययन किया और वहाँ सात वर्ष तक रह १८ वर्ष की आयु में तरुण ने (ब्राह्मणों के) सभी शास्त्रों को पढ़ लिया। (बुद्ध की जन्मभूमि में रहनेवाले तरुण का बौद्ध

धर्म और भिक्षुओं के सम्पर्क में आना स्वाभाविक था। इस प्रकार) वह बौद्ध शास्त्रों के अध्ययन के लिए नारोपाद के पास (सभवत: विक्रमशिला पहुँचे। दो वर्ष तक सिद्ध पंडित से उसने दिङ्नाग, धर्मकीर्त्ति के प्रमाण (न्याय) शास्त्र, नागार्जुन के माध्यमिक शास्त्र और प्रज्ञापारमिता-संबंधी शास्त्र को पढ़ा। फिर (वहीं के कलिकालसर्वज्ञ) महापंडित सिद्ध रत्नाकर शान्ति के पास साल भर तक निराकारव्यवस्था (विज्ञानवाद ?) पढ़ी। फिर विक्रमशिला गये। उक्त दोनों पंडित विक्रमशिला के थे, पर नारोपा फुलहरी बिहार में भी रहा करते थे, इसी प्रकार रत्नाकर शान्ति सिंहल द्वीप तक का चक्कर मारते थे, इसलिए हो सकता है, तरुण विद्यार्थी ने इन दोनों विद्वानों से विक्रमशिला से बाहर शिक्षा प्राप्त की हो।) विक्रमशिला में दो वर्ष रहकर प्रसिद्ध प्रमाणशास्त्री (नैयायिक) ज्ञानश्री मित्र से उनके प्रकरण-ग्रन्थ पढ़े।

नारोपा के पास पढ़ते समय तरुण के हृदय में मन्त्रशास्त्र की जिज्ञासा उत्पन्न हुई और वह पाँच वर्ष तक पढ़ते रहे। वह पच्चीस वर्ष के हो गये थे, जब वह कलिकालसर्वज्ञ सिद्ध महापंडित रत्नाकर शान्ति के पास जा साल भर तक निराकारव्यवस्था (विज्ञानवाद ?) पढ़ते रहे। प्रमाणशास्त्र (न्याय) में अपने समय के अद्वितीय विद्वान् ज्ञानश्री मित्र उस समय विक्रमशिला में रहते थे। उनके अपने लिखे अनेक प्रमाणशास्त्र-संबंधी (क्षणभंगाध्याय आदि) प्रकरण-ग्रन्थों को पढ़ने के लिए वह ज्ञानश्री के पास गये। (ये प्रकरण-ग्रंथ इन पंक्तियों के लेखक को तिब्बत में मिल गये हैं, जिन्हें पटना का जायसवाल इंस्टीट्यूट प्रकाशित करने जा रहा है।) अब वह सत्ताईस वर्ष के हो गये थे। अभी तक वह नियमपूर्वक उपसंपन्न भिक्षु नहीं बने थे। अब विक्रमशिला में जा वे सम्मितीयनिकाय (संप्रदाय) की परिपाटी के अनुसार भिक्षु बने; नाम मिला मैत्रीगुप्त। एक साल तक वह इस निकाय के सूत्रपिटक, अभिधर्मपिटक और विनयपिटक का अध्ययन करते रहे। २८ वर्ष के हो जाने पर मैत्रीगुप्त की इच्छा सिद्धों का पदानुसरण करते हुए सिद्धि लाभ करने की हुई। पंचक्रम तारापद्धति के अनुसार 'चतुर्मुद्रा' सहित एक करोड़ जप किया, तब भट्टारक (संभवत: अमर सिद्ध शबरपाद) ने स्वप्न में कहा—"जाओ खसर्पण (अवलोकितेश्वर) के पुनीत स्थान में।" एक साल तक वह खसर्पण में रह अनुष्ठान करते

रहे। फिर स्वप्न हुआ—"जाओ दक्षिणपथ (दक्षिण भारत) में। वहाँ मनभंग और चित्तविश्राम नाम के दो पर्वत हैं, जहाँ शबरेश्वर रहते हैं, वह तुम पर कृपा करेंगे, रास्ते में राढ़ (पश्चिमी बंगाल) देश का राजपुत्र सागरदत्त नाम का साथी तुम्हें मिलेगा।"

दक्षिणापथ जाते समय राढ़ (पश्चिमी बंगाल) देश में ही शायद सागरदत्त मैत्रीगुप्त को मिले। दोनों आगे बढ़े। उड़ीसा तक उन्हें दोनों पर्वतों का पता नहीं लगा। वह धान्यकोटक (धरनीकोट, जिला गुन्तूर, आन्ध्र) जा एक साल तक रहे। अब मैत्रीगुप्त ३० वर्ष से अधिक के हो गये थे। उन्होंने वहाँ से वाकुलपट्ट (?) देश में जा तारा की साधना आरंभ की। महीने भर बाद स्वप्न में कहा गया, कि यहाँ से पश्चिमोत्तर (वायव्य) दिशा में मनभंग और चित्तविश्राम पर्वत हैं। एक यात्रीसमूह के साथ पन्द्रह दिन जाने पर एक आदमी ने कहा, कि अगले दिन पर्वत-युगल मिलेंगे। अगले दिन पण्डित मैत्रीपाद लक्ष्य स्थान पर पहुँच कर हर्षित हुए। प्रतिदिन दस-दस मंडल (मिट्टी के स्तूप या धर्मवाक्यांकित मुद्राएँ) अर्पित करते शिला के ऊपर आसन मार एकाग्रचित्त हो, कन्द-मूल-फल मात्र का आहार करते उपवासव्रत करने लगे। सातवें दिन स्वप्न में (शवर) का दर्शन हुआ। पर, उतने से साधक को सन्तोष नहीं हुआ। जब दसवें दिन मैत्रीगुप्त ने गला काट आत्महत्या करनी चाही, तो जाग्रत अवस्था में शवरपाद का साक्षात् दर्शन हुआ। उन्होंने स्वयं साधक को अभिषेक दे अद्वयवज्र नाम रखा और बारह दिन तक 'पंचक्रम' और 'चतुर्मुद्रा' का व्याख्यान किया। फिर और पाँच दिन तक उपदेश दिया। उस समय पद्मावली और ज्ञानावली नामक योगिनियाँ सभी धर्मों के दृष्टान्त के साथ वीणा बजाती थीं। महासिद्ध शवर ने कायव्यूह नामक सिद्धि प्रदर्शित करने लिए कहा। सागरदत्त ने कर दिखलाया पर अद्वयवज्र असमर्थ रहे। उन्होंने सिद्ध से अपनी असमर्थता का कारण पूछा, तो जवाब मिला—"तुम्हारा मन (संकल्प-)विकल्पमय है। इस जन्म में तुम्हें सिद्धि नहीं मिलेगी। सिद्धों की देशना को स्पष्ट करके प्रकाशित करो। इसमें वज्रयोगिनी तुम्हें रास्ता बतलायगी।" यह कह कर भट्टार (शबर) पाद अन्तर्धान हो गये।

शबराधिराज (सिद्ध सरहपाद के प्रधान-शिष्य शबरपाद) गिरितल

पर साधकों (हित) के लिए रहते हैं। (शबर=शिकारी होने पर भी) न (वहाँ) धनुष है न हरिन न शूकर-शावक, एवं न (उनके पास) सम्पूर्ण-चन्द्रानना सुन्दरी (उनकी शबरी) ही है। वह सिद्धि-निर्मित रूप में वहाँ रहते हैं।

अज्ञात लेखक के इस आख्यान से हमें अद्वयवज्र के ३० वर्ष के जीवन की कुछ बातें मालूम होती हैं। अद्वयवज्र राजगृह (मगध) में एकान्तवास कर रहे थे, जब कि तरुण दीपंकर श्रीज्ञान उनके पास विद्याध्ययन के लिये गये थे। दीपंकर का जन्म ९८२ ई० में हुआ था और वह १०४२ ई० में तिब्बत में जा वहीं १०५२ ई० में मरे। तिब्बती परम्परा के अनुसार नारोपा का देहान्त १०३९ ई० में हुआ। अद्वयवज्र ग्यारहवीं सदी के प्रथम पाद में मौजूद रहे होंगे। उन्होंने कितने ही ग्रन्थों की टीकाएँ लिखीं, साथ ही सिद्धचर्या के पक्षपाती होने से कितनी ही कविताएँ देशभाषा (अपभ्रंश) में भी की थीं, जिनमें से निम्नलिखित तिब्बती महान् संग्रह स्तन्.ग्युर में तिब्बती अनुवाद के रूप में मौजूद हैं—

'अबोध बोधक	स्तन्	तंत्र	४७-३९
'गुरुमैत्रीगीतिका'	,,	,,	४८-१३
'चतुर्मुद्रोपदेश'	,,	,,	४७-३७
'चित्तमात्र दृष्टि'	,,	,,	४९-४५
'दोहातत्त्वनिधितत्त्वोपदेश'	,,	,,	४६-३३
'चतुर्वज्रगीतिका'	,,	,,	४८-१२

ललना-रसना नाड़ी प्रज्ञोपायश्च मेलकः।
आधारावधूती स्यात् समरसं यत्र तत्रगः।।

—बौद्धगान

वज्र—शून्यता—

दृढं सारं अशौषीर्यं अच्छेद्याभेद्यलक्षणम्।
अदाही अविनाशी च शून्यता वज्र उच्यते।

—योगरत्नमाला

वज्रधर—काय-वाक्-चित्त, स्वामी, लिंगशून्य

नरावज्रधराकारा योषितो वज्रयोषितः।

वज्रयान—मंत्रयान
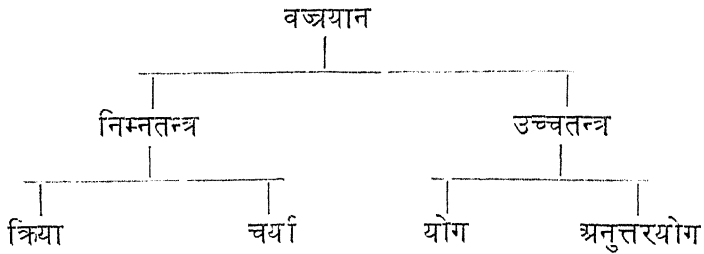
विन्दु—पुरुष, अनाहत, वज्रधर

विन्दुः परुष इत्युक्तो विसर्गः प्रकृतिः स्मृतः।
पुंप्रकृत्यात्मको हंसस्तदात्मकमिदं जगत्।।

शशी—शुक्र, चंद्र, इडा, पिंगला, वामनासापुट,

समरस—चित्तनिरोध, मैथुन

सूर्य—रज, पिंगला, दक्षिणनासापुट

हुंकार—वज्रधर

पुस्तक-सूची

१. 'बौद्ध गान ओ दोहा' (म. म. हरप्रसाद शास्त्री),

२. चर्यापद (श्री मणीन्द्रमोहन बसु, कमला बुक डिपो, १५ बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता)

३. 'दोहाकोश' (डाक्टर प्रबोध चन्द्र बागची, कलकत्ता-संस्कृत-सिरीज, १९३८ ई०)

४. प्राकृतपैंगलम्: (बिब्लिओथिका इण्डिका, कलकत्ता, १९०२ ई०)

५. उक्तिव्यक्तिप्रकरण (संपादक, मुनि जिनविजय जी, भारतीय विद्या भवन, बंबई १९५३ ई०)

६. 'पउमचरिउ' (कविराज स्वयंभू, भारतीय विद्या-भवन, बंबई; १९५३ ई०)

७. 'पउमसिरिचरिउ' (धाहिल कवि, भारतीय विद्या-भवन, बंबई १९४८ ई०)

८. 'हिन्दीकाव्यधारा' (राहुल सांकृत्यायन, किताब महल, इलाहाबाद, १९४५ ई०)

९. 'पुरातत्त्वनिबन्धावलि' (राहुल सांकृत्यायन, इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद, १९३७ ई०)

१०. 'Les Chants Mystiques....'Les Dohakosa et les Carya, par Dr. M. Shahidullaha Adrien Maisonneuve, Paris.